नमो नमो निम्मलदंसणस्स

पूज्य आनंद-क्षमा-ललित-सुशील-सुधर्मसागर-गुरुभ्यो नमः

सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि

भाग 18



आगम १५

"प्रज्ञापना" मूलं एवं वृत्तिः [1]

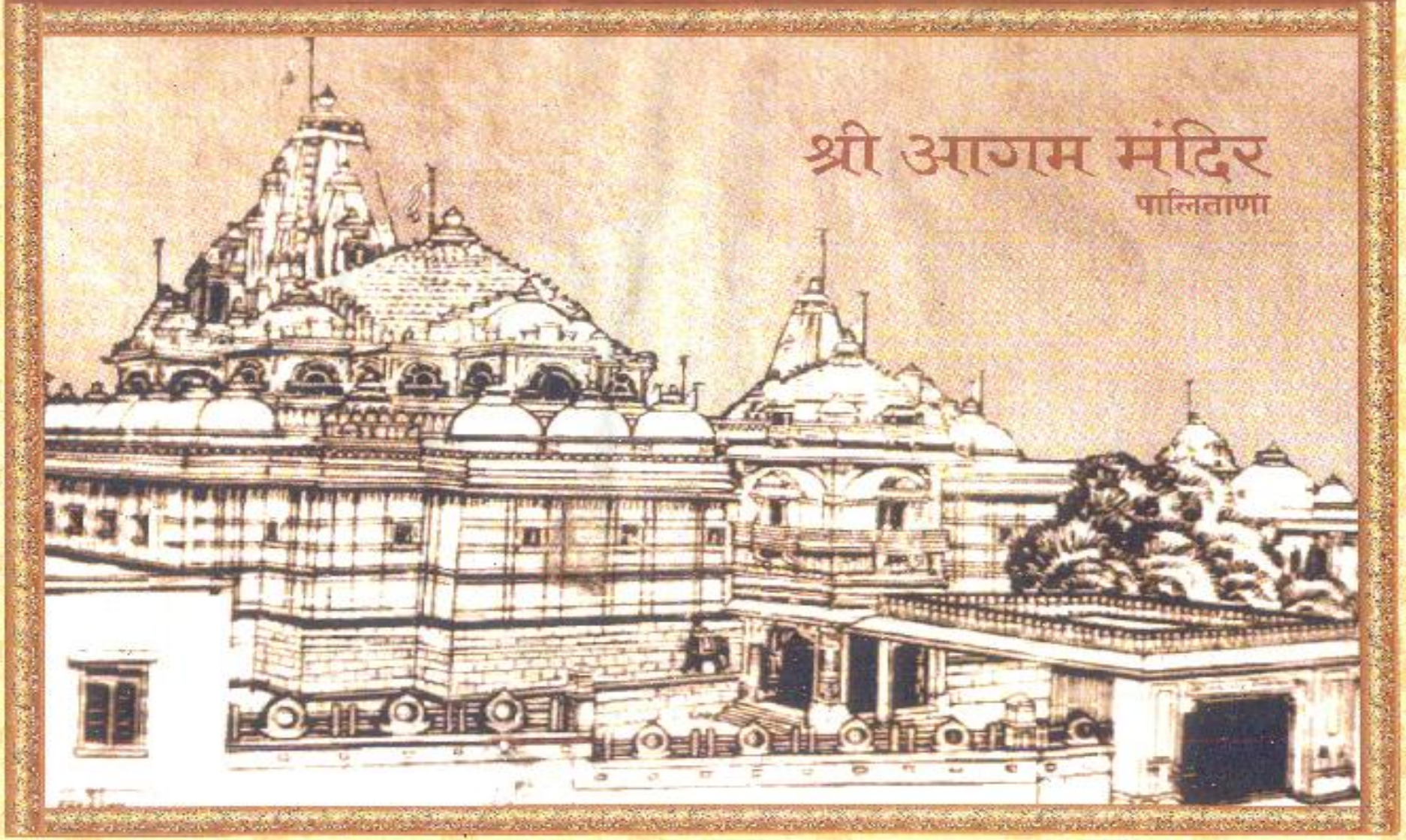
मूल संशोधक :- पूज्यपाद आगमोद्धारक आचार्यश्री आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराजसाहेब

अभिनव-संकलनकर्ता :- आगम दिवाकर मुनिश्री दीपरत्नसागरजी [M.Com., M.Ed., Ph.D., श्रुतमहर्षि]

पूज्य शासनप्रभावक आचार्यश्री हर्षसागरसूरिजी की प्रेरणा से

'वर्धमान जैन आगम मंदिर संस्था' पालिताणा

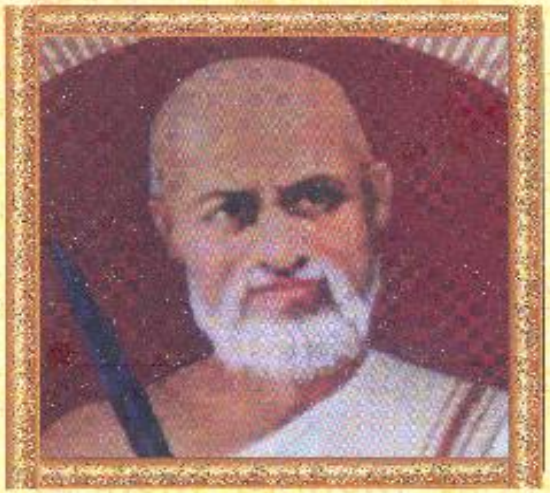
ईस प्रोजेक्ट के संपूर्ण-अनुदान-दाता



नमो नमो निम्मलदंसणस्स

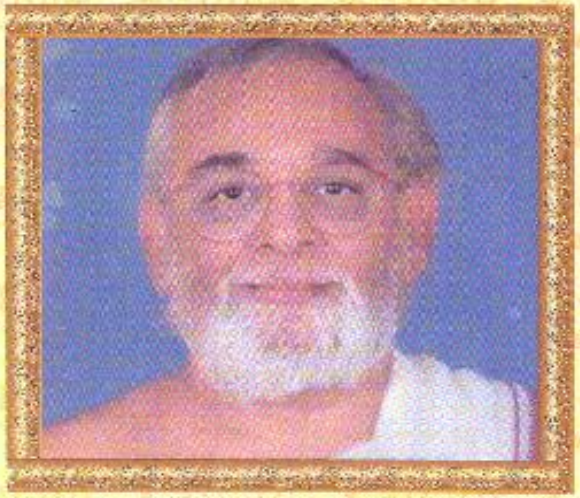
सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि

मूल संशोधक



पूज्यपाद आगमोद्धारक आचार्य
श्री आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराज

अभिनव-संकलनकर्ता



आगम दिवाकर मुनिश्री दीपरत्नसागरजी
[M.Com., M.Ed., Ph.D., श्रुतमहर्षि]

प्रत-प्राप्ति और पेज-सेटिंग कर्ता : www.jainelibrary.org के चेरमन श्री प्रवीणभाई शाह, अमेरिका
मुद्रक : नवप्रभात प्रिन्टींग प्रेस अमदावाद Mo 9825598855 / 9825306275



आगम

वाचना शताब्दी वर्ष

[भाग-१८] श्री प्रज्ञापना (उपांगसूत्रम्-१५/१)

नमो नमो निम्मलदंसणस्स

पूज्य श्रीआनंद-क्षमा-ललित-सुशील-सुधर्मसागर गुरूभ्यो नम:

"प्रज्ञापना" मूलं एवं वृत्ति: (भाग-१)

[मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीत वृत्ति:]

[आद्य संपादकश्री]

पूज्य आगमोद्धारक आचार्यदेव श्री आनंदसागर सूरीश्वरजी म॰ सा॰

(किञ्चित् वैशिष्ठ्यं समर्पितेन सह)

पुन: संकलनकर्ता→ मुनि दीपरत्नसागर (M.Com., M.Ed., Ph.D.श्रुतमहर्षि)

28/07/2017, शुक्रवार, २०७३ श्रावण शुक्ल ५ 'सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि' श्रेणि भाग-१८

श्री आगमोद्धारक-वाचना-शताब्दी-वर्ष-निमित्त 'आगम-वृत्ति-मुद्रण-प्रोजेक्ट':

सामाचारी-संरक्षक, ज्ञानधनी, आगम-संशोधक, तीव्र-मेधावी, समाधिमृत्यु-प्राप्त, बहुमुखीप्रतिभाधारक

पूज्यपाद आगमोद्धारक आचार्यदेव श्री आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराज साहेब

◆ जिन्होने शुद्ध-श्रद्धा, सम्यक्-श्रुत आराधना, यथाख्यातचारित्र के प्रति गति और अंत समय देह-ममत्व के त्याग के द्वारा कायोत्सर्ग नामक अभ्यंतर-तप कि मिशाल कायम कि है ऐसे बहुश्रुत आचार्य श्री सागरानंदसूरीश्वरजी महाराज का परिचय कराना मेरे लिए नामुमकिन है, फ़िर भी गुरुभक्ति बुद्धि से श्रद्धांजली स्वरुप एक मामुली सी झलक पैस करने का यह प्रयास मात्र है |

◆ चारित्र-ग्रहण के बाद अल्प कालमे जो अपने गुरुदेव की छत्रछाया से दूर हो गये, तो भी गुरुदेव के स्वर्ग-गमन को सिर्फ़ कर्मो का प्रभाव मानकर अपने संयम के लक्ष्य प्रति स्थिर रहते हुए अकेले ज्ञान-मार्ग कि साधना के पथ पर चले | पढाई के लिए ही कितने महिनो तक रोज एकासणा तप के साथ बारह किल्लोमिटर पैदल विहार भी किया | लेकिन अपने मंझिल पे डटे रहे, और परिणाम स्वरुप संस्कृत एवं प्राकृत भाषा का, प्राचीन लिपिओ का, व्याकरण-न्याय-साहित्य आदि का सम्पूर्ण ज्ञान प्राप्त किया | जैन आगमशास्त्रो के समुद्र को भी पार कर गए|

◆ एक अकेला आदमी भी क्या नहीं कर शकता? इस प्रश्न का उत्तर हमें इस महापुरुष के जीवन और कवन से मिल गया, जब वे चल पड़े देवर्द्धिगणी क्षमाश्रमण के स्थापित पथ पर. बिना किसी सहाय लिए हुए सिर्फ अकेले ही "जैन-आगम-शास्त्रो" को दीर्घजीवी बनाने के लिए अनेक हस्तप्रतो से शुद्ध-पाठ तैयार किये | दो वैकल्पिक आगम, कल्पसूत्र और निर्युक्तिओ को जोड़कर ४५ आगम-शास्त्रो को संशोधित कर के संपादित किया | फिर पालीताणामें आगम मंदिर बनवाकर आरस-पत्थर के ऊपर ये सभी आगम-साहित्य को कंडारा, सूरतमें ताम्रपत्र पर भी अंकित करवाए और "आगम मंजूषा" नाम से मुद्रण भी करवा के बड़ी बड़ी पेटीमें रखवा के गाँव गाँव भेज दिए | वर्तमानकालमे सर्व प्रथमबार ऐसा कार्य हुआ |

◆ सिर्फ मूल आगम के कार्य से ही उन के कदम रुके नही थे, उन्होंने आगमो की वृत्ति, चूर्णि, निर्युक्ति, अवचूरी, संस्कृत-छाया आदि का भी संशोधन-सम्पादन किया | उपयोगी विषयो के लिए उन्होंने एक लाख श्लोक प्रमाण संस्कृत-प्राकृत नए ग्रंथो की रचना भी की | कितने ही ग्रंथो की प्रस्तावना भी लिखी | ये सम्यक्-श्रुत मुद्रित करवाने के लिए आगमोदय समिति, देवचंद लालभाई इत्यादि विभिन्न संस्था की स्थापना भी की |

◆ ज्ञानमार्ग के अलावा सम्मेतशिखर, अंतरीक्षजी, केशरियाजी आदि तीर्थरक्षा कर के सम्यक-दर्शन-आराधना का परिचय भी दिया | राजाओं को प्रतिबोध कर के और वाचनाओ द्वारा अपनी प्रवचन-प्रभावकता भी उजागर करवाई | बालदिक्षा, देवद्रव्य-संरक्षण, तिथि-प्रश्न इत्यादि विषयोमे सत्य-पक्षमें अंत तक दृढ़ रहे | जैनशासन के लिए जब जरुरत पड़ी तब अदालती कारवाईंओ का सामना भी बड़ी निडरता से किया था |

◆ सागरानंदजी के नाम से मशहूर हो चुके पूज्य आनंदसागरसूरीश्वरजीने अपने परिवार स्वरुप ८७० साधू-साध्वीजी भी शासन को भेट किये |

...ये थे हमारे गुरुदेव "सागरजी"... *.....मुनि दीपरत्नसागर...*

संयमैकलक्षी, उपधान-तप-प्रेरक, चारित्र-मार्ग-रागी, प्रवचन-पटु, सुपरिवार-युक्त

पूज्य गच्छाधिपतिआचार्यदेव श्री देवेन्द्रसागरसूरीश्वरजी महाराज साहेब

*** परमपूज्य आचार्यश्री आनंदसागरसूरीश्वरजी के पाट-परंपरामे हुए तिसरे गच्छाधिपति थे पूज्य आचार्य श्री देवेन्द्रसागरसूरीश्वरजी, जो एक पून्यवान् आत्मा थे, दीक्षा ग्रहण के बाद अल्पकालमे ही एक शिष्य के गुरु बन गये | फ़िर क्या ! शिष्यो कि संख्या बढती चली, बढ़ते हुए पुन्य के साथ-साथ वे आखिर 'गच्छाधिपति' पद पे आरूढ़ हो गए | इस महात्मा का पुन्य सिर्फ शिष्यों तक सिमित नही था, वे जहा कहीं भी 'उपधान-तप' की प्रेरणा करते थे, तुरंत ही वहां 'उपधान' हो जाते थे | प्रवचनपटुता एवं पर्षदापुन्य के कारण उन के उपदेश-प्राप्त बहोत आत्माओने संयम-मार्ग का स्वीकार किया | खुद भी संयमैकलक्षी होने के कारण चारित्रमार्ग के रागी तो थे ही, साथसाथ ज्ञानमार्ग का स्पर्श भी उन का निरंतर रहेता था | आप कभी भी दुपहर को चले जाइए, वे खुद अकेले या शिष्य-परिवार के साथ कोई भी ग्रन्थ के अध्ययन-अध्यापनमें रत दिखाई देंगे |

*** ये तो हमने उनके जीवन के दो-तीन पहेलु दिखाए | एक और भी अनुसरणीय बात उन के जीवनमें देखने को मिली थी- 'आराधना-प्रेम'. कैसी भी शारीरिक स्थिति हो, मगर उन्होंने दोनों शाश्वती ओलीजी, [पोष}दशमी, शुक्ल पंचमी, त्रिकाल देववंदन, पर्व या पर्वतिथि के देववंदन आदि आराधना कभी नहीं छोड़ी | आखरी सालोमें जब उन को एहसास हो गया की अब 'अंतिम-आराधना' का अवसर नजदीक है, तब उन के मुहमें एक ही रटण बारबार चालु हो गया- "*अरिहंतनुं शरण, सिद्धनुं शरण, साधुनुं शरण, केवली भगवंते भाखेला धर्मनुं शरण*" इसी चार शरणो के रटण के साथ ही वे समाधि-मृत्यु-रूप सम्यक् निद्रा को प्राप्त हुए थे | ऐसे महान् सूरिवर को भावबरी वंदना |

*** मुनि दीपरत्नसागर...

◆◆◆ श्री वर्धमान जैन आगम मंदिर संस्था, पालिताणा ◆◆◆

पूज्यपाद आनंदसागर-सूरीश्वरजी की बौद्धिक-प्रतिभा का मूर्तिमंत स्वरुप ऐसी इस संस्था की स्थापना विक्रम-संवत १९९९ मे महा-वद ५ को हुइ| *पूज्य आचार्य हर्षसागरसूरिजी की प्रेरणा से* जिन की तरफ़ से इस *सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि* के लिए संपूर्ण द्रव्य-सहाय की प्राप्ति हुइ |

शिल्प-स्थापत्य, शिलोत्कीर्ण आगम और समवसरण स्थित नयनरम्य ४५ चौमुख जिन-प्रतिमाजी से सुशोभित ऐसा ये 'आगममंदिर' है, जो शत्रुंजय-गिरिराज कि तलेटीमे स्थित है | वर्तमान २४ जिनवर, २० विहरमान जिनवर और १ शाश्वत मिलाकर ४५ चौमुखजी यहा बिराजमान है | जहां ४० समवसरण की रचना मेरु पर्वत के तिनो काण्ड के वर्णो के अनुसार चार अलग-अलग रंगो के आरस-पत्थर से बना है, देवो द्वारा रचित समवसरण के शास्त्र वर्णन-अनुसार आगम-मंदिर कि समवसरण का स्थापत्य है | ऐसी अनेक विशेषता से युक्त ये आगममंदिर है |

**** मुनि दीपरत्नसागर...*

'सागर-समुदाय-एकता-संरक्षक, तीर्थ-उद्धार-कार्य-प्रवृत्त, गुणानुरागी'

इस "सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि' श्रेणि भाग १ से ४० के संपूर्ण अनुदान के प्रेरणादाता

पूज्य शासनप्रभावक आचार्य श्री हर्षसागरसूरिजी महाराज साहेब

पूज्यपाद स्व॰ गच्छाधिपति देवेन्द्रसागर-सूरीश्वरजी के विनयी शिष्य एवं दो गच्छाधिपतिओ के मुख्य सहायक के रुपमे 'सागर समुदाय' के सुचारु संचालक पूज्य हर्षसागरसूरिजी, जिन की प्रेरणा से ये "सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि" के मुद्रण के लिए संपूर्ण द्रव्यराशि प्राप्त हुई, उनका अत्यल्प परिचय यहां करेंगे| समुदाय-एकता के लिए सदैव प्रयत्नशील रहते हुए ये महात्मा *समुदाय के साधु-साध्वीजी* की आवश्यकताओकी पूर्ती के लिए भी प्रवृत्त रहेते है, प्राचीन-अर्वाचीन तीर्थो के जीर्णोद्धार एवं विकाश के लिए भी उत्साहित रहेते है, ज्ञान-क्षेत्र अछूता न रहे इसीलिए अनुमोदना, अनुदान एवं समय मिलने पर शास्त्र-वांचनमें भी रूचि रखते है | समुदाय के जरूरतमंद साध्वीजी भगवंतो के आवास का विषय हो या साध्वीजी के विहारमें मजदूर का वेतन चुकाना हो, ऐसे छोटे-छोटे कार्यो के प्रति भी उन का लक्ष्य रहेता है | दर्शन-शुद्धि के लिए जब उन्होंने समग्र भारतवर्ष के १०० साल तक के पुराने जिनालयो में १८ अभिषेक की प्रेरणा की, उस वक्त लगभग सभी अभिषेक-सामग्री की द्रव्य-शुद्धि का ख़याल रखते हुए अपनी मेधावी बुद्धि का परिचय दिया था, साथमे अनुकंपा भाव से पुजारी या विधि करानेवाले को यत्किंचित् बहुमान प्रगट करते हुए कुछ धन-राशि प्रदान करवाई |

ऐसे बहुगुण-संपन्न महात्मा पूज्य आचार्यश्री हर्षसागर-सूरिजी को हम भावभरी वंदना करते हुए इस श्रुतकार्य का प्रारंभ करने जा रहे है |

**** मुनि दीपरत्नसागर*

[कात्रज]पूना, कपडवंज, प्रभासपाटण आदि स्थानोमे आगममंदिर के प्रेरक, कर्मग्रंथ अभ्यासु, निस्पृह महात्मा

पूज्यपाद गच्छाधिपति आचार्य श्री दौलतसागर-सूरीश्वरजी महाराज साहेब

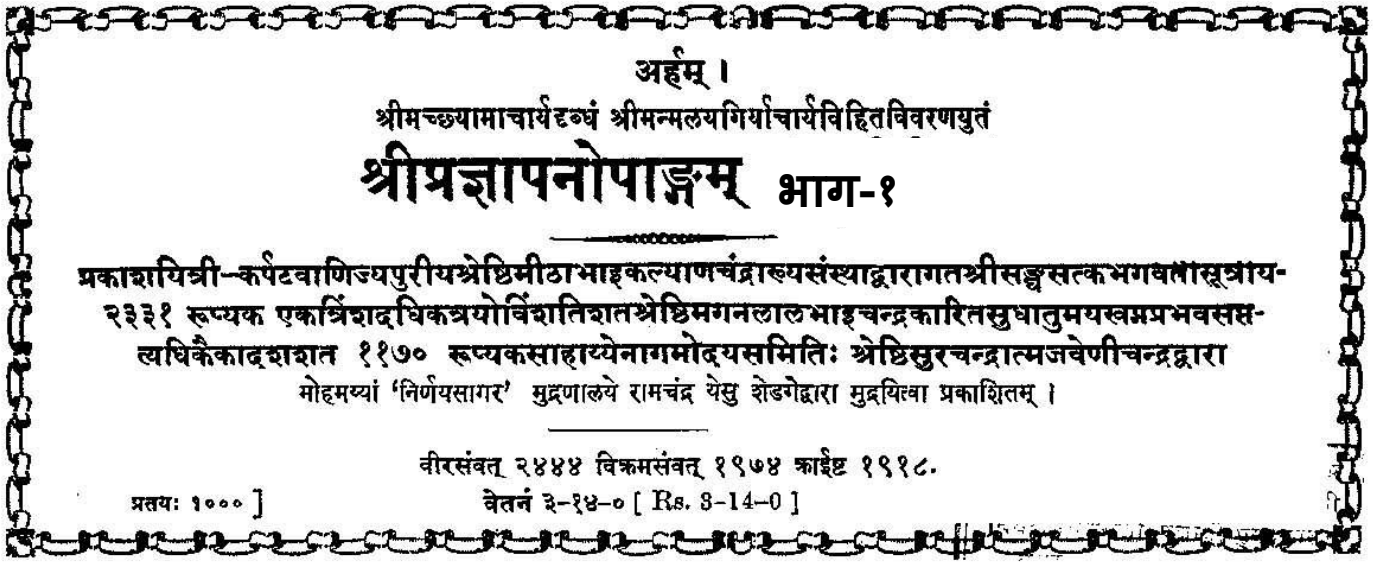
(एवं) अजातशत्रु, स्वाध्याय-रसिक, प्रशांतमूर्ती और अपने गुरु के प्रीतिपात्र

परम पूज्य आचार्य श्री नंदीवर्धनसागर-सूरिजी महाराज साहेब

इस पवित्र श्रुत-कार्यमे दोनो सूरिवरो का स्मरण करते हुए कोटि कोटि वंदना के साथ

.....मुनि दीपरत्नसागर

प्रत सूत्रांक [–] दीप अनुक्रम [–]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति:



अर्हम् ।

श्रीमच्छ्यामाचार्यदृब्धं श्रीमन्मलयगिर्याचार्यविहितविवरणयुतं

श्रीप्रज्ञापनोपाङ्गम् भाग-१

प्रकाशयित्री–कर्पटवाणिज्यपुरीयश्रेष्ठिमीठाभाइकल्याणचंद्राख्यसंस्थाद्वारागतश्रीसङ्घसत्कभगवत्सूत्राय-
२३३१ रूप्यक एकत्रिंशदधिकत्रयोविंशतिशतश्रेष्ठिमगनलालभाइचन्द्रकारितसुधातुमयखप्रप्रभवसप्त-
त्यधिकैकादशशत ११७० रूप्यकसाहाय्येनागमोदयसमितिः श्रेष्ठिसुरचन्द्रात्मजवेणीचन्द्रद्वारा
मोहमय्यां 'निर्णयसागर' मुद्रणालये रामचंद्र येसु शेडगेद्वारा मुद्रयित्वा प्रकाशितम् ।

वीरसंवत् २४४४ विक्रमसंवत् १९७४ क्राईष्ट १९१८.

प्रतयः १०००] वेतनं ३-१४-० [Rs. 3-14-0]

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	प्रज्ञापना (उपांग)सूत्रस्य मूल "टाइटल पेज"

मूलांक:	विषय:	पृष्ठांक:	मूलांक:	विषय:	पृष्ठांक:	मूलांक:	विषय:	पृष्ठांक:
००१	पद ०१- प्रज्ञापना	०१३	---	पद ०३- बहूवक्तव्यता (वर्तते)	-----	३५३	पद ०७- उच्छवास:	
१९२	पद ०२- स्थानं	१५४	---	--द्वार् २०- संज्ञी	२८८	३५४	पद ०८- संज्ञा	
२५७	पद ०३- बहूवक्तव्यता	२३८	---	--द्वार् २१- भवसिद्धिक:	२८८	३५६	पद ०९- योनि:	
---	--द्वार् ०१- दिशा	२३९	---	--द्वार् २२- अस्तिकाय:	२९१	३६१	पद १०- चरिम:	
---	--द्वार् ०२- गतिः	२५०	---	--द्वार् २३- चरम:	२९७			
---	--द्वार् ०३- इन्द्रियं	२५२	---	--द्वार् २४- जीव:	२९८	३७५	पद ११- भाषा	
---	--द्वार् ०४- काय:	२५६	---	--द्वार् २५- क्षेत्रं	२९९	४००	पद १२- शरीरं	
---	--द्वार् ०५- योग:	२७९	---	--द्वार् २६- बन्धं	३२२	४०५	पद १३- परिणाम:	
---	--द्वार् ०६- वेद:	२८०	---	--द्वार् २७- पुद्गल, दिशा-	३२६	४१३	पद १४- कषाय:	
---	--द्वार् ०७- कषाय:	२८१		आदि अल्पबहूत्वं	-----			
---	--द्वार् ०८- लेश्या	२८१				४१९	पद १५- इन्द्रियं	
---	--द्वार् ०९- द्रष्टि:	२८४	२९८	पद ०४- स्थितिः	३४८	---	--उद्देशक: ०१- नामादि	
---	--द्वार् १०- ज्ञानं	२८५	३०७	पद ०५- विशेषं	३६९	---	--उद्देशक: ०२- उपचयादि	
---	--द्वार् ११- अज्ञानं	२८५	३२६	पद ०६- व्युत्क्रान्ति:		४३८	पद १६- प्रयोग:	
---	--द्वार् १२- दर्शनं	२८६	---	--द्वार् ०१- द्वादश:				
---	--द्वार् १३- संयत:	२८६	---	--द्वार् ०२- चतुर्विंशति:		४४२	पद १७- लेश्या	
---	--द्वार् १४- उपयोग:	२८६	---	--द्वार् ०३- सांतरं		---	--उद्देशक: ०१- समाहारादि	
---	--द्वार् १५- आहारक:	२८६	---	--द्वार् ०४- एकसमयं		---	--उद्देशक: ०२- षड्भेदा:	
---	--द्वार् १६- भाषक:	२८८	---	--द्वार् ०५- आगति:		---	--उद्देशक: ०३- उपपातादि	
---	--द्वार् १७- परित्त:	२८८	---	--द्वार् ०६- उद्वर्तना/गति:		---	--उद्देशक: ०४- परिणामादि	
---	--द्वार् १८- पर्याप्त:	२८८	---	--द्वार् ०७- परभवायु:		---	--उद्देशक: ०५- वर्णादि	
---	--द्वार् १९- सूक्ष्मं	२८८	---	--द्वार् ०८- आकर्ष:/आयुबंध:		---	--उद्देशक: ०६- मनुष्यापेक्षया	

मूलांक:	विषय:	पृष्ठांक:	मूलांक:	विषय:	पृष्ठांक:	मूलांक:	विषय:	पृष्ठांक:
४७१	पद १८- कायस्थिति:		---	पद १८- बहुवक्तव्यता (वर्तते)		---	पद २८-आहार/उद्देशक:२-वर्तते	
---	--द्वार् ०१- जीव:		---	--द्वार् २१- अस्तिकाय:		---	--द्वार् ०२- भवसिद्धिकत्वं	
---	--द्वार् ०२- गति:		----	--द्वार् २२- चरिम:		---	--द्वार् ०३- संज्ञी	
---	--द्वार् ०३- इन्द्रियं					---	--द्वार् ०४- लेश्या	
---	--द्वार् ०४- काय:		४९५	पद १९- सम्यकत्वं		---	--द्वार् ०५- द्रष्टि:	
---	--द्वार् ०५- योग:		४९६	पद २०- अंतक्रिया		---	--द्वार् ०६- संयत:	
---	--द्वार् ०६- वेदं		५०९	पद २१- अवगाहनासंस्थान/शरीर		---	--द्वार् ०७- कषाय:	
---	--द्वार् ०७- कषाय:		५२५	पद २२- क्रिया		---	--द्वार् ०८- ज्ञानं	
---	--द्वार् ०८- लेश्या					---	--द्वार् ०९- योग:	
---	--द्वार् ०९- सम्यकत्वं		५३४	पद २३- कर्मप्रकृत्ति:		---	--द्वार् १०- उपयोग:	
---	--द्वार् १०- ज्ञानं		---	--उद्देशक: ०१- अष्टविधा		---	--द्वार् ११- वेद:	
			----	--उद्देशक: ०२- भेद-प्रभेदा:		---	--द्वार् १२- शरीरं	
---	--द्वार् ११- दर्शनं					---	--द्वार् १३- पर्याप्ति:	
---	--द्वार् १२- संयत:		५४६	पद २४- कर्मबन्धं				
---	--द्वार् १३- उपयोग:		५४७	पद २५- कर्मवेदनं		५७२	पद २९- उपयोग:	
---	--द्वार् १४- आहार:		५४८	पद २६- कर्मवेदबन्धं		५७३	पद ३०- पश्यता	
---	--द्वार् १५- भाषक:		५४९	पद २७- कर्मवेदवेदनं		५७५	पद ३१- संज्ञी	
---	--द्वार् १६- परित:					५७७	पद ३२- संयत:	
---	--द्वार् १७- पर्याप्त:		५७०	पद २८- आहार:		५७९	पद ३३- अवधि:	
---	--द्वार् १८- सूक्ष्मं		---	--उद्देशक: ०१- सचित्तादि		५८४	पद ३४- प्रविचारणा	
---	--द्वार् १९- संज्ञी		---	--उद्देशक: ०२-		५९५	पद ३५- वेदना	
---	--द्वार् २०- भवसिद्धिक:		---	--द्वार् ०१- आहारकत्वं		५९९-६२२	पद ३६- समुद्घात:	

['प्रज्ञापना' - मूलं एवं वृत्तिः] इस प्रकाशन की विकास-गाथा

यह प्रत सबसे पहले "प्रज्ञापना सूत्रम्" के नामसे सन १९ १८ (विक्रम संवत १९ ७४) में आगमोदय समिति द्वारा प्रकाशित हुई, इस के संपादक-महोदय थे पूज्यपाद आगमोद्धारक आचार्यदेव श्री आनंदसागरसूरीश्वरजी (सागरानंदसूरिजी) महाराज साहेब |

इसी प्रत को फिर से दुसरे पूज्यश्रीओने अपने-अपने नामसे भी छपवाई, जिसमे उन्होंने खुदने तो कुछ नहीं किया, मगर इसी प्रत को ऑफसेट करवा के, अपना एवं अपनी प्रकाशन संस्था का नाम छाप दिया. जिसमे किसीने पूज्यपाद् सागरानंदसूरिजी के नाम को आगे रखा, और अपनी वफादारी दिखाई, तो किसीने स्वयं को ही इस पुरे कार्य का कर्ता बता दिया और श्रीमद्सागरानंदसूरिजी तथा प्रकाशक का नाम ही मिटा दिया |

✤ हमारा ये प्रयास क्यों? ✤ आगम की सेवा करने के हमें तो बहोत अवसर मिले, ४५-आगम सटीक भी हमने ३० भागोमे १२५०० से ज्यादा पृष्ठोमें प्रकाशित करवाए है, किन्तु लोगो की पूज्य श्री सागरानंदसूरीश्वरजी के प्रति श्रद्धा तथा प्रत स्वरुप प्राचीन प्रथा का आदर देखकर हमने इसी प्रत को स्केन करवाई, उसके बाद एक स्पेशियल फोरमेट बनवाया, जिसमे बीचमे पूज्यश्री संपादित प्रत ज्यों की त्यों रख दी, ऊपर शीर्षस्थानमे आगम का नाम, फिर पद, उद्देश, द्वार्, और मूलसूत्र के क्रमांक लिख दिए, ताँकि पढ़नेवाले को प्रत्येक पेज पर कौनसा पद, उद्देश, द्वार् एवं मूलसूत्र चल रहे है उसका सरलता से ज्ञान हो शके, बायीं तरफ आगम का क्रम और इसी प्रत का सूत्रक्रम दिया है, उसके साथ वहाँ 'दीप अनुक्रम' भी दिया है, जिससे हमारे प्राकृत, संस्कृत, हिंदी गुजराती, इंग्लिश आदि सभी आगम प्रकाशनोमें प्रवेश कर शके | हमारे अनुक्रम तो प्रत्येक प्रकाशनोमें एक सामान और क्रमशः आगे बढते हुए ही है, इसीलिए सिर्फ क्रम नंबर दिए है, मगर प्रत में गाथा और सूत्रों के नंबर अलग-अलग होने से हमने जहां सूत्र है वहाँ कौंस [-] दिए है और जहां गाथा है वहाँ ||-|| ऐसी दो लाइन खींची है या फिर गाथा शब्द लिख दिया है |

हमने एक अनुक्रमणिका भी बनायी है, जिसमे प्रत्येक पद, उद्देश, द्वार् और मूल लिख दिये है और साथमें इस सम्पादन के पृष्ठांक भी दे दिए है, जिससे अभ्यासक व्यक्ति अपने चहिते विषय तक आसानी से पहुँच शकता है | अनेक पृष्ठ के नीचे विशिष्ठ फूटनोट भी लिखी है, जिसमे उस पृष्ठ पर चल रहे ख़ास विषयवस्तु की, मूल प्रतमें रही हुई कोई-कोई मुद्रण-भूल की या क्रमांकन सम्बन्धी जानकारी प्राप्त होती है |

शासनप्रभावक पूज्य आचार्यश्री हर्षसागरसूरिजी म०सा० की प्रेरणासे और श्री वर्धमान जैन आगममंदिर, पालिताणा की संपूर्ण द्रव्य सहाय से ये 'सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि' भाग-१८ का मुद्रण हुआ है, हम उन के प्रति हमारा आभार व्यक्त करते है |

.....मुनि दीपरत्नसागर.

प्रत सूत्रांक [–] दीप अनुक्रम [–]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति:
	वृत्तिकारकृत् मङ्गल-गाथा:, प्रज्ञापना-शब्दस्य व्याख्या

॥ अर्हम् ॥

श्रीमदार्यश्यामाचार्यसंकलितम्

श्रीमन्मलयगिर्याचार्यविरचितवृत्तिपरिकरितं

श्रीप्रज्ञापनासूत्रम्

जयति नमदमरमुकुटप्रतिबिम्बच्छद्मविहितबहुरूपः । उद्धर्त्तुमिव समस्तं विश्वं भवपङ्कतो वीरः ॥ १ ॥
जिनवचनामृतजलधिं वन्दे यद्बिन्दुमात्रमादाय । अभवन्नूनं सत्त्वा जन्मजराव्याधिपरिहीणाः ॥ २ ॥
प्रणमत गुरुपदपङ्कजमधरीकृतकामधेनुकल्पलतम् । यदुपास्तिवशान्निरुपममश्नुवते ब्रह्म तनुभाजः ॥ ३ ॥
जडमतिरपि गुरुचरणोपास्तिसमुद्भूतविपुलमतिविभवः । समयानुसारतोऽहं विदधे प्रज्ञापनाविवृतिम् ॥ ४ ॥

अथ प्रज्ञापनेति कः शब्दार्थः ?, उच्यते, प्रकर्षेण–निःशेषकुतीर्थितीर्थकरासाध्येन यथावस्थितस्वरूपनिरूपण-लक्षणेन ज्ञाप्यन्ते–शिष्यबुद्धावारोप्यन्ते जीवाजीवादयः पदार्था अनयेति प्रज्ञापना, इयं च समवायाख्यस्य चतुर्थ-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [–]

॥ १ ॥

ङ्गस्योपाङ्गं, तदुक्तार्थप्रतिपादनात्, उक्तप्रतिपादनमनर्थकमिति चेत्, न, उक्तानामपि विस्तरेणाभिधानस्य मन्दमति-विनेयजनानुग्रहार्थतया सार्थकत्वात् । इदञ्चोपाङ्गमपि प्रायः सकलजीवाजीवादिपदार्थशासनात् शास्त्रं, शास्त्रस्य चादौ प्रेक्षावतां प्रवृत्त्यर्थमवश्यं प्रयोजनादित्रितयं मङ्गलं च वक्तव्यम्, उक्तं च–"प्रेक्षावतां प्रवृत्त्यर्थं, फलादि-त्रितयं स्फुटम् । मङ्गलं चैव शास्त्रादौ, वाच्यमिष्टार्थसिद्धये ॥ १ ॥ इति" तत्र प्रयोजनं द्विधा–परम्परं च, पुनरे-कैकं द्विधा—कर्तृगतं श्रोतृगतं च, तत्र द्रव्यास्तिकनयमतपर्यालोचनायामागमस्य नित्यत्वात् कर्त्तुरभाव एव, तथा-चोक्तम्–"एषा द्वादशाङ्गी न कदाचिन्नासीत् न कदाचिन्न भवति न कदाचिन्न भविष्यति,ध्रुवा नित्या शाश्वती"त्यादि, पर्यायास्तिकनयमतपर्यालोचनायां चानित्यत्वादवश्यंभावी तत्सद्भावः, तत्त्वपर्यालोचनायां तु सूत्रार्थोभयरूपत्वादा-गमस्यार्थापेक्षया नित्यत्वात् सूत्रापेक्षया चानित्यत्वात् कथञ्चित् कर्तृसिद्धिः, तत्र सूत्रकर्त्तुरनन्तरं प्रयोजनं सत्त्वा-नुग्रहः परम्परं त्वपवर्गप्राप्तिः, उक्तं च–"सर्वज्ञोक्तोपदेशेन, यः सत्त्वानामनुग्रहम् । करोति दुःखतप्तानां, स प्राप्नो-त्यचिराच्छिवम् ॥ ११ ॥" तदर्थप्रतिपादकस्यार्हतः किं प्रयोजनमिति चेत्, न किञ्चित्, कृतकृत्यत्वात्, प्रयोजन-मन्तरेणार्थप्रतिपादनप्रयासो निरर्थक इति चेत्, न, तस्य तीर्थकरनामकर्मविपाकोदयप्रभवत्वात्, उक्तं च–"[१]तं च कहं वेइज्जइ?, अगिलाए धम्म देसणाए उ" इति, श्रोतृणामनन्तरं प्रयोजनं विवक्षिताध्ययनार्थपरिज्ञानं, परम्परं

१ तच्च कथं वेद्यते?, अग्लान्या धर्मदेशनायैव (०देसणाईहिं (आव० नि०)।

॥ १ ॥

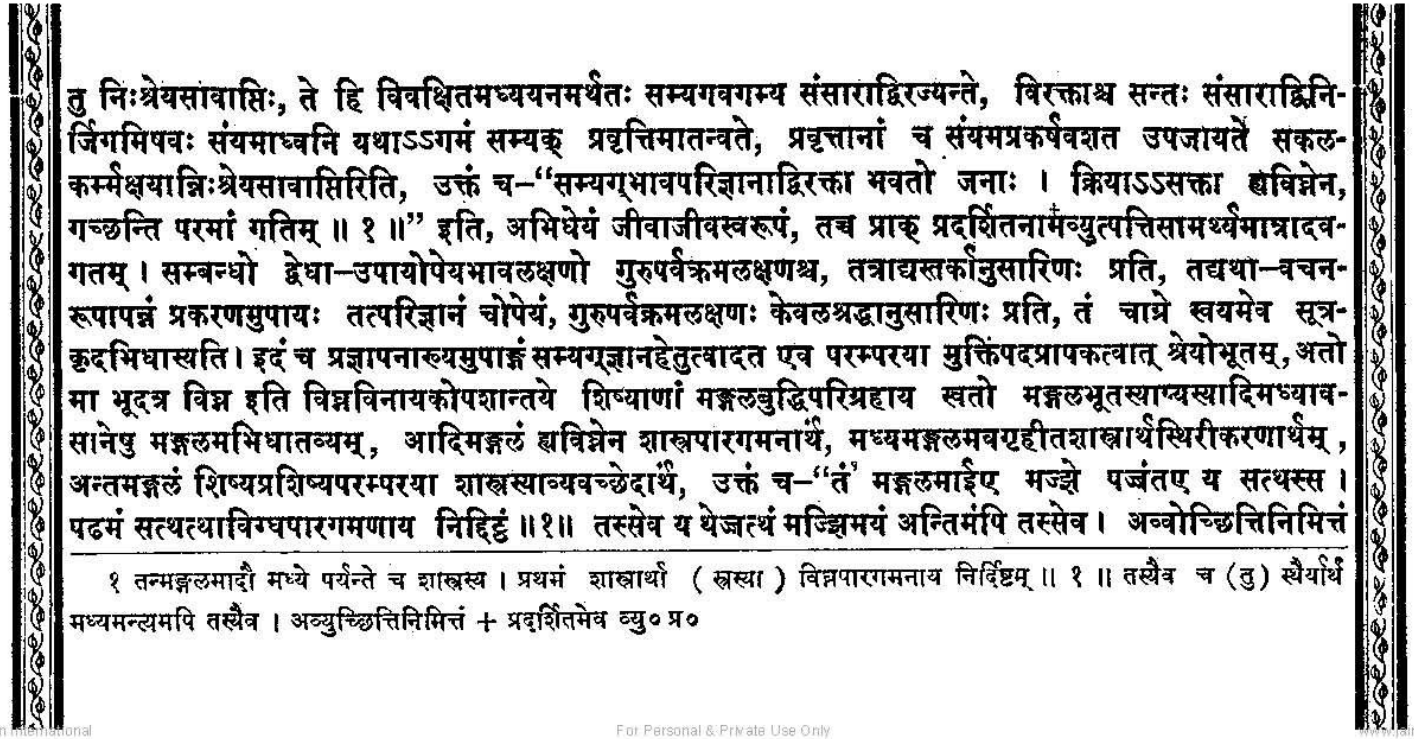
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

'प्रज्ञापना' पदस्य उपोद्घात:

प्रत सूत्रांक [–]

दीप अनुक्रम [–]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्तिः



तु निःश्रेयसावाप्तिः, ते हि विवक्षितमध्ययनमर्थतः सम्यगवगम्य संसाराद्विरज्यन्ते, विरक्ताश्च सन्तः संसाराद्विनिर्जिगमिषवः संयमाध्वनि यथाऽऽगमं सम्यक् प्रवृत्तिमातन्वते, प्रवृत्तानां च संयमप्रकर्षवशत उपजायते सकलकर्म्मक्षयान्निःश्रेयसावाप्तिरिति, उक्तं च–"सम्यग्भावपरिज्ञानाद्विरक्ता भवतो जनाः । क्रियाऽऽसक्ता ह्यविघ्नेन, गच्छन्ति परमां गतिम् ॥ १ ॥" इति, अभिधेयं जीवाजीवस्वरूपं, तच्च प्राक् प्रदर्शितनामव्युत्पत्तिसामर्थ्यमात्रादवगतम् । सम्बन्धो द्वेधा–उपायोपेयभावलक्षणो गुरुपर्वक्रमलक्षणश्च, तत्राद्यस्तर्कानुसारिणः प्रति, तद्यथा–वचनरूपापन्नं प्रकरणमुपायः तत्परिज्ञानं चोपेयं, गुरुपर्वक्रमलक्षणः केवलश्रद्धानुसारिणः प्रति, तं चाग्रे स्वयमेव सूत्रकृदभिधास्यति। इदं च प्रज्ञापनाख्यमुपाङ्गं सम्यग्ज्ञानहेतुत्वादत एव परम्परया मुक्तिपदप्रापकत्वात् श्रेयोभूतम्, अतो मा भूदत्र विघ्न इति विघ्नविनायकोपशान्तये शिष्याणां मङ्गलबुद्धिपरिग्रहाय स्वतो मङ्गलभूतस्याप्यस्यादिमध्यावसानेषु मङ्गलमभिधातव्यम्, आदिमङ्गलं ह्यविघ्नेन शास्त्रपारगमनार्थं, मध्यमङ्गलमवगृहीतशास्त्रार्थस्थिरीकरणार्थम्, अन्तमङ्गलं शिष्यप्रशिष्यपरम्परया शास्त्रस्याव्यवच्छेदार्थं, उक्तं च–"तं मङ्गलमाईए मज्झे पज्जंतए य सत्थस्स । पढमं सत्थत्थाविग्घपारगमणाय निद्दिट्ठं ॥१॥ तस्सेव य थेज्जत्थं मज्झिमयं अन्तिमंपि तस्सेव । अव्वोच्छित्तिनिमित्तं

१ तन्मङ्गलमादौ मध्ये पर्यन्ते च शास्त्रस्य । प्रथमं शास्त्रार्थो (स्त्रस्या) विघ्नपारगमनाय निर्दिष्टम् ॥ १ ॥ तस्यैव च (तु) स्थैर्यार्थं मध्यमन्त्यमपि तस्यैव । अव्युच्छित्तिनिमित्तं + प्रदर्शितमेव व्यु० प्र०

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

'प्रज्ञापना' पदस्य उपोद्घातः

प्रत सूत्रांक ||१|| + गाथा-१ दीप अनुक्रम [१]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्तिः

सिस्सपसिस्साइवंसस्स ॥ २ ॥" तत्र प्रथमपदगतेन 'ववगयजरमरणभये' इत्यादिना ग्रन्थेनादिमङ्गलम्, इष्टदेवता-स्तवस्य परममङ्गलत्वात्, उपयोगपदगतेन 'कइविहे णं भन्ते ! उवओगे पन्नत्ते' इत्यादिना मध्यमङ्गलम्, उपयोगस्य ज्ञानरूपत्वात्, ज्ञानस्य च कर्मक्षयं प्रति प्रधानकारणतया मङ्गलत्वात्, न च कर्मक्षयं प्रति प्रधानकारणता तस्य न प्रसिद्धा, तस्याः साक्षादागमेऽभिधानात्,तथा चागमः–"[1]जं अन्नाणी कम्मं खवेइ बहुयाहिं वासकोडीहिं। तं नाणी तिहि गुत्तो खवेइ उस्सासमित्तेणं ॥ १ ॥" तथा समुद्घातपदगतेन केवलिसमुद्घातपरिसमाप्त्युत्तरकालभाविना सिद्धाधिकारप्रतिबद्धेन—[3]निच्छिन्नसव्वदुक्खा जाइजरामरणबन्धणविमुक्का। सासयमव्वाबाहं चिट्ठन्ति सुही सुहं पत्ता ॥ १ ॥" इत्यादिना अवसानमङ्गलम् ॥ अधुनाऽऽदिमङ्गलसूत्रं व्याख्यायते—

ववगयजरमरणभये सिद्धे अभिवन्दिऊण तिविहेणं। वन्दामि जिणवरिन्दं तेलोक्कगुरुं महावीरं ॥ १ ॥

सितं–बद्धमष्टप्रकारं कर्मेन्धनं ध्मातं–दग्धं जाज्वल्यमानशुक्लध्यानानलेन यैस्ते निरुक्तविधिना सिद्धाः, अथवा 'षिधु गतौ' सेधन्ति स्म–अपुनरावृत्त्या निर्वृतिपुरीमगच्छन् यदिवा 'षिध संराद्धौ' सिध्यन्ति स्म–निष्ठितार्था भव-न्ति स्म यद्वा 'षिधु शास्त्रे माङ्गल्ये च' सेधन्ते स्म–शासितारोऽभवन् मङ्गल्यरूपतां वाऽनुभवन्ति स्मेति सिद्धाः, अथवा

१ शिष्यप्रशिष्यादिवंशे ॥ २ ॥ २ यदज्ञानी कर्म क्षपयति बहुकाभिर्वर्षकोटीभिः। तत् ज्ञानी त्रिभिर्गुप्तः क्षपयत्युच्छ्वासमात्रेण ॥ १ ॥
३ निश्छिन्नसर्वदुःखा जातिजरामरणबन्धनविमुक्ताः। शाश्वतमव्याबाधं तिष्ठन्ति सुखिनः सुखं प्राप्ताः ॥ १ ॥

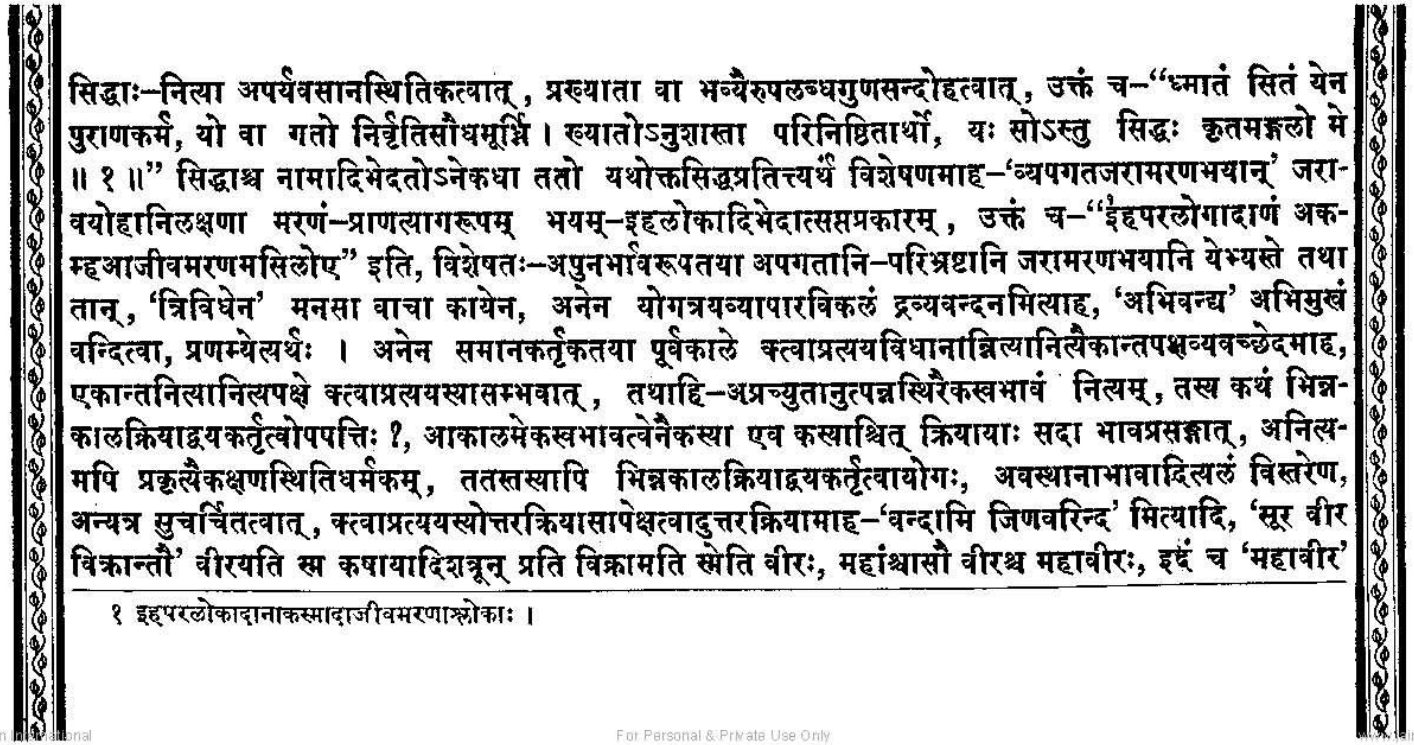
॥ २ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

'प्रज्ञापना' पदस्य उपोद्घातः, 'प्रज्ञापना' पदस्य मङ्गलम्

प्रत सूत्रांक ||१|| + गाथा-१ दीप अनुक्रम [१]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५]उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्तिः



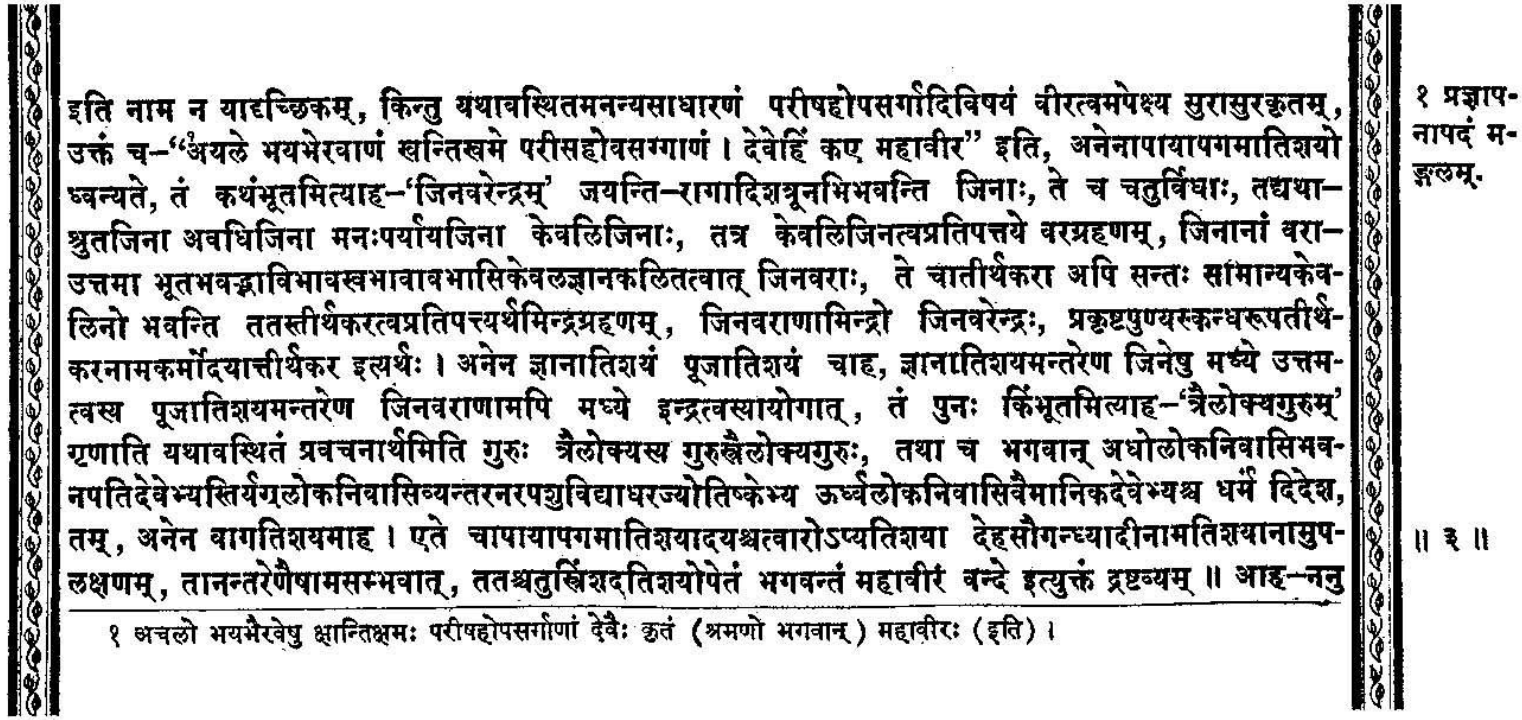
सिद्धाः–नित्या अपर्यवसानस्थितिकत्वात्, प्रख्याता वा भव्यैरुपलब्धगुणसन्दोहत्वात्, उक्तं च–"ध्मातं सितं येन पुराणकर्म, यो वा गतो निर्वृतिसौधमूर्ध्नि। ख्यातोऽनुशास्ता परिनिष्ठितार्थो, यः सोऽस्तु सिद्धः कृतमङ्गलो मे ॥ १ ॥" सिद्धाश्च नामादिभेदतोऽनेकधा ततो यथोक्तसिद्धप्रतित्त्यर्थं विशेषणमाह–'व्यपगतजरामरणभयान्' जरा-वयोहानिलक्षणा मरणं–प्राणत्यागरूपम् भयम्–इहलोकादिभेदात्सप्तप्रकारम्, उक्तं च–"[1]इहपरलोगादाणं अक-म्हआजीवमरणमसिलोए" इति, विशेषतः–अपुनर्भावरूपतया अपगतानि–परिभ्रष्टानि जरामरणभयानि येभ्यस्ते तथा तान्, 'त्रिविधेन' मनसा वाचा कायेन, अनेन योगत्रयव्यापारविकलं द्रव्यवन्दनमित्याह, 'अभिवन्द्य' अभिमुखं वन्दित्वा, प्रणम्येत्यर्थः। अनेन समानकर्तृकतया पूर्वकाले क्त्वाप्रत्ययविधानान्नित्यानित्यैकान्तपक्षव्यवच्छेदमाह, एकान्तनित्यानित्यपक्षे क्त्वाप्रत्ययस्यासम्भवात्, तथाहि–अप्रच्युतानुत्पन्नस्थिरैकस्वभावं नित्यम्, तस्य कथं भिन्न-कालक्रियाद्वयकर्तृत्वोपपत्तिः ?, आकालमेकस्वभावत्वेनैकस्या एव कस्याश्चित् क्रियायाः सदा भावप्रसङ्गात्, अनित्य-मपि प्रकृत्यैकक्षणस्थितिधर्मकम्, ततस्तस्यापि भिन्नकालक्रियाद्वयकर्तृत्वायोगः, अवस्थानाभावादित्यलं विस्तरेण, अन्यत्र सुचर्चितत्वात्, क्त्वाप्रत्ययस्योत्तरक्रियासापेक्षत्वादुत्तरक्रियामाह–'वन्दामि जिणवरिन्द' मित्यादि, 'सूर वीर विक्रान्तौ' वीरयति स्म कषायादिशत्रून् प्रति विक्रामति स्मेति वीरः, महांश्चासौ वीरश्च महावीरः, इदं च 'महावीर'

१ इहपरलोकादानाकस्मादाजीवमरणाश्लोकाः।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

'प्रज्ञापना' पदस्य मङ्गलम्

प्रत सूत्रांक ||१|| + गाथा-१ दीप अनुक्रम [१]



प्रज्ञापना-याः मल-य० वृत्तौ. ॥ ३ ॥

इति नाम न यादृच्छिकम्, किन्तु यथावस्थितमनन्यसाधारणं परीषहोपसर्गादिविषयं वीरत्वमपेक्ष्य सुरासुरकृतम्, उक्तं च–"[1]अयले भयभेरवाणं खन्तिखमे परीसहोवसग्गाणं । देवेहिं कए महावीर" इति, अनेनापायापगमातिशयो ध्वन्यते, तं कथंभूतमित्याह–'जिनवरेन्द्रम्' जयन्ति–रागादिशत्रूनभिभवन्ति जिनाः, ते च चतुर्विधाः, तद्यथा– श्रुतजिना अवधिजिना मनःपर्यायजिना केवलिजिनाः, तत्र केवलिजिनत्वप्रतिपत्तये वरग्रहणम्, जिनानां वरा– उत्तमा भूतभवद्भाविभावस्वभावावभासिकेवलज्ञानकलितत्वात् जिनवराः, ते चातीर्थकरा अपि सन्तः सामान्यकेव-लिनो भवन्ति ततस्तीर्थकरत्वप्रतिपत्त्यर्थमिन्द्रग्रहणम्, जिनवराणामिन्द्रो जिनवरेन्द्रः, प्रकृष्टपुण्यस्कन्धरूपतीर्थ-करनामकर्मोदयात्तीर्थकर इत्यर्थः । अनेन ज्ञानातिशयं पूजातिशयं चाह, ज्ञानातिशयमन्तरेण जिनेषु मध्ये उत्तम-त्वस्य पूजातिशयमन्तरेण जिनवराणामपि मध्ये इन्द्रत्वस्यायोगात्, तं पुनः किंभूतमित्याह–'त्रैलोक्यगुरुम्' गृणाति यथावस्थितं प्रवचनार्थमिति गुरुः त्रैलोक्यस्य गुरुस्त्रैलोक्यगुरुः, तथा च भगवान् अधोलोकनिवासिभव-नपतिदेवेभ्यस्तिर्यग्लोकनिवासिव्यन्तरनरपशुविद्याधरज्योतिष्केभ्य ऊर्ध्वलोकनिवासिवैमानिकदेवेभ्यश्च धर्मं दिदेश, तम्, अनेन वागतिशयमाह । एते चापायापगमातिशयादयश्चत्वारोऽप्यतिशया देहसौगन्ध्यादीनामतिशयानामुप-लक्षणम्, तानन्तरेणैषामसम्भवात्, ततश्चतुस्त्रिंशदतिशयोपेतं भगवन्तं महावीरं वन्दे इत्युक्तं द्रष्टव्यम् ॥ आह–ननु

१ अचलो भयभैरवेषु क्षान्तिक्षमः परीषहोपसर्गाणां देवैः कृतं (श्रमणो भगवान्) महावीरः (इति)।

१ प्रज्ञाप-नापदं म-ङ्गलम्.

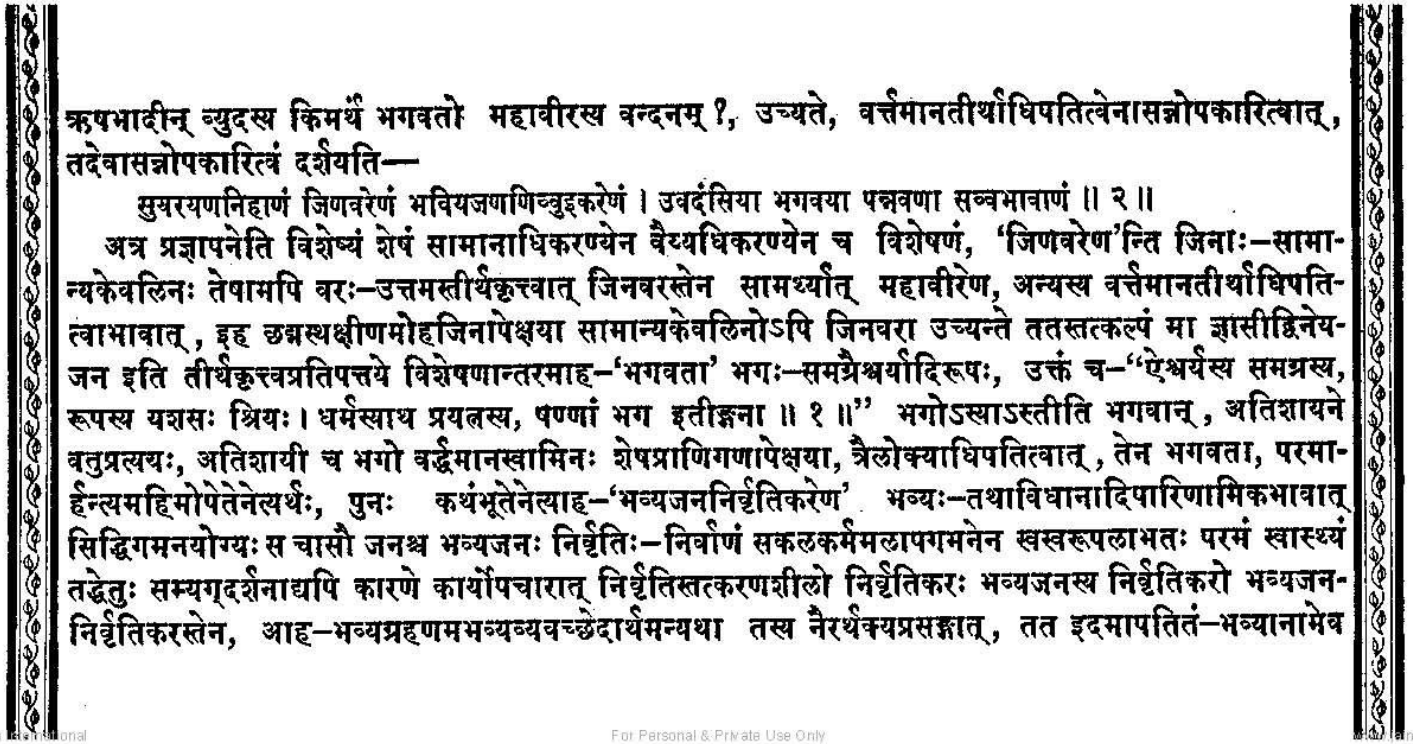
॥ ३ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

'प्रज्ञापना' पदस्य मङ्गलम्

प्रत सूत्रांक ||२|| + गाथा-२ दीप अनुक्रम [२]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्तिः



ऋषभादीन् व्युदस्य किमर्थं भगवतो महावीरस्य वन्दनम् ?, उच्यते, वर्त्तमानतीर्थाधिपतित्वेनासन्नोपकारित्वात्, तदेवासन्नोपकारित्वं दर्शयति—

सुरवरणनिहाणं जिणवरेणं भवियजणणिव्वुइकरेणं । उवदंसिया भगवया पन्नवणा सव्वभावाणं ॥ २ ॥

अत्र प्रज्ञापनेति विशेष्यं शेषं सामानाधिकरण्येन वैय्यधिकरण्येन च विशेषणं, 'जिणवरेण'न्ति जिनाः—सामान्यकेवलिनः तेषामपि वरः—उत्तमस्तीर्थकृत्त्वात् जिनवरस्तेन सामर्थ्यात् महावीरेण, अन्यस्य वर्त्तमानतीर्थाधिपतित्वाभावात्, इह छद्मस्थक्षीणमोहजिनापेक्षया सामान्यकेवलिनोऽपि जिनवरा उच्यन्ते ततस्तत्कल्पं मा ज्ञासीद्विनेयजन इति तीर्थकृत्त्वप्रतिपत्तये विशेषणान्तरमाह—'भगवता' भगः—समग्रैश्वर्यादिरूपः, उक्तं च—"ऐश्वर्यस्य समग्रस्य, रूपस्य यशसः श्रियः । धर्मस्याथ प्रयत्नस्य, षण्णां भग इतीङ्गना ॥ १ ॥" भगोऽस्याऽस्तीति भगवान्, अतिशायने वतुप्रत्ययः, अतिशायी च भगो वर्द्धमानस्वामिनः शेषप्राणिगणापेक्षया, त्रैलोक्याधिपतित्वात्, तेन भगवता, परमार्हन्त्यमहिमोपेतेनेत्यर्थः, पुनः कथंभूतेनेत्याह—'भव्यजननिर्वृतिकरेण' भव्यः—तथाविधानादिपारिणामिकभावात् सिद्धिगमनयोग्यः स चासौ जनश्च भव्यजनः निर्वृतिः—निर्वाणं सकलकर्ममलापगमनेन स्वस्वरूपलाभतः परमं स्वास्थ्यं तद्धेतुः सम्यग्दर्शनाद्यपि कारणे कार्योपचारात् निर्वृतिस्तत्करणशीलो निर्वृतिकरः भव्यजनस्य निर्वृतिकरो भव्यजननिर्वृतिकरस्तेन, आह—भव्यग्रहणमभव्यव्यवच्छेदार्थमन्यथा तस्य नैरर्थक्यप्रसङ्गात्, तत इदमापतितं—भव्यानामेव

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

'प्रज्ञापना' पदस्य उद्भवः

प्रत सूत्रांक ॥२॥ + गाथा-२ दीप अनुक्रम [२]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्तिः

सम्यग्दर्शनादिकं करोति नाभव्यानाम्, न चैतदुपपन्नम्, भगवतो वीतरागत्वेन पक्षपातासम्भवात्, नैतत्सारम्, सम्यक्वस्तुतत्त्वापरिज्ञानात्, भगवान् हि सवितेव प्रकाशमविशेषेण प्रवचनार्थमातनोति, केवलमभव्यानां तथास्वाभाव्यादेव तामसखगकुलानामिव सूर्यप्रकाशो न प्रवचनार्थ उपदिश्यमानोऽपि उपकाराय प्रभवति, तथा चाह वादिमुख्यः–"सद्धर्मबीजवपनानघकौशलस्य, यल्लोकबान्धव ! तवापि खिलान्यभूवन् । तन्नाद्भुतं खगकुलेषु हि तामसेषु, सूर्यांशवो मधुकरीचरणावदाताः ॥ १ ॥" ततो भव्यानामेव भगवद्वचनादुपकारो जायते इति भव्यजननिर्वृतिकरेणेत्युक्तम् । किमित्याह–'उवदंसिय'त्ति उप–सामीप्येन यथा श्रोतृणां झटिति यथाऽवस्थितवस्तुतत्त्वावबोधो भवति तथा, स्फुटवचनैरित्यर्थः, दर्शिता–श्रवणगोचरं नीता, उपदिष्टा इत्यर्थः, काऽसौ ?–'प्रज्ञापना' प्रज्ञाप्यन्ते–प्ररूप्यन्ते जीवादयो भावा अनया शब्दसंहत्या इति प्रज्ञापना, किंविशिष्टेत्यत आह–'श्रुतरत्ननिधानम्' इह रत्नानि द्विविधानि भवन्ति, तद्यथा–द्रव्यरत्नानि भावरत्नानि (च), तत्र द्रव्यरत्नानि वैडूर्यमरकतेन्द्रनीलादीनि, भावरत्नानि श्रुतव्रतादीनि, तत्र द्रव्यरत्नानि न तात्त्विकानीति भावरत्नैरिहाधिकारः, तत एवं समासः–श्रुतान्येव रत्नानि श्रुतरत्नानि न तु श्रुतानि च रत्नानि च, नापि श्रुतानि रत्नानीवेति, कुत इति चेत् ?, उच्यते, प्रथमपक्षे श्रुतव्यतिरिक्तैर्द्रव्यरत्नैरिहाधिकाराभावात्, द्वितीयपक्षे तु श्रुतानामेव तात्त्विकरत्नत्वात्, शेषरत्नैरुपमाया अयोगात्, निधानमिव निधानं श्रुतरत्नानां निधानं श्रुतरत्ननिधानं, केषां प्रज्ञापनेत्यत आह–'सर्वभावानाम्' सर्वे च ते भावाश्च सर्वभावाः–

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	'प्रज्ञापना' पदस्य उद्भवः

प्रत सूत्रांक ||प्र०१--२||

दीप अनुक्रम [३-४]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्तिः

जीवाजीवाश्रवबन्धसंवरनिर्जरामोक्षाः, तथाहि–अस्यां प्रज्ञापनाया षट्त्रिंशत्पदानि तत्र प्रज्ञापना बहुवक्तव्यविशेषचरमपरिणामसञ्ज्ञेषु पञ्चसु पदेषु जीवाजीवानां प्रज्ञापना प्रयोगपदे क्रियापदे चाश्रवस्य 'कायवाङ्मनःकर्म योगः (स) आश्रवः' (तत्त्वा० अ० ६ सू०१–२) इति वचनात्, कर्मप्रकृतिपदे बन्धस्य समुद्घातपदे केवलिसमुद्घातप्ररूपणायां संवरनिर्जरामोक्षाणां त्रयाणां, शेषेषु तु स्थानादिषु पदेषु क्वचित्कस्यचिदिति, अथवा 'सर्वभावाना'मिति द्रव्यक्षेत्रकालभावानाम्, एतद्व्यतिरेकेणान्यस्य प्रज्ञापनीयस्याभावात्, तत्र प्रज्ञापनापदे जीवाजीवद्रव्याणां प्रज्ञापना स्थानपदे जीवाधारस्य क्षेत्रस्य स्थितिपदे नारकादिस्थितिनिरूपणात् कालस्य शेषपदेषु सङ्ख्याज्ञानादिपर्यायव्युत्क्रान्त्युच्छ्वासादीनां भावानामिति। अस्याश्च गाथाया 'अज्झयणमिणं चित्त' मित्यनया गाथया सहाभिसम्बन्धः ॥ केवलं येनेयं सत्त्वानुग्रहाय श्रुतसागरादुद्धृता असावप्यासन्नतरोपकारित्वादस्मद्विधानां नमस्कारार्हः इति तन्नमस्कारविषयमिदमपान्तराल एवान्यकर्तृकं गाथाद्वयम्—

वायगवरवंसाओ तेवीसइमेण धीरपुरिसेणं। दुद्धरधरेण मुणिणा पुव्वसुयसमिद्धबुद्धीण ॥ १ ॥
सुयसागरा विणेऊण जेण सुयरयणमुत्तमं दिन्नं। सीसगणस्स भगवओ तस्स नमो अज्जसामस्स ॥ २ ॥ (प्र०)

वाचकाः–पूर्वविदः वाचकाश्च ते वराश्च वाचकवराः–वाचकप्रधानाः तेषां वंशः–प्रवाहो वाचकवरवंशः तस्मिन्, सूत्रे च पञ्चमीनिर्देशः प्राकृतत्वात्, प्राकृते हि सर्वासु विभक्तिष्वपि सर्वा विभक्तयो यथायोगं प्रवर्त्तन्ते, तथा चाह पाणिनिः स्वप्राकृतव्याकरणे–'व्यत्ययोऽप्यासा' मिति, त्रयोविंशतितमेन तथा च सुधर्मस्वामिन आरभ्य भगवा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

३६ अध्ययनानि-नामानि, कर्ता-सम्बन्धी गाथा-द्वयम्

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक || प्र०१-प्र०२||

दीप अनुक्रम [३-४]

प्रज्ञापनायाः मलय० वृत्तौ. ॥ ५ ॥

नार्यश्यामस्त्रयोविंशतितम एव, किंभूतेन ?–'धीरपुरुषेण' धीः–बुद्धिस्तया राजते इति धीरः धीरश्चासौ पुरुषश्च धीरपुरुषस्तेन, तथा दुर्द्धराणि प्राणातिपातादिनिवृत्तिलक्षणानि पञ्च महाव्रतानि धारयतीति दुर्द्धरधरस्तेन, तथा मन्यते जगतस्त्रिकालावस्थामिति मुनिस्तेन, विशिष्टसंवित्समन्वितेनेत्यर्थः, पुनः कथंभूतेनेत्याह–'पूर्वश्रुतसमृद्धबुद्धिना' पूर्वाणि च तत् श्रुतं च पूर्वश्रुतं तेन समृद्धा–वृद्धिमुपगता बुद्धिर्यस्य स पूर्वश्रुतसमृद्धबुद्धिस्तेन, आह–यो वाचकवरवंशान्तर्गतः स पूर्वश्रुतसमृद्धबुद्धिरेव भवति, ततः किमनेन विशेषणेन ?, सत्यमेतत्, किन्तु पूर्वविदोऽपि षट्स्थानपतिता भवन्ति, तथा च चतुर्दशपूर्वविदामपि मतिमधिकृत्य षट्स्थानकं वक्ष्यति, तत आधिक्यप्रदर्शनार्थमिदं विशेषणमित्यदोषः, 'समिद्धबुद्धीणे' त्यत्र णाशब्दस्य ह्रस्वत्वं द्विशब्दस्य च दीर्घताऽऽर्षत्वात्, तथा श्रुतमनर्वाक्पारत्वात् सुभाषितरत्नयुक्तत्वाच्च सागर इव श्रुतसागरः 'व्याघ्रादिभिर्गौणैस्तद्गुणानुक्ताविति(म० नामप्र० पा० ८ सू० ३१)' समासः, तस्मात् 'विणेऊणन्ति' देशीवचनमेतत्, साम्प्रतकालीनपुरुषयोग्यं वीनयित्वेत्यर्थः, येनेदं प्रज्ञापनारूपं श्रुतरत्नमुत्तमं–प्रधानं, प्राधान्यं च न शेषश्रुतरत्नापेक्षया, किन्तु स्वरूपतः, दत्तं शिष्यगणाय तस्मै, भगवते–ज्ञानैश्वर्यधर्मादिमते आरात्सर्वहेयधर्मेभ्यो यातः–प्राप्तो गुणैरित्यार्यः स चासौ श्यामश्च आर्यश्यामः तस्मै, सूत्रे च षष्ठी चतुर्थ्यर्थे द्रष्टव्या, 'छट्ठिविभत्तीऍ मन्नइ चउत्थी' इति वचनात् ॥ अधुनोक्तसम्बन्धेयं गाथा—

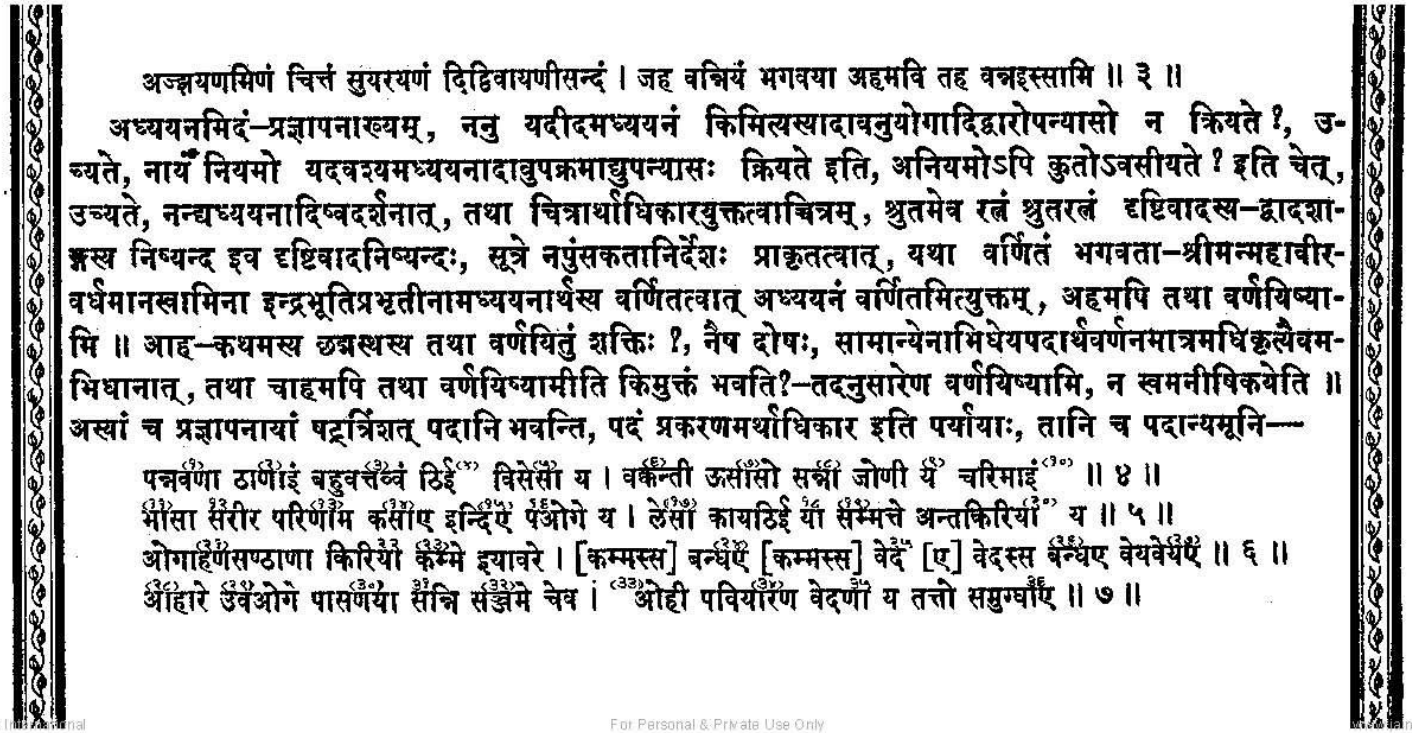
१ षष्ठीविभक्तया भण्यते चतुर्थी।

१ प्रज्ञापनापदं आर्यश्यामाय नतिः.

॥ ५ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कर्ता-सम्बन्धी गाथा-द्वयम्

प्रत सूत्रांक ॥३॥ + गाथा-३ दीप अनुक्रम [५]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति: 

अज्झयणमिणं चित्तं सुयरयणं दिट्ठिवायणीसन्दं । जह वन्नियं भगवया अहमवि तह वन्नइस्सामि ॥ ३ ॥

अध्ययनमिदं–प्रज्ञापनाख्यम्, ननु यदीदमध्ययनं किमित्यस्यादावनुयोगादिद्वारोपन्यासो न क्रियते ?, उच्यते, नायं नियमो यदवश्यमध्ययनादावुपक्रमाद्युपन्यासः क्रियते इति, अनियमोऽपि कुतोऽवसीयते ? इति चेत्, उच्यते, नन्वध्ययनादिष्वदर्शनात्, तथा चित्रार्थाधिकारयुक्तत्वाच्चित्रम्, श्रुतमेव रत्नं श्रुतरत्नं दृष्टिवादस्य–द्वादशाङ्गस्य निष्यन्द इव दृष्टिवादनिष्यन्दः, सूत्रे नपुंसकतानिर्देशः प्राकृतत्वात्, यथा वर्णितं भगवता–श्रीमन्महावीरवर्धमानस्वामिना इन्द्रभूतिप्रभृतीनामध्ययनार्थस्य वर्णितत्वात् अध्ययनं वर्णितमित्युक्तम्, अहमपि तथा वर्णयिष्यामि ॥ आह–कथमस्य छद्मस्थस्य तथा वर्णयितुं शक्तिः ?, नैष दोषः, सामान्येनाभिधेयपदार्थवर्णनमात्रमधिकृत्यैवमभिधानात्, तथा चाहमपि तथा वर्णयिष्यामीति किमुक्तं भवति?–तदनुसारेण वर्णयिष्यामि, न स्वमनीषिकयेति ॥ अस्यां च प्रज्ञापनायां षट्त्रिंशत् पदानि भवन्ति, पदं प्रकरणमर्थाधिकार इति पर्यायाः, तानि च पदान्यमूनि—

पन्नवणा ठाणाइं[2] बहुवत्तव्वं ठिई[4] विसेसा[5] य । वक्कन्ती[6] ऊसासो[9] सन्ना[10] जोणी[11] य चरिमाइं[13] ॥ ४ ॥
भासा[14] सरीर परिणाम[15] कसाए[17] इन्दिए[18] पओगे[19] य । लेसा[20] कायठिई[22] या[23] सम्मत्ते[24] अन्तकिरिया[25] य ॥ ५ ॥
ओगाहणसंठाणा[26] किरिया[32] कम्मे[33] इयावरे । [कम्मस्स] बन्धए[34] [कम्मस्स] वेदे[35] [ए] वेदस्स बन्धए[36] वेयवेयए[37] ॥ ६ ॥
आहारे[38] उवओगे[39] पासणया[40] सन्नि[41] सञ्जमे[42] चेव । ओही[43] पवियारणे[44] वेदणा[45] य तत्तो समुग्घाए[46] ॥ ७ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	३६ अध्ययनानि/(पदानि)-नामानि

प्रत सूत्रांक ॥४-७॥ + गाथा- ४-७

दीप अनुक्रम [६-९]

तत्र प्रथमं पदं प्रज्ञापनाविषयं प्रश्नमधिकृत्य प्रवृत्तत्वात् प्रज्ञापना १ एवं द्वितीयं स्थानानि २ तृतीयं बहुवक्तव्यम् ३ चतुर्थं स्थितिः ४ पञ्चमं विशेषाख्यं ५ षष्ठं व्युत्क्रान्तिः, व्युत्क्रान्तिलक्षणार्थाधिकारयुक्तत्वात् ६ सप्तममुच्छ्वासः७ अष्टमं सञ्ज्ञा ८ नवमं योनिः ९ दशमं चरमाणि चरमाणीति प्रश्नमुद्दिश्य प्रवृत्तत्वात् १० एकादशं भांषा ११ द्वादशं शरीरं १२ त्रयोदशं परिणामः १३ चतुर्दशं कषायं १४ पञ्चदशमिन्द्रियं १५ षोडशं प्रयोगः १६ सप्तदशं लेश्या १७ अष्टादशं कायस्थितिः १८ एकोनविंशतितमं सम्यक्त्वम् १९ विंशतितममन्तक्रिया २० एकविंशतितममवगाहनास्थानं २१ द्वाविंशतितमं क्रिया २२ त्रयोविंशतितमं कर्म २३ चतुर्विंशतितमं कर्मणो बन्धकः, तस्मिन् हि यथा जीवः कर्मणो बन्धको भवति तथा प्ररूप्यते इति तत्तथानाम २४ एवं पञ्चविंशतितमं कर्मवेदकः २५ षड्विंशतितमं वेदस्य बन्धक इति, वेदयते–अनुभवतीति वेदस्तस्य बन्ध एव बन्धकः, किमुक्तं भवति ?–कति प्रकृतीर्वेदयमानस्य कतिप्रकृतीनां बन्धो भवतीति तत्र निरूप्यते ततस्तद्वेदस्य बन्ध इति नाम २६ एवं कां प्रकृतिं वेदयमानः कति प्रकृतीर्वेदयति इत्यर्थप्रतिपादकं वेदवेदको नाम सप्तविंशतितमम् २७ अष्टाविंशतितममाहारप्रतिपादकत्वादाहारः २८ एवमेकोनत्रिंशत्तममुपयोगः २९ त्रिंशत्तमं 'पासणय'त्ति दर्शनता ३० एकत्रिंशत्तमं सञ्ज्ञा ३१ द्वात्रिंशत्तमं संयमः ३२ त्रयस्त्रिंशत्तममवधिः ३३ चतुस्त्रिंशत्तमं प्रविचारणा ३४ पञ्चत्रिंशत्तमं वेदना ३५ षट्त्रिंशत्तमं समुद्घातः ३६ ॥ तदेवमुपन्यस्तानि पदानि ॥ साम्प्रतं यथाक्रमं पदगतानि सूत्राणि वक्तव्यानि, तत्र प्रथमपदगतमिदमादिसूत्रम्—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

३६ अध्ययनानि/(पदानि)-नामानि

प्रत सूत्रांक ॥१॥

दीप अनुक्रम [१०]

से किं तं पन्नवणा ?, पन्नवणा दुविहा पन्नत्ता, तंजहा–जीवपन्नवणा य अजीवपन्नवणा य ॥ (सू०१)

अथास्य सूत्रस्य कः प्रस्तावः ?, उच्यते, प्रश्नसूत्रमिदम्, एतच्चादावुपन्यस्तमिदं ज्ञापयति–पृच्छतो मध्यस्थबुद्धिमतोऽर्थिनो भगवदर्हदुपदिष्टतत्त्वप्ररूपणा कार्या, न शेषस्य, तथा चोक्तम्–'मध्यस्थो बुद्धिमानर्थी, श्रोता पात्रमिति स्मृतः', तत्र सेशब्दो मागधदेशीप्रसिद्धो निपातः तत्रशब्दार्थे, अथवा अथशब्दार्थे, स च वाक्योपन्यासार्थः, किमिति परप्रश्ने, 'तं'ति तावदिति द्रष्टव्यम्, तच्च क्रमोद्द्योतने, तत एष समुदायार्थः–तिष्ठन्तु स्थानादीनि पदानि प्रष्टव्यानि, वाचः क्रमवर्त्तित्वात् प्रज्ञापनाऽनन्तरं च तेषामुपन्यस्तत्वात्, तत्रैतावदेव तावत् पृच्छामि–किं प्रज्ञापनेति, ? अथवा प्राकृतशैल्या 'अभिधेयवल्लिङ्गवचनानि योजनीयानि' इति न्यायादेवं द्रष्टव्यम्, तत्र का तावत् प्रज्ञापनेति ?, एवं सामान्येन केनचित्प्रश्ने कृते सति भगवान् गुरुः शिष्यवचनानुरोधेनादरार्थं किञ्चित् शिष्योक्तं प्रत्युच्चार्याह–'पन्नवणा दुविहा पन्नत्ता' इति, अनेन चागृहीतशिष्याभिधानेन निर्वचनसूत्रेणैतदाचष्टे–न सर्वमेव सूत्रं गणधरप्रश्नतीर्थकरनिर्वचनरूपम्, किन्तु किञ्चिदन्यथाऽपि, बाहुल्येन तु तथारूपम्, यत उक्तम्–[1]'अत्थं भासइ अरिहा सुत्तं गन्थन्ति गणहरा निउण'मित्यादि, तत्र प्रज्ञापनेति पूर्ववत्, 'द्विविधा' द्विप्रकारा 'प्रज्ञप्ता' प्ररूपिता, यदा तीर्थकरा एव निर्वक्तारस्तदाऽयमर्थोऽवसेयः–अन्यैरपि तीर्थकरैः, यदा पुनरन्यः कश्चिदाचार्यस्तन्मतानुसारी तदा तीर्थकरगणधरैरिति, द्वैवि-

१ अर्थं भाषतेऽर्हन् सूत्रं ग्रथ्नन्ति गणधरा निपुणम् ।

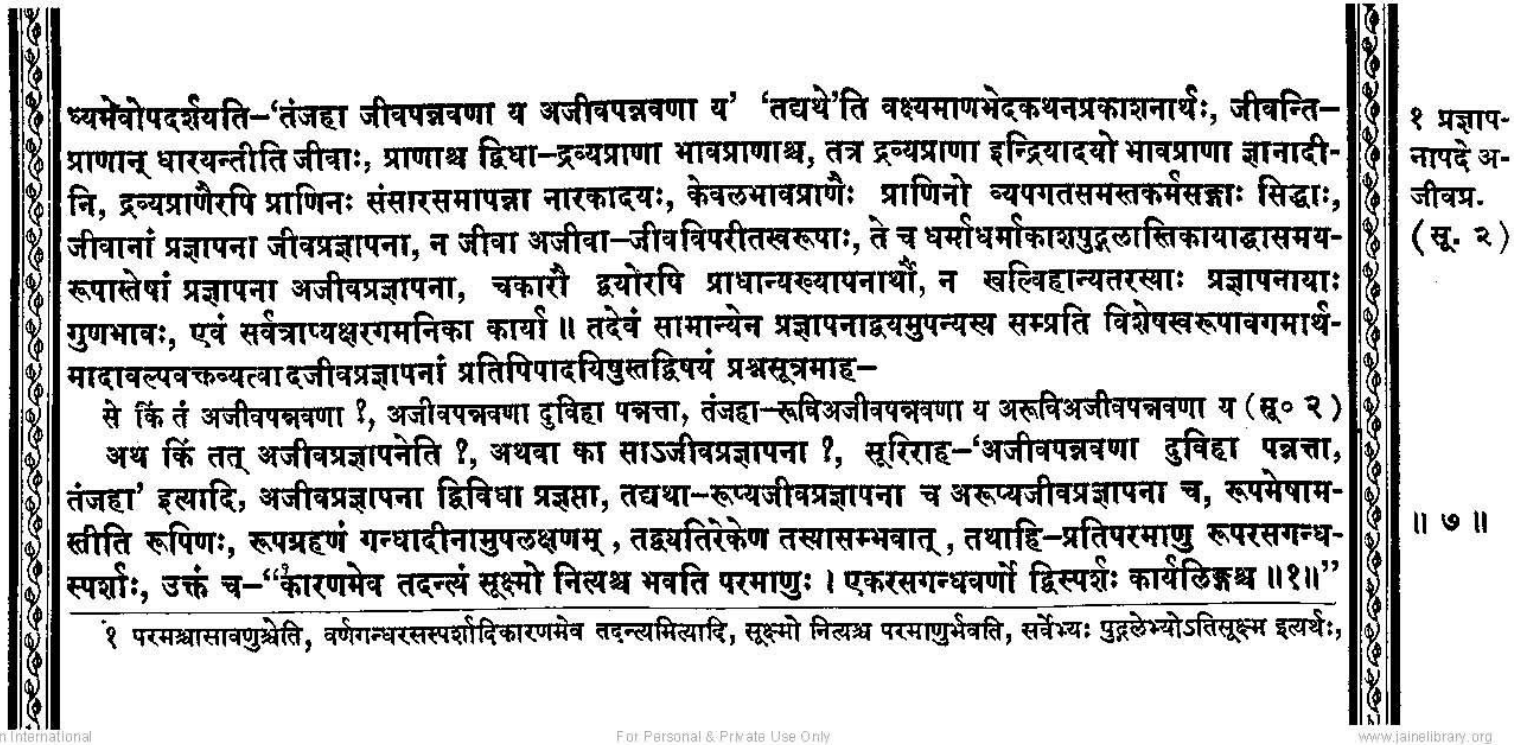
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ पद (०१) "प्रज्ञापना" आरभ्यते

मूल-सूत्रस्य आरम्भः, प्रश्नसूत्रम् एवं तस्योत्तरे विशद् विवरणं

प्रत सूत्रांक [१]

दीप अनुक्रम [१०]



प्रज्ञापनायाः मलय० वृत्तौ. ॥ ७ ॥

ध्यमेवोपदर्शयति–'तंजहा जीवपन्नवणा य अजीवपन्नवणा य' 'तद्यथे'ति वक्ष्यमाणभेदकथनप्रकाशनार्थः, जीवन्ति–प्राणान् धारयन्तीति जीवाः, प्राणाश्च द्विधा–द्रव्यप्राणा भावप्राणाश्च, तत्र द्रव्यप्राणा इन्द्रियादयो भावप्राणा ज्ञानादीनि, द्रव्यप्राणैरपि प्राणिनः संसारसमापन्ना नारकादयः, केवलभावप्राणैः प्राणिनो व्यपगतसमस्तकर्मसङ्गाः सिद्धाः, जीवानां प्रज्ञापना जीवप्रज्ञापना, न जीवा अजीवा–जीवविपरीतस्वरूपाः, ते च धर्माधर्माकाशपुद्गलास्तिकायाद्धासमयरूपास्तेषां प्रज्ञापना अजीवप्रज्ञापना, चकारौ द्वयोरपि प्राधान्यख्यापनार्थौ, न खल्विहान्यतरस्याः प्रज्ञापनायाः गुणभावः, एवं सर्वत्राप्यक्षरगमनिका कार्या ॥ तदेवं सामान्येन प्रज्ञापनाद्वयमुपन्यस्य सम्प्रति विशेषस्वरूपावगमार्थमादावल्पवक्तव्यत्वादजीवप्रज्ञापनां प्रतिपिपादयिषुस्तद्विषयं प्रश्नसूत्रमाह–

से किं तं अजीवपन्नवणा ?, अजीवपन्नवणा दुविहा पन्नत्ता, तंजहा–रूविअजीवपन्नवणा य अरूविअजीवपन्नवणा य (सू० २)

अथ किं तत् अजीवप्रज्ञापनेति ?, अथवा का साऽजीवप्रज्ञापना ?, सूरिराह–'अजीवपन्नवणा दुविहा पन्नत्ता, तंजहा' इत्यादि, अजीवप्रज्ञापना द्विविधा प्रज्ञप्ता, तद्यथा–रूप्यजीवप्रज्ञापना च अरूप्यजीवप्रज्ञापना च, रूपमेषामस्तीति रूपिणः, रूपग्रहणं गन्धादीनामुपलक्षणम् , तद्व्यतिरेकेण तस्यासम्भवात् , तथाहि–प्रतिपरमाणु रूपरसगन्धस्पर्शाः, उक्तं च–"[१]कारणमेव तदन्त्यं सूक्ष्मो नित्यश्च भवति परमाणुः । एकरसगन्धवर्णो द्विस्पर्शः कार्यलिङ्गश्च ॥१॥"

१ परमश्चासावणुश्चेति, वर्णगन्धरसस्पर्शादिकारणमेव तदन्त्यमित्यादि, सूक्ष्मो नित्यश्च परमाणुर्भवति, सर्वेभ्यः पुद्गलेभ्योऽतिसूक्ष्म इत्यर्थः,

१ प्रज्ञापनापदे अजीवप्र. (सू. २) ॥ ७ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अजीव-सम्बन्धी प्रज्ञापना

प्रत सूत्रांक [२]

दीप अनुक्रम [११]

तस्मादव्यतिरेकः परस्परं रूपादीनामिति, अथवा रूपं नाम-स्पर्शरूपादिसम्मूर्च्छनात्मिका मूर्त्तिस्तदेषामस्तीति रूपिणः, रूपिणश्च तेऽजीवाश्च रूप्यजीवाः तेषां प्रज्ञापना रूप्यजीवप्रज्ञापना, पुद्गलस्वरूपाजीवप्रज्ञापनेतियावत् , पुद्गलानामेव रूपादिमत्त्वात् , रूपिव्यतिरेकेणारूपिणो धर्मास्तिकायादयस्ते च तेऽजीवाश्चारूप्यजीवाः तेषां प्रज्ञापना अरूप्यजीवप्रज्ञापना, चशब्दौ प्राग्वत् ॥ तत्राल्पवक्तव्यत्वात् प्रथमतोऽरूप्यजीवप्रज्ञापनां चिकीर्षुरिदमाह—

से किं तं अरूविअजीवपन्नवणा ?, अरूविअजीवपन्नवणा दसविहा पन्नत्ता, तंजहा–धम्मत्थिकाए धम्मत्थिकायस्स देसे धम्मत्थिकायस्स पदेसा अधम्मत्थिकाए अधम्मत्थिकायस्स देसे अधम्मत्थिकायस्स पदेसा आगासत्थिकाए आगासत्थिकायस्स देसे आगासत्थिकायस्स पदेसा अद्धासमए १०, सेत्तं अरूविअजीवपन्नवणा ॥ (सू०३)

सेशब्दोऽथशब्दार्थः, अथ का सा अरूप्यजीवप्रज्ञापना ?, सूरिराह–अरूप्यजीवप्रज्ञापना 'दशविधा' दशप्रकारा

पर्यायार्थतयाऽनित्यत्वेपि द्रव्यार्थतया तु नित्यः, पुनः कीदृशः परमाणुः ?–'एकरसवर्णगन्धः' एक एव वर्णो गन्धो रसश्च परमाणौ यस्मिन् सः, पुनः की०?–'द्विस्पर्शः' द्वौ स्पर्शौ यस्मिन् स शीतोष्णस्निग्धरूक्षाख्यानां चतुर्णां स्पर्शानां मध्यादविरुद्धस्पर्शद्वयोपेत इत्यर्थः, पुनः कीदृशः परमाणुः?–'कार्यलिङ्गः' कार्यं घटपटादिवस्तुजातं तल्लिङ्गं–ज्ञापकं यस्य स कथमित्याह–यतः, तत्परमाण्वाख्यं सर्वेषां पदार्थानामन्त्यं कारणं वर्त्तते, अयमत्र भावार्थः–सर्वेऽपि द्विप्रदेशादयः स्कन्धाः, तथा सङ्ख्यातप्रदेशा असङ्ख्यातप्रदेशा अनन्तप्रदेशाश्च ये स्कन्धास्तेषां सर्वेषां पदार्थानामन्त्यं कारणं परमाणरस्तीत्यर्थः.

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अरूपिअजीव-प्रज्ञापना

प्रज्ञप्ता, अरूप्यजीवानां दशविधत्वात् तत्प्ररूपणाऽपि दशविधोक्ता, तदेव दशविधत्वं दर्शयति–'तंजहे' त्यादि, तद्यथेति वक्ष्यमाणभेदकथनोद्द्योतनार्थः, 'तद्'दशविधत्वम्, यदिवा 'तदि'त्यव्ययं सर्वलिङ्गवचनेषु सा दशविधाऽरूप्यजीवप्रज्ञापना यथा भवति तथा दर्श्यते–'धम्मत्थिकाए'त्ति जीवानां पुद्गलानां च स्वभावत एव गतिपरिणामपरिणतानां तत्स्वभावधरणात्–तत्स्वभावपोषणाद्धर्मः अस्तयश्चेह प्रदेशास्तेषां कायः–सङ्घातः, '[१]गण काए य निकाए खन्धे वग्गे तहेव रासी य' इतिवचनात्,अस्तिकायः प्रदेशसङ्घात इत्यर्थः, धर्मश्चासौ अस्तिकायश्च धर्मास्तिकायः, अनेन च सकलमेव धर्मास्तिकायरूपमवयविद्रव्यमाह, अवयवी च नामावयवानां तथारूपसङ्घातपरिणामविशेष एव, न पुनरवयवद्रव्येभ्यः पृथगर्थान्तरं द्रव्यम्, तथाऽनुपलम्भात्, तन्तव एव हि आतानवितानरूपसङ्घातपरिणामविशेषमापन्ना लोके पटव्यपदेशभाज उपलभ्यन्ते, न तदतिरिक्तं पटाख्यं नाम, उक्तं चान्यैरपि–'तन्त्वादिव्यतिरेकेण, न पटाद्युपलम्भनम् । तन्त्वादयो विशिष्टा हि, पटादिव्यपदेशिनः ॥१॥" कृतं प्रसङ्गेन, अन्यत्र चिन्तितत्वादेतद्वादस्य, तथा 'धर्मास्तिकायस्य देश' इति तस्यैव धर्मास्तिकायस्य बुद्धिविकल्पितो बुद्धिप्रदेशात्मको विभागः, 'धम्मत्थिकायस्स पदेसा' इति प्रकृष्टा देशाः प्रदेशाः–निर्विभागा भागा इति भावः, ते चासङ्ख्येयाः, लोकाकाशप्रदेशप्रमाणत्वात् तेषाम्, अत एव बहुवचनम्, धर्मास्तिकायप्रतिपक्षभूतोऽधर्मास्तिकायः, किमुक्तं भवति ?–जीवपुद्गलानां स्थिति-

१ गणः कायो निकायः स्कन्धो वर्गः तथैव राशिश्च ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अरूपिअजीवस्य दश-भेदाः

प्रत सूत्रांक [३]

दीप अनुक्रम [१२]

परिणामपरिणतानां तत्परिणामोपष्टम्भकोऽमूर्त्तोऽसंख्यातप्रदेशसंघातात्मकोऽधर्मास्तिकायः 'अधर्मास्तिकायस्य देश' इत्यादि पूर्ववत्। तथा'आङि'ति मर्यादया स्वस्वभावापरित्यागरूपया काशन्ते–स्वरूपेण प्रतिभासन्ते अस्मिन् व्यवस्थिताः पदार्था इत्याकाशम्, यदा त्वभिविधावाङ् तदा 'आङि'ति सर्वभावाभिव्याप्त्या काशते इत्याकाशम्, अस्तयः–प्रदेशास्तेषां कायोऽस्तिकायः आकाशं च तदस्तिकायश्चाकाशास्तिकायः, 'आकाशास्तिकायस्य देश' इत्यादि पूर्ववत्, नवरं प्रदेशा अनन्ता द्रष्टव्याः, अलोकस्यानन्तत्वात्। 'अद्धेति' कालस्याख्या, अद्धा चासौ समयश्चाद्धासमयः, अथवाऽद्धायाः समयो निर्विभागो भागः, अयं च एक एव वर्त्तमानः परमार्थः सन्, नातीता नानागताः समयाः, तेषां यथाक्रमं विनष्टानुत्पन्नत्वेनासत्त्वात्, ततः कायत्वाभाव इति देशप्रदेशकल्पनाविरहः, आवलिकादयस्तु पूर्वसमयनिरोधेनैवोत्तरसमयसद्भाव इति ततः समुदयसमित्याद्यसम्भवेन व्यवहारार्थमेव कल्पिता इति द्रष्टव्यम्। तथा अमीषामित्थं क्रमोपन्यासे किं प्रयोजनम्?, उच्यते, इह धर्मास्तिकाय इति पदं मङ्गलभूतम्, आदौ धर्मशब्दान्वितत्वात्, पदार्थप्ररूपणा च सम्प्रति प्रथमत उत्क्षिप्ता वर्त्तते, ततो मङ्गलार्थमादौ धर्मास्तिकायस्योपादानम्,धर्मास्तिकायप्रतिपक्षभूतश्चाधर्मास्तिकाय इति तदनन्तरमधर्मास्तिकायस्य, द्वयोरपि चानयोराधारभूतमाकाशमिति तदनन्तरमाकाशास्तिकायस्य, ततः पुनरजीवसाधर्म्यादद्धासमयस्य, अथवेह धर्माधर्मास्तिकायौ विभू न भवतः, तद्विभुत्वे तत्सामर्थ्यतो जीवपुद्गलानामस्खलितप्रचारप्रवृत्तौ लोकालोकव्यवस्थाऽनुपपत्तेः, अस्ति च लोकालोकव्यवस्था, तत्र तत्र प्रदेशे सूत्रे साक्षाद्दर्शनात्,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [३]

दीप अनुक्रम [१२]

प्रज्ञापनायाः मलय० वृत्तौ. ॥ ९ ॥

ततो यावति क्षेत्रेऽवगाढौ तावत्प्रमाणो लोकः शेषस्त्वलोक इति सिद्धम्, उक्तं च–"धर्माधर्मविभुत्वात् सर्वत्र च जीवपुद्गलविचारात् । नालोकः कश्चित्स्यान्न च सम्मतमेतदार्याणाम् ॥ १ ॥ तस्माद्धर्माधर्माववगाढौ व्याप्य लोकखं सर्वम् । एवं हि परिच्छिन्नः सिध्यति लोकस्तदविभुत्वात् ॥ २ ॥" ततः एवं लोकालोकव्यवस्थाहेतू धर्माधर्मास्तिकायावित्यनयोरादावुपादानम्, तत्रापि माङ्गलिकत्वात् प्रथमतो धर्मास्तिकायस्य, तत्प्रतिपक्षत्वात् ततोऽधर्मास्तिकायस्य, ततो लोकालोकव्यापित्वादाकाशास्तिकायस्य, तदनन्तरं लोके समयासमयक्षेत्रव्यवस्थाकारित्वाद्धासमयस्य, एवमागमानुसारेणान्यदपि युक्त्यनुपाति वक्तव्यम्, इत्यलं प्रसङ्गेन । प्रकृतोपसंहारमाह–'सेत्तं अरूविअजीवपन्नवणा' सैषा अरूप्यजीवप्रज्ञापना ॥ पुनराह विनेयः—

से किं तं रूविअजीवपन्नवणा ?, रूविअजीवपन्नवणा चउव्विहा पन्नत्ता, तंजहा–खन्धा खन्धदेसा खन्धपएसा परमाणुपोग्गला, ते समासओ पञ्चविहा पन्नत्ता, तंजहा–वण्णपरिणया गन्धपरिणया रसपरिणया फासपरिणया सण्ठाणपरिणया ।

अथ का सा रूप्यजीवप्रज्ञापना ?, सूरिराह–रूप्यजीवप्रज्ञापना चतुर्विधा प्रज्ञप्ता, तद्यथा–'स्कन्धाः' स्कन्दन्ति शुष्यन्ति धीयन्ते च–पुष्यन्ते पुद्गलानां विचटनेन चटनेन चेति स्कन्धाः, 'पृषोदरादय' इति रूपनिष्पत्तिः, अत्र बहुवचनं पुद्गलस्कन्धानामानन्त्यख्यापनार्थम्, न चानन्त्यमनुपपन्नम्, आगमेऽभिधानात्, तथा च वक्ष्यति–'दव्वओ णं पुग्गलत्थिकाए' इत्यादि, 'स्कन्धदेशाः' स्कन्धानामेव स्कन्धत्वपरिणाममजहतो बुद्धिपरिकल्पिता द्व्यादिप्रदेशात्मका

१ प्रज्ञापनापदे अरूप्यजीवप्रज्ञा. (सू. ३) ॥ ९ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र रूपी-अजीवस्य प्रज्ञापना आरभ्यते

विभागाः, अत्रापि बहुवचनमनन्तानन्तप्रादेशिकेषु तथाविधेषु स्कन्धेषु देशानन्तत्वसम्भावनार्थम्, स्कन्धानां स्कन्धत्व-परिणामपरिणतानां बुद्धिपरिकल्पिताः प्रकृष्टा देशा निर्विभागा भागाः परमाणव इत्यर्थः स्कन्धप्रदेशाः, अत्रापि बहु-वचनं प्रदेशानन्तत्वसम्भावनार्थम्, 'परमाणुपुद्गला इति' परमाश्च तेऽणवश्च परमाणवो निर्विभागद्रव्यरूपाः ते च ते पुद्गलाश्च परमाणुपुद्गलाः, स्कन्धत्वपरिणामरहिताः केवलाः परमाणव इत्यर्थः। 'ते समासओ' इत्यादि, ते स्कन्धा-दयो यथासम्भवं 'समासतः' सङ्क्षेपेण पञ्चविधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–'वर्णपरिणताः' वर्णतः परिणताः, वर्णपरिणामभाज इत्यर्थः, एवं गन्धपरिणता रसपरिणताः स्पर्शपरिणताः संस्थानपरिणताः, परिणता इत्यतीतकालनिर्देशो वर्त्तमाना-नागतकालोपलक्षणं, वर्त्तमानानागतत्वमन्तरेणातीतत्वस्यासम्भवात्, तथाहि–यो वर्तमानत्वमतिक्रान्तः सोऽतीतो भवति, वर्त्तमानत्वं च सोऽनुभवति योऽनागतत्वमतिक्रान्तवान्, उक्तं च–"भवति स नामातीतो यः प्राप्तो नाम वर्त्तमानत्वम्। एष्यंश्च नाम स भवति यः प्राप्स्यति वर्त्तमानत्वम् ॥ १ ॥" ततो वर्णपरिणता इति वर्णरूपतया परि-णताः परिणमन्ति परिणमिष्यन्तीति द्रष्टव्यम्, एवं गन्धरसपरिणता इत्याद्यपि परिभावनीयम्।

जे वण्णपरिणया ते पञ्चविहा पन्नत्ता, तंजहा–कालवण्णपरिणया णीलवण्णप० लोहियवण्णप० हालिद्दवण्णप० सुक्किलवण्ण-परिणया,जे गन्धपरिणता ते दुविहा पं०तं०–सुब्भिगन्धपरिणता य दुब्भिगन्धपरिणता य,जे रसपरिणता ते पञ्चविहा पं०तं०–तित्त-रसपरिणता कडुयरसपरिणता कसायरसपरिणया अम्बिलरसपरिणता महुरसपरिणया, जे फासपरिणता ते अट्ठविहा पं०तं०–

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कक्खडफासपरिणया मउयफासपरिणया गुरुयफासपरिणता लहुयफासपरिणया सीयफासपरिणया उसिणफासपरिणया णिद्धफासपरिणया लुक्खफासपरिणया, जे सण्ठाणपरिणया ते पञ्चविहा पं०तं०–परिमण्डलसण्ठाणपरिणया वट्टसण्ठाणपरि० तंससण्ठाणप० चउरंससं०प० आयतसण्ठाणपरिणया ।

ये वर्णपरिणतास्ते पञ्चविधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–कृष्णवर्णपरिणताः कज्जलादिवत्, नीलवर्णपरिणता नील्यादिवत्, लोहितवर्णपरिणता हिङ्गुलकादिवत्, हारिद्रवर्णपरिणता हरिद्रादिवत्, शुक्लवर्णपरिणताः शङ्खादिवत् । ये गन्धपरिणतास्ते द्विविधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–सुरभिगन्धपरिणताश्च दुरभिगन्धपरिणताश्च, चशब्दौ परिणामभवनं प्रति विशेषाभावख्यापनार्थौ, तथाहि–यथा कथञ्चिदवस्थिताः सामग्रीवशतः सुरभिगन्धपरिणामं भजन्ते तथा कथञ्चिदवस्थिता एव सामग्रीवशतो दुरभिगन्धपरिणाममपीति, सुरभिगन्धपरिणताश्च यथा श्रीखण्डादयः, दुरभिगन्धपरिणता लसुनादिवत् । ये रसपरिणतास्ते पञ्चविधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–तिक्तरसपरिणताः कोशातक्यादिवत्, कटुकरसपरिणताः सुण्ठ्यादिवत्, कषायरसपरिणता अपक्वकपित्थादिवत्,अम्लरसपरिणता अम्लवेतसादिवत्, मधुररसपरिणताः शर्करादिवत् । ये स्पर्शपरिणतास्तेऽष्टविधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–कर्कशस्पर्शपरिणताः पाषाणादिवत्, मृदुस्पर्शपरिणता हंसरुतादिवत्,गुरुकस्पर्शपरिणताः वज्रादिवत्, लघुकस्पर्शपरिणता अर्कतूलादिवत्,शीतस्पर्शपरिणता मृणालादिवत्, उष्णस्पर्शपरिणता वह्न्यादिवत्, स्निग्धस्पर्शपरिणता घृतादिवत्, रूक्षस्पर्शपरिणता भस्मादिवत् । ये संस्थानप-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [४]

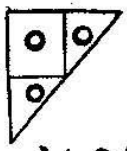
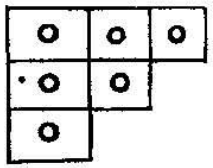
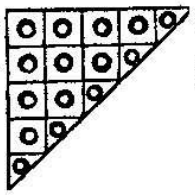
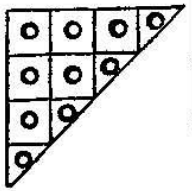
दीप अनुक्रम [१३]

रिणतास्ते पञ्चविधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–परिमण्डलसंस्थानपरिणता वलयवत्, वृत्तसंस्थानपरिणताः कुलालचक्रादिवत्, त्र्यस्रसंस्थानपरिणताः शृङ्गाटकादिवत्, चतुरस्रसंस्थानपरिणताः कुम्भिकादिवत्, आयतसंस्थानपरिणता दण्डादिवत्, एतानि च परिमण्डलादीनि संस्थानानि घनप्रतरभेदेन द्विविधानि भवन्ति, पुनः परिमण्डलमपहाय शेषाणि ओजःप्रदेशजनितानि युग्मप्रदेशजनितानीति द्विधा, तत्रोत्कृष्टं परिमण्डलादि सर्वमनन्ताणुनिष्पन्नमसङ्ख्येयप्रदेशावगाढं चेति प्रतीतमेव, जघन्यं तु प्रतिनियतसङ्ख्यपरमाण्वात्मकम्, अतो नानिर्दिष्टं ज्ञातुं शक्यते इति विनेयजनानुग्रहाय तदुपदर्श्यते–तत्रौजःप्रदेशप्रतरवृत्तं पञ्चपरमाणुनिष्पन्नं पञ्चाकाशप्रदेशावगाढं च, तद्यथा–एकः परमाणुर्मध्ये स्थाप्यते, चत्वारः क्रमेण पूर्वादिषु चतसृषु दिक्षु, स्थापना– १/१ युग्मप्रदेशप्रतरवृत्तं द्वादशपरमाण्वात्मकं द्वादशप्रदेशावगाढं च, तत्र निरन्तरं चत्वारः परमाणवश्चतुर्ष्वाकाशप्रदेशेषु रुचकाकारेण व्यवस्थाप्यन्ते, ततस्तत्परिक्षेपेण शेषा अष्टौ २/२ ओजःप्रदेशं घनवृत्तं सप्तप्रदेशं सप्तप्रदेशावगाढं च, तच्चैवं–तत्रैव पञ्चप्रदेशे प्रतरवृत्ते मध्यस्थितस्य परमाणोरुपरिष्टादधस्ताच्च एकैकोऽणुरवस्थाप्यते, तत एवं १/३, युग्मप्रदेशं घनवृत्तं द्वात्रिंशत्प्रदेशं द्वात्रिंशत्प्रदेशावगाढं च, तच्चैवं–पूर्वोक्तद्वात्रिंशत्प्रदेशात्मकस्य प्रतरवृत्तस्योपरि द्वादश,तत उपरिष्टादधश्चान्ये चत्वारश्चत्वारः परमाणव इति १/४ ॥१॥ ओजःप्रदेशं प्रतरत्र्यस्रं त्रिप्रदेशं

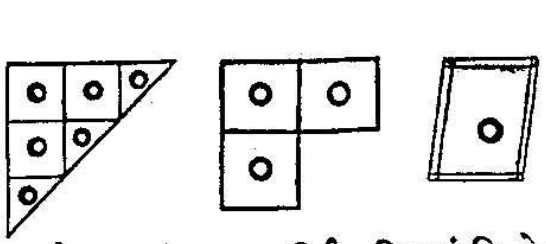


सप्तप्रदेशं भवति दशप्रदेशात्मक-

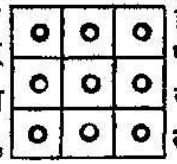
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

त्रिप्रदेशावगाढं च, तच्चैवं–पूर्वं तिर्यगणुद्वयं न्यस्यते, तत आद्यस्याध एकोऽणुः, स्थापना–  २/१, युग्मप्रदेशं प्रतरत्र्यस्रं षट्परमाणुनिष्पन्नं षट्प्रदेशावगाढं च, तत्र तिर्यग् निरन्तरं त्रयः परमाणवः स्था- प्यन्ते, तत आद्यस्याध उपर्यधोभावेनाणुद्वयं द्वितीयस्याध एकोऽणुः, स्थापना–  २/२, ओजः– प्रदेशं घनत्र्यस्रं पञ्चत्रिंशत्परमाणुनिष्पन्नं पञ्चत्रिंशत्प्रदेशावगाढं च, तच्चैवं–तिर्यग् निरन्तराः पञ्च परमाणवः स्थाप्यन्ते, तेषां चाधोऽधः क्रमेण तिर्यगेव चत्वारस्त्रयो द्वावेकश्चेति पञ्चदशात्मकः प्रतरो जातः, स्थापना–  पङ्क्तिष्वन्त्यान्त्यपरित्यागे- न दश १०, तथैव तदुपर्युप- रि षट् त्रय एकश्चेति क्रमेणाणवः स्थाप्यन्ते, स्थापना– 

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

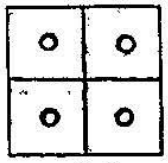


एते मीलिताः पञ्चत्रिंशद्भवन्ति $\frac{३}{३}$, युग्मप्रदेशं घनत्र्यस्रं चतुष्प-रमाण्वात्मकं चतुष्प्रदेशावगाढं च प्रतरत्र्यस्रस्यैव त्रिप्रदेशात्मकस्य सम्बन्धिन एकस्याणोरुपर्येकोऽणुः स्थाप्यते, ततो मीलिताश्च त्वारो भवन्ति $\frac{३}{४}$२ ॥ ओजःप्रदेशं प्रतरचतुरस्रं नवपरमाण्वात्मकं नवप्रदेशावगाढं च, तत्र तिर्यग् निरन्तरं त्रिप्रदेशास्तिस्रः पङ्क्तयः स्थाप्यन्ते, स्थापना–

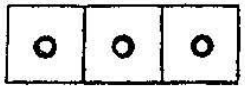


$\frac{१}{३}$, युग्मप्रदेशं

प्रतरचतुरस्रं चतुष्परमाण्वात्मकं चतुष्प्रदेशावगाढं च, तत्र तिर्यग् द्विप्रदेशे द्वे पङ्क्ती स्थाप्येते,



$\frac{३}{२}$, ओजःप्रदेशं घनचतुरस्रं सप्तविंशतिपरमाण्वात्मकं सप्तविंशतिप्रदेशा वगाढं च, तत्र नवप्रदेशात्मकस्यैव पूर्वोक्तस्य प्रतरस्याध उपरि च नव नव प्रदेशाः स्थाप्यन्ते, ततः सप्तविंश-तिप्रदेशात्मकमोजःप्रदेशं घनचतुरस्रं भवति $\frac{३}{३}$, अस्यैव युग्मप्रदेशं घनचतुरस्रमष्टपरमाण्वात्मक-मष्टप्रदेशावगाढं च, तच्चैवं–चतुष्प्रदेशात्मकस्य पूर्वोक्तस्य प्रतरस्योपरि चत्वारोऽन्ये परमाणवः स्थाप्यन्ते $\frac{३}{४}$ ३॥ ओजःप्रदेशं श्रेण्यायतं त्रिपरमाणु त्रिप्रदेशावगाढं च, तत्र तिर्यग् निरन्तरं त्रयः स्थाप्यन्ते–



$\frac{४}{१}$, युग्मप्रदेशं श्रेण्यायतं द्विपरमाणु द्विप्रदेशावगाढं च, तथैवाणुद्वयं स्थाप्यते |०|०| $\frac{४}{२}$, ओजः-प्रदेशं प्रतरायतं पञ्चदशपरमाण्वात्मकं पञ्चदशप्रदेशावगाढं च, तत्र पञ्चप्रदेशात्मिकास्तिस्रः

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पञ्चयस्तिर्यक् स्थाप्यन्ते–  ४/३, युग्मप्रदेशं प्रतरायतं षट्परमाण्वात्मकं षट्प्रदेशावगाढं च, तत्र त्रिप्रदेशं पङ्क्तिद्वयं स्थाप्यते, स्थापना–  ४/४, ओजःप्रदेशं घनायतं पञ्चचत्वारिंशत्परमाण्वात्मकं तावत्प्रदेशावगाढं च, तत्र पूर्वोक्तस्यैव प्रतरायतस्य पञ्चदशप्रदेशात्मकस्याध उपरि तथैव पञ्चदश परमाणवः स्थाप्यन्ते ४/५, युग्मप्रदेशं घनायतं द्वादशपरमाण्वात्मकं द्वादशप्रदेशावगाढं च, तत्र प्रागुक्तस्य षट्प्रदेशस्य प्रतरायतस्योपरि तथैव तावन्तः परमाणवः स्थाप्यन्ते ४/६ ४॥ प्रतरपरिमण्डलं विंशतिपरमाण्वात्मकं विंशतिप्रदेशावगाढं च, तच्चैवं–प्राच्यादिषु चतसृषु दिक्षु प्रत्येकं चत्वारश्चत्वारोऽणवः स्थाप्यन्ते, विदिक्षु च प्रत्येकमेकैकोऽणुः स्थाप्यते ५/३, घनपरिमण्डलं चत्वारिंशत्प्रदेशावगाढं चत्वारिंशत्परमाण्वात्मकं च, तत्र तस्या एव विंशतेरुपरि तथैवान्या विंशतिरवस्थाप्यते ५/२ ५॥ इत्थं चैषां प्ररूपणमितोऽपि न्यूनप्रदेशतायां यथोक्तसंस्थानाभावात्, एतत्सङ्ग्राहिकाश्चेमा उत्तराध्ययननिर्युक्तिगाथाः–"परिमण्डले य वट्टे तंसे चउरंस आयए चेव । घणपयर पढमवज्जं ओजपएसे य जुम्मे य ॥ १ ॥ पञ्चगबारसगं खलु सत्तगबत्तीसगं च वट्टम्मि । तिय छक्कपणगतीसा चत्तारि य होन्ति तंसम्मि ॥ २ ॥ नव चेव तहा चउरो सत्तावीसा य अट्ठ चउरंसे ।

१ परिमण्डलं च वृत्तं त्र्यस्रं चतुरस्रमायतं चैव । घनप्रतरौ प्रथमवर्जेषु ओजःप्रदेशानि युग्मानि च ॥ १ ॥ पञ्चकं द्वादशकं खलु सप्तकं द्वात्रिंशच्च वृत्ते । त्रिकं षट्कं पञ्चत्रिंशत् चत्वारश्च भवन्ति त्र्यस्रे ॥ २ ॥ नव चैव तथा चत्वारः सप्तविंशतिश्चाष्टौ चतुरस्रे ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [४]

दीप अनुक्रम [१३]

तिगदुगपन्नरसेव य छचेव य आयए होन्ति॥३॥ पणयाला बारसगं तह चेव य आययम्मि सण्ठाणे । वीसा चत्तालीसा परिमण्डलए य सण्ठाणे ॥ ४ ॥" इत्यादि ॥ सम्प्रत्येतेषामेव वर्णादीनां परस्परं संवेधमाह—

जे वण्णओ कालवण्णपरिणता ते गन्धओ सुब्भिगन्धपरिणतावि दुब्भिगन्धपरिणतावि रसओ तित्तरसपरिणयावि कडुयरसपरिणयावि कसायरसपरिणयावि अम्बिलरसपरिणयावि महुररसपरिणयावि फासओ कक्खडफासपरिणयावि मउयफासपरिणयावि गुरुयफासपरिणयावि लहुयफासपरिणयावि सीयफासपरिणयावि उसिणफासपरिणयावि णिद्धफासपरिणयावि लुक्खफासपरिणयावि सण्ठाणओ परिमण्डलसण्ठाणपरिणतावि वट्टसण्ठाणपरिणयावि तंससण्ठाणपरिणयावि चउरंससण्ठाणपरिणयावि आयतसण्ठाणपरिणयावि २०, जे वण्णओ नीलवण्णपरिणता ते गन्धओ सुब्भिगन्धपरिणयावि दुब्भिगन्धपरिणयावि रसओ तित्तरसपरिणयावि कडुयरसपरिणतावि कसायरसपरिणतावि अम्बिलरसपरिणतावि महुररसपरिणतावि फासओ कक्खडफासपरिणतावि मउयफासपरिणतावि गुरुयफासपरिणतावि लहुयफासपरिणतावि सीतफासपरिणतावि उसिणफासपरिणतावि निद्धफासपरिणतावि लुक्खफासपरिणतावि सण्ठाणओ परिमण्डलसण्ठाणपरिणतावि वट्टसण्ठाणपरिणयावि तंससण्ठाणपरिणयावि चउरंससण्ठाणपरिणयावि आयतसण्ठाणपरिणयावि २०, जे वण्णओ लोहियवण्णपरिणया ते गन्धओ सुब्भिगन्धपरिणयावि दुब्भि-

---

त्रिकं द्विकं पञ्चदशैव च षट्कं चैवायते भवन्ति ॥३॥ पञ्चचत्वारिंशत् द्वादशकं तथा चैव चायते भवन्ति । विंशतिश्चत्वारिंशत् परिमण्डले च संस्थाने ॥ ४ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गन्धपरिणयावि रसओ तित्तरसपरिणतावि कडुयरसपरिणतावि कसायरसपरिणतावि अम्बिलरसपरिणयावि महुररसपरिणतावि फासओ कक्खडफासपरिणतावि मउयफासपरिणतावि गुरुयफासपरिणयावि लहुयफासपरिणतावि सीतफासपरिणतावि उसिणफासपरिणतावि निद्धफासपरिणयावि लुक्खफासपरिणयावि सण्ठाणओ परिमण्डलसण्ठाणपरिणतावि वट्टसण्ठाणपरिणतावि तंससण्ठाणपरिणयावि चउरंससण्ठाणपरिणयावि आयतसण्ठाणपरिणतावि २०, जे वण्णओ हालिद्दवण्णपरिणया ते गन्धओ सुब्भिगन्धपरिणयावि दुब्भिगन्धपरिणयावि रसओ तित्तरसपरिणयावि कडुयरसपरिणतावि कसायरसपरिणतावि अम्बिलरसपरिणतावि महुररसपरिणयावि फासओ कक्खडफासपरिणयावि मउयफासपरिणयावि गुरुयफासपरिणयावि लहुयफासपरिणयावि सीयफासपरिणयावि उसिणफासपरिणयावि णिद्धफासपरिणयावि लुक्खफासपरिणयावि सण्ठाणओ परिमण्डलसण्ठाणपरिणयावि वट्टसण्ठाणपरिणयावि तंससण्ठाणपरिणयावि चउरंससण्ठाणपरिणतावि आयतसण्ठाणपरिणतावि २०, जे वण्णओ सुक्किलवण्णपरिणता ते गन्धओ सुब्भिगन्धपरिणतावि दुब्भिगन्धपरिणतावि रसओ तित्तरसपरिणतावि कडुयरसपरिणतावि कसायरसपरिणतावि अम्बिलरसपरिणतावि महुररसपरिणतावि फासओ कक्खडफासपरिणतावि मउयफासपरिणतावि गुरुयफासपरिणतावि लहुयफासपरिणतावि सीयफासपरिणतावि उसिणफासपरिणतावि णिद्धफासपरिणतावि लुक्खफासपरिणतावि सण्ठाणओ परिमण्डलसण्ठाणपरिणयावि वट्टसण्ठाणपरिणयावि तंससण्ठाणपरिणयावि चउरंससण्ठाणपरिणयावि आयतसण्ठाणपरिणयावि २०,१००। जे गन्धओ सुब्भिगन्धपरिणया ते वण्णओ कालवण्णपरिणयावि णीलवण्णपरिणयावि लोहियवण्णपरिणयावि हालिद्दवण्णपरिणयावि सुक्किलवण्णपरिणयावि रसओ तित्तरसपरिणयावि कडुयरसपरिणतावि कसायरसपरिणतावि अम्बिलरसपरिणतावि महुररस-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [४]

दीप अनुक्रम [१३]

परिणयावि फासओ कक्खडफासपरिणतावि मउयफासपरिणतावि गरुयफासपरिणतावि लहुयफासपरिणतावि सीतफासपरिणतावि उसिणफासपरिणयावि णिद्धफासपरिणयावि लुक्खफासपरिणयावि सण्ठाणओ परिमण्डलसण्ठाणपरिणयावि वट्टसण्ठाणपरिणयावि तंससण्ठाणपरिणयावि चउरंससण्ठाणपरिणयावि आययसण्ठाणपरिणयावि २३, जे गन्धओ दुब्भिगन्धपरिणया ते वण्णओ कालवण्णपरिणयावि णीलवण्णपरिणयावि लोहियवण्णपरिणयावि हारिद्दवण्णपरिणयावि सुक्किल्लवण्णपरिणयावि रसओ तित्तरसपरिणयावि कडुयरसपरिणयावि कसायरसपरिणयावि अम्बिलरसपरिणयावि महुररसपरिणयावि फासओ कक्खडफासपरिणयावि मउयफासपरिणयावि गुरुयफासपरिणयावि लहुयफासपरिणयावि सीयफासपरिणयावि उसिणफासप० णिद्धफासप० लुक्खफासपरिणयावि सण्ठाणओ परिमण्डलसण्ठाणपरिणयावि वट्टसण्ठाणपरिणयावि तंससण्ठाणपरिणयावि चउरंससण्ठाणपरिणयावि आययसण्ठाणपरिणयावि २६, ४६ । जे रसओ तित्तरसपरिणया ते वण्णओ कालवण्णपरिणतावि णीलवण्णपरिणयावि लोहियवण्णपरिणयावि हालिद्दवण्णपरिणयावि सुक्किल्लवण्णपरिणयावि गन्धओ सुब्भिगन्धपरिणयावि दुब्भिगन्धपरिणयावि फासओ कक्खडफासपरिणयावि मउयफासपरिणतावि गुरुयफासपरिणतावि लहुयफासपरिणतावि सीतफासपरिणतावि उसिणफासपरिणतावि निद्धफासपरिणयावि लुक्खफासपरिणयावि सण्ठाणओ परिमण्डलसण्ठाणपरिणयावि वट्टसण्ठाणपरिणयावि तंससण्ठाणपरिणयावि चउरंससण्ठाणपरिणयावि आययसण्ठाणपरिणयावि२०, जे रसओ कडुयरसपरिणता ते वण्णओ कालवण्णपरिणयावि नीलवण्णपरिणयावि लोहियवण्णपरिणयावि हालिद्दवण्णपरिणयावि सुक्किल्लवण्णपरिणयावि गन्धओ सुब्भिगन्धपरिणयावि दुब्भिगन्धपरिणयावि फासओ कक्खडफासपरिणयावि मउयफासपरिणयावि गुरुयफासपरिणयावि लहुयफासपरिणयावि सीतफासपरिणयावि

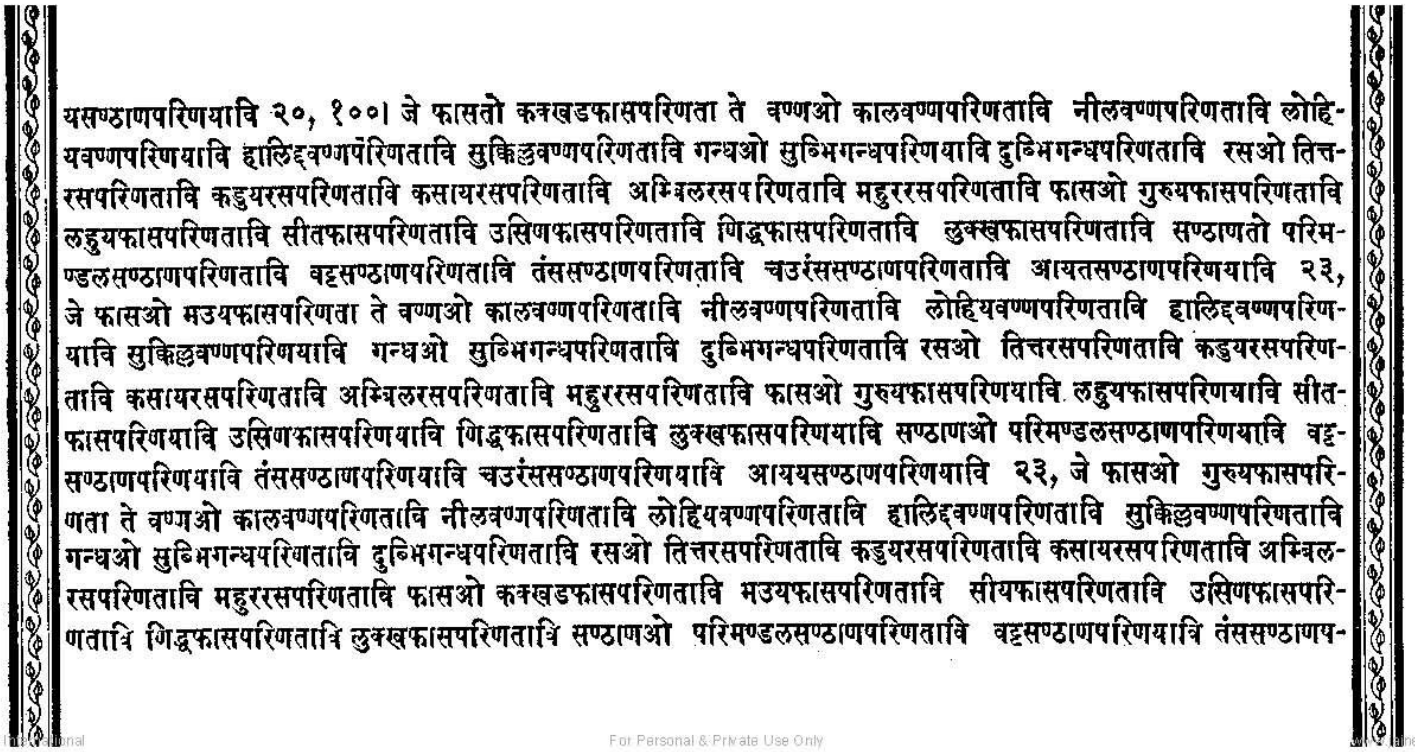
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उसिणफासपरिणयावि णिद्धफासपरिणयावि लुक्खफासपरिणयावि सण्ठाणओ परिमण्डलसण्ठाणपरिणयावि वट्टसण्ठाणपरिणयावि तंससण्ठाणपरिणयावि चउरंससण्ठाणपरिणयावि आयतसण्ठाणपरिणयावि२०,जे रसओ कसायरसपरिणता ते वण्णओ कालवण्णपरिणतावि नीलवण्णपरिणतावि लोहियवण्णपरिणतावि हालिद्दवण्णपरिणयावि सुक्किल्लवण्णपरिणयावि गन्धओ सुब्भिगन्धपरिणयावि दुब्भिगन्धपरिणयावि फासओ कक्खडफासपरिणयावि मउयफासपरिणयावि गुरुयफासपरिणयावि लहुयफासपरिणयावि सीतफासपरिणतावि उसिणफासपरिणयावि णिद्धफासपरिणयावि लुक्खफासपरिणयावि सण्ठाणओ परिमण्डलसण्ठाणपरिणतावि वट्टसण्ठाणपरिणयावि तंससण्ठाणपरिणयावि चउरंससण्ठाणपरिणयावि आययसण्ठाणपरिणयावि२०,जे रसओ अम्बिलरसपरिणया ते वण्णओ कालवण्णपरिणयावि नीलवण्णपरिणयावि लोहियवण्णपरिणयावि हालिद्दवण्णपरिणयावि सुक्किल्लवण्णपरिणयावि गन्धओ सुब्भिगन्धपरिणयावि दुब्भिगन्धपरिणयावि फासओ कक्खडफासपरिणयावि मउयफासपरिणयावि गुरुयफासपरिणयावि लहुयफासपरिणयावि सीतफासपरिणयावि उसिणफासपरिणयावि निद्धफासपरिणयावि लुक्खफासपरिणयावि सण्ठाणओ परिमण्डलसण्ठाणपरिणयावि वट्टसण्ठाणपरिणयावि तंससण्ठाणपरिणयावि चउरंससण्ठाणपरिणयावि आययसण्ठाणपरिणयावि २०, जे रसओ महुररसपरिणया ते वण्णओ कालवण्णपरिणयावि नीलवण्णपरिणयावि लोहियवण्णपरिणयावि हालिद्दवण्णपरिणयावि सुक्किल्लवण्णपरिणयावि गन्धओ सुब्भिगन्धपरिणयावि दुब्भिगन्धपरिणयावि फासओ कक्खडफासपरिणयावि मउयफासपरिणयावि गुरुयफासपरिणतावि लहुयफासपरिणतावि सीतफासपरिणयावि उसिणफासपरिणयावि निद्धफासपरिणयावि लुक्खफासपरिणतावि सण्ठाणओ परिमण्डलसण्ठाणपरिणतावि वट्टसण्ठाणपरिणतावि तंससण्ठाणपरिणतावि चउरंससण्ठाणपरिणतावि आय-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [४]

दीप अनुक्रम [१३]



यसण्ठाणपरिणयावि २०, १००। जे फासतो कक्खडफासपरिणता ते वण्णओ कालवण्णपरिणतावि नीलवण्णपरिणतावि लोहिय-
यवण्णपरिणयावि हालिद्दवण्णपरिणतावि सुक्किल्लवण्णपरिणतावि गन्धओ सुब्भिगन्धपरिणयावि दुब्भिगन्धपरिणतावि रसओ तित्त-
रसपरिणतावि कडुयरसपरिणतावि कसायरसपरिणतावि अम्बिलरसपरिणतावि महुररसपरिणतावि फासओ गुरुयफासपरिणतावि
लहुयफासपरिणतावि सीतफासपरिणतावि उसिणफासपरिणतावि णिद्धफासपरिणतावि लुक्खफासपरिणतावि सण्ठाणतो परिम-
ण्डलसण्ठाणपरिणतावि वट्टसण्ठाणपरिणतावि तंससण्ठाणपरिणतावि चउरंससण्ठाणपरिणतावि आयतसण्ठाणपरिणयावि २३,
जे फासओ मउयफासपरिणता ते वण्णओ कालवण्णपरिणतावि नीलवण्णपरिणतावि लोहियवण्णपरिणतावि हालिद्दवण्णपरिण-
यावि सुक्किल्लवण्णपरिणयावि गन्धओ सुब्भिगन्धपरिणतावि दुब्भिगन्धपरिणतावि रसओ तित्तरसपरिणतावि कडुयरसपरिण-
तावि कसायरसपरिणतावि अम्बिलरसपरिणतावि महुररसपरिणतावि फासओ गुरुयफासपरिणयावि लहुयफासपरिणयावि सीत-
फासपरिणयावि उसिणफासपरिणयावि णिद्धफासपरिणतावि लुक्खफासपरिणयावि सण्ठाणओ परिमण्डलसण्ठाणपरिणयावि वट्ट-
सण्ठाणपरिणयावि तंससण्ठाणपरिणयावि चउरंससण्ठाणपरिणयावि आययसण्ठाणपरिणयावि २३, जे फासओ गुरुयफासपरि-
णता ते वण्णओ कालवण्णपरिणतावि नीलवण्णपरिणतावि लोहियवण्णपरिणतावि हालिद्दवण्णपरिणतावि सुक्किल्लवण्णपरिणतावि
गन्धओ सुब्भिगन्धपरिणतावि दुब्भिगन्धपरिणतावि रसओ तित्तरसपरिणतावि कडुयरसपरिणतावि कसायरसपरिणतावि अम्बिल-
रसपरिणतावि महुररसपरिणतावि फासओ कक्खडफासपरिणतावि मउयफासपरिणतावि सीयफासपरिणतावि उसिणफासपरि-
णतावि णिद्धफासपरिणतावि लुक्खफासपरिणतावि सण्ठाणओ परिमण्डलसण्ठाणपरिणतावि वट्टसण्ठाणपरिणयावि तंससण्ठाणप-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रिणयावि चउरंससण्ठाणपरिणयावि आययसण्ठाणपरिणयावि २३, जे फासओ लहुयफासपरिणता ते वण्णओ कालवण्णपरिणतावि नीलवण्णपरिणयावि लोहियवण्णपरिणयावि हालिद्दवण्णपरिणतावि सुक्किल्लवण्णपरिणतावि गन्धओ सुब्भिगन्धपरिणयावि दुब्भिगन्धपरिणयावि रसओ तित्तरसपरिणतावि कडुयरसपरिणतावि कसायरसपरिणतावि अम्बिलरसपरिणतावि महुररसपरिणतावि फासओ कक्खडफासपरिणतावि मउयफासपरिणयावि सीयफासपरिणयावि उसिणफासपरिणयावि णिद्धफासपरिणतावि लुक्खफासपरिणतावि सण्ठाणओ परिमण्डलसण्ठाणपरिणतावि वट्टसण्ठाणपरिणयावि तंससण्ठाणपरिणयावि चउरंससण्ठाणपरिणयावि आययसण्ठाणपरिणयावि २३, जे फासओ सीयफासपरिणता ते वण्णओ कालवण्णपरिणयावि नीलवण्णपरिणयावि लोहियवण्णपरिणयावि हालिद्दवण्णपरिणतावि सुक्किल्लवण्णपरिणयावि गन्धओ सुब्भिगन्धपरिणतावि दुब्भिगन्धपरिणतावि रसओ तित्तरसपरिणयावि कडुयरसपरिणयावि कसायरसपरिणतावि अम्बिलरसपरिणतावि महुररसपरिणतावि फासओ कक्खडफासपरिणयावि मउयफासपरिणयावि गुरुयफासपरिणतावि लहुयफासपरिणयावि निद्धफासपरिणतावि लुक्खफासपरिणयावि सण्ठाणओ परिमण्डलसण्ठाणपरिणयावि वट्टसण्ठाणपरिणयावि तंससण्ठाणपरिणयावि चउरंससण्ठाणपरिणयावि आयतसण्ठाणपरिणयावि २३, जे फासओ उसिणफासपरिणता ते वण्णओ कालवण्णपरिणयावि नीलवण्णपरिणयावि लोहियवण्णपरिणयावि हालिद्दवण्णपरिणयावि सुक्किल्लवण्णपरिणयावि गन्धओ सुब्भिगन्धपरिणयावि दुब्भिगन्धपरिणयावि रसओ तित्तरसपरिणयावि कडुयरसपरिणयावि कसायरसपरिणयावि अम्बिलरसपरिणयावि महुररसपरिणयावि फासओ कक्खडफासपरिणयावि मउयफासपरिणयावि गुरुयफासपरिणयावि लहुयफासपरिणयावि निद्धफासपरिणयावि लुक्खफासपरिणयावि सण्ठाणओ परिमण्डलसण्ठाणपरिणयावि वट्टसण्ठाणपरिणयावि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [४]

दीप अनुक्रम [१३]

तंससण्ठाणपरिणयावि चउरंससण्ठाणपरिणयावि आयतसण्ठाणपरिणतावि २३, जे फासओ निद्धफासपरिणता ते वण्णओ कालवण्णपरिणतावि नीलवण्णपरिणतावि लोहियवण्णपरिणयावि हालिद्दवण्णपरिणयावि सुक्किल्लवण्णपरिणयावि गन्धओ सुब्भिगन्धपरिणयावि दुब्भिगन्धपरिणयावि रसओ तित्तरसपरिणयावि कडुयरसपरिणयावि कसायरसपरिणयावि अम्बिलरसपरिणयावि महुररसपरिणयावि फासओ कक्खडफासपरिणयावि मउयफासपरिणयावि गुरुयफासपरिणयावि लहुयफासपरिणयावि सीतफासपरिणतावि उसिणफासपरिणयावि सण्ठाणओ परिमण्डलसण्ठाणपरिणयावि वट्टसण्ठाणपरिणयावि तंससण्ठाणपरिणयावि चउरंससण्ठाणपरिणयावि आययसण्ठाणपरिणयावि २३, जे फासओ लुक्खफासपरिणता ते वण्णओ कालवण्णपरिणतावि नीलवण्णपरिणयावि लोहियवण्णपरिणयावि हालिद्दवण्णपरिणयावि सुक्किल्लवण्णपरिणयावि गन्धओ सुब्भिगन्धपरिणयावि दुब्भिगन्धपरिणयावि तित्तरसपरिणयावि कडुयरसपरिणयावि कसायरसपरिणयावि अम्बिलरसपरिणयावि महुररसपरिणयावि फासओ कक्खडफासपरिणयावि मउयफासपरिणयावि गुरुयफासपरिणयावि लहुयफासपरिणयावि सीतफासपरिणयावि उसिणफासपरिणयावि सण्ठाणओ परिमण्डलसण्ठाणपरिणतावि वट्टसण्ठाणपरिणयावि तंससण्ठाणपरिणयावि चउरंससण्ठाणप०आययसण्ठाणप०२३,१८४। जे सण्ठाणओ परिमण्डलसण्ठाणपरिणता ते वण्णओ कालवण्णपरिणतावि नीलवण्णपरिणयावि लोहियवण्णपरिणयावि हालिद्दवण्णपरिणयावि सुक्किल्लवण्णपरिणयावि गन्धओ सुब्भिगन्धपरिणयावि दुब्भिगन्धपरिणयावि रसओ तित्तरसपरिणयावि कडुयरसपरिणयावि कसायरसपरिणयावि अम्बिलरसपरिणयावि महुररसपरिणयावि फासओ कक्खडफासपरिणयावि मउयफासपरिणयावि गुरुयफासपरिणयावि लहुयफासपरिणयावि सीयफासपरिणयावि उसिणफासपरिणयावि निद्धफासपरिणयावि लुक्खफास-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

परिणयावि २०, जे सण्ठाणओ वट्टसण्ठाणपरिणता ते वण्णओ कालवण्णपरिणयावि नीलवण्णपरिणयावि लोहियवण्णपरिणयावि हालिद्दवण्णपरिणयावि सुक्किल्लवण्णपरिणयावि गन्धओ सुब्भिगन्धपरिणयावि दुब्भिगन्धपरिणयावि रसओ तित्तरसपरिणतावि कडुयरसपरिणतावि कसायरसपरिणतावि अम्बिलरसपरिणयावि महुररसपरिणतावि फासओ कक्खडफासपरिणतावि मउयफासपरिणयावि गुरुयफासपरिणयावि लहुयफासपरिणयावि सीयफासपरिणयावि उसिणफासपरिणयावि निद्धफासपरिणयावि लुक्खफासपरिणयावि २०, जे सण्ठाणओ तंससण्ठाणपरिणता ते वण्णओ कालवण्णपरिणयावि नीलवण्णपरिणयावि लोहियवण्णपरिणयावि हालिद्दवण्णपरिणयावि सुक्किल्लवण्णपरिणयावि गन्धओ सुब्भिगन्धपरिणयावि दुब्भिगन्धपरिणयावि रसओ तित्तरसपरिणयावि कडुयरसपरिणयावि कसायरसपरिणयावि अम्बिलरसपरिणयावि महुररसपरिणयावि फासओ कक्खडफासपरिणयावि मउयफासपरिणयावि गुरुयफासपरिणयावि लहुयफासपरिणयावि सीयफासपरिणयावि उसिणफासपरिणयावि णिद्धफासपरिणयावि लुक्खफासपरिणयावि २०, जे सण्ठाणओ चउरंससण्ठाणपरिणता ते वण्णओ कालवण्णपरिणतावि नीलवण्णपरिणतावि लोहियवण्णपरिणतावि हालिद्दवण्णपरिणयावि सुक्किल्लवण्णपरिणयावि गन्धओ सुब्भिगन्धपरिणयावि दुब्भिगन्धपरिणयावि रसओ तित्तरसपरिणयावि कडुयरसपरिणयावि कसायरसपरिणयावि अम्बिलरसपरिणयावि महुररसपरिणयावि फासओ कक्खडफासपरिणतावि मउयफासपरिणतावि गुरुयफासपरिणतावि लहुयफासपरिणतावि सीयफासपरिणयावि उसिणफासपरिणयावि निद्धफासपरिणयावि लुक्खफासपरिणयावि २०, जे सण्ठाणओ आयतसण्ठाणपरिणता ते वण्णओ कालवण्णपरिणतावि नीलवण्णपरिणयावि लोहियवण्णपरिणयावि हालिद्दवण्णपरिणयावि सुक्किल्लवण्णपरिणयावि गन्धओ सुब्भिगन्धपरिणयावि दुब्भिगन्धपरिणयावि रसओ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [४]

दीप अनुक्रम [१३]

तित्तरसपरिणतावि कडुयरसपरिणतावि कसायरसपरिणतावि अम्बिलरसपरिणयावि महुररसपरिणयावि फासओ कक्खडफासपरिणयावि मउयफासपरिणयावि गुरुयफासपरिणयावि लहुयफासपरिणयावि सीयफासपरिणयावि उसिणफासपरिणयावि णिद्धफासपरिणयावि लुक्खफासपरिणतावि २०, १००। सेत्तं रूविअजीवपन्नवणा, सेत्तं अजीवपण्णवणा। (सू० ४)

ये स्कन्धादयो 'वर्णतो' वर्णमाश्रित्य कालवर्णपरिणता अपि भवन्ति ते 'गन्धतो' गन्धमाश्रित्य सुरभिगन्धपरिणता अपि भवन्ति, दुरभिगन्धपरिणता अपि, किमुक्तं भवति ?—गन्धमधिकृत्य ते भाज्याः, केचित् सुरभिगन्धपरिणता भवन्ति केचिदुरभिगन्धपरिणताः, न तु प्रतिनियतैकगन्धपरिणामपरिणता एवेति,एवं च रसतः स्पर्शतः संस्थानतश्च वाच्याः, तत्र द्वौ गन्धौ पञ्च रसा अष्टौ स्पर्शाः पञ्च संस्थानानीति, एते च मीलिता विंशतिरिति कृष्णवर्णपरिणता एतावतो भङ्गांल्लभन्ते २०,एवं नीलवर्णपरिणता अपि २०,लोहितवर्णपरिणता अपि २०,हारिद्रवर्णपरिणता अपि २०, शुक्लवर्णपरिणता अपि २०, एवं पञ्चभिर्वर्णैर्लब्धं शतम् १००। गन्धमधिकृत्याह–'ये गन्धतो' इत्यादि, ये 'गन्धतो' गन्धमधिकृत्य सुरभिगन्धपरिणामपरिणतास्ते वर्णतः कालवर्णपरिणता अपि नीलवर्णपरिणता अपि लोहितवर्णपरिणता अपि हारिद्रवर्णपरिणता अपि शुक्लवर्णपरिणता अपि ५, एवं रसतः ५ स्पर्शतः ८ संस्थानतः ५, एते च मीलितास्त्रयोविंशतिः २३ इति सुरभिगन्धपरिणतास्त्रयोविंशतिभङ्गांल्लभन्ते, एवं दुरभिगन्धपरिणता अपि २३, ततो गन्धपदेन लब्धा भङ्गानां षट्चत्वारिंशत् ४६। रसमधिकृत्याह–ये 'रसतो' रसमधिकृत्य तिक्तरसपरिणतास्ते वर्णतः

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

५ गन्धतः २ स्पर्शतः ८ संस्थानतः ५ एते सर्वेऽप्येकत्र मीलिता विंशतिः इति तिक्तरसपरिणता विंशतभङ्गालु-
भन्ते, एवं कटुकरसपरिणताः २० कषायरसपरिणताः २० अम्लरसपरिणताः २० मधुररसपरिणताश्च २०, एवं रस-
पञ्चकसंयोगे लब्धं भङ्गकानां शतम् १०० [इत्यादि] । स्पर्शमधिकृत्याह–'जे फासतो कक्खडफासपरिणया' इत्यादि,
ये स्पर्शतः कर्कस्पर्शपरिणतास्ते वर्णतः ५ गन्धतः २ रसतः ५ स्पर्शतः ६ प्रतिपक्षस्पर्शयोगाभावात् संस्थानतः ५,
एते सर्वेऽप्येकत्र मीलितास्त्रयोविंशतिः २३, एतावतो भङ्गान् कर्कशस्पर्शपरिणता लभन्ते २३, एतावत एव मृदु-
स्पर्शपरिणताः २३ गुरुस्पर्शपरिणताः २३ लघुस्पर्शपरिणताः २३ शीतस्पर्शपरिणताः २३ उष्णस्पर्शपरिणताः २३
स्निग्धस्पर्शपरिणताः २३ रूक्षस्पर्शपरिणताः २३, एतेषामेकत्र मीलने जातं भङ्गकानां चतुरशीत्यधिकं शतं १८४
[इत्यादि]। संस्थानमधिकृत्याह–'जे सण्ठाणओ परिमण्डलसण्ठाणपरिणया' इत्यादि,ये संस्थानतः परिमण्डलसंस्था-
नपरिणतास्ते वर्णतः ५ गन्धतः २ रसतः ५ स्पर्शतः ८ एते सर्वेऽप्येकत्र मीलिताः विंशतिः२० एतावतो भङ्गान् परिमण्ड-
लसंस्थानपरिणता लभन्ते, एवं वृत्तसंस्थानपरिणताः २० त्र्यस्रसंस्थानपरिणताः २० चतुरस्रसंस्थानपरिणताः २०
आयतसंस्थानपरिणताः २०, अमीषां चैकत्र मीलने लब्धं भङ्गकानां शतम्, एतेषां च वर्णगन्धरसस्पर्शसंस्थानानां
सकलभङ्गसङ्कलने जातानि पञ्च शतानि त्रिंशदधिकानि ५३०। इह यद्यपि बादरेषु स्कन्धेषु पञ्चापि वर्णा द्वावपि गन्धौ
पञ्चापि रसाः प्राप्यन्ते, ततोऽवधिकृतवर्णादिव्यतिरेकेण शेषवर्णादिभिरपि भङ्गाः सम्भवन्ति, तथापि तेष्वेव बाद-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [४]

दीप अनुक्रम [१३]

रेषु स्कन्धेषु ये व्यवहारतः केवलकृष्णवर्णाद्युपेता अपान्तरालस्कन्धा यथा देहस्कन्ध एव लोचनस्कन्धः कृष्णस्तदन्तर्गत एव कश्चिल्लोहितोऽन्यस्तदन्तर्गत एव शुक्ल इत्यादि ते इह विवक्ष्यन्ते, तेषां चान्यद्वर्णान्तरादि न सम्भवति, स्पर्शचिन्तायां त्ववधिकृतस्पर्शं प्रति प्रतिपक्षव्यतिरेकेणान्ये स्पर्शा लोकेऽप्यविरोधिनो दृश्यन्ते ततो यथोक्तैव भङ्गसङ्ख्या, साऽपि च परिस्थूरन्यायमङ्गीकृत्याभिहिता, अन्यथा प्रत्येकमप्येषां तारतम्येनानन्तत्वादनन्ता भङ्गाः संभवन्ति, एतेषां च वर्णादिपरिणामानां जघन्यतोऽवस्थानमेकं समयमुत्कर्षतोऽसङ्ख्येयं कालम्, सम्प्रत्युपसंहारमाह– 'सेत्तं रूविअजीवपन्नवणा, सेत्तं अजीवपन्नवणा' सैषा रूप्यजीवप्रज्ञापना, सैषाऽजीवप्रज्ञापना ॥ साम्प्रतं जीवप्रज्ञापनामभिधित्सुस्तद्विषयं प्रश्नसूत्रं चा(त्रमा)ह—

से किं तं जीवपन्नवणा ?,२ दुविहा पन्नत्ता, तंजहा—संसारसमावण्णजीवपन्नवणा य असंसारसमावण्णजीवपण्णवणा य (सू०५)

अथ का सा जीवप्रज्ञापना ?, सूरिराह–जीवप्रज्ञापना द्विविधा प्रज्ञप्ता, तद्यथा–संसारसमापन्नजीवप्रज्ञापना चासंसारसमापन्नजीवप्रज्ञापना च, तत्र संसरणं संसारो–नारकतिर्यग्नरामरभवानुभवलक्षणस्तं सम्यग्–एकीभावेनापन्नाः संसारसमापन्नाः, संसारवर्त्तिन इत्यर्थः, ते च ते जीवाश्च तेषां प्रज्ञापना संसारसमापन्नजीवप्रज्ञापना, न संसारोऽसंसारो–मोक्षस्तं समापन्ना असंसारसमापन्ना मुक्ता इत्यर्थः, ते च ते जीवाश्च तेषां प्रज्ञापनाऽसंसारसमाप-

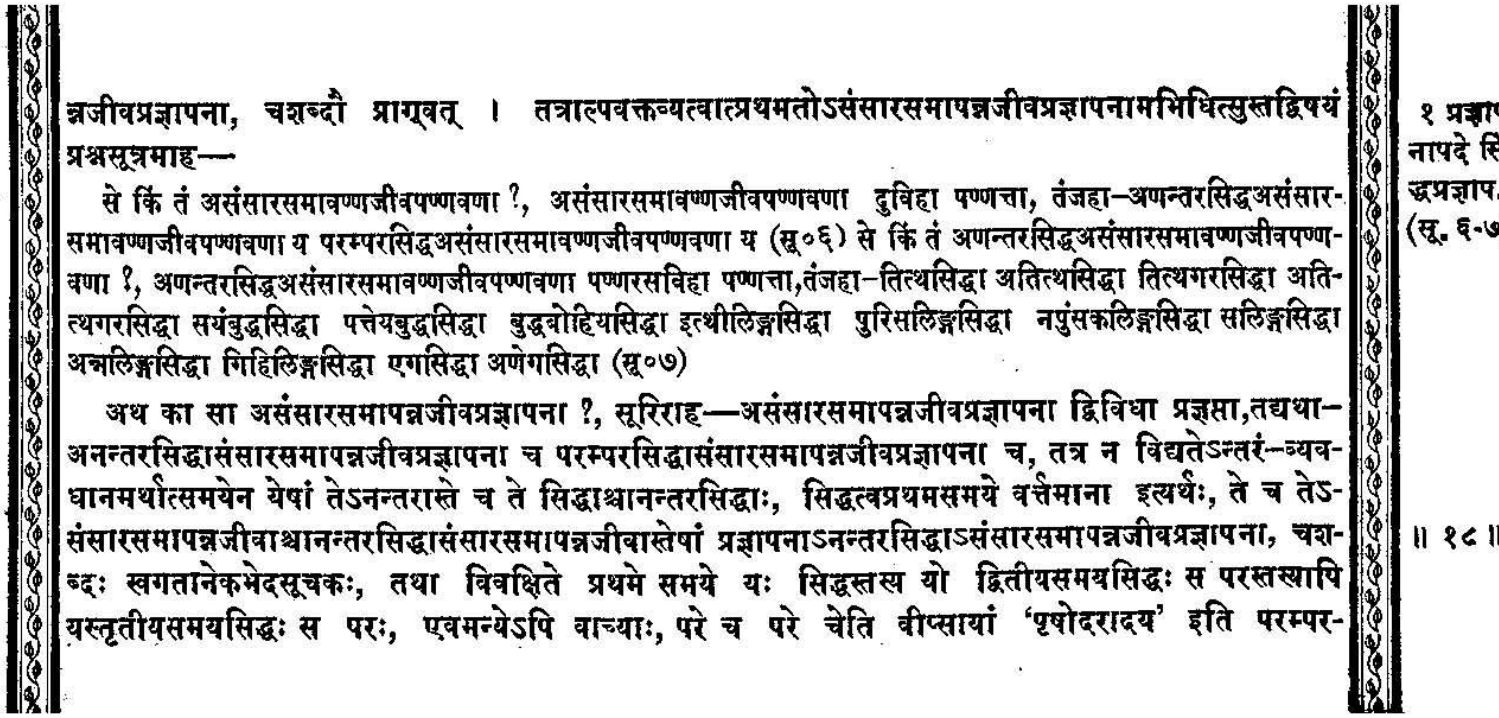
एवं वर्णस्य भेदाः १००, गन्धस्य भेदाः ४६, रसस्य भेदाः १००, स्पर्शस्य भेदाः १८४, संस्थानस्य भेदाः–१००, एवं च ५३०.

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र 'जीव-प्रज्ञापना' आरभ्यते

प्रत सूत्रांक [५]

दीप अनुक्रम [१४]



प्रज्ञापनायाः मल० वृत्तौ. ॥ १८ ॥

न्नजीवप्रज्ञापना, चशब्दौ प्राग्वत् । तत्राल्पवक्तव्यत्वात्प्रथमतोऽसंसारसमापन्नजीवप्रज्ञापनामभिधित्सुस्तद्विषयं प्रश्नसूत्रमाह—

से किं तं असंसारसमावण्णजीवपण्णवणा ?, असंसारसमावण्णजीवपण्णवणा दुविहा पण्णत्ता, तंजहा–अणन्तरसिद्धअसंसारसमावण्णजीवपण्णवणा य परम्परसिद्धअसंसारसमावण्णजीवपण्णवणा य (सू०६) से किं तं अणन्तरसिद्धअसंसारसमावण्णजीवपण्णवणा ?, अणन्तरसिद्धअसंसारसमावण्णजीवपण्णवणा पण्णरसविहा पण्णत्ता,तंजहा–तित्थसिद्धा अतित्थसिद्धा तित्थगरसिद्धा अतित्थगरसिद्धा सयंबुद्धसिद्धा पत्तेयबुद्धसिद्धा बुद्धबोहियसिद्धा इत्थीलिङ्गसिद्धा पुरिसलिङ्गसिद्धा नपुंसकलिङ्गसिद्धा सलिङ्गसिद्धा अन्नलिङ्गसिद्धा गिहिलिङ्गसिद्धा एगसिद्धा अणेगसिद्धा (सू०७)

अथ का सा असंसारसमापन्नजीवप्रज्ञापना ?, सूरिराह—असंसारसमापन्नजीवप्रज्ञापना द्विविधा प्रज्ञप्ता,तद्यथा–अनन्तरसिद्धासंसारसमापन्नजीवप्रज्ञापना च परम्परसिद्धासंसारसमापन्नजीवप्रज्ञापना च, तत्र न विद्यतेऽन्तरं–व्यवधानमर्थात्समयेन येषां तेऽनन्तरास्ते च ते सिद्धाश्चानन्तरसिद्धाः, सिद्धत्वप्रथमसमये वर्त्तमाना इत्यर्थः, ते च तेऽसंसारसमापन्नजीवाश्चानन्तरसिद्धासंसारसमापन्नजीवास्तेषां प्रज्ञापनाऽनन्तरसिद्धाऽसंसारसमापन्नजीवप्रज्ञापना, चशब्दः स्वगतानेकभेदसूचकः, तथा विवक्षिते प्रथमे समये यः सिद्धस्तस्य यो द्वितीयसमयसिद्धः स परस्तस्यापि यस्तृतीयसमयसिद्धः स परः, एवमन्येऽपि वाच्याः, परे च परे चेति वीप्सायां 'पृषोदरादय' इति परम्पर-

१ प्रज्ञापनापदे सिद्धप्रज्ञाप. (सू. ६-७)

॥ १८ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र असंसारसमापन्न (सिद्ध) जीवस्य प्रज्ञापना आरभ्यते

प्रत सूत्रांक [६-७]

दीप अनुक्रम [१५-१६]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्तिः

शब्दनिष्पत्तिः, परम्पराश्च ते सिद्धाश्च परम्परसिद्धाः विवक्षितसिद्धस्य प्रथमसमयात् प्राग् द्वितीयादिषु समयेष्वनन्तामतीताद्धां यावद्वर्त्तमाना इति भावः, ते च तेऽसंसारसमापन्नाश्च परम्परसिद्धासंसारसमापन्नास्ते च ते जीवाश्च तेषां प्रज्ञापना परम्परसिद्धासंसारसमापन्नजीवप्रज्ञापना, अत्रापि चशब्दः स्वगतानेकभेदसूचकः ॥ 'से किन्त'मित्यादि, अथ का सा अनन्तरसिद्धासंसारसमापन्नजीवप्रज्ञापना ?, सूरिराह–अनन्तरसिद्धासंसारसमापन्नजीवप्रज्ञापना पञ्चदशविधा प्रज्ञप्ता, अनन्तरसिद्धानामुपाधिभेदतः पञ्चदशविधत्वात्, तदेव पञ्चदशविधत्वं तेषामाह–'तंजहे'त्यादि, 'तद्यथे'ति पञ्चदशभेदोपदर्शनसूचकं, तीर्थसिद्धाः तीर्यते संसारसागरोऽनेनेति तीर्थं–यथावस्थितसकलजीवाजीवादिपदार्थसार्थप्ररूपकं परमगुरुप्रणीतं प्रवचनम्, तच्च निराधारं न भवति इति सङ्घः प्रथमगणधरो वा वेदितव्यः, उक्तं च—"तित्थं भन्ते ! तित्थं तित्थकरे तित्थं ?, गोयमा !, अरिहा ताव (नियमा) तित्थकरे, तित्थं पुण चाउव्वण्णो समणसङ्घो पढमगणहरो वे'ति, तस्मिन्नुत्पन्ने ये सिद्धास्ते तीर्थसिद्धाः, तथा तीर्थस्याभावोऽतीर्थं, तीर्थस्याभावश्चानुत्पादोऽपान्तराले व्यवच्छेदो वा तस्मिन् ये सिद्धास्तेऽतीर्थसिद्धाः, तत्र तीर्थस्यानुत्पादे सिद्धा मरुदेवीप्रभृतयः, न हि मरुदेव्यादिसिद्धिगमनकाले तीर्थमुत्पन्नमासीत्, तथा तीर्थस्य व्यवच्छेदः सुविधिस्वाम्याद्य-

१ तीर्थं (शासनं) भदन्त ! तीर्थं (तरणसाधनं) तीर्थकरस्तीर्थम् ?, गौतम ! अर्हन् तावत् नियमात्तीर्थकरः, तीर्थं पुनश्चतुर्वर्णः श्रमणसङ्घः प्रथमगणधरो वा ।

प्र. ४

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्तिः

पान्तरालेषु तत्र ये जातिस्मरणादिनाऽपवर्गमार्गमवाप्य सिद्धास्ते तीर्थव्यवच्छेदसिद्धाः २, तथा तीर्थकराः सन्तो ये सिद्धास्ते तीर्थकरसिद्धाः ३ सामान्यकेवलिनः सन्तो ये सिद्धास्तेऽतीर्थकरसिद्धाः ४ तथा स्वयंबुद्धाः सन्तो ये सिद्धास्ते स्वयम्बुद्धसिद्धाः ५, प्रत्येकबुद्धाः सन्तो ये सिद्धास्ते प्रत्येकबुद्धसिद्धाः ६, अथ स्वयम्बुद्धप्रत्येकबुद्धानां कः प्रतिविशेषः ?, उच्यते, बोध्युपधिश्रुतलिङ्गकृतो विशेषः, तथाहि—स्वयम्बुद्धा बाह्यप्रत्ययमन्तरेणैव बुध्यन्ते, स्वयमेव—बाह्यप्रत्ययमन्तरेणैव निजजातिस्मरणादिना बुद्धाः स्वयम्बुद्धा इति व्युत्पत्तेः, ते च द्विधा—तीर्थकरास्तीर्थकरव्यतिरिक्ताश्च, इह तीर्थकरव्यतिरिक्तैरधिकारः, आह च नन्द्यध्ययनचूर्णिकृत्—'ते दुविहा सयंबुद्धा—तित्थयरा तित्थयरवइरित्ता य, इह वइरित्तेहिं अहिगारो' इति । प्रत्येकबुद्धास्तु बाह्यप्रत्ययमपेक्ष्य, प्रत्येकं—बाह्यं वृषभादिकं कारणमभिसमीक्ष्य बुद्धाः प्रत्येकबुद्धा इति व्युत्पत्तेः, तथा च श्रूयते—बाह्यप्रत्ययसापेक्षा करकण्डूवादीनां बोधिः, बहिःप्रत्ययमपेक्ष्य च ते बुद्धाः सन्तो नियमतः प्रत्येकमेव विहरन्ति, न गच्छवासिन इव संहताः, आह च नन्द्यध्ययनचूर्णिकृत्—पत्तेयं—बाह्यं वृषभादिकं कारणमभिसमीक्ष्य बुद्धाः, बहिष्प्रत्ययं प्रति बुद्धानां च पत्तेयं नियमा विहारो जम्हा तम्हा य ते पत्तेयबुद्धा' इति, स्वयम्बुद्धानामुपधिर्द्वादशविध एव पात्रादिकः, प्रत्येकबुद्धानां तु द्विधा—जघन्यतस्तथोत्कर्षतश्च, तत्र जघन्यतो द्विविधः, उत्कर्षतो नवविधः प्रावरणवर्जः, उक्तं च—"पत्तेयबुद्धाणं जहन्नेणं दुविहो उक्कोसेणं नवविहो नियमा पाउरणवज्जो भवइ" इति, तथा स्वयम्बुद्धानां पूर्वाधीतं श्रुतं भवति वा न वा, यदि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भवति ततो लिङ्गं देवता वा प्रयच्छति गुरुसन्निधौ वा गत्वा प्रतिपद्यते, यदि च एकाकिविचरणसमर्थः इच्छा वा तस्य तथारूपा जायते तत एकाकी विहरति, अन्यथा गच्छवासेऽवतिष्ठते, अथ पूर्वाधीतं श्रुतं तस्य न भवति तर्हि नियमाद्गुरुसन्निधौ गत्वा लिङ्गं प्रतिपद्यते गच्छं चावश्यं न मुञ्चति, तथा चोक्तम्—"पुव्वाहीयं सुयं से हवइ वा न वा, जइ से नत्थि तो लिङ्गं नियमा गुरुसन्निहे पडिवज्जइ गच्छे य विहरइत्ति, अह पुव्वाधीयसुयसम्भवोऽत्थि तो से लिङ्गं देवया पडियच्छइ गुरुसन्निहे वा पडिवज्जइ, जइ य एगविहारविहरणसमत्थो इच्छा वा से तो एको चेव विहरइ, अन्यथा गच्छे विहरइ"त्ति प्रत्येकबुद्धानां तु पूर्वाधीतं श्रुतं नियमतो भवति, तच्च जघन्यत एकादशाङ्गानि, उत्कर्षतः किञ्चिन्न्यूनानि दश पूर्वाणि, तथा लिङ्गं तस्मै देवता प्रयच्छति लिङ्गरहितो वा कदाचिद्भवति, तथा चोक्तम्–"पत्तेयबुद्धाणं पुव्वाहीयं सुयं नियमा हवइ, जहन्नेणं इक्कारस अङ्गा, उक्कोसेणं भिन्नदसपुव्वा,लिङ्गं च से देवया पयच्छइ, लिङ्गवज्जिओ वा भवइ, जओ भणियं–रुप्पं पत्तेयबुद्धा" इति। तथा बुद्धा–आचार्यास्तैर्बोधिताः सन्तो ये सिद्धास्ते बुद्धबोधितसिद्धाः। एते च सर्वेऽपि केचित्स्त्रीलिङ्गसिद्धाः, स्त्रिया लिङ्गं स्त्रीलिङ्गं, स्त्रीत्वस्योपलक्षणमित्यर्थः, तच्च त्रिधा, तद्यथा—वेदः शरीरनिर्वृत्तिर्नेपथ्यं च, तत्रेह शरीरनिर्वृत्त्या प्रयोजनम्, न वेदनेपथ्याभ्यां, वेदे सति सिद्धत्वाभावात्, नेपथ्यस्य चाप्रमाणत्वात्, आह च नन्द्यध्ययनचूर्णिकृत्—"इत्थीए लिङ्गं इत्थिलिङ्गं,इत्थीए उवलक्खणंति वुत्तं भवइ, तं च तिविहं–वेदो सरीरनिवित्ती नेवत्थं च, इह सरीरनिवत्तीए अहिगारो, न वेयनेवत्थेहिं"ति।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [६-७]

दीप अनुक्रम [१५-१६]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्तिः

ततस्तस्मिन् स्त्रीलिङ्गे वर्त्तमानाः सन्तो ये सिद्धास्ते स्त्रीलिङ्गसिद्धाः, एतेन यदाहुराशाम्बराः—'न स्त्रीणां निर्वाण'मिति, तदपास्तं द्रष्टव्यं, स्त्रीनिर्वाणस्य साक्षादनेन सूत्रेणाभिधानात्, तत्प्रतिषेधस्य युक्तया अनुपपन्नत्वात्,तथाहि–मुक्तिपथो ज्ञानदर्शनचारित्राणि 'सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः' इति वचनात् (तत्त्वार्थे अ० १ सू० १), सम्यग्दर्शनादीनि च पुरुषाणामिव स्त्रीणामप्यविकलानि, तथाहि–दृश्यन्ते स्त्रियोऽपि सकलमपि प्रवचनार्थमभिरोचयमानाः, जानते च षडावश्यककालिकोत्कालिकादिभेदभिन्नं श्रुतं, परिपालयन्ति सप्तदशप्रकारमकलङ्कं संयमं, धारयन्ति च देवासुराणामपि दुर्धरं ब्रह्मचर्यं, तप्यन्ते च तपांसि मासक्षपणादीनि, ततः कथमिव न तासां मोक्षसम्भवः ?, स्यादेतत्–अस्ति स्त्रीणां सम्यग्दर्शनं ज्ञानं वा, न पुनश्चारित्रं, संयमाभावात्, तथाहि—स्त्रीणामवश्यं वस्त्रपरिभोगेन भवितव्यमन्यथा विवृताङ्गास्तास्तिर्यक्स्त्रिय इव पुरुषाणामभिभवनीया भवेयुः, लोके च गर्होपजायते, ततोऽवश्यं ताभिर्वस्त्रं परिभोक्तव्यं, वस्त्रपरिभोगे च सपरिग्रहता, सपरिग्रहत्वे च संयमाभाव इति, तदसमीचीनम्, सम्यक् सिद्धान्तापरिज्ञानात्, परिग्रहो हि परमार्थतो मूर्छाऽभिधीयते, 'मुच्छा परिग्गहो वुत्तो' इतिवचनात्, तथाहि— मूर्छारहितो भरतश्चक्रवर्ती सान्तःपुरोऽप्यादर्शकगृहेऽवतिष्ठमानो निष्परिग्रहो गीयते, अन्यथा केवलोत्पादासम्भवात्, अपि च–यदि मूर्छाया अभावेऽपि वस्त्रसंसर्गमात्रं परिग्रहो भवेत् ततो जिनकल्पं प्रतिपन्नस्य कस्यचित्साधोस्तुषार-

१ आशाम्बरकृतगोमटसारे–अडयाला पुंवेया, इत्थीवेया हवन्ति चालीसा । वीस नपुंसकवेया, समएणेगेण सिज्झन्ति ॥ १ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कणानुषक्ते प्रपतति शीते केनाप्यविषह्योपनिपातमद्य शीतमिति विभाव्य धर्मार्थिना शिरसि वस्त्रे प्रक्षिप्ते तस्य सपरिग्रहता भवेत्, न चैतदिष्टं, तस्मान्न वस्त्रसंसर्गमात्रं परिग्रहः, किन्तु मूर्छा, सा च स्त्रीणां वस्त्रादिषु न विद्यते, धर्मोपकरणमात्रतया तस्योपादानात्, न खलु ता वस्त्रमन्तरेणात्मानं रक्षयितुमीशते, नापि शीतकालादिषु व्यग्रदशायां स्वाध्यायादिकं कर्तुं, ततो दीर्घतरसंयमपरिपालनाय यतनया वस्त्रं परिभुञ्जाना न ताः परिग्रहवत्यः, अथोच्येत–सम्भवति नाम स्त्रीणामपि सम्यग्दर्शनादिकं रत्नत्रयं,परं न तत् सम्भवमात्रेण मुक्तिपदप्रापकं भवति,किन्तु प्रकर्षप्राप्तम्,अन्यथा दीक्षानन्तरमेव सर्वेषामप्यविशेषेण मुक्तिपदप्राप्तिप्रसक्तिः, सम्यग्दर्शनादिरत्नत्रयप्रकर्षश्च स्त्रीणामसम्भवी, ततो न निर्वाणमिति, तदप्ययुक्तम्, स्त्रीषु रत्नत्रयप्रकर्षासम्भवे ग्राहकप्रमाणस्याभावात्, न खलु सकलदेशकालव्याप्त्या स्त्रीषु रत्नत्रयप्रकर्षासम्भवग्राहकं प्रमाणं विजृम्भते, देशकालविप्रकृष्टेषु प्रत्यक्षस्याप्रवृत्तेः, तदप्रवृत्तौ चानुमानस्याप्यसम्भवात्, नापि तासु रत्नत्रयप्रकर्षासम्भवप्रतिपादकः कोऽप्यागमो विद्यते, प्रत्युत सम्भवप्रतिपादकः स्थाने स्थानेऽस्ति,यथेदमेव प्रस्तुतं सूत्रं, ततो न तासां रत्नत्रयप्रकर्षासम्भवः, अथ मन्येथाः–स्वभावत एवातपेनेव छाया विरुध्यते स्त्रीत्वेन सह रत्नत्रयप्रकर्षः, ततस्तदसम्भवोऽनुमीयते, तदयुक्तमुक्तं, युक्तिविरोधात्, तथाहि–रत्नत्रयप्रकर्षः स उच्यते यतोऽनन्तरं मुक्तिपदप्राप्तिः, स चायोग्यवस्थाचरमसमयभावी, अयोग्यवस्था चास्मादृशामप्रत्यक्षा, ततः कथं विरोधगतिः?, न हि अदृष्टेन सह विरोधः प्रतिपत्तुं शक्यते, मा प्रापत्पुरुषेष्वपि प्रसङ्गः, ननु जगति सर्वोत्कृष्टपदप्राप्तिः सर्वोत्कृष्टेना-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [६-७]

दीप अनुक्रम [१५-१६]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्तिः

ध्यवसायेनावाप्यते, नान्यथा, एतच्चोभयोरप्यावयोरागमप्रामाण्यबलतः सिद्धं, सर्वोत्कृष्टे च द्वे पदे—सर्वोत्कृष्टदुःखस्थानं सर्वोत्कृष्टसुखस्थानं च, तत्र सर्वोत्कृष्टदुःखस्थानं सप्तमनरकपृथ्वी, अतः परं परमदुःखस्थानस्याभावात्, सर्वोत्कृष्टसुखस्थानं तु निःश्रेयसं, तत्र स्त्रीणां सप्तमनरकपृथिवीगमनमागमे निषिद्धं, निषेधस्य च कारणं तद्गमनयोग्यतथाविधसर्वोत्कृष्टमनोवीर्यपरिणत्यभावः, ततः सप्तमपृथिवीगमनवत्त्वाभावात्,सम्मूर्छिमादिवत्,अपि च–यासां वादलब्धौ विकुर्वणत्वादिलब्धौ पूर्वगतश्रुताधिगतौ च न सामर्थ्यमस्ति तासां मोक्षगमनसामर्थ्यमित्यतिदुःश्रद्धेयं, तदेतदयुक्तं, यतो यदि नाम स्त्रीणां सप्तमनरकपृथिवीगमनं प्रति सर्वोत्कृष्टमनोवीर्यपरिणत्यभावः,तत एतावता कथमवसीयते–निःश्रेयसमपि प्रति तासां सर्वोत्कृष्टमनोवीर्यपरिणत्यभावो, न हि यो भूमिकर्षणादिकं कर्मकर्तुं न शक्नोति स शास्त्राण्यप्यवगाहुं न शक्नोतीति प्रत्येतुं शक्यम्, प्रत्यक्षविरोधात्, अथ सम्मूर्छिमादिषूभयत्रापि सर्वोत्कृष्टमनोवीर्यपरिणत्यभावो दृष्टः ततोऽत्राप्यवसीयते, ननु यदि तत्र दृष्टस्तर्हि कथमत्रावसीयते ?, न खलु बहिर्व्याप्तिमात्रेण हेतुर्गमको भवति, किन्त्वन्तर्व्याप्त्या, अन्तर्व्याप्तिश्च प्रतिबन्धबलेन, न चात्र प्रतिबन्धो विद्यते, न खलु सप्तमपृथिवीगमनं निर्वाणगमनस्य कारणं, नापि सप्तमपृथिवीगमनाविनाभावि निर्वाणगमनं, चरमशरीरिणां सप्तमपृथिवीगमनमन्तरेणैव निर्वाणगमनभावात्, न च प्रतिबन्धमन्तरेणैकस्याभावेऽन्यस्यावश्यमभावः, मा भ्रापत् यस्य तस्य वा कस्यचिदभावे सर्वस्याभावप्रसङ्गः, यद्येवं तर्हि कथं सम्मूर्छिमादिषु निर्वाणगमनाभाव इति ?, उच्यते, तथाभवस्वाभाव्यात्, तथाहि—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ते सम्मूर्छिमादयो भवस्वभावत एव न सम्यग्दर्शनादिकं यथावत्प्रतिपत्तुं शक्यन्ते, ततो न तेषां निर्वाणसम्भवः, स्त्रियस्तु प्रागुक्तप्रकारेण यथावत्सम्यग्दर्शनादिरत्नत्रयसम्पद्योग्याः, ततस्तासां न निर्वाणगमनाभावः, अपि च–भुजपरिसर्प्पा द्वितीयामेव पृथिवीं यावद्गच्छन्ति न परतः, परपृथिवीगमनहेतुतथारूपमनोवीर्यपरिणत्यभावात्, तृतीयां यावत्पक्षिणश्चतुर्थीं चतुष्पदाः पञ्चमीमुरगाः, अथ च सर्वेऽप्यूर्ध्वमुत्कर्षतः सहस्रारं यावद्गच्छन्ति,तन्नाधोगतिविषये मनोवीर्यपरिणतिवैषम्यदर्शनाद्ऊर्ध्वगतावपि च तद्वैषम्यम्, आह च–"विषमगतयोऽप्यधस्तादुपरिष्टात्तुल्यमासहस्रारम् । गच्छन्ति च तिर्यञ्चस्तदधोगत्यूनताऽहेतुः ॥ १ ॥" तथा च सति सिद्धं स्त्रीपुंसानामधोगतिवैषम्येऽपि निर्वाणं समं, यदप्युक्तम्–'अपि च यासां वादलब्धावित्यादि' तदप्यश्लीलं, वादविकुर्वणत्वादिलब्धिविरहेऽपि विशिष्टपूर्वगतश्रुताभावेऽपि माषतुषादीनां निःश्रेयससम्पदधिगमश्रवणात्, आह च–"वादविकुर्वणत्वादिलब्धिविरहे श्रुते कनीयसि च । जिनकल्पमनःपर्यवविरहेऽपि न सिद्धिविरहोऽस्ति॥ १ ॥" अपि च–यदि वादादिलब्ध्यभाववन्निःश्रेयसाभावोऽपि स्त्रीणामभविष्यत् ततस्तथैव सिद्धान्ते प्रत्यपादयिष्यत्, यथा जम्बूयुगादारात् केवलज्ञानाभावो, न च प्रतिपाद्यते क्वापि स्त्रीणां निर्वाणाभाव इति,तस्मादुपपद्यते स्त्रीणां निर्वाणमिति कृतं प्रसङ्गेन । तथा पुंलिङ्गे–शरीरनिर्वृत्तिरूपे व्यवस्थिताः सन्तो ये सिद्धास्ते पुंलिङ्गसिद्धाः, एवं नपुंसकलिङ्गसिद्धाः, तथा स्वलिङ्गे–रजोहरणादिरूपे व्यवस्थिताः सन्तो ये सिद्धास्ते स्वलिङ्गसिद्धाः,तथाऽन्यलिङ्गे–परिव्राजकादिसम्बधिनि वल्कलकाषायादिरूपे द्रव्यलिङ्गे व्यवस्थिताः सन्तो

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ये सिद्धास्तेऽन्यलिङ्गसिद्धाः, गृहिलिङ्गे सिद्धा गृहिलिङ्गसिद्धाः मरुदेवीप्रभृतयः, तथैकसिद्धा एकस्मिन् २ समये एकका एव सन्तः सिद्धा एकसिद्धाः, 'अणेगसिद्धा' इति एकस्मिन् समयेऽनेके सिद्धा अनेकसिद्धाः, अनेके चैकस्मिन्समये सिध्यन्त उत्कर्षतोऽष्टोत्तरशतसङ्ख्या वेदितव्याः, यस्मादुक्तम्–"बत्तीसा अडयाला सट्ठी बावत्तरी य बोद्धव्वा । चुलसीई छन्नउइ उ दुरहियमट्ठुत्तरसयं च ॥१॥" अस्या विनेयजनानुग्रहाय व्याख्या–अष्टौ समयान् यावन्निरन्तरमेकादयो द्वात्रिंशत्पर्यन्ताः सिध्यन्तः प्राप्यन्ते, किमुक्तं भवति ?–प्रथमे समये जघन्यत एको द्वौ वोत्कर्षतो द्वात्रिंशत्सिध्यन्तः प्राप्यन्ते, द्वितीयेऽपि समये जघन्यत एको द्वौ वोत्कर्षतो द्वात्रिंशत्, एवं यावदष्टमेऽपि समये जघन्यत एको द्वौ वोत्कर्षतो द्वात्रिंशत्, ततः परमवश्यमन्तरं, तथा त्रयस्त्रिंशदादयोऽष्टचत्वारिंशत्पर्यन्ता निरन्तरं सिध्यन्तः सप्त समयान् यावत्प्राप्यन्ते, परतो नियमादन्तरं, तथा एकोनपञ्चाशदादयः षष्टिपर्यन्ता निरन्तरं सिध्यन्त उत्कर्षतः षट् समयान् यावदवाप्यन्ते परतोऽवश्यमन्तरं,तथैकषष्ट्यादयो द्विसप्ततिपर्यन्ता निरन्तरं सिध्यन्त उत्कर्षतः पञ्च समयान् यावदवाप्यन्ते ततः परमन्तरं,त्रिसप्तत्यादयश्चतुरशीतिपर्यन्ता निरन्तरं सिध्यन्त उत्कर्षतश्चतुरः समयान् यावत्तत ऊर्ध्वमन्तरं, तथा पञ्चाशीत्यादयः षण्णवतिपर्यन्ता निरन्तरं सिध्यन्त उत्कर्षतस्त्रीन् समयान् यावत्परतो नियमादन्तरं, तथा सप्तनवत्यादयो द्युत्तरशतपर्यन्ता निरन्तरं सिध्यन्त उत्कर्षतो द्वौ समयौ परतोऽवश्यमन्तरं, तथा त्र्युत्तरशतादयोऽष्टोत्तरशतपर्यन्ताः सिध्यन्तो नियमादेकमेव समयं यावदवाप्यन्ते, न द्वित्रादिसमयान्, तदेवमेकस्मिन् समये उत्कर्ष-

॥ २२ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [६-७]

दीप अनुक्रम [१५-१६]

तोऽष्टोत्तरशतसङ्ख्याः सिध्यन्तः प्राप्यन्ते इत्यनेकसिद्धा उत्कर्षतोऽष्टोत्तरशतप्रमाणा वेदितव्याः । आह—तीर्थसिद्धातीर्थसिद्धरूपभेदद्वय एव शेषभेदा अन्तर्भवन्ति तत्किमर्थं शेषभेदोपादानम् ?, उच्यते, सत्यमन्तर्भवन्ति परं न तीर्थसिद्धातीर्थसिद्धभेदद्वयोपादानमात्राच्छेषभेदपरिज्ञानं भवति,विशेषपरिज्ञानार्थं च एष शास्त्रारम्भप्रयास इति शेषभेदोपादानम् , उपसंहारमाह—'सेत्तमि'त्यादि, सैषा अनन्तरसिद्धासंसारसमापन्नजीवप्रज्ञापना ॥

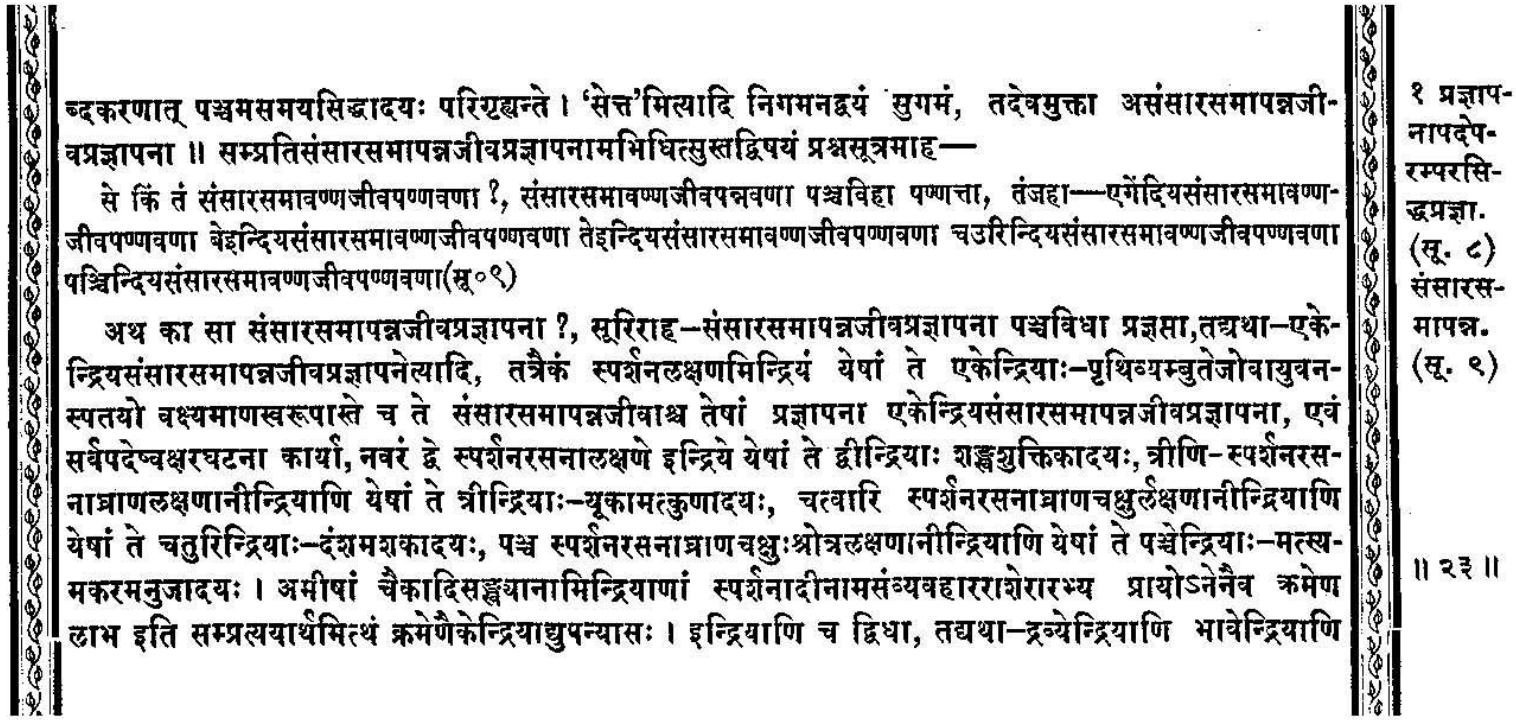
से किं तं परम्परसिद्धअसंसारसमावण्णजीवपण्णवणा ?,२ अणेगविहा पण्णत्ता, तंजहा–अपढमसमयसिद्धा दुसमयसिद्धा तिसमयसिद्धा चउसमयसिद्धा जाव सङ्खिज्जसमयसिद्धा असङ्खिज्जसमयसिद्धा अणन्तसमयसिद्धा, सेत्तं परम्परसिद्धासंसारसमावण्णजीवपण्णवणा, सेत्तं असंसारसमावण्णजीवपण्णवणा (सू०८)

अथ का सा परम्परसिद्धासंसारसमापन्नजीवप्रज्ञापना ?, सूरिराह–परम्परसिद्धासंसारसमापन्नजीवप्रज्ञापनाऽनेकविधा प्रज्ञप्ता, परम्परसिद्धानामनेकविधत्वात् , तदेवानेकविधत्वमाह–'तंजहे'त्यादि, 'तद्यथे'त्यनेकविधत्वोपदर्शने, 'अप्रथमसमयसिद्धा' इति, न प्रथमसमयसिद्धा अप्रथमसमयसिद्धाः–परम्परसिद्धविशेषणप्रथमसमयवर्त्तिनः, सिद्धत्वसमयाद्वितीयसमयवर्त्तिन इत्यर्थः, त्र्यादिषु तु समयेषु द्वितीयसमयसिद्धादय उच्यन्ते, यद्वा सामान्यतः प्रथममप्रथमसमयसिद्धा इत्युक्तं,तत एतद्विशेषतो व्याचष्टे—द्विसमयसिद्धास्त्रिसमयसिद्धाश्चतुःसमयसिद्धा इत्यादि यावच्छ-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [८]

दीप अनुक्रम [१७]



प्रज्ञापनाः मल० वृत्तौ. ॥ २३ ॥

ब्दकरणात् पञ्चमसमयसिद्धादयः परिगृह्यन्ते। 'सेत्त'मित्यादि निगमनद्वयं सुगमं, तदेवमुक्ता असंसारसमापन्नजीवप्रज्ञापना ॥ सम्प्रतिसंसारसमापन्नजीवप्रज्ञापनाभिधित्सुस्तद्विषयं प्रश्नसूत्रमाह—

से किं तं संसारसमावण्णजीवपण्णवणा ?, संसारसमावण्णजीवपन्नवणा पञ्चविहा पण्णत्ता, तंजहा—एगेंदियसंसारसमावण्णजीवपण्णवणा बेइन्दियसंसारसमावण्णजीवपण्णवणा तेइन्दियसंसारसमावण्णजीवपण्णवणा चउरिन्दियसंसारसमावण्णजीवपण्णवणा पञ्चिन्दियसंसारसमावण्णजीवपण्णवणा(सू०९)

अथ का सा संसारसमापन्नजीवप्रज्ञापना ?, सूरिराह–संसारसमापन्नजीवप्रज्ञापना पञ्चविधा प्रज्ञप्ता,तद्यथा–एकेन्द्रियसंसारसमापन्नजीवप्रज्ञापनेत्यादि, तत्रैकं स्पर्शनलक्षणमिन्द्रियं येषां ते एकेन्द्रियाः–पृथिव्यम्बुतेजोवायुवनस्पतयो वक्ष्यमाणस्वरूपास्ते च ते संसारसमापन्नजीवाश्च तेषां प्रज्ञापना एकेन्द्रियसंसारसमापन्नजीवप्रज्ञापना, एवं सर्वपदेष्वक्षरघटना कार्या, नवरं द्वे स्पर्शनरसनालक्षणे इन्द्रिये येषां ते द्वीन्द्रियाः शङ्खशुक्तिकादयः, त्रीणि-स्पर्शनरसनाघ्राणलक्षणानीन्द्रियाणि येषां ते त्रीन्द्रियाः–यूकामत्कुणादयः, चत्वारि स्पर्शनरसनाघ्राणचक्षुर्लक्षणानीन्द्रियाणि येषां ते चतुरिन्द्रियाः–दंशमशकादयः, पञ्च स्पर्शनरसनाघ्राणचक्षुःश्रोत्रलक्षणानीन्द्रियाणि येषां ते पञ्चेन्द्रियाः–मत्स्यमकरमनुजादयः। अमीषां चैकादिसङ्ख्यानामिन्द्रियाणां स्पर्शनादीनामसंव्यवहारराशेरारभ्य प्रायोऽनेनैव क्रमेण लाभ इति सम्प्रत्ययार्थमित्थं क्रमेणैकेन्द्रियाद्युपन्यासः। इन्द्रियाणि च द्विधा, तद्यथा–द्रव्येन्द्रियाणि भावेन्द्रियाणि

१ प्रज्ञापनापदेपरम्परसिद्धप्रज्ञा. (सू. ८) संसारसमापन्न. (सू. ९) ॥ २३ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र संसारसमापन्न/संसारी-जीवस्य प्रज्ञापना आरभ्यते

प्रत सूत्रांक [९]

दीप अनुक्रम [१८]

च, तत्र द्रव्येन्द्रियाणि निर्वृत्त्युपकरणरूपाणि, तानि च सविस्तरं नन्द्यध्ययनटीकायां व्याख्यातानीति न भूयो व्याख्यायन्ते, भावेन्द्रियाणि क्षयोपशमोपयोगरूपाणि, तानि चानियतानि, एकेन्द्रियाणामपि क्षयोपशमोपयोगरूपभावेन्द्रियपञ्चकसम्भवात्, केषाञ्चित्तत्फलदर्शनात्, तथाहि–बकुलादयो मत्तकामिनीगीतध्वनिश्रवणसविलासकटाक्षनिरीक्षणमुखक्षिप्तसुरागण्डूषगन्धाघ्राणरसास्वादस्तनाद्यवयवस्पर्शनतः प्रमोदभावेनाकालक्षेपमुपलभ्यन्ते पुष्पफलानि प्रयच्छन्तः, उक्तं च—"जं किर बउलाईणं दीसइ सेसिन्दिओवलम्भोऽवि । तेणऽत्थि तदावरणक्खओवसमसम्भवो तेसिं ॥ १ ॥" ततो न भावेन्द्रियाणि लौकिकव्यवहारपथावतीर्णैकेन्द्रियादिव्यपदेशनिबन्धनं, किन्तु द्रव्येन्द्रियाणि, तथाहि–येषामेकं बाह्यं द्रव्येन्द्रियं स्पर्शनलक्षणमस्ति ते एकेन्द्रियाः येषां द्वे ते द्वीन्द्रियाः एवं यावद्येषां पञ्च ते पञ्चेन्द्रियाः, आह च–"पंचिंदिओवि बउलो नरोव्व सव्वविसयोवलम्भाओ । तहवि न भण्णइ पंचिन्दिओत्ति बज्झिन्दियाभावा॥१॥"

से किन्तं एगेन्दियसंसारसमावण्णजीवपण्णवणा ?, एगेन्दियसंसारसमावण्णजीवपण्णवणा पञ्चविहा पन्नत्ता, तंजहा–पुढविकाइया आउक्काइया तेउक्काइया वाउक्काइया वणस्सइकाइया (सू०१०)

अथ का सा एकेन्द्रियसंसारसमापन्नजीवप्रज्ञापना ?, सूरिराह—एकेन्द्रियसंसारसमापन्नजीवप्रज्ञापना पञ्चविधा

१ यत्किल बकुलादीनां दृश्यते शेषेन्द्रियोपलम्भोऽपि । तेनास्ति तदावरणक्षयोपशमसंभवस्तेषाम् ॥ १ ॥ २ पञ्चेन्द्रियोऽपि बकुलो नर इव सर्वविषयोपलम्भात् । तथापि न भण्यते पञ्चेन्द्रिय इति बाह्येन्द्रियाभावात् ॥ १ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [१०]

दीप अनुक्रम [१९]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्तिः

प्रज्ञप्ता, एकेन्द्रियाणां पञ्चविधत्वात्, तदेव पञ्चविधत्वमाह—'तंजहे'त्यादि, पृथिवी–काठिन्यादिलक्षणा प्रतीता सैव कायः–शरीरं येषां ते पृथिवीकायाः पृथिवीकाया एव पृथिवीकायिकाः, स्वार्थे इकप्रत्ययः, आपो–द्रवास्ताश्च प्रतीता एव ताः कायः–शरीरं येषां तेऽप्कायाः अप्काया एवाप्कायिकाः, तेजो–वह्निः तदेव कायः–शरीरं येषां ते तेजस्काया तेजस्काया एव तेजस्कायिकाः, वायुः–पवनः स एव कायो येषां ते वायुकायाः वायुकाया एव वायुकायिकाः, वनस्पतिः–लतादिरूपः स एव कायः—शरीरं येषां ते वनस्पतिकायाः वनस्पतिकाया एव वनस्पतिकायिकाः। इह सर्वभूताधारत्वात् पृथिव्याः पृथिवीकायिकानां प्रथममुपादानं, तदनन्तरं तत्प्रतिष्ठितत्वादप्कायिकानां, अप्कायिकाश्च तेजःप्रतिपक्षभूतास्तत्तदनन्तरं तेजस्कायिकानामुपादानं, तेजश्च वायुसम्पर्कतः प्रवृद्धिमुपयाति तत एतदनन्तरं वायुकायिकग्रहणं, वायुश्च दूरस्थितो वृक्षशाखादिकम्पनतो लक्ष्यते ततस्तदनन्तरं वनस्पतिकायिकोपादानं ॥ सम्प्रति पृथिवीकायिकमनवबुध्यमानस्तद्विषयं शिष्यः प्रश्नं करोति—

से किं तं पुढविकाइया ?, पुढविकाइया दुविहा पण्णत्ता, तंजहा—सुहुमपुढविकाइया य बादरपुढविकाइया य। (सू० ११)

अथ के ते पृथिवीकायिकाः ?, सूरिराह—पृथिवीकायिकाः द्विविधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—सूक्ष्मपृथिवीकायिकाश्च बादरपृथिवीकायिकाश्च, सूक्ष्मनामकर्मोदयात्सूक्ष्माः बादरनामकर्मोदयाद्बादराः, कर्मोदयजनिते खल्वेते सूक्ष्मबादरत्वे नापेक्षिके बदरामलकयोरिव, सूक्ष्माश्च ते पृथिवीकायिकाश्च सूक्ष्मपृथिवीकायिकाः, चशब्दः स्वगतपर्यो-

१ प्रज्ञापनापदे एकेन्द्रियप्रज्ञा. (सू.१०) पृथ्वीकायप्रज्ञा. (सू. ११)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र पृथ्विकाय-जीवस्य प्रज्ञापना आरभ्यते

प्रत सूत्रांक [११]

दीप अनुक्रम [२०]

सापर्याप्तभेदसूचकः, बादराश्च ते पृथिवीकायिकाश्च बादरपृथिवीकायिकाः, अत्रापि चशब्दः शर्करावालुकादिभेदसूचकः, तत्र सूक्ष्मपृथिवीकायिकाः समुद्गकपर्याप्तप्रक्षिप्तगन्धावयववत्सकललोकव्यापिनो, बादराः प्रतिनियतदेशचारिणः, तच्च प्रतिनियतदेशचारित्वं द्वितीयपदे प्रकटयिष्यते ॥ तत्र सूक्ष्मपृथिवीकायिकानां स्वरूपं जिज्ञासुरिदमाह—

से किन्तं सुहुमपुढविकाइया ?, २ दुविहा पण्णत्ता, तंजहा—पज्जत्तसुहुमपुढविकाइया य अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइया य, से त्तं सुहुमपुढविकाइया । (सू. १२)

अथ के ते सूक्ष्मपृथिवीकायिकाः ?, सूरिराह–सूक्ष्मपृथिवीकायिका द्विविधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–पर्याप्तसूक्ष्मपृथिवीकायिकाश्चापर्याप्तसूक्ष्मपृथिवीकायिकाश्च, तत्र पर्याप्तिर्नाम आहारादिपुद्गलग्रहणपरिणमनहेतुरात्मनः शक्तिविशेषः, स च पुद्गलोपचयादुपजायते, किमुक्तं भवति ?–उत्पत्तिदेशमागतेन प्रथमं ये गृहीताः पुद्गलास्तेषां तथाऽन्येषामपि प्रतिसमयं गृह्यमाणानां तत्सम्पर्कतः तद्रूपतया जातानां यः शक्तिविशेषः आहारादिपुद्गलखलरसरूपताऽऽपादानहेतुर्यथोदरान्तर्गतानां पुद्गलविशेषाणामाहारपुद्गलखलरसरूपतापरिणमनहेतुः, सा च पर्याप्तिः षोढा–आहारपर्याप्तिः शरीरपर्याप्तिरिन्द्रियपर्याप्तिः प्राणापानपर्याप्तिर्भाषापर्याप्तिर्मनःपर्याप्तिश्च, तत्र यया बाह्यमाहारमादाय खलरसरूपतया परिणमयति सा आहारपर्याप्तिः, यया रसीभूतमाहारं रसासृग्मांसमेदोऽस्थिमज्जाशुक्रलक्षणसप्तधातुरूपतया

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

परिणमयति सा शरीरपर्याप्तिः, यया धातुरूपतया परिणमितमाहारमिन्द्रियरूपतया परिणमयति सा इन्द्रियपर्याप्तिः, तथा चायमर्थोऽन्यत्रापि भङ्ग्यन्तरेणोक्तः, पञ्चानामिन्द्रियाणां प्रायोग्यान् पुद्गलान् गृहीत्वाऽनाभोगनिर्वर्त्तितेन वीर्येण तद्भावनयनशक्तिरिन्द्रियपर्याप्तिरिति, यया पुनरुच्छ्वासप्रायोग्यान् पुद्गलानादायोच्छ्वासरूपतया परिणमय्यालम्ब्य च मुञ्चति सा उच्छ्वासपर्याप्तिः, यया तु भाषाप्रायोग्यान् पुद्गलानादाय भाषात्वेन परिणमय्यालम्ब्य च मुञ्चति सा भाषापर्याप्तिः, यया पुनर्मनःप्रायोग्यान् पुद्गलानादाय मनस्त्वेन परिणमय्यालम्ब्य च मुञ्चति सा मनःपर्याप्तिः, एताश्च यथाक्रममेकेन्द्रियाणां संज्ञिवर्जानां द्वीन्द्रियादीनां सञ्ज्ञिनां चतुःपञ्चषट्सङ्ख्या भवन्ति, उक्तं च प्रज्ञापनामूलटीकाकृता–"एकेन्द्रियाणां चतस्रो विकलेन्द्रियाणां पञ्च सञ्ज्ञिनां षट्" इति, उत्पत्तिप्रथमसमय एव एता यथायथं सर्वा अपि युगपन्निष्पादयितुमारभ्यन्ते, क्रमेण च निष्ठामुपयान्ति, तद्यथा–प्रथममाहारपर्याप्तिस्ततः शरीरपर्याप्तिस्तत इन्द्रियपर्याप्तिरित्यादि, आहारपर्याप्तिश्च प्रथमसमय एव निष्पत्तिमुपपद्यते, शेषास्तु प्रत्येकमन्तर्मुहूर्त्तेन कालेन, अथाहारपर्याप्तिः प्रथमसमय एव निष्पद्यते इति कथमवसीयते ?, उच्यते, यत आहारपदे द्वितीयोद्देशके सूत्रमिदम्–'आहारपज्जत्तिए अपज्जत्तए णं भंते ! किं आहारए अणाहारए ?, गोयमा ! नो आहारए अणाहारए' इति, तत आहारपर्याप्त्याऽपर्याप्तो विग्रहगतावेवोपपद्यते, नोपपातक्षेत्रमागतोऽपि, उपपातक्षेत्रमागतस्य प्रथमसमय एवाहारकत्वात्, तत एकसामयिकी आहारपर्याप्तिनिर्वृत्तिः, यदि पुनरुपपातक्षेत्रमागतोऽप्याहारपर्याप्त्याऽपर्याप्तः

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [१२]

दीप अनुक्रम [२१]

स्यात् तत एवं सति व्याकरणसूत्रमित्थं भवेत्–"सिय आहारए सिय अणाहारए' यथा शरीरादिपर्याप्तिषु 'सिय आहारए सिय अणाहारए" इति, सर्वासामपि च पर्याप्तीनां परिसमाप्तिकालोऽन्तर्मुहूर्तप्रमाणः, पर्याप्तयो विद्यन्ते येषां ते पर्याप्ता "अभ्रादिभ्य' इति मत्वर्थीयोऽप्रत्ययः, पर्याप्तकाश्च ते सूक्ष्मपृथिवीकायिकाश्च पर्याप्तकसूक्ष्मपृथिवीकायिकाः, चशब्दो लब्धिपर्याप्तकरणपर्याप्तरूपस्वगतभेदद्वयसूचकः, ये पुनः स्वयोग्यपर्याप्तिपरिसमाप्तिविकलास्तेऽपर्याप्ताः अपर्याप्ताश्च ते सूक्ष्मपृथिवीकायिकाश्चापर्याप्तसूक्ष्मपृथिवीकायिकाः, चशब्दः करणलब्धिनिबन्धनस्वगतभेदद्वयसूचकः, तथाहि–द्विविधाः सूक्ष्मपृथिवीकायिका अपर्याप्तास्तद्यथा–लब्ध्या करणैश्च, तत्र येऽपर्याप्तका एव सन्तो म्रियन्ते ते लब्ध्यपर्याप्तकाः, ये पुनः करणानि–शरीरेन्द्रियादीनि न तावन्निर्वर्त्तयन्ति अथचावश्यं निर्वर्त्तयिष्यन्ति ते करणापर्याप्ताः, उपसंहारमाह–'सेत्त' मित्यादि, त एते सूक्ष्मपृथिवीकायिकाः ॥ तदेवं सूक्ष्मपृथिवीकायिकानभिधाय सम्प्रति बादरपृथिवीकायिकानभिधित्सुस्तद्विषयं प्रश्नसूत्रमाह–

से किं तं बादरपुढविकाइया ?, बादरपुढविकाइया दुविहा पन्नत्ता, तंजहा–सण्हबादरपुढविकाइया य खरबादरपुढविकाइया य (सू. १३)

अथ के ते बादरपृथिवीकायिकाः ?, सूरिराह–बादरपृथिवीकायिका द्विविधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–श्लक्ष्णबादरपृथिवीकायिकाश्च खरबादरपृथिवीकायिकाश्च, तत्र श्लक्ष्णा नाम चूर्णितलोष्टकल्पा मृदुपृथिवी तदात्मका जीवा अप्युपचा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रतः श्लक्ष्णास्ते च ते बादरपृथिवीकायिकाश्च श्लक्ष्णबादरपृथिवीकायिकाः, अथवा श्लक्ष्णा च सा बादरपृथिवी च २ सा कायः–शरीरं येषां ते श्लक्ष्णबादरपृथिवीकायाः त एव स्वार्थिकेकप्रत्ययविधानात् श्लक्ष्णबादरपृथिवीकायिकाः, चशब्दो वक्ष्यमाणस्वगतानेकभेदसूचकः, खरा नाम पृथिवीसङ्घातविशेषं काठिन्यविशेषं चापन्ना तदात्मका जीवा अपि खरास्ते च ते बादरपृथिवीकायिकाश्च खरबादरपृथिवीकायिकाः, अथवा पूर्ववत्प्रकारान्तरेण समासः, चशब्दः स्वगतवक्ष्यमाणचत्वारिंशद्भेदसूचकः ॥

से किं तं सण्हबायरपुढविकाइया ?, सण्हबायरपुढविकाइया सत्तविहा पन्नता, तंजहा–किण्हमत्तिया नीलमत्तिया लोहियमत्तिया हालिद्दमत्तिया सुक्किल्लमत्तिया पाण्डुमत्तिया पणगमत्तिया, सेत्तं सण्हबादरपुढविकाइया । (सू. १४)

अथ के ते श्लक्ष्णबादरपृथिवीकायिकाः, सूरिराह–श्लक्ष्णबादरपृथिवीकायिकाः सप्तविधाः प्रज्ञप्ताः, तदेव सप्तविधत्वं तद्यथेत्यादिनोपदर्शयति, कृष्णमृत्तिकाः–कृष्णमृत्तिकारूपा एवं नीलमृत्तिका लोहितमृत्तिका हारिद्रमृत्तिका शुक्लमृत्तिकाः, इत्थं वर्णभेदेन पञ्चविधत्वमुक्तं, पाण्डुमृत्तिका नाम देशविशेषे या धूलीरूपा सती पाण्डू इति प्रसिद्धा, तदात्मका जीवा अप्यभेदोपचारात् पाण्डुमृत्तिकेत्युक्ताः, 'पणगमट्टियत्ति' नद्यादिपूरप्लाविते देशे नद्यादिपूरेऽपगते यो भूमौ श्लक्ष्णमृदुरूपो जलमलापरपर्यायः पङ्कः स पनकमृत्तिका तदात्मका जीवा अप्यभेदोपचारात्पनकमृत्तिकाः, निगमनमाह–सेत्तं सण्हबायरपुढविकाइया, सुगमम् ॥

१ प्रज्ञापनापदे श्लक्ष्णपृथ्वी. (सू. १४)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

से किं तं खरबायरपुढविकाइया ?, खरबायरपुढविकाइया अणेगविहा पण्णत्ता, तंजहा–पुढवी य सक्करा वालुया य उवले सिला य लोणूसे । अय तंब तउय सीसय रुप्प सुवन्ने य वइरे य १४ ॥१॥ हरियाले हिंगुलए मणोसिला सासगंजणपवाले । अब्भपडलब्भवालुय बायरकाए मणिविहाणा ८ ॥ २ ॥ गोमेज्जए य रुयए अंके फलिहे य लोहियक्खे य । मरगय मसारगल्ले भुयमोयग इन्दनीले य ९ ॥ ३ ॥ चंदण गेरुय हंसगब्भ पुलए सोगन्धिए य बोद्धव्वे । चन्दप्पभवेरुलिए जलकंते सूरकंते य ९ ॥४॥–४०॥ जेयावन्ने तहप्पगारा ते समासओ दुविहा पन्नत्ता, तंजहा–पज्जत्तगा य अपज्जत्तगा य, तत्थणं जे ते अपज्जत्तगा ते णं असंपत्ता तत्थ णं जे ते पज्जत्तगा एतेसिं वन्नादेसेणं गन्धादेसेणं रसादेसेणं फासादेसेणं सहस्सग्गसो विहाणाइं, सङ्खेज्जाइं जोणिप्पमुहसतसहस्साइं, पज्जत्तगणिस्साए अपज्जत्तगा वक्कमंति, जत्थ एगो तत्थ नियमा असङ्खेज्जा, से त्तं खरबायरपुढविकाइया, सेत्तं बायरपुढविकाइया, सेत्तं पुढविकाइया । (सू० १५)

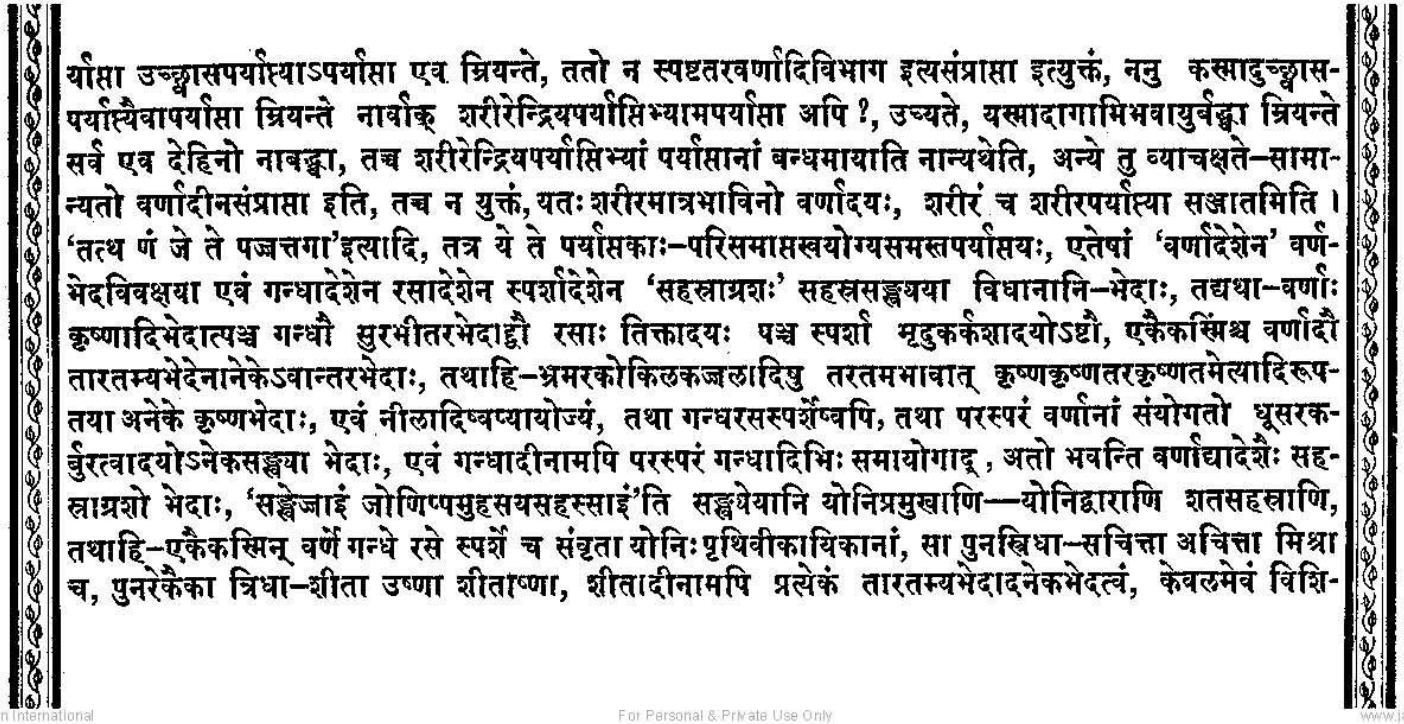
अथ के ते खरबादरपृथिवीकायिकाः ?, सूरिराह—खरबादरपृथिवीकायिका अनेकविधाः प्रज्ञप्ताः, चत्वारिंशद्भेदा मुख्यतया प्रज्ञप्ता इत्यर्थः, तानेव चत्वारिंशद्भेदानाह–'तंजहा पुढवी य'इत्यादि गाथाचतुष्टयं, पृथिवीति भामा सत्यभामावत् शुद्धपृथिवी च नदीतटमित्त्यादिरूपा, चशब्द उत्तरभेदापेक्षया समुच्चये १ शर्करा–लघूपलशकलरूपा २ वालुका–सिकताः ३ उपलः–टङ्कादुपकरणपरिकर्मणायोग्यः पाषाणः ४ शिला–घटनयोग्या देवकुलपीठादुपयोगी महान् पाषाणविशेषः ५ लवणं–सामुद्रादि ६ ऊषो–यद्वशादूषरं क्षेत्रम् ७ अयस्ताम्रत्रपुसीसकरूप्यसुव-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [१५] + गाथा: दीप अनुक्रम [२४-२९]

र्णानि प्रतीतानि १३ वज्रो–हीरकः १४ हरितालहिङ्गुलकमनःशिलाः प्रतीताः १७ सासगं–पारदः १८ अञ्जनं–सौवीराञ्जनादि १९ प्रवालं–विद्रुमः २० अभ्रपटलं–प्रसिद्धम् २१ अभ्रवालुका–अभ्रपटलमिश्रा वालुका २२ 'बायरकाये' इति बादरपृथिवीकायेऽमी भेदा इति शेषः,'मणिविहाणा'इति चशब्दस्य गम्यमानत्वान्मणिविधानानि च–मणिभेदाश्च बादरपृथिवीकायभेदत्वेन ज्ञातव्याः । तान्येव मणिविधानानि दर्शयति–'गोमिज्जए'इत्यादि, गोमेज्जकः २३ चः समुच्चये रूचकः २४ अङ्कः २५ स्फटिकः २६ चः पूर्ववत् लोहिताक्षः २७ मरकतः २८ मसारगल्लः २९ भुजमोचकः ३० इन्द्रनीलश्च ३१ चन्दनो ३२ गैरिको ३३ हंसगर्भः ३४ पुलकः ३५ सौगन्धिकश्च ३६ चन्द्रप्रभो ३७ वैडूर्यो ३८ जलकान्तः ३९ सूर्यकान्तश्च ४०, तदेवमाद्यगाथया पृथिव्यादयश्चतुर्दश भेदा उक्ताः, द्वितीयगाथयाऽष्टौ हरितालादयः, तृतीयगाथया गोमेज्जकादयो नव, तुर्यया गाथया नवेति सङ्ख्यया चत्वारिंशत् ४०, 'जे यावन्ने तहप्पगारा' इति येऽपि चान्ये तथाप्रकारा मणिभेदाः–पद्मरागादयस्तेऽपि खरबादरपृथिवीकायत्वेन वेदितव्याः 'ते समासओ'इत्यादि, 'ते' सामान्यतो बादरपृथिवीकायिकाः 'समासतः' सङ्क्षेपेण द्विविधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–पर्याप्तका अपर्याप्तकाश्च, तत्र येऽपर्याप्तकास्ते स्वयोग्याः पर्याप्तीः साकल्येनासंप्राप्ता अथवाऽसंप्राप्ता इति–विशिष्टान् वर्णादीननुपगताः, तथाहि—वर्णादिभेदविवक्षायामेते न शक्यन्ते कृष्णादिना वर्णभेदेन व्यपदेष्टुं, किं कारणमिति चेद्, उच्यते, इह शरीरादिपर्याप्तिषु परिपूर्णासु सतीषु बादराणां वर्णादिविभागः प्रकटो भवति नापरिपूर्णासु, ते चाप-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

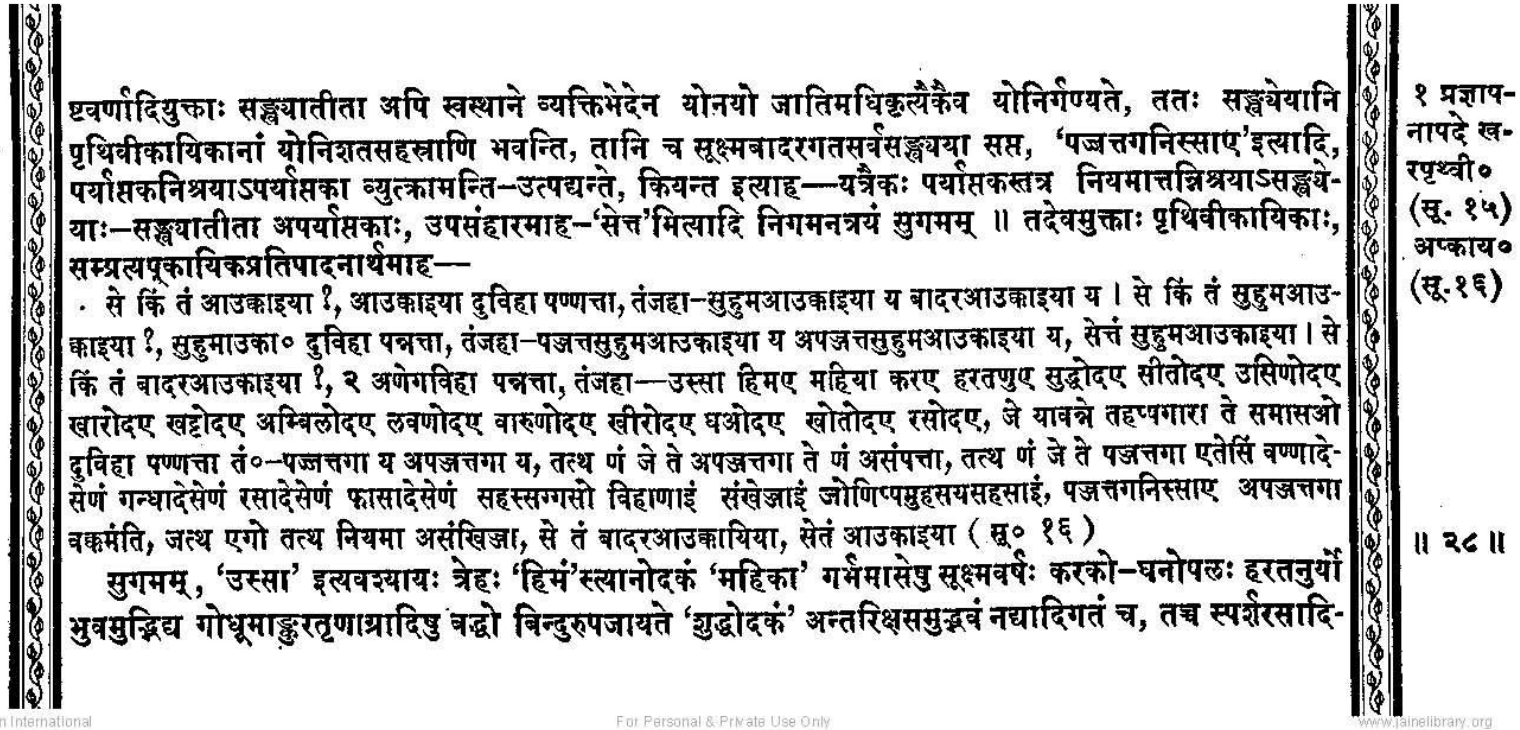


र्याप्ता उच्छ्वासपर्याप्त्याऽपर्याप्ता एव म्रियन्ते, ततो न स्पष्टतरवर्णादिविभाग इत्यसंप्राप्ता इत्युक्तं, ननु कस्मादुच्छ्वास-पर्याप्त्यैवापर्याप्ता म्रियन्ते नार्वाक् शरीरेन्द्रियपर्याप्तिभ्यामपर्याप्ता अपि ?, उच्यते, यस्मादागामिभवायुर्बद्धा म्रियन्ते सर्व एव देहिनो नाबद्धा, तच्च शरीरेन्द्रियपर्याप्तिभ्यां पर्याप्तानां बन्धमायाति नान्यथेति, अन्ये तु व्याचक्षते–सामा-न्यतो वर्णादीनसंप्राप्ता इति, तच्च न युक्तं, यतः शरीरमात्रभाविनो वर्णादयः, शरीरं च शरीरपर्याप्त्या सञ्जातमिति । 'तत्थ णं जे ते पज्जत्तगा'इत्यादि, तत्र ये ते पर्याप्तकाः–परिसमाप्तस्वयोग्यसमस्तपर्याप्तयः, एतेषां 'वर्णादेशेन' वर्ण-भेदविवक्षया एवं गन्धादेशेन रसादेशेन स्पर्शादेशेन 'सहस्राग्रशः' सहस्रसङ्ख्यया विधानानि–भेदाः, तद्यथा–वर्णाः कृष्णादिभेदात्पञ्च गन्धौ सुरभीतरभेदाद्द्वौ रसाः तिक्तादयः पञ्च स्पर्शा मृदुकर्कशादयोऽष्टौ, एकैकस्मिंश्च वर्णादौ तारतम्यभेदेनानेकेऽवान्तरभेदाः, तथाहि–भ्रमरकोकिलकज्जलादिषु तरतमभावात् कृष्णकृष्णतरकृष्णतमेत्यादिरूप-तया अनेके कृष्णभेदाः, एवं नीलादिष्वप्यायोज्यं, तथा गन्धरसस्पर्शेष्वपि, तथा परस्परं वर्णानां संयोगतो धूसरक-र्बुरत्वादयोऽनेकसङ्ख्या भेदाः, एवं गन्धादीनामपि परस्परं गन्धादिभिः समायोगाद् , अतो भवन्ति वर्णाद्यादेशैः सह-स्राग्रशो भेदाः, 'सङ्खेज्जाइं जोणिप्पमुहसयसहस्साइं'ति सङ्ख्येयानि योनिप्रमुखाणि—योनिद्वाराणि शतसहस्राणि, तथाहि–एकैकस्मिन् वर्णे गन्धे रसे स्पर्शे च संवृता योनिः पृथिवीकायिकानां, सा पुनस्त्रिधा–सचित्ता अचित्ता मिश्रा च, पुनरेकैका त्रिधा–शीता उष्णा शीताष्णा, शीतादीनामपि प्रत्येकं तारतम्यभेदादनेकभेदत्वं, केवलमेवं विशि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [१५] + गाथा: दीप अनुक्रम [२४-२९]



प्रज्ञापनायाः मलय० वृत्तौ. ॥ २८ ॥

ष्टवर्णादियुक्ताः सङ्ख्यातीता अपि स्वस्थाने व्यक्तिभेदेन योनयो जातिमधिकृत्यैकैव योनिर्गण्यते, ततः सङ्ख्येयानि पृथिवीकायिकानां योनिशतसहस्राणि भवन्ति, तानि च सूक्ष्मबादरगतसर्वसङ्ख्यया सप्त, 'पज्जत्तगनिस्साए'इत्यादि, पर्याप्तकनिश्रयाऽपर्याप्तका व्युत्क्रामन्ति–उत्पद्यन्ते, कियन्त इत्याह—यत्रैकः पर्याप्तकस्तत्र नियमात्तन्निश्रयाऽसङ्ख्येयाः–सङ्ख्यातीता अपर्याप्तकाः, उपसंहारमाह–'सेत्त'मित्यादि निगमनत्रयं सुगमम् ॥ तदेवमुक्ताः पृथिवीकायिकाः, सम्प्रत्यप्कायिकप्रतिपादनार्थमाह—

से किं तं आउक्काइया ?, आउक्काइया दुविहा पण्णत्ता, तंजहा–सुहुमआउक्काइया य बादरआउक्काइया य । से किं तं सुहुमआउक्काइया ?, सुहुमाउका० दुविहा पन्नत्ता, तंजहा–पज्जत्तसुहुमआउक्काइया य अपज्जत्तसुहुमआउक्काइया य, सेत्तं सुहुमआउक्काइया । से किं तं बादरआउक्काइया ?, २ अणेगविहा पन्नत्ता, तंजहा—उस्सा हिमए महिया करए हरतणुए सुद्धोदए सीतोदए उसिणोदए खारोदए खट्टोदए अम्बिलोदए लवणोदए वारुणोदए खीरोदए घओदए खोतोदए रसोदए, जे यावन्ने तहप्पगारा ते समासओ दुविहा पण्णत्ता तं०–पज्जत्तगा य अपज्जत्तगा य, तत्थ णं जे ते अपज्जत्तगा ते णं असंपत्ता, तत्थ णं जे ते पज्जत्तगा एतेसिं वण्णादेसेणं गन्धादेसेणं रसादेसेणं फासादेसेणं सहस्सग्गसो विहाणाइं संखेज्जाइं जोणिप्पमुहसयसहसाइं, पज्जत्तगनिस्साए अपज्जत्तगा वक्कमंति, जत्थ एगो तत्थ नियमा असंखिज्जा, से तं बादरआउक्कायिया, सेतं आउक्काइया (सू० १६)

सुगमम्, 'उस्सा' इत्यवश्यायः त्रेहः 'हिमं'स्यानोदकं 'महिका' गर्भमासेषु सूक्ष्मवर्षः करको–घनोपलः हरतनुर्यो भुवमुद्भिद्य गोधूमाङ्कुरतृणाग्रादिषु बद्धो बिन्दुरुपजायते 'शुद्धोदकं' अन्तरिक्षसमुद्भवं नद्यादिगतं च, तच्च स्पर्शरसादि-

१ प्रज्ञापनापदे खरपृथ्वी० (सू. १५) अप्काय० (सू.१६)

॥ २८ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र अप्काय-जीवस्य प्रज्ञापना आरभ्यते

भेदादनेकभेदं, तदेवानेकभेदत्वं दर्शयति–'शीतोदकं' नदीतडागावटवापीपुष्करिण्यादिषु शीतपरिणामं 'उष्णोदकं' स्वभावत एव क्वचिन्निर्झरादावुष्णपरिणामं 'क्षारोदकं' ईषल्लवणस्वभावं यथा लाटदेशादौ केषुचिदवटेषु 'खट्टोदकम्' ईषदम्लपरिणामं 'अम्लोदकं' स्वभावत एवाम्लपरिणामं काञ्जिकवत् लवणोदकं लवणसमुद्रे वारुणं वारुणसमुद्रे क्षीरोदकं क्षीरसमुद्रे क्षोदोदकं इक्षुसमुद्रे रसोदकं पुष्करवरसमुद्रादिषु, येऽपि चान्ये तथाप्रकाराः–रसस्पर्शादि-भेदभिन्ना घृतोदकादयो बादरा अप्कायिकाः ते सर्वे बादराप्कायिकतया प्रतिपत्तव्याः, ते समासओ इत्यादि प्राग्वत्, नवरं सङ्ख्येयानि योनिप्रमुखाणि शतसहस्राणि इत्यत्रापि सप्त वेदितव्यानि ॥ उक्ता अप्कायिकाः, सम्प्रति तेजस्कायिकान् प्रतिपिपादयिषुराह—

से किं तं तेऊकाइया?, २ दुविहा पन्नत्ता, तंजहा–सुहुमतेऊकाइया य बादरतेऊकाइया य । से किन्तं सुहुमतेऊकाइया ?, २ दुविहा पन्नत्ता, तंजहा–पज्जत्तगा य अपज्जत्तगा य, सेत्तं सुहुमतेऊकाइया। से किं तं बादरतेऊकाइया ?, २ अणेगविहा पण्णत्ता, तंजहा–इङ्गाले जाला मुम्मुरे अच्ची अलाए सुद्धागणी उक्का विज्जू असणी णिग्घाए संघरिससमुट्ठिए सूरकन्तमणिणिस्सिए, जे यावन्ने तहप्पगारा ते समासओ दुविहा पण्णत्ता, तं०–पज्जत्तगा य अपज्जत्तगा य, तत्थ णं जे ते अपज्जत्तगा ते णं असंपत्ता, तत्थ णं जे ते पज्जत्तगा एएसिणं वण्णादेसेणं गन्धादेसेणं रसादेसेणं फासादेसेणं सहस्सग्गसो विहाणाइं सङ्खेज्जाइं जोणिप्पमुहसयसहस्साइं, पज्जत्तगणिस्साए अपज्जत्तगा वक्कमंति, जत्थ एगो तत्थ नियमा असंखिज्जा, सेत्तं बादरतेऊकाइया, से त्तं तेऊकाइया सू०१७

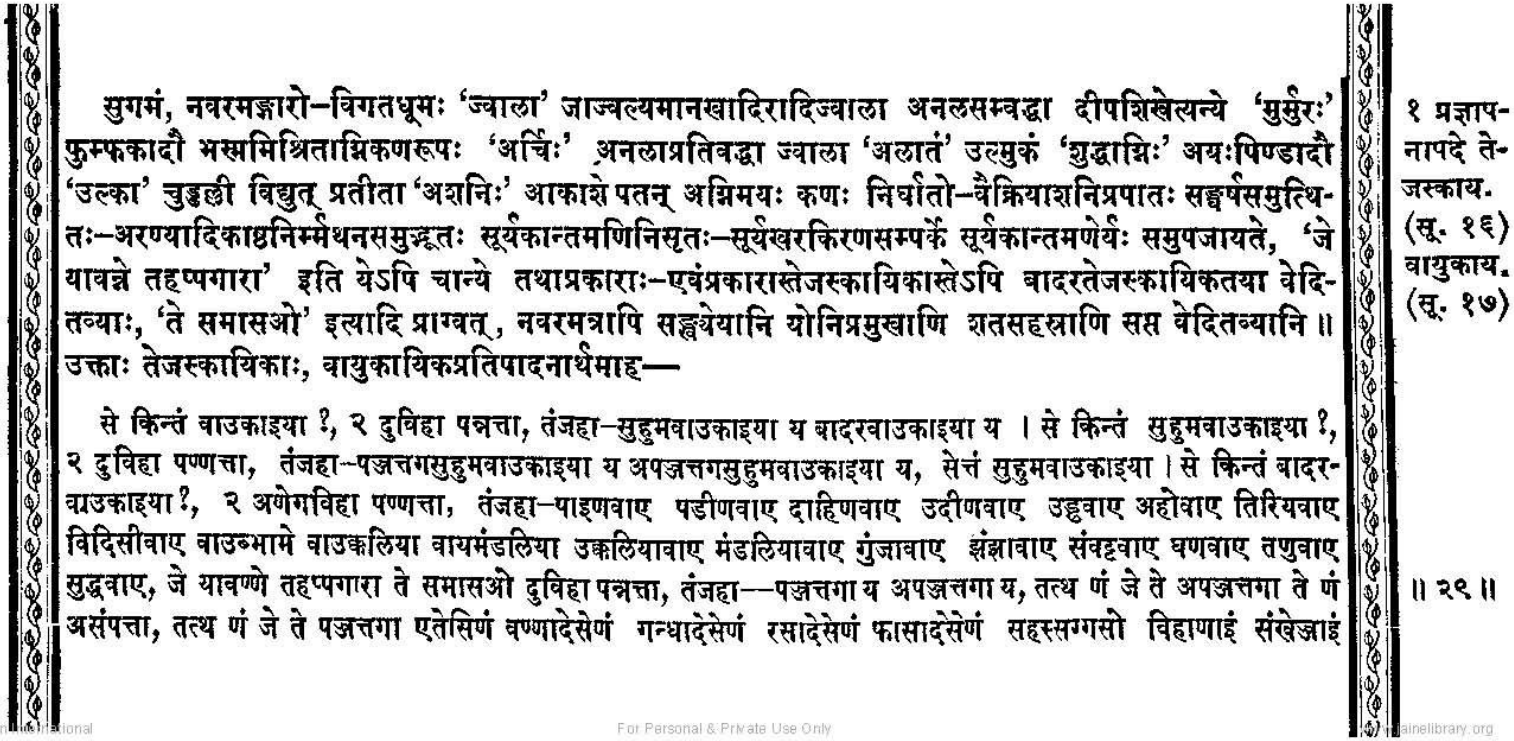
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र तेउकाय-जीवस्य प्रज्ञापना आरभ्यते

प्रत सूत्रांक [१७]

दीप अनुक्रम [३१]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्तिः



प्रज्ञापनायाः मलय० वृत्तौ. ॥ २९ ॥

सुगमं, नवरमङ्गारो–विगतधूमः 'ज्वाला' जाज्वल्यमानखादिरादिज्वाला अनलसम्बद्धा दीपशिखेत्यन्ये 'मुर्मुरः' फुम्फकादौ भस्ममिश्रिताग्निकणरूपः 'अर्चिः' अनलाप्रतिबद्धा ज्वाला 'अलातं' उल्मुकं 'शुद्धाग्निः' अयःपिण्डादौ 'उल्का' चुडुली विद्युत् प्रतीता 'अशनिः' आकाशे पतन् अग्निमयः कणः निर्घातो–वैक्रियाशनिप्रपातः सङ्घर्षसमुत्थितः–अरण्यादिकाष्ठनिर्म्मथनसमुद्भूतः सूर्यकान्तमणिनिसृतः–सूर्यखरकिरणसम्पर्के सूर्यकान्तमणेर्यः समुपजायते, 'जे यावन्ने तहप्पगारा' इति येऽपि चान्ये तथाप्रकाराः–एवंप्रकारास्तेजस्कायिकास्तेऽपि बादरतेजस्कायिकतया वेदितव्याः, 'ते समासओ' इत्यादि प्राग्वत्, नवरमत्रापि सङ्ख्येयानि योनिप्रमुखाणि शतसहस्राणि सप्त वेदितव्यानि ॥ उक्ताः तेजस्कायिकाः, वायुकायिकप्रतिपादनार्थमाह—

से किन्तं वाउकाइया ?, २ दुविहा पन्नत्ता, तंजहा–सुहुमवाउकाइया य बादरवाउकाइया य । से किन्तं सुहुमवाउकाइया ?, २ दुविहा पण्णत्ता, तंजहा–पज्जत्तगसुहुमवाउकाइया य अपज्जत्तगसुहुमवाउकाइया य, सेत्तं सुहुमवाउकाइया । से किन्तं बादरवाउकाइया ?, २ अणेगविहा पण्णत्ता, तंजहा–पाइणवाए पडीणवाए दाहिणवाए उदीणवाए उड्ढवाए अहोवाए तिरियवाए विदिसीवाए वाउब्भामे वाउक्कलिया वायमंडलिया उक्कलियावाए मंडलियावाए गुंजावाए झंझावाए संवट्टवाए घणवाए तणुवाए सुद्धवाए, जे यावण्णे तहप्पगारा ते समासओ दुविहा पन्नत्ता, तंजहा—पज्जत्तगा य अपज्जत्तगा य, तत्थ णं जे ते अपज्जत्तगा ते णं असंपत्ता, तत्थ णं जे ते पज्जत्तगा एतेसिणं वण्णादेसेणं गन्धादेसेणं रसादेसेणं फासादेसेणं सहस्सग्गसो विहाणाइं संखेज्जाइं

१ प्रज्ञापनापदे तेजस्काय. (सू. १६) वायुकाय. (सू. १७) ॥ २९ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र वायुकाय-जीवस्य प्रज्ञापना आरभ्यते

प्रत सूत्रांक [१८]

दीप अनुक्रम [३२]

जोणिप्पमुहसयसहस्साइं, पज्जत्तगनिस्साए अपज्जत्तया वक्कमंति, जत्थ एगो तत्थ नियमा असंखेज्जा, से त्तं बादरवाउकाइया, से तं वाउकाइया (सू० १८)

प्रतीतं, नवरं 'पाईणवाए'इति यः प्राच्या दिशः समागच्छति वातः स प्राचीनवातः एवमपाचीनवातः दक्षिणवातः उदीचीनवातश्च वक्तव्यः, ऊर्ध्वमुद्गच्छन् यो वाति वातः स ऊर्ध्ववातः, एवमधोवाततिर्यग्वातावपि परिभावनीयौ, 'विदिग्वातो' यो विदिग्भ्यो वाति 'वातोद्भ्रामः' अनवस्थितवातः वातोत्कलिका–समुद्रस्येव वातोत्कलिका 'वातमण्डली' वातोली 'उत्कलिकावात' उत्कलिकाभिः प्रचुरताभिः सम्मिश्रितो यो वातो 'मण्डलीकावातो' मण्डलिकाभिर्मूलत आरभ्य प्रचुरताभिः समुत्थो यो वातः 'गुञ्जावातो' यो गुञ्जन्–शब्दं कुर्वन् वाति 'झञ्झावातः' सवृष्टिरशुभनिष्ठुर इत्यन्ये, 'संवर्त्तकवातः' तृणादिसंवर्त्तनस्वभावः 'घनवातो' घनपरिणामो रत्नप्रभापृथिव्याद्यधोवर्त्ती 'तनुवातो' विरलपरिणामो घनवातस्याधः स्थायी 'शुद्धवातो' मन्दस्तिमितो वस्तिदृत्यादिगत इत्यन्ये, 'ते समासओ' इत्यादि प्राग्वत्, अत्रापि सङ्ख्येयानि योनिप्रमुखाणि शतसहस्राणि सप्तावसेयानि ॥ उक्ता वायुकायिकाः, सम्प्रतिवनस्पतिकायिकप्रतिपादनार्थमाह–

से किं तं वणस्सइकाइया ?, वणस्सइकाइया दुविहा पण्णत्ता, तंजहा–सुहुमवणस्सइकाइया य बायरवणस्सइकाइया य (सू०१९)
से किन्तं सुहुमवणस्सइकाइया ?, २ दुविहा पण्णत्ता, तंजहा–पज्जत्तगसुहुमवणस्सइकाइया य अपज्जत्तगसुहुमवणस्सइकाइया य,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र वनस्पतिकाय-जीवस्य प्रज्ञापना आरभ्यते

प्रत सूत्रांक [१९-२२] + गाथा: दीप अनुक्रम [३३-३७]

सेत्तं सुहुमवणस्सइकाइया (सू० २०) से किन्तं बादरवणस्सइ० ?, २ दुविहा पन्नत्ता, तंजहा–पत्तेयसरीरबादरवणस्सइ० साहारणस० बादरवणस्सइ० (सू० २१) से किन्तं पत्तेयसरीरबादरवणस्सइकाइया ?, २ दुवालसविहा पन्नत्ता, तंजहा–रुक्खा गुच्छा गुम्मा लता य वल्ली य पव्वगा चेव । तणवलयहरियओसहिजलरुहकुहणा य बोद्धव्वा ॥ १ ॥ (सू० २२)

सुगमं यावत् 'सेत्तं सुहुमवणस्सइकाइया,' 'से किन्त'मित्यादि, अथ के ते बादरवनस्पतिकायिकाः ?, २ द्विविधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–प्रत्येकशरीरबादरवनस्पतिकायिकाश्च साधारणशरीरबादरवनस्पतिकायिकाश्च, तत्रैकमेकं जीवं प्रति गतं प्रत्येकं प्रत्येकं शरीरं येषां ते प्रत्येकशरीराः ते च ते बादरवनस्पतिकायिकाश्च प्रत्येकशरीरबादरवनस्पतिकायिकाः, चशब्दः स्वगतानेकभेदसूचकः, समानं–तुल्यं प्राणापानाद्युपभोगं यथा भवति एवमा–समन्तादेकीभावेनानन्तानां जन्तूनां धारणं–सङ्ग्रहणं येन तत्साधारणं साधारणं शरीरं येषां ते साधारणशरीराः ते च ते बादरवनस्पतिकायिकाश्च साधारणबादरवनस्पतिकायिकाः, चशब्दोऽत्रापि स्वगतानेकभेदसूचकः । 'से किन्त' मित्यादि, अथ के ते प्रत्येकशरीरबादरवनस्पतिकायिकाः ?, सूरिराह–प्रत्येकशरीरबादरवनस्पतिकायिकाः द्वादशविधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–'रुक्खे'त्यादि, 'वृक्षाः' चूतादयः 'गुच्छा' वृन्ताकीप्रभृतयः 'गुल्मानि' नवमालिकाप्रभृतीनि 'लताः' चम्पकलतादयः, इह येषां स्कन्धप्रदेशे विवक्षितोर्ध्वगतैकशाखाव्यतिरेकेणाऽन्यच्छाखान्तरं परिस्थूरं न निर्गच्छति ते लता विज्ञेयास्ते च चम्पकादय इति, 'वल्यः' कूष्माण्डीत्रपुषीप्रभृतयः, 'पर्वगा' इक्ष्वादयः, 'तृणानि' कुशजंजुकाऽर्जुनादीनि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [१९-२२] + गाथा दीप अनुक्रम [३८-४२]

'वलयानि' केतकीकदल्यादीनि तेषां हि त्वचा वलयाकारेण व्यवस्थितेति, 'हरितानि' तण्डुलीयकवास्तुलप्रभृतीनि 'औषध्यः' फलपाकान्ताः ते च शाल्यादयः, जले रुहन्तीति जलरुहाः–उदकावकपनकादयः 'कुहणा' भूमिस्फोटाभिधानाः ते चाप्कायप्रभृतयः ।

से किन्तं रुक्खा ?,२ दुविहा पण्णत्ता, तंजहा–एगट्ठिया य बहुबीयगा य । से किं तं एगट्ठिया ?, २ अणेगविहा पन्नत्ता, तंजहा—'णिंबजंबुकोसंबसालअंकुल्ल पीलु सेलू य । सल्लइमोयइमालुय बउल पलासे करंजे य ॥ १२ ॥ पुत्तंजीवयऽरिट्ठे विहेलए हरिडए य भिल्लाए । उंबेभरिया खीरिणि बोद्धव्वे धायइ पियाले ॥ १३ ॥ पूइयनिंबकरञ्जे सुण्हा तह सीसवा य असणे य । पुन्नागनागरुक्खे सीवण्णि तहा असोगे य ॥ १४ ॥ जे यावण्णे तहप्पगारा, एएसि णं मूलावि असंखेज्जजीविया कंदावि खंधावि तयावि सालावि पवालावि पत्ता पत्तेयजीविया पुप्फा अणेगजीविया फला एगट्ठिया, से त्तं एगट्ठिया ।

तत्र 'यथोद्देशं निर्देश' इतिन्यायात् प्रथमतो वृक्षप्रतिपादनार्थमाह–'से किं तमि'त्यादि, अथ के ते वृक्षाः ?, सूरिराह–वृक्षा द्विविधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–एकास्थिकाश्च बहुबीजकाश्च, तत्र फलं फलं प्रति एकमस्थि येषां ते एकास्थिकाः, चशब्दो वक्ष्यमाणस्वगतानेकभेदसूचकः, तथा प्रायोऽस्थिबन्धमन्तरेणैवमेव फलान्तर्वर्त्तीनि बहूनि बीजानि येषां ते बहुबीजकाः, 'शेषाद्वे'ति कप्रत्ययः, अत्रापि चशब्दो वक्ष्यमाणस्वगतानेकभेदसूचकः ॥ तत्रैकास्थिकप्रतिपादनार्थमाह–अथ के ते एकास्थिकाः ?, २ अनेकविधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–'णिंबंबे'त्यादि गाथात्रयं, तत्र निम्बाम्रजम्बुकोश-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

म्बाः प्रतीताः शालः–सर्जः 'अङ्कोल्ल'त्ति अङ्कोठः प्राकृतत्वात्सूत्रे ठकारस्य लादेशः, 'अङ्कोठे ल्ल'इति वचनात्, पीलुः-प्रतीतः शेलुः–श्लेष्मातकः सल्लकी–गजप्रिया मोचकीमालुकौ देशविशेषप्रतीतौ बकुलः—केसरः पलाशः–किंशुकः करञ्जो–नक्तमालः पुत्रजीवको–देशविशेषप्रसिद्धः अरिष्टः–पिचुमन्दः विभीतकः–अक्षः हरीतकः–कोङ्कणदेशप्रसिद्धः कषायबहुलः भल्लातको यस्य भल्लातकाभिधानानि फलानि लोकप्रसिद्धानि उम्बेभरिकाक्षीरणीधातकीप्रियालपूति-(निम्ब) करञ्जश्लक्ष्णाशिंशपाऽशनपुन्नागनागश्रीपर्ण्यशोका लोकप्रतीताः। 'जे यावण्णे तहप्पगारा' इति येऽपि चान्ये तथाप्रकाराः–एवंप्रकारास्तत्तद्देशविशेषभाविनः ते सर्वेऽप्येकास्थिका वेदितव्याः, एतेषाम्–एकास्थिकानां मूलान्यप्य-सङ्ख्येयजीवकानि–असङ्ख्येयप्रत्येकशरीरजीवात्मकानि, एवं कन्दा अपि स्कन्धा अपि त्वचोऽपि शाखा अपि प्रवाला अपि प्रत्येकमसङ्ख्येयप्रत्येकशरीरजीवकाः, तत्र मूलानि यानि कन्दस्याधस्ताद् भूमेरन्तः प्रसरन्ति, तेषामुपरि कन्दास्ते च लोकप्रतीताः, स्कन्धाः स्थुडाः, त्वचः–छल्लयः शालाः–शाखाः प्रवालाः–पल्लवाङ्कुराः, 'पत्ता पत्तेयजीवय'त्ति पत्राणि प्रत्येकजीविकानि–एकैकं पत्रमे(कै)केन जीवेनाधिष्ठितमिति भावः, 'पुप्फा अणेगजीविय'त्ति पुष्पाण्यनेकजी-वानि, प्रायः प्रतिपुष्पपत्रं जीवभावात्, फलान्येकास्थिकानि, उपसंहारमाह–'से त्तं एगट्ठिया' सुगमं ॥ बहुबीजक-प्रतिपादनार्थमाह–

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

से किं तं बहुबीयगा ?, बहुबीयगा अणेगविहा पं० तं०—अत्थिय तेंदु कविट्ठे अंबाडगमाउलिंग बिल्ले या। आमलग फणिस दालिम आसोठे उंबर वडे य ॥१५॥ णग्गोह णंदिरुक्खे पिप्परी सयरी पिलुक्खरुक्खे य। काउंबरि कुत्थुंभरि बोद्धव्वा देव-दाली य ॥१६॥ तिलए लउए छत्तोह सिरीस सत्तवन्न दहिवन्ने। लोद्धद्धवचंदणज्जुणणीमे कुडए कयंबे या॥१७॥ जे यावन्ने तहप्पगारा, एतेसि णं मूलावि असंखेज्जजीविया कंदावि खंधावि सालावि पत्ता पत्तेयजीविया पुप्फा अणेगजीविया फला बहुबीयगा। से त्तं बहुबीयगा, से त्तं रुक्खा।

अथ के ते बहुबीजकाः ?, सूरिराह–बहुबीजका अनेकविधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–'अत्थिये'त्यादि गाथात्रयं, एते च अस्थिकतिन्दुककपित्थअम्बाडकमातुलिङ्गबिल्वआमलकपनसदाडिमअश्वत्थउदुम्बरवटन्यग्रोधनन्दिवृक्षपिप्पलीशतरी-प्लक्षकादुम्बरिकुस्तुम्भरिदेवदालितिलकलवकच्छत्रोपगशिरीषसप्तपर्णदधिपर्णलोद्र (द्ध्र)धवचन्दनार्जुननीपकुटजकदम्बकानां मध्ये केचिदतिप्रसिद्धाः केचिद्देशविशेषतो वेदितव्याः, नवरमिहामलकादयो न लोकप्रसिद्धाः प्रतिपत्तव्याः, तेषामेकास्थिकत्वात्, किन्तु देशविशेषप्रसिद्धा बहुबीजका एव केचन, 'जे यावन्ने तहप्पगार'त्ति, येऽपि चान्ये तथा–प्रकाराः–एवंप्रकारास्तेऽपि च बहुबीजका मन्तव्याः, एतेषामपि मूलकन्दस्कन्धत्वक्शाखाप्रवालाः प्रत्येकमसङ्ख्येयप्रत्येकशरीरजीवकाः, पत्राणि प्रत्येकजीवकानि, पुष्पाण्यनेकजीवकानि, फलानि बहुबीजकानि, उपसंहारमाह–सेत्तमित्यादि निगमनद्वयं सुगमं ॥ सम्प्रति गुच्छप्रतिपादनार्थमाह—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

से किं तं गुच्छा ?, गुच्छा अणेगविहा पन्नत्ता, तं०—वाइंगणिसल्लइथुण्डई य तह कत्थुरी य जीभुमणा। रूवी आढइ णीली तुलसी तह माउलिंगी य ॥१८॥ कच्छुंभरि पिप्पलिया अतसी बिल्ली य काइमाईया । वुचू पडोलकंदे विउव्वा वत्थलंदेरे ॥१९॥ पत्तउर सीयउरए हवति तहा जवसए य बोद्धव्वे। णिग्गुमिअंकतबरि अत्थई चेव तलउदाडा ॥२०॥ सणपाणकासमुद्दग अग्घाडग साम सिंदुवारे य । करमद्दअद्दूसग करीर एरावणमहित्थे ॥२१॥ जाउलगमीलपरिली गयमारिणि कुव्वकारिया भंडा । जीवइ केयइ तह गंज पाडलादासिअंकोले ॥२२॥ जे यावन्ना तहप्पगारा, सेत्तं गुच्छा । से किं तं गुम्मा ?, गुम्मा अणेगविहा पन्नत्ता, तं०—सेणयए णोमालिय कोरंटय बंधुजीवगमणोज्जे। पिइयं पाणं कणयर कुज्जय तह सिंदुवारे य ॥२३॥ जाई मोग्गर तह जूहिया य तह मल्लिया य वासंती। वत्थुल कत्थुल सेवाल गंठी मगदंतिया चेव ॥२४॥ चंपगजीइ णीइया कुंदो (कन्दो) तहा महाजाई । एवमणेगागारा हवंति गुम्मा मुणेयव्वा, से त्तं गुम्मा ॥ से किं तं लयाओ ?, लयाओ अणेगविहाओ पन्नत्ताओ, तं०—पउमलया णागलया असोग चंपगलया य चूतलता । वणलय वासंतिलया अइमुत्तय कुंदसामलया ॥ २५ ॥ जे यावन्ने तहप्पगारा, से त्तं लयाओ ॥ से किं तं वल्लीओ ?, वल्लीओ अणेगविहाओ पन्नत्ताओ, तं०–पूसफली कालिंगी तुंबी तउसी य एलवालुंकी । घोसाडइ पंडोला पंचंगुलि आयणीली या ॥ २६ ॥ कंगूया कंडुइया ककोडई कारियल्लई सुभगा । कुयवाय वागली पाव वल्ली तह देवदाली य ॥ २७ ॥ अप्फेया अइमुत्तगणागलया कण्हसूरवल्ली य । संघट्टसुमणसावि य जासुवण कुविंदवल्ली य ॥२८॥ मुद्दिय अंबावल्ली किण्हछीरालि जयंति गोवाली । पाणी मासावल्ली गुंजीवल्ली य विच्छाणी ॥२९॥ ससिवी दुगोत्तफुसिया गिरिकण्णइ मालुया य अंजणई । दहिफोल्लइ कागलि मोगली

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [२३] + गाथा: दीप अनुक्रम [४६-८१]

य तह अक्कबोंदी या ॥३०॥ जे यावन्ने तहप्पगारा, से त्तं वल्लीओ ॥ से किं तं पव्वगा?, पव्वगा अणेगविहा पन्नत्ता, तं०–इक्खू य इक्खुवाडी वीरुणी तह एकडे य मासे य। सुंठे सरे य वेत्ते तिमिरे सतपोरग णले य ॥३१॥ वंसे वेच्छू कणए कंकावंसे य चाववंसे य। उदए कुडए विसए कंडा वेल्ले य कल्लाणे ॥३२॥ जे यावन्ना तहप्पगारा, से त्तं पव्वगा ॥ से किं तं तणा?, तणा अणेगविहा पन्नत्ता, तं–संडिय मंतिय होत्तिय दब्भकुसे पव्वए य पोडइला। अज्जुण असाढए रोहियंसे सुयवेयखीरभुसे॥३३॥एरंडे कुरुविंदे करजर सुंठे तहा विभंगू य। महुरतण छुरय सिप्पिय बोद्धव्वे सुंकलितणे य ॥३४॥ जे यावन्ने तहप्पगारा, से त्तं तणा ॥ से किं तं वलया ?, वलया अणेगविहा पन्नत्ता, तं०—ताल तमाले तकलि तोयली साली य सारकत्ताणे। सरले जावति केतइ कदली तह धम्मरुक्खे य ॥३५॥ मुयरुक्ख हिंगुरुक्खे लवंगुरुक्खे य होइ बोद्धव्वे। पूयफली खज्जुरी बोद्धव्वा णालिएरी य ॥३६॥ जे यावन्ना तहप्पगारा, से त्तं वलया ॥ से किं तं हरिया ?, हरिया अणेगविहा पन्नत्ता, तं०–अज्जोरुह बोडाणे हरितग तह तंदुलेज्जगतणे य। वत्थुल पोरग मज्जारयाइ बिल्ली य पालका ॥३७॥ दगपिप्पली य दव्वी सोत्तिय साए तहेव मंडुक्की। मूलग सरिसव अंबिल साएय जियंतए चेव ॥३८॥ तुलस कण्ह उराले फणिज्जए अज्जए य भूयणए। वारग दमणग मरुयग सतपुप्फीदीवरे य तहा ॥३९॥ जे यावन्ना तहप्पगारा, से त्तं हरिया ॥ से किं तं ओसहिओ ?, ओसहीओ अणेगविहाओ पन्नत्ताओ, तं०—साली वीही गोहुम जव जवजवा कलमसूरतिलमुग्गमासणिप्फावकुलत्थआलिसंदसतीणपलिमंथा अयसीकुसुंभकोद्दव कंगूरालगमासकोद्दंसा सणसरिसवमूलिगबीया, जे यावन्ना तहप्पगारा, से त्तं ओसहीओ ॥ से किं तं जलरुहा ?, जलरुहा अणेगविहा पन्नत्ता, तं०—उदए अवए पणए सेवाले कलंबुया हढे कसेरुया कच्छभाणी उप्पले पउमे कुमुदे णलिणे सुभए सुगंधिए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्तिः

पोण्डरीयए महापुंडरीयए सयपत्ते सहस्सपत्ते कल्हारे कोकणदे अरविंदे तामरसे भिसे भिसमुणाले पोक्खले पोक्खलत्थिभुए, जे यावन्ना तहप्पगारा, से त्तं जलरुहा ॥ से किं तं कुहुणा ?, कुहुणा अणेगविहा पन्नत्ता, तं–आए काए कुहणे कुणके दव्वहलिया सफाए सज्झाए छत्तोए वंसीण हिताकुरए, जे यावन्ना तहप्पगारा, से त्तं कुहुणा ॥ णाणाविह संठाणा रुक्खाणं एगजीविया पत्ता। खंधावि एगजीवा तालसरलणालिएरीणं ॥ ४० ॥ जह सगलसरिसवाणं सिलेसमिस्साण वट्टिया विट्टी । पत्तेयसरीराणं तहेति सरीरसंघाया ॥ ४१ ॥ जह वा तिलपप्पडिया बहुएहिं तिलेहि संहता संती । पत्तेयसरीराणं तह होंति सरीरसंघाया ॥ ४२ ॥ से त्तं पत्तेयसरीरबादरवणप्फइकाइया ॥ सू० २३ ॥

एते गुच्छादिभेदाः प्रायः स्वरूपत एव प्रतीताः, केचिद्देशविशेषादवगन्तव्याः, अत्र वृक्षादिषु यस्यैकस्य नाम गृहीत्वाऽपरत्रापि तन्नाम गृहीतं तत्रान्यो भिन्नजातीयः सदृन्नामा प्रतिपत्तव्यः, अथवा एकोऽपि कश्चिदनेकजातीयको भवति, यथा—नालिकेरीतरुरेकास्थिकत्वादेकास्थिकः, त्वचो वलयाकारत्वाच्च वलयः, ततोऽनेकजातीयत्वादपि तन्नाम निर्दिश्यमानं न विरुध्यते । साम्प्रतमुक्तानुक्तार्थसंग्रहार्थमिदमाह–'णाणाविहेत्यादि' नानाविधं–नानाप्रकारं संस्थानं–आकृतिर्येषां तानि नानाविधसंस्थानानि, 'वृक्षाणा'मिति वृक्षग्रहणमुपलक्षणं, तेन गुच्छगुल्मादीनामपि द्रष्टव्यं, पत्राणि एकजीवकानि–एकजीवाधिष्ठितानि वेदितव्यानि, स्कन्धोऽपि एकजीवाधिष्ठितः, किं सर्वेषामपि ?, नेत्याह—तालसरलनालिकेरीणां, तालसरलनालिकेरीग्रहणमुपलक्षणं, तेनान्येषामपि यथाऽऽगममेकजीवाधिष्ठितत्वं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [२३] + गाथा: दीप अनुक्रम [४६-८१]

स्कन्धस्य प्रतिपत्तव्यं, अन्येषां तु स्कन्धाः प्रत्येकमनेकप्रत्येकशरीरजीवात्मका इति सामर्थ्यादवसेयं, 'खंधावि अणेगजीविया' इति पूर्वमभिधानात्। अथ यदि प्रत्येकमनेकशरीरजीवाधिष्ठितास्ततः कथमेकखण्डशरीराकारा उपलभ्यन्ते इति ?, तदवस्थानस्वरूपमाह–'जह सगले'त्यादि, यथा सकलसर्षपाणां 'श्लेष्ममिश्राणां' श्लेष्मद्रव्यविमिश्रितानां वलिता वर्त्तिरेकरूपा भवति, अथ ते सकलसर्षपाः परिपूर्णशरीराः सन्तः पृथक्स्वस्वावगाहनयाऽवतिष्ठन्ते 'तथा' अनयैवोपमया प्रत्येकशरीराणां जीवानां शरीरसङ्घाताः पृथक्पृथक्स्वस्वावगाहना भवन्ति, इह श्लेषद्रव्यस्थानीयं रागद्वेषोपचितं तथाविधं कर्म सकलसर्षपस्थानीयाः प्रत्येकशरीराः, सकलसर्षपग्रहणं सर्षपवैचित्र्यप्रतिपत्त्या पृथक्स्वस्वावगाहकप्रत्येकशरीरवैचित्र्यप्रतिपत्त्यर्थं। अत्रैव दृष्टान्तान्तरमाह–'जह वे'त्यादि, वाशब्दो दृष्टान्तान्तरसूचने, यथा तिलशष्कुलिका–तिलप्रधाना पिष्टमयी अपूपिका बहुभिस्तिलैर्मिश्रिता सती यथा पृथक् २ स्वस्वावगाहतिलात्मिका भवति कथञ्चिदेकरूपा च 'तथा' अनयैवोपमया प्रत्येकशरीरिणां जीवानां शरीरसङ्घाताः कथञ्चिदेकरूपाः पृथक्स्वस्वावगाहनाश्च भवन्ति। उपसंहारमाह–सेत्तमित्यादि सुगमं॥ 'से त्त'मित्यादि सुगमं। सम्प्रति साधारणवनस्पतिकायिकप्रतिपादनार्थमाह—

से किं तं साहारणसरीरबादरवणस्सइकाइया ?, साहारणसरीरबादरवणस्सइकाइया अणेगविहा पन्नत्ता, तं०—अवए पणए सेवाले लोहिणी मिहुत्थु हुत्थिभागा(य)। अस्सकन्नि सीहकन्नी सिउढि तत्तो मुसुंढी य॥ ४३॥ रुरु कुण्डरिया जीरु छीर

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विराली तहेव किट्टीया । हालिद्दा सिंगबेरे य आतूलुगा मूलए इय ॥४४॥ कंबूयं कलुकंड सुमत्तओ वलइ तहेव महुसिंगी । नीरुह सप्पसुयंधा छिन्नरुहा चेव बीयरुहा ॥४५॥ पाढामियवालुंकी मद्दुररसा चेव रायवत्ती य । पउमा माढरि दंतीति चंडी किट्टीत्ति यावरा ॥४६॥ मासपण्णि मुग्गपण्णी जीवियरसहे य रेणुया चेव । काओली खीरकाओली तहा भंगी नही इय ॥४७॥ किमिरासि भद्द मुच्छा णंगलई पेलुगा इय । किण्ह पउले य हढे हरतणुया चेव लोयाणी ॥४८॥ कण्हे कंदे वज्जे सूरणकंदे तहेव खल्लूरे । एए अणंतजीवा जे यावन्ने तहाविहा ॥४९॥ तणमूल कंदमूले, वंसीमूलेत्ति आवरे । संखिज्जमसंखिज्जा, बोद्धव्वाणंतजीवा य ॥ ५० ॥ सिंघाडगस्स गुच्छो अणेगजीवो उ होइ नायव्वो । पत्ता पत्तेयजीया दोन्नि य जीवा फले भणिया ॥५१॥जस्स मूलस्स भग्गस्स, समो भंगो पदीसइ । अणंतजीवे उ से मूले, जे यावन्ने तहाविहा ॥५२॥ जस्स कंदस्स भग्गस्स, समो भंगो पदीसइ । अणंतजीवे उ से कंदे, जे यावन्ने तहाविहा ॥५३॥ जस्स खंधस्स भग्गस्स, समो भंगो पदीसइ । अणंतजीवे उ से खंधे, जे यावन्ने तहाविहा ॥५४॥ जीसे तयाए भग्गाए, समो भंगो पदीसए । अणंतजीवा तया सा उ, जे यावन्ने तहाविहा ॥५५॥ जस्स सालस्स भग्गस्स, समो भंगो पदीसए । अणंतजीवे य से साले, जे यावन्ने तहाविहा ॥५६॥ जस्स पवालस्स भग्गस्स, समो भंगो पदीसए । अणंतजीवे पवाले से, जे यावन्ने तहाविहा ॥५७॥ जस्स पत्तस्स भग्गस्स, समो भंगो पदीसए । अणंतजीवे उ से पत्ते, जे यावन्ने तहाविहा ॥५८॥ जस्स पुप्फस्स भग्गस्स, समो भंगो पदीसए । अणंतजीवे उ से पुप्फे, जे यावन्ने तहाविहा ॥ ५९ ॥ जस्स फलस्स भग्गस्स, समो भंगो पदीसए । अणंतजीवे फले से उ, जे यावन्ने तहाविहा ॥ ६० ॥ जस्स बीयस्स भग्गस्स, समो भंगो पदीसए । अणंतजीवे उ से बीए, जे यावन्ने तहाविहा ॥ ६१ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [२४] + गाथा: दीप अनुक्रम [८२-११९]

जस्स मूलस्स भग्गस्स, हीरो भंगो(गे) पदीसए । परित्तजीवे उ से मूले, जे यावन्ने तहाविहा ॥६२॥ जस्स कंदस्स भग्गस्स, हीरो भंगो पदीसए। परित्तजीवे उ से कंदे, जे यावन्ने तहाविहा ॥६३॥ जस्स खंधस्स भग्गस्स, हीरो भंगो पदीसए । परित्तजीवे उ से खंधे, जे यावन्ने तहाविहा ॥६४॥ जीसे तयाए भग्गाए, हीरो भंगो पदीसए । परित्तजीवा तया सा उ, जे यावन्ने तहाविहा ॥६५॥ जस्स सालस्स भग्गस्स, हीरो भंगो पदीसए । परित्तजीवे उ से साले, जे यावन्ने तहाविहा ॥६६॥ जस्स पवालस्स भग्गस्स, हीरो भंगो पदीसए। परित्तजीवे पवाले उ, जे यावन्ने तहाविहा ॥६७॥ जस्स पत्तस्स भग्गस्स, हीरो भंगो पदीसए । परित्तजीवे उ से पत्ते, जे यावन्ने तहाविहा ॥६८॥ जस्स पुप्फस्स भग्गस्स, हीरो भंगो पदीसए । परित्तजीवे उ से पुप्फे, जे यावन्ने तहाविहा ॥६९॥ जस्स फलस्स भग्गस्स, हीरो भंगो पदीसए । परित्तजीवे फले से उ, जे यावन्ने तहाविहा ॥७०॥ जस्स बीयस्स भग्गस्स, हीरो भंगो पदीसए । परित्तजीवे उ से बीए, जे यावन्ने तहाविहा ॥७१॥ जस्स मूलस्स कट्ठाओ, छल्ली बहुलतरी भवे । अणंतजीवा उ सा छल्ली, जे यावन्ने, तहाविहा ॥७२॥ जस्स कंदस्स कट्ठाओ, छल्ली बहलतरी भवे । अणंतजीवा उ सा छल्ली, जे यावन्ने तहाविहा ॥७३॥ जस्स खंधस्स कट्ठाओ, छल्ली बहलतरी भवे । अणंतजीवा उ सा छल्ली, जे यावन्ना तहाविहा ॥७४॥ जीसे सालाए कट्ठाओ, छल्ली बहलतरी भवे । अणंतजीवा उ सा छल्ली, जे यावन्ना तहाविहा ॥७५॥ जस्स मूलस्स कट्ठाओ, छल्ली तणुययरी भवे। परित्तजीवा उ सा छल्ली, जे यावन्ना तहाविहा ॥७६॥ जस्स कंदस्स कट्ठाओ, छल्ली तणुययरी भवे। परित्तजीवा उ सा छल्ली, जे यावन्ना तहाविहा ॥७७॥ जस्स खंधस्स कट्ठाओ, छल्ली

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [२४] + गाथा: दीप अनुक्रम [८२-११९]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति:

तणुयरी भवे । परित्तजीवा उ सा छट्ठी, जे यावन्ना तहाविहा ॥७८॥ जीसे सालाए कट्ठाओ, छट्ठी तणुयरी भवे । परित्त-
जीवा उ सा छट्ठी, जे यावन्ना तहाविहा ॥ ७९ ॥ (सू० २४)

'से किं त'मित्यादि, अथ के ते साधारणशरीरबादरवनस्पतिकायिकाः ?, सूरिराह–साधारणशरीरबादरवनस्प-
तिकायिका अनेकविधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–'अवए'इत्यादि, एते च केचिदतिप्रसिद्धत्वात्केचिद्देशविशेषतः स्वयमवग-
न्तव्याः । 'जे यावन्ने तहाविहा' इति, येऽपि चान्ये–उक्तव्यतिरिक्तास्तथाप्रकारा उक्तप्रकारास्तेऽपि अनन्तजीवा
ज्ञातव्याः । 'तणे'त्यादि, तृणमूलं कन्दमूलं यचापरं वंशीमूलं, एतेषां मध्ये क्वचिज्जातिभेदतो देशभेदतो वा
सङ्ख्याता जीवाः क्वचिदसङ्ख्याता अनन्ताश्च ज्ञातव्याः । 'सिंघाडगस्से'त्यादि, शृङ्गाटकस्य यो गुच्छः सोऽनेकजीवो
भवति ज्ञातव्यः, त्वक्शाखादीनामनेकजीवात्मकत्वात्, केवलं तत्रापि यानि पत्राणि तानि प्रत्येकजीवानि, फले
पुनः प्रत्येकमेकैकस्मिन् द्वौ द्वौ जीवौ भणितौ । 'जस्स मूलस्से'त्यादि, यस्य मूलस्य भग्नस्य सतः–समः–एकान्तसदृशरूपः
चक्राकारो भङ्गः प्रकर्षेण दृश्यते तन्मूलमनन्तजीवमवसेयं । 'जे यावन्ने तहाविहा' इति, यान्यपि चान्यानि अभग्ना-
नि तथाप्रकाराणि अधिकृतमूलभग्नसमप्रकाराणि तान्यप्यनन्तजीवानि ज्ञातव्यानि । एवं कन्दस्कन्धत्वक्शाखाप्रवा
लपत्रपुष्पफलबीजविषया अपि नव गाथा व्याख्येयाः ॥ सम्प्रति प्रत्येकशरीरलक्षणाभिधानार्थं गाथादशकमाह—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

'जस्से'त्यादि, यस्य मूलस्य भग्नस्य सतो भङ्गे–भङ्गप्रदेशे तु हीरो–विषमच्छेदमुद्दन्तुरं वा प्रदृश्यते–प्रकर्षेण स्पष्टरूपतया लक्ष्यते ततो मूलं 'परित्तजीवं' प्रत्येकशरीरजीवात्मकं ज्ञातव्यं, 'जे यावन्ने तहाविहा' इति, यान्यपि चान्यानि भग्नानि तथाप्रकाराणि अधिकृतसहीरभग्नमूलसदृशानि मूलानि तान्यपि प्रत्येकशरीरजीवात्मकानि मन्तव्यानि । एवं कन्दादिविषया अपि नव गाथा भावनीयाः, यत्र कुत्रापि लिङ्गव्यत्ययः स प्राकृतलक्षणादवसेयः । अधुना मूलादिगतानां वल्कलरूपाणामनन्तजीवत्वपरिज्ञानार्थं लक्षणमाह–यस्य मूलस्य काष्ठात्–मध्यसारात् छल्ली–वल्कलरूपा बहुलतरा भवति सा अनन्तजीवा ज्ञातव्या, 'जे यावन्ना तहाविह'त्ति याऽपि चान्या अधिकृतया अनन्तजीवत्वेन निश्चितया छल्या समानरूपा छल्ली सापि तथाविधा–अनन्तजीवात्मिका ज्ञातव्या, एवं कन्दस्कन्धशाखाविषया अपि तिस्रो गाथाः परिभावनीयाः, अधुना तासामेव छल्लीनां प्रत्येकजीवत्वपरिज्ञानाय लक्षणमाह–'जस्स मूलस्से'त्यादि गाथाचतुष्टयं, यस्य मूलस्य काष्ठात्–मध्यसारात् छल्ली–वल्कलरूपा तनुतरा भवति सा 'परित्तजीवा' प्रत्येकशरीरजीवात्मिका द्रष्टव्या, 'जे यावन्ना तहाविहा' इति यापि चान्या अधिकृतया प्रत्येकशरीरजीवात्मकत्वेन निश्चितया छल्या समानरूपा छल्ली सापि तथाविधा–प्रत्येकशरीरजीवात्मिका अवगन्तव्या, एवं कन्दादिविषया अपि तिस्रो गाथा भावनीयाः ॥ यदुक्तम्—'जस्स मूलस्स भग्गस्स समो भङ्गो पदीसइ' इत्यादि, तदेव लक्षणं स्पष्टं प्रतिपिपादयिषुरिदमाह—

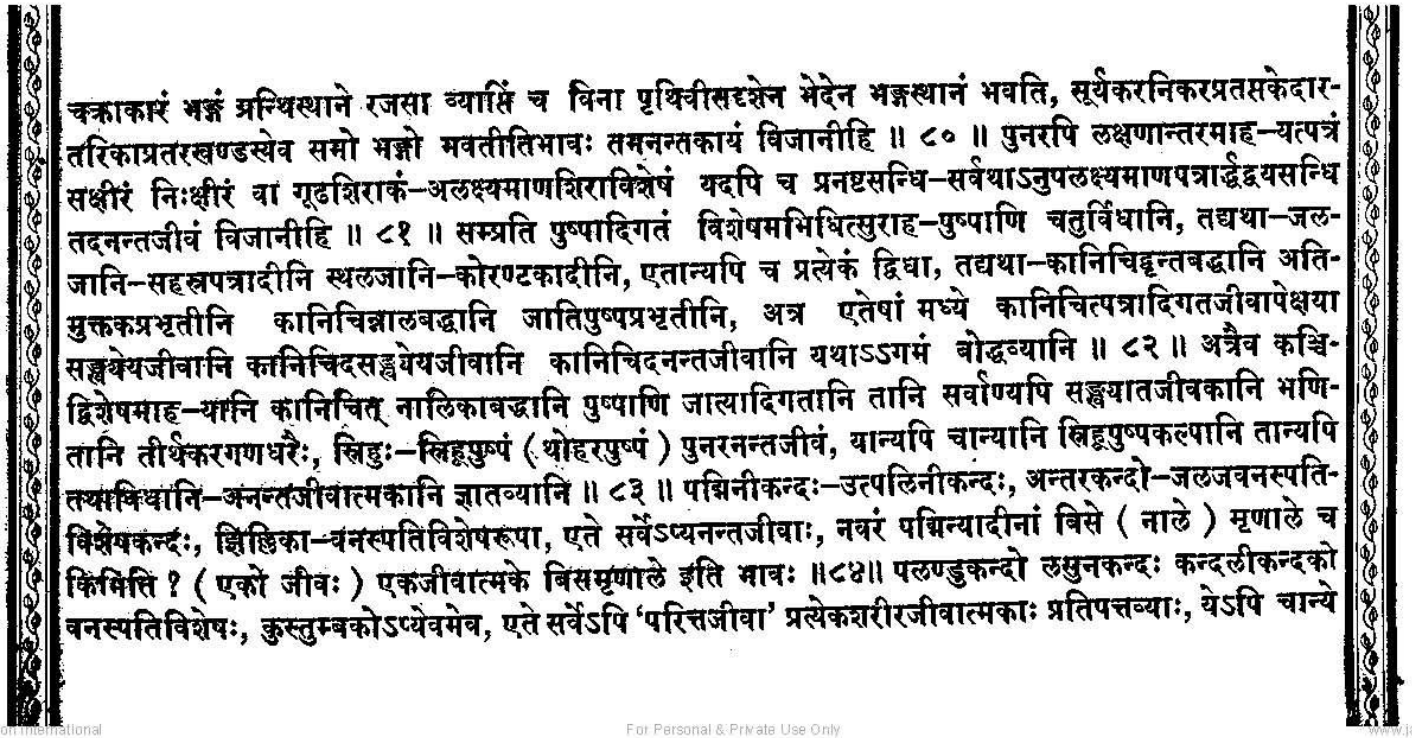
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [२५] + गाथा: दीप अनुक्रम [१२०-१३२]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति:

चक्कागं भज्जमाणस्स, गंठी चुन्नघणो भवे । पुढविसरिसेण भेएण, अणंतजीवं वियाणाहि ॥८०॥ गूढसिरागं पत्तं सच्छीरं जं च होइ निच्छीरं । जंपिय पणट्ठसंधिं अणंतजीवं वियाणाहि ॥८१॥ पुप्फा जलया थलया य विंटबद्धा य नालबद्धा य । संखिज्जमसंखिज्जा बोद्धव्वाऽणंतजीवा य ॥८२॥ जे केइ नालियाबद्धा पुप्फा संखिज्जजीविया भणिया । निहुया अणंतजीवा जे यावन्ने तहाविहा ॥८३॥ पउमुप्पलिणीकंदे अंतरकंदे तहेव झिल्ली य । एए अणंतजीवा एगो जीवो बिसमुणाले ॥८४॥ पलंडूल्हसुणकंदे य, कंदली य कुसुंबए । एए परित्तजीवा, जे यावन्ने तहाविहा ॥८५॥ पउमुप्पलनलिणाणं, सुभगसोगंधियाण य । अरविंदकुंकणाणं, सयवत्तसहस्सपत्ताणं ॥८६॥ विंटं बाहिरपत्ता य, कन्निया चेव एगजीवस्स । अब्भिंतरगा पत्ता पत्तेयं केसरा मिंजा ॥८७॥ वेणुनल इक्खुवाडिय समासइक्खू य इक्कडे रंडे । करकर सुंठि विहंगू तणाण तह पव्वगाणं च ॥८८॥ अच्छि पव्वं बलिमोडओ य एगस्स होंति जीवस्स । पत्तेयं पत्ताइं पुप्फाइं अणेगजीवाइं ॥८९॥ पूसफलं कालिंगं तुंबं तउसेल एलवालुंकं । घोसाडय पंडोलं तिंदूयं चेव तेंदूसं ॥९०॥ विंटसमं सकडाहं एयाइं हवंति एगजीवस्स । पत्तेयं पत्ताइं सकेसरं केसरं मिंजा ॥ ९१ ॥ सप्फाए सज्झाए उव्वेहलिया य कुहणकंदुके । एए अणंतजीवा कंदुके होइ भयणा उ ॥९२॥ (सू० २५)

'चक्काग'मित्यादि, चक्रकं–चक्राकारं एकान्तेन समं भङ्गस्थानं यस्य भज्यमानस्य मूलकन्दस्कन्धत्वक्शाखापत्र-पुष्पादेर्भवति तन्मूलादिकमनन्तजीवं विजानीहि इति सम्बन्धः, तथा 'गंठी चुन्नघणो भवे' इति ग्रन्थिः पर्व सा-मान्यतो भङ्गस्थानं वा स यस्य भज्यमानस्य चूर्णेन–रजसा घनो–व्याप्तो भवति ॥ अथवा यस्य पत्रादेर्भज्यमानस्य

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



चक्राकारं भङ्गं ग्रन्थिस्थाने रजसा व्याप्तिं च विना पृथिवीसदृशेन भेदेन भङ्गस्थानं भवति, सूर्यकरनिकरप्रतप्तकेदार-तरिकाप्रतरखण्डस्येव समो भङ्गो भवतीतिभावः तमनन्तकायं विजानीहि ॥ ८० ॥ पुनरपि लक्षणान्तरमाह–यत्पत्रं सक्षीरं निःक्षीरं वा गूढशिराकं–अलक्ष्यमाणशिराविशेषं यदपि च प्रनष्टसन्धि–सर्वथाऽनुपलक्ष्यमाणपत्रार्द्धद्वयसन्धि तदनन्तजीवं विजानीहि ॥ ८१ ॥ सम्प्रति पुष्पादिगतं विशेषमभिधित्सुराह–पुष्पाणि चतुर्विधानि, तद्यथा–जल-जानि–सहस्रपत्रादीनि स्थलजानि–कोरण्टकादीनि, एतान्यपि च प्रत्येकं द्विधा, तद्यथा–कानिचिद्बृन्तबद्धानि अति-मुक्तकप्रभृतीनि कानिचिन्नालबद्धानि जातिपुष्पप्रभृतीनि, अत्र एतेषां मध्ये कानिचित्पत्रादिगतजीवापेक्षया सङ्ख्येयजीवानि कानिचिदसङ्ख्येयजीवानि कानिचिदनन्तजीवानि यथाऽऽगमं बोद्धव्यानि ॥ ८२ ॥ अत्रैव कश्चि-द्विशेषमाह–यानि कानिचित् नालिकाबद्धानि पुष्पाणि जात्यादिगतानि तानि सर्वाण्यपि सङ्ख्यातजीवकानि भणि-तानि तीर्थकरगणधरैः, स्निहुः–स्निहूपुष्पं (थोहरपुष्पं) पुनरनन्तजीवं, यान्यपि चान्यानि स्निहूपुष्पकल्पानि तान्यपि तथाविधानि–अनन्तजीवात्मकानि ज्ञातव्यानि ॥ ८३ ॥ पद्मिनीकन्दः–उत्पलिनीकन्दः, अन्तरकन्दो–जलजवनस्पति-विशेषकन्दः, झिल्लिका–वनस्पतिविशेषरूपा, एते सर्वेऽप्यनन्तजीवाः, नवरं पद्मिन्यादीनां बिसे (नाले) मृणाले च किमिति ? (एको जीवः) एकजीवात्मके बिसमृणाले इति भावः ॥८४॥ पलण्डुकन्दो लसुनकन्दः कन्दलीकन्दको वनस्पतिविशेषः, कुस्तुम्बकोऽप्येवमेव, एते सर्वेऽपि 'परित्तजीवा' प्रत्येकशरीरजीवात्मकाः प्रतिपत्तव्याः, येऽपि चान्ये

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [२५] + गाथा: दीप अनुक्रम [१२०-१३२]

प्रज्ञापनायाः मलय० वृत्तौ. ॥ ३७ ॥

एवंप्रकारा अनन्तजीवात्मकलक्षणविरहितास्तेऽपि तथाविधाः–प्रत्येकशरीरजीवात्मका वेदितव्याः ॥ ८५ ॥ पद्मानाम् उत्पलानां नलिनानां सुभगानां सौगन्धिकानां अरविन्दानां कोकनदानां शतपत्राणां सहस्रपत्राणां प्रत्येकं यत् वृन्तं–प्रसवबन्धनं यानि च बाह्यपत्राणि प्रायो हरितरूपाणि या च कर्णिका–पत्राधारभूता एतानि त्रीण्यपि एकजीवात्मकानि, यानि पुनरभ्यन्तराणि पत्राणि यानि च केसराणि याश्च मिञ्जाः–फलानि एतानि प्रत्येकमेकैकजीवाधिष्ठितानि ॥ ८६–८७ ॥ वेणुः–वंशो नडः–तृणविशेषः इक्षुवाटिकादयो लोकतः प्रत्येतव्याः, तृणानि दूर्वादीनि यानि च पर्वगानि–पर्वोपेतानि एतेषां यदक्षि यच्च पर्व यच्च 'वलिमोडउ'त्ति पर्वपरिवेष्टनं चक्राकारं, एतानि एकजीवस्य सम्बन्धीनि भवन्ति, एकजीवात्मकानि भवन्तीति भावः, पत्राणि एतेषां प्रत्येकमेकजीवाधिष्ठितानि पुष्पाण्यनेकजीवात्मकानि ॥ ८८–८९ ॥ पुष्पफलं एवं कालिङ्गं तुम्बं त्रपुषं 'एलवालु'त्ति चिर्भटविशेषरूपं, वालुकं–चिर्भटं, तथा घोषातकं पटोलं तेन्दुकं तिन्दुसं च यत्फलं, एतेषु प्रत्येकं वृन्तसमं 'सकडाहं' ति समांसं सगिरं तथा कटाह एतानि त्रीण्येकस्य जीवस्य भवन्ति, एकजीवात्मकान्येतानि त्रीणि भवन्तीत्यर्थः । तथा एतेषामेव पुष्पफलादीनां तिन्दुकपर्यन्तानां पत्राणि पृथक् 'प्रत्येक' मिति प्रत्येकशरीराधिष्ठितानि, एकैकजीवाधिष्ठितानीत्यर्थः । तथा सकेसरा अकेसरा वा मिञ्जा–बीजानि प्रत्येकमेकैकजीवाधिष्ठितानि ॥९०–९१॥ एते कुहनादिवनस्पतिविशेषा लोकतः प्रत्येतव्याः, एते चानन्तजीवात्मकाः, नवरं कंदुके भजना, स हि कोऽपि देशविशेषादनन्तः–अनन्तजीवात्मको भवति, कोऽप्य-

१ प्रज्ञापनापदे साधारणप्रत्येकविशेषाः (सू.२५) ॥ ३७ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

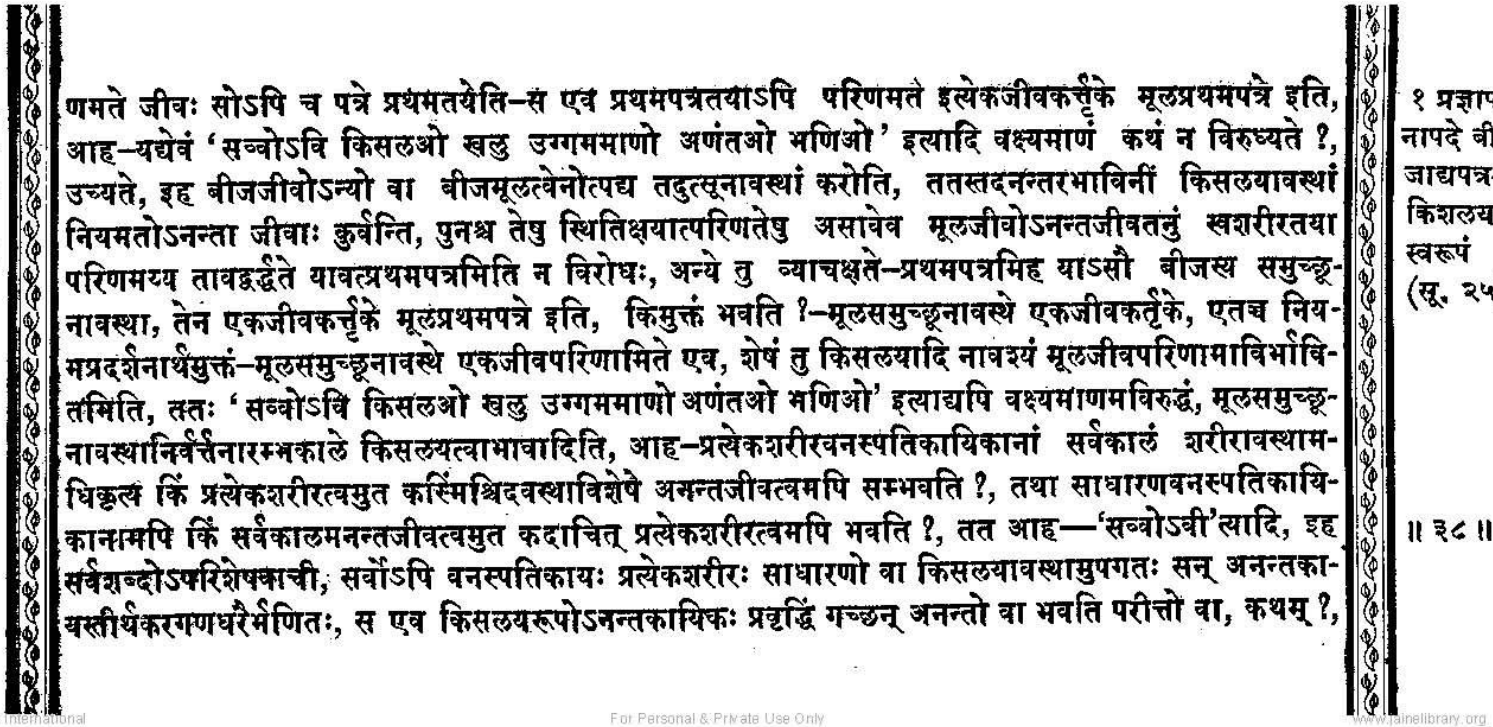
सङ्ख्येयजीवात्मक इति ॥ ९२ ॥ आह–किं बीजजीव एव मूलादिजीवो भवति उतान्यस्तस्मिन्नपक्रान्ते उत्पद्यते इति परप्रश्नमाशङ्क्याह—

बीए जोणिब्भूए जीवो वक्कमइ सो व अन्नो वा । जोऽवि य मूले जीवो सोऽवि य पत्ते पढमयाए ॥९३॥ सव्वोऽवि किसलओ खलु उग्गममाणो अणंतओ भणिओ । सो चेव विवड्ढंतो होइ परित्तो अणंतो वा ॥ ९४ ॥

बीजे योनिभूते–योन्यवस्थां प्राप्ते, योनिपरिणाममजहतीति भावः, बीजस्य हि द्विविधाऽवस्था, तद्यथा–योन्यवस्था अयोन्यवस्था च, तत्र यदा बीजं योन्यवस्थां न जहाति अथ च उज्झितं जन्तुना तदा तत् योनिभूतमित्यभिधीयते, उज्झितं च जन्तुना निश्चयतो नावगन्तुं शक्यते ततोऽनतिशायिना सम्प्रति सचेतनमचेतनं वा अविध्वस्तयोनि योनिभूतमिति व्यवह्रियते, विध्वस्तयोनि तु नियमादचेतनत्वादयोनिभूतमिति, अथ योनिरिति किमभिधीयते ?, उच्यते, जन्तोरुत्पत्तिस्थानं अविध्वस्तशक्तिकं–तत्रस्थजीवपरिणमनशक्तिसम्पन्नमिति भावः, तस्मिन् बीजे योनिभूते जीवो 'व्युत्क्रामति' उत्पद्यते 'स एव' पूर्वको बीजजीवः अन्यो वा आगत्य तत्रोत्पद्यते, किमुक्तं भवति ?–यदा बीजजीवनिर्वर्त्तकेन जीवेन स्वायुषः क्षयात् बीजपरित्यागः कृतो भवति, तस्य च बीजस्य पुनरम्बुकालावनिसंयोगरूपसामग्रीसंभवस्तदा कदाचित्स एव प्राक्तनो बीजजीवो मूलादिनामगोत्रे उपनिबध्य बीजे उत्पद्यते–तत्रागत्य परिणमति, कदाचिदन्यः पृथिवीकायिकादिजीवः, 'योऽपि च मूले जीव इति' य एव मूलतया परि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [२५] + गाथा: दीप अनुक्रम [१३३-१३४]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति:



प्रज्ञापनायाः मलय० वृत्तौ. ॥ ३८ ॥

णमते जीवः सोऽपि च पत्रे प्रथमतयेति–स एव प्रथमपत्रतयाऽपि परिणमते इत्येकजीवकर्तृके मूलप्रथमपत्रे इति, आह–यद्येवं 'सव्वोऽवि किसलओ खलु उग्गममाणो अणंतओ भणिओ' इत्यादि वक्ष्यमाणं कथं न विरुध्यते ?, उच्यते, इह बीजजीवोऽन्यो वा बीजमूलत्वेनोत्पद्य तदुत्सूनावस्थां करोति, ततस्तदनन्तरभाविनीं किसलयावस्थां नियमतोऽनन्ता जीवाः कुर्वन्ति, पुनश्च तेषु स्थितिक्षयात्परिणतेषु असावेव मूलजीवोऽनन्तजीवतनुं स्वशरीरतया परिणमय्य तावद्वर्द्धते यावत्प्रथमपत्रमिति न विरोधः, अन्ये तु व्याचक्षते–प्रथमपत्रमिह याऽसौ बीजस्य समुच्छूनावस्था, तेन एकजीवकर्तृके मूलप्रथमपत्रे इति, किमुक्तं भवति ?–मूलसमुच्छूनावस्थे एकजीवकर्तृके, एतच्च नियमप्रदर्शनार्थमुक्तं–मूलसमुच्छूनावस्थे एकजीवपरिणामिते एव, शेषं तु किसलयादि नावश्यं मूलजीवपरिणामाविर्भावितमिति, ततः 'सव्वोऽवि किसलओ खलु उग्गममाणो अणंतओ भणिओ' इत्याद्यपि वक्ष्यमाणमविरुद्धं, मूलसमुच्छूनावस्थानिर्वर्त्तनारम्भकाले किसलयत्वाभावादिति, आह–प्रत्येकशरीरवनस्पतिकायिकानां सर्वकालं शरीरावस्थामधिकृत्य किं प्रत्येकशरीरत्वमुत कस्मिंश्चिदवस्थाविशेषे अनन्तजीवत्वमपि सम्भवति ?, तथा साधारणवनस्पतिकायिकानामपि किं सर्वकालमनन्तजीवत्वमुत कदाचित् प्रत्येकशरीरत्वमपि भवति ?, तत आह—'सव्वोऽवी'त्यादि, इह सर्वशब्दोऽपरिशेषवाची, सर्वोऽपि वनस्पतिकायः प्रत्येकशरीरः साधारणो वा किसलयावस्थामुपगतः सन् अनन्तकायस्तीर्थकरगणधरैर्भणितः, स एव किसलयरूपोऽनन्तकायिकः प्रवृद्धिं गच्छन् अनन्तो वा भवति परीत्तो वा, कथम् ?,

१ प्रज्ञापनापदे बीजाद्यपत्रकिशलयस्वरूपं (सू. २५) ॥ ३८ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उच्यते, यदि साधारणं शरीरं निर्वर्त्त्यते तदा साधारण एव भवति, अथ प्रत्येकशरीरं ततः प्रत्येक इति, कियतः कालादूर्ध्वं प्रत्येको भवति इति चेत्, उच्यते, अन्तर्मुहूर्त्तात्, तथाहि–निगोदानामुत्कर्षतोऽप्यन्तर्मुहूर्त्तं कालं यावदस्थितिरुक्ता ततोऽन्तर्मुहूर्त्तात्परतो विवर्द्धमानः प्रत्येको भवतीति ॥ ९३–९४ ॥ सम्प्रति साधारणलक्षणमाह—

समयं वक्कंताणं समयं तेसिं सरीरनिव्वत्ती । समयं आणुग्गहणं समयं ऊसासनीसासो ॥ ९५ ॥ इक्कस्स उ जं गहणं बहूण साहारणाण तं चेव । जं बहुयाणं गहणं समासओ तंपि इक्कस्स ॥ ९६ ॥ साहारणमाहारो साहारणमाणुपाणगहणं च । साहारणजीवाणं साहारणलक्खणं एयं ॥ ९७ ॥ जह अयगोलो धंतो जाओ तत्ततवणिज्जसंकासो । सव्वो अगणिपरिणओ निगोयजीवे तहा जाण ॥ ९८ ॥ एगस्स दोण्ह तिण्ह व संखिज्जाण व न पासिउं सक्का । दीसंति सरीराइं निगोयजीवाणऽणंताणं ॥ ९९ ॥ लोगागासपएसे निगोयजीवं ठवेहि इक्किकं । एवं मविज्जमाणा हवंति लोगा अणंता उ ॥ १०० ॥ लोगागासपएसे परित्तजीवं ठवेहि इक्किकं । एवं मविज्जमाणा हवंति लोगा असंखिज्जा ॥ १०१ ॥ पत्तेया पज्जत्ता पयरस्स असंखभागमित्ता उ । लोगाऽसंखा पज्जत्तयाण साहारणमणंता ॥ १०२ ॥ एएहिं सरीरेहिं पच्चक्खं ते परूविया जीवा । सुहुमा आणागिज्झा चक्खुप्फासं न ते इति (१ प्र०) जे यावन्ने तहप्पगारा, ते समासओ दुविहा पन्नत्ता, तं०–पज्जत्तगा य अपज्जत्तगा य, तत्थ णं जे ते अपज्जत्तगा ते णं असंपत्ता, तत्थ णं जे ते पज्जत्तगा तेसिणं वन्नाएसेणं गंधाएसेणं रसाएसेणं फासाएसेणं सहस्सग्गसो विहाणाइं, संखिज्जाइं जोणिप्पमुहसयसहस्साइं, पज्जत्तगनीसाए अपज्जत्तगा वक्कमंति, जत्थ एगो

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [२६] + गाथा: + प्र० दीप अनुक्रम [१३५--१४८]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति:

तत्थ सिय संखिज्जा सिय असंखिज्जा सिय अणंता ॥ एएसिणं इमाओ गाहाओ अणुगंतव्वाओ, तंजहा–कंदा य कंदमूला य, रुक्खमूला इयावरे । गुच्छा य गुम्मवल्ली य, वेणुयाणि तणाणि य ॥ १०३ ॥ पउमुप्पल संघाडे हढे य सेवाल किण्हए पणए । अवए य कच्छभाणी कंदुक्केगूणवीसइमे ॥ १०४ ॥ तय छल्लि पवालेसु य पत्तपुप्फफलेसु य । मूलग्गमज्झबीएसु, जोणी कस्सवि कित्तिया ॥ १०५ ॥ से त्तं साहारणसरीरबायरवणस्सइकाइया, [से त्तं साहरणसरीरवणस्सइकाइया] से त्तं बायरवणस्सइकाइया, से त्तं वणस्सइकाइया, से त्तं एगिंदिया ॥ (सू० २६)

'समयं' युगपद् व्युत्क्रान्तानां–उत्पन्नानां सतां 'तेषां' साधारणजीवानां समकम्–एककालं शरीरनिर्वृत्तिर्भवति, समकं च प्राणापानग्रहणं–प्राणापानयोग्यपुद्गलोपादानम् ततः समकम्–एककालं तदुत्तरकालभाविनावुच्छ्वासनिःश्वासौ ॥९५॥ तथा एकस्य यत् आहारादिपुद्गलानां ग्रहणं तदेव बहूनामपि साधारणजीवानामवसेयं, किमुक्तं भवति ?–यत् आहारादिकमेको गृह्णाति शेषा अपि तच्छरीराश्रिता बहवोऽपि तदेव गृह्णन्तीति, तथा च यद्बहूनां ग्रहणं तत्संक्षेपादेकत्र शरीरे समावेशात् एकस्यापि ग्रहणम् ॥ ९६ ॥ सम्प्रत्युक्तार्थोपसंहारमाह–सर्वेषामप्येकशरीराश्रितानां जीवानामुक्तप्रकारेण यत् साधारणं साधारणः, सूत्रे नपुंसकतानिर्देशः आर्षत्वात्, आहारः आहारयोग्यपुद्गलोपादानम् यच्च साधारणं प्राणापानयोग्यपुद्गलोपादानं उपलक्षणमेतत् यौ साधारणावुच्छ्वासनिःश्वासौ या च साधारणा शरीरनिर्वृत्तिः एतत्साधारणजीवानां लक्षणम् ॥ ९७ ॥ सम्प्रति यथैकस्मिन् निगोदशरीरे अनन्ता जीवाः परिणताः

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रतीतिपथमवतरन्ति तथा प्रतिपादयन्नाह—यथा अयोगोलो ध्मातः सन् तप्ततपनीयसंकाशः सर्वोऽग्निपरिणतो भवति तथा निगोदजीवान् जानीहि, निगोदरूपेऽप्येकैकस्मिन् शरीरे तच्छरीरात्मकतया अनन्तान् जीवान् परिणतान् जानीहि ॥९८॥ एवं च सति—एकस्य द्वयोस्त्रयाणां यावत्संख्येयानां वाशब्दादसंख्येयानां वा निगोदजीवानां शरीराणि द्रष्टुं न शक्यानि, कुत इति चेत् ?, उच्यते–अभावात्, न हि एकादिजीवगृहीतानि अनन्तवनस्पतिशरीराणि सन्ति, अनन्तजीवपिण्डात्मकत्वात्तेषाम्, कथं तर्हि उपलभ्यानि ?, इत्यत आह–'दीसंती' त्यादि, दृश्यन्ते शरीराणि निगोदजीवानां–बादरनिगोदजीवानां अनन्तानां न तु सूक्ष्मनिगोदजीवानां, तेषां शरीराणामनन्तजीवसङ्घातात्मकत्वेऽप्यनुपलभ्यस्वभावत्वात्, तथासूक्ष्मपरिणामपरिणतत्वात्, अथ कथमेतदवसीयते–निगोदरूपशरीरं नियमादनन्तजीवपरिणामाविर्भावितं भवति ?, उच्यते–जिनवचनात्, तच्चेदम् 'गोला य असंखेज्जा होंति निगोया असंखया गोले । एक्केको य निगोओ अणंतजीवो मुणेयव्वो ॥ १ ॥' ॥ ९९ ॥ सम्प्रति एतेषामेव निगोदजीवानां प्रमाणमभिधित्सुराह–एकैकस्मिन् लोकाकाशप्रदेशे एकैकं निगोदजीवं स्थापय, एवमेकैकस्मिन् आकाशप्रदेशे एकैकजीवरचनया मीयमानाः 'अनन्तलोका' अनन्तलोकाकाशप्रमाणा निगोदजीवा भवन्ति ॥ १०० ॥ सम्प्रति प्रत्येकवनस्पतिजीवप्रमाणमाह–एकैकस्मिन् लोकाकाशप्रदेशे एकैकं प्रत्येकवनस्पतिजीवं स्थापय, एवमुक्तप्रकारेण मीयमानाः प्रत्ये-

१ गोलाश्चासंख्येया भवन्ति निगोदा असंख्येया गोलके । एकैकश्च निगोदोऽनन्तजीवो ज्ञातव्यः ॥ १ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [२६] + गाथाः + प्र० दीप अनुक्रम [१३५--१४८]

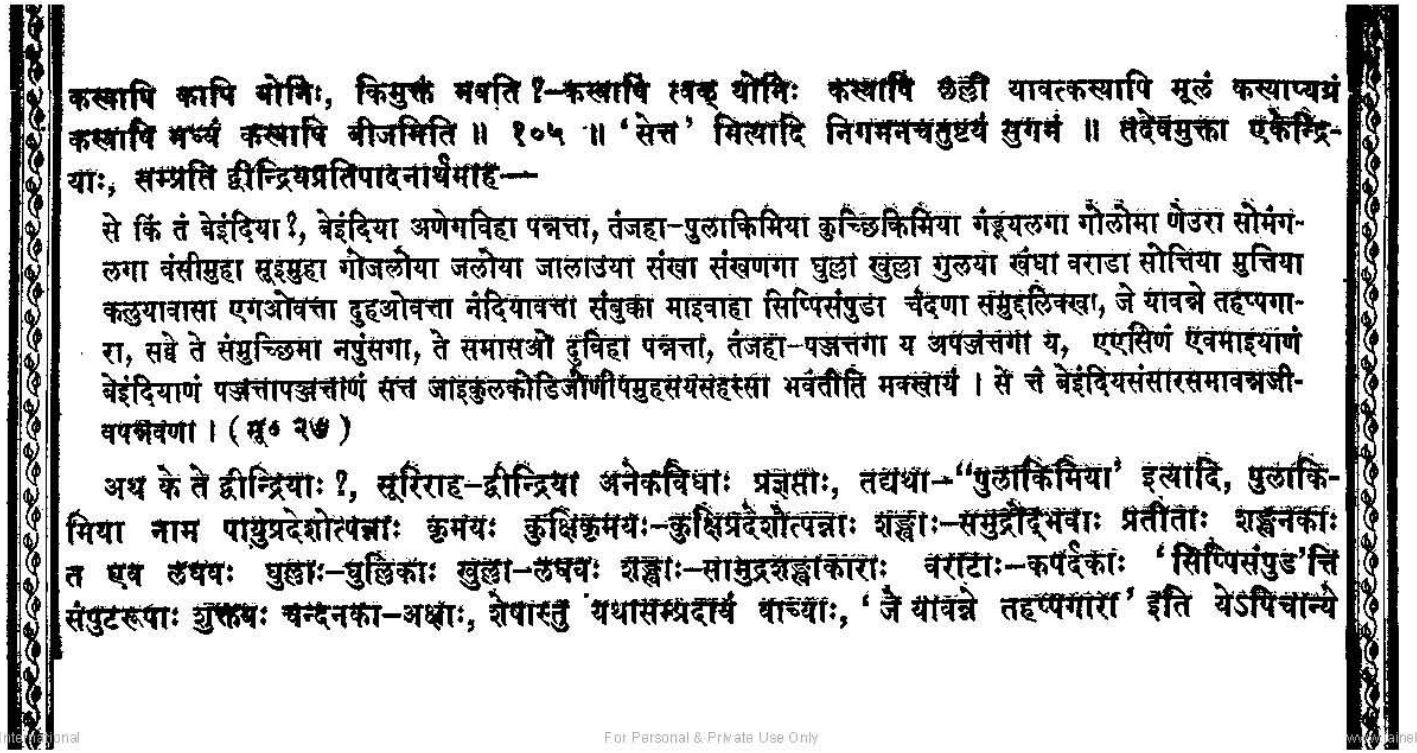
कतरुजीवा असङ्ख्येयलोकाकाशप्रदेशप्रमाणा भवन्ति ॥ १०१ ॥ सम्प्रति पर्याप्तापर्याप्तभेदेन प्रत्येकसाधारणवनस्पतिजीवानां प्रमाणमाह–पर्याप्ताः प्रत्येकवनस्पतिजीवाः घनीकृतस्य सम्बन्धिनः प्रतरस्य असङ्ख्येयतमे भागे यावन्त आकाशप्रदेशास्तावत्प्रमाणा भवन्ति, अपर्याप्तानां पुनः प्रत्येकतरुजीवानामसङ्ख्येया लोकाः परिमाणं, पर्याप्तानां अपर्याप्तानां च साधारणजीवानां अनन्तलोकाः, किमुक्तं भवति ?–असङ्ख्येयलोकाकाशप्रदेशप्रमाणा अपर्याप्ताः प्रत्येकतरवः, अनन्तलोकाकाशप्रदेशप्रमाणाः पर्याप्ता अपर्याप्ताश्च साधारणजीवा इति ॥ १०२ ॥ 'जे यावन्ने तहप्पगारा' इति, येऽपि चान्ये–अनुक्तरूपास्तथाप्रकाराः–प्रत्येकतरुरूपा साधारणरूपाश्च, तेऽपि वनस्पतिकायत्वेन प्रतिपत्तव्याः, 'ते समासओ' इत्यादि प्राग्वत्, नवरं यत्रैको बादरपर्याप्तस्तत्र तन्निश्रया अपर्याप्ताः कदाचित् सङ्ख्येयाः, कदाचिदसङ्ख्येया कदाचिदनन्ताः, प्रत्येकतरवः सङ्ख्येया असङ्ख्येया वा, साधारणास्तु नियमादनन्ता इति भावः ॥ 'एतेषां' साधारणप्रत्येकतरुरूपाणां वनस्पतिविशेषाणां वक्ष्यमाणानामिमाः–विशेषप्रतिपादिका वक्ष्यमाणा गाथा अनुगन्तव्याः–प्रतिपत्तव्याः, ता एवाह–'तंजहा' तद्यथा–'कंदा ये'त्यादि गाथात्रयं 'कन्दाः' सूरणकन्दादयः कन्दमूलानि वृक्षमूलानि च साधारणवनस्पतिविशेषाः 'गुच्छा' गुल्मा, वल्लयश्च प्रतीताः 'वेणुका' वंशास्तृणानि–अर्जुनादीनि ॥ १०३ ॥ पद्मोत्पलभट्टाटकानि प्रतीतानि 'हढो' जलजवनस्पतिविशेषः सेवालः–प्रसिद्धः कृष्णकपनकावककच्छभाणिकन्तुकाः–साधारणवनस्पतिविशेषाः ॥ १०४ ॥ एतेषामेकोनविंशतिसङ्ख्यानां त्वगादिषु मध्ये

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [२६] + गाथा: + प्र०

दीप अनुक्रम [१३९--१४८]



कस्यापि कापि योनिः, किमुक्तं भवति ?–कस्यापि त्वक् योनिः कस्यापि छल्ली यावत्कस्यापि मूलं कस्याप्यग्रं कस्यापि मध्यं कस्यापि बीजमिति ॥ १०५ ॥ 'सेत्त' मित्यादि निगमनचतुष्टयं सुगमं ॥ तदेवमुक्ता एकेन्द्रियाः, सम्प्रति द्वीन्द्रियप्रतिपादनार्थमाह—

से किं तं बेइंदिया ?, बेइंदिया अणेगविहा पन्नत्ता, तंजहा–पुलाकिमिया कुच्छिकिमिया गंडूयलगा गोलोमा णेउरा सोमंगलगा वंसीमुहा सूइमुहा गोजलोया जलोया जालाउया संखा संखणगा घुल्ला खुल्ला गुलया खंधा वराडा सोत्तिया मुत्तिया कलुयावासा एगओवत्ता दुहओवत्ता नंदियावत्ता संबुका माइवाहा सिप्पिसंपुडा चंदणा समुद्दलिक्खा, जे यावन्ने तहप्पगारा, सवे ते संमुच्छिमा नपुंसगा, ते समासओ दुविहा पन्नत्ता, तंजहा–पज्जत्तगा य अपज्जत्तगा य, एएसिणं एवमाइयाणं बेइंदियाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं सत्त जाइकुलकोडिजोणीपमुहसयसहस्सा भवंतीति मक्खायं । से त्तं बेइंदियसंसारसमावन्नजीवपन्नवणा । (सू० २७)

अथ के ते द्वीन्द्रियाः ?, सूरिराह–द्वीन्द्रिया अनेकविधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–"पुलाकिमिया' इत्यादि, पुलाकिमिया नाम पायुप्रदेशोत्पन्नाः कृमयः कुक्षिकृमयः–कुक्षिप्रदेशोत्पन्नाः शङ्खाः–समुद्रोद्भवाः प्रतीताः शङ्खनकाः त एव लघवः घुल्लाः–घुल्लिकाः खुल्ला–लघवः शङ्खाः–सामुद्रशङ्खाकाराः वराटाः–कपर्दकाः 'सिप्पिसंपुड'त्ति संपुटरूपाः शुक्तयः चन्दनका–अक्षाः, शेषास्तु यथासम्प्रदायं वाच्याः, 'जे यावन्ने तहप्पगारा' इति येऽपिचान्ये

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र द्विइन्द्रिय-जीवस्य प्रज्ञापना आरभ्यते

तथाप्रकारा–एवंप्रकारा मृतककडेवरसम्भूतकृम्यादयस्ते सर्वे द्वीन्द्रिया ज्ञातव्याः, ते संमुर्छिमत्वादेव च नपुंसकाः, संमुर्छिमानामवश्यं नपुंसकत्वात् 'नारकसंमुर्छिमा नपुंसका' (० नि नपुंसकानि तत्त्वा–अ–२–५०) इतिवचनात्, 'ते समासओ' इत्यादि, ते द्वीन्द्रियाः समासतः–संक्षेपेण द्विविधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–पर्याप्तकाश्च अपर्याप्तकाश्च, चशब्दौ योनिकुलभेदेन स्वगतानेकभेदसूचकौ, एतेषां द्वीन्द्रियाणामेवमादीनां पुलाकृम्यादीनां द्वीन्द्रियाणां पर्याप्तापर्याप्तादीनां सर्वसङ्ख्यया सर्वजातिकुलकोटीनां योनिप्रमुखाणि–योनिप्रवहाणि योनिशतसहस्राणि भवन्ति, सप्त जातिकुलकोटिलक्षा भवन्तीति भावः, इत्याख्यातं तीर्थकृद्भिः, मकारोऽलाक्षणिकः, इयमत्र भावना–इह जातिकुलयोनीनां परिज्ञानार्थमिदं परिस्थूरमुदाहरणं पूर्वाचार्यैरुपदर्शितम्, तद्यथा–जातिरिति किल तिर्यग्गतिः तस्याः कुलानि–कृमिकीटवृश्चिकादीनि, इमानि च कुलानि योनिप्रमुखाणि, तथाहि–एकस्यामेव योनौ अनेकानि कुलानि भवन्ति, यथा छगणयोनौ कृमिकुलं कीटकुलं वृश्चिककुलमित्यादि, अथवा जातिकुलमित्येकं पदम्, जातिकुलयोन्योश्च परस्परं विशेषः, एकस्यामपि योनौ अनेकजातिकुलसम्भवात्, यथा एकस्यामेव योनौ कृमिजातिकुलं कीटकजातिकुलं वृश्चिकजातिकुलमित्यादि, एवं च एकस्यामेव योनाववान्तरजातिभेदभावादनेकानि योनिप्रवहाणि जातिकुलानि सम्भवन्तीत्युपपद्यन्ते, द्वीन्द्रियाणां सप्त जातिकुलकोटीनां शतसहस्राणाम्, उपसंहारमाह–'सेत्त' मित्यादि, सैषा द्वीन्द्रियसंसारसमापन्नजीवप्रज्ञापना ॥ सम्प्रति त्रीन्द्रियसंसारसमापन्नजीवप्रज्ञापनार्थमाह—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [२८]

दीप अनुक्रम [१५०]

से किं तं तेइंदियसंसारसमावन्नजीवपन्नवणा ?, तेइंदियसंसारसमावन्नजीवपन्नवणा अणेगविहा पन्नत्ता, तं–ओवइया रोहिणिया कुंथू पिपीलिया उद्दंसगा उद्देहिया उक्कलिया उप्पाया उप्पडा तणहारा कट्ठहारा मालुया पत्ताहारा तणबेंटिया पत्तबेंटिया पुप्फबेंटिया फलबेंटिया बीयबेंटिया तेबुरणमिंजिया तओसिमिंजिया कप्पासट्ठिमिंजिया हिल्लिया झिल्लिया झिंगिरा किंगिरिडा बाहुया लहुया सुभगा सोवत्थिया सुयबेंटा इंदकाइया इंदगोवया तुरुतुंबगा कुच्छलवाहगा जूया हालाहला पिसुया सयवाइया गोम्ही हत्थिसोंडा, जे यावन्ने तहप्पगारा, सव्वे ते संमुच्छिमा नपुंसगा, ते समासओ दुविहा पन्नत्ता, तं०–पज्जत्तगा य अपज्जत्तगा य, एएसिणं एवमाइयाणं तेइंदियाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं अट्ठ जाइकुलकोडिजोणिप्पमुहसयसहस्सा भवंतीतिमक्खायं, सेत्तं तेइंदियसंसारसमावन्नजीवपन्नवणा । (सू० २८)

'अथ का सा त्रीन्द्रियसंसारसमापन्नजीवप्रज्ञापना ?, भगवानाह–त्रीन्द्रियसंसारसमापन्नजीवप्रज्ञापना अनेकविधा प्रज्ञप्ता, तामेव तद्यथेत्यादिनोपदर्शयति, एते च औपयिकप्रभृतयस्त्रीन्द्रिया देशविशेषतो लोकतश्चावगन्तव्याः, नवरं गोम्ही–कर्णसियालिया 'जे यावन्ने तहप्पगारा' येऽपि चान्ये तथाप्रकारास्ते सर्वे त्रीन्द्रिया ज्ञातव्या इति शेषः, सव्वे 'ते संमुच्छिमानपुंसका' इत्यादि पूर्ववत्, 'एतेसिण'मित्यादि, एतेषां–त्रीन्द्रियाणामेवमादिकानाम्–औपयिकप्रभृतीनां पर्याप्तापर्याप्तानां सर्वसङ्ख्यया अष्टौ जातिकुलकोटीनां योनिप्रमुखाणि–योनिप्रवाहाणि शतसहस्राणि भवन्ति, अष्टौ कुलकोटिलक्षा भवन्तीति भावः, इत्याख्यातं तीर्थकृद्भिः, उपसंहारमाह–'सेत्त'मित्यादि ॥ तदेवमुक्ता त्रीन्द्रिय-

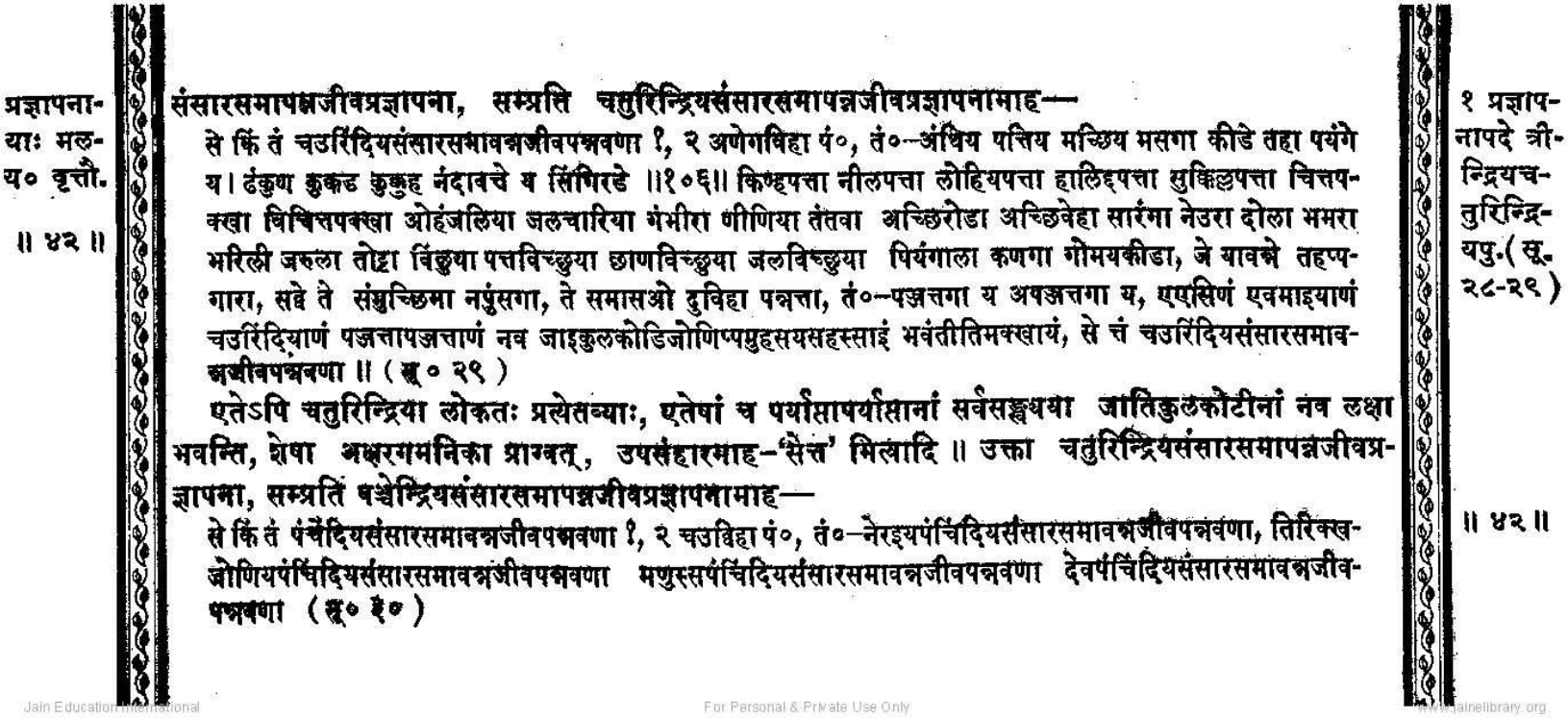
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र त्रिइन्द्रिय-जीवस्य प्रज्ञापना आरभ्यते

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [२९] + गाथा

दीप अनुक्रम [१५१--१५३]



प्रज्ञापनाया: मल-य० वृत्तौ. ॥ ४२ ॥

संसारसमापन्नजीवप्रज्ञापना, सम्प्रति चतुरिन्द्रियसंसारसमापन्नजीवप्रज्ञापनामाह—

से किं तं चउरिंदियसंसारसमावन्नजीवपन्नवणा ?, २ अणेगविहा पं०, तं०—अंधिय पत्तिय मच्छिय मसगा कीडे तहा पयंगे य। ढंकुण कुक्कड कुक्कुह नंदावत्ते य सिंगिरडे ॥१०६॥ किण्हपत्ता नीलपत्ता लोहियपत्ता हालिद्दपत्ता सुक्किलपत्ता चित्तपक्खा विचित्तपक्खा ओहंजलिया जलचारिया गंभीरा णीणिया तंतवा अच्छिरोडा अच्छिवेहा सारंगा नेउरा दोला भमरा भरिली जरुला तोट्टा विंछुया पत्तविच्छुया छाणविच्छुया जलविच्छुया पियंगाला कणगा गोमयकीडा, जे यावन्ने तहप्पगारा, सव्वे ते संमुच्छिमा नपुंसगा, ते समासओ दुविहा पन्नत्ता, तं०—पज्जत्तगा य अपज्जत्तगा य, एएसिणं एवमाइयाणं चउरिंदियाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं नव जाइकुलकोडिजोणिप्पमुहसयसहस्साइं भवंतीतिमक्खायं, से त्तं चउरिंदियसंसारसमावन्नजीवपन्नवणा ॥ (सू० २९)

एतेऽपि चतुरिन्द्रिया लोकतः प्रत्येतव्याः, एतेषां च पर्याप्तापर्याप्तानां सर्वसङ्ख्यया जातिकुलकोटीनां नव लक्षा भवन्ति, शेषा अक्षरगमनिका प्राग्वत्, उपसंहारमाह-'सेत्त' मित्यादि ॥ उक्ता चतुरिन्द्रियसंसारसमापन्नजीवप्रज्ञापना, सम्प्रति पञ्चेन्द्रियसंसारसमापन्नजीवप्रज्ञापनामाह—

से किं तं पंचेंदियसंसारसमावन्नजीवपन्नवणा ?, २ चउविहा पं०, तं०—नेरइयपंचिंदियसंसारसमावन्नजीवपन्नवणा, तिरिक्खजोणियपंचिंदियसंसारसमावन्नजीवपन्नवणा मणुस्सपंचिंदियसंसारसमावन्नजीवपन्नवणा देवपंचिंदियसंसारसमावन्नजीवपन्नवणा (सू० ३०)

१ प्रज्ञापनापदे त्रीन्द्रियचतुरिन्द्रियपु.(सू. २८-२९)

॥ ४२ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र पञ्चइन्द्रिय-जीवस्य प्रज्ञापना आरभ्यते

प्रत सूत्रांक [३०]

दीप अनुक्रम [१५४]

अथ का सा पञ्चेन्द्रियसंसारसमापन्नजीवप्रज्ञापना ?, सूरिराह–पञ्चेन्द्रियसंसारसमापन्नजीवप्रज्ञापना चतुर्विधा प्रज्ञप्ता, तद्यथा–'नैरयिके' त्यादि, अयम्–इष्टफलं कर्म निर्गतमयं येभ्यस्ते निरया–नरकावासास्तेषु भवा नैरयिकास्ते च ते पञ्चेन्द्रियसंसारसमापन्नजीवाश्च नैरयिकपञ्चेन्द्रियसंसारसमापन्नजीवास्तेषां प्रज्ञापना, तथा 'अञ्च् गतौ' तिरोऽञ्चन्तीति तिर्यञ्चः, 'तिरसस्तिर्यतीति' तिरसस्तिर्यादेशः, तेषां योनिः–उत्पत्तिस्थानं तिर्यग्योनिस्तत्र भवास्तैर्यग्योनिकास्ते च ते पञ्चेन्द्रियसंसारसमापन्नजीवाश्च तेषां प्रज्ञापना तैर्यग्योनिकपञ्चेन्द्रियसंसारसमापन्नजीवप्रज्ञापना, तथा मनुशब्दो मनुष्यवाची यथा राजशब्दो राजन्याभिधायकः, मनोरपत्यानि मनुष्याः, 'मनोर्यङ्णौ यश्चेति' यः प्रत्ययः षकारश्चागमः, अयं च यः प्रत्ययो जातावितिं मनुष्यशब्दो जातिवाची राजन्यशब्दवत्, ते च ते पञ्चेन्द्रियसंसारसमापन्नजीवाश्च तेषां प्रज्ञापना मनुष्यपञ्चेन्द्रियसंसारसमापन्नजीवप्रज्ञापना, तथा दीव्यन्ति–स्वेच्छया क्रीडन्तीति देवाः भवनपत्यादयः ते च ते पञ्चेन्द्रियसंसारसमापन्नजीवाश्च तेषां प्रज्ञापना देवपञ्चेन्द्रियसंसारसमापन्नजीवप्रज्ञापना ॥ तत्र नैरयिकप्रतिपादनार्थं प्रश्ननिर्वचनसूत्रे आह—

से किं तं नेरइया ?, नेरइया सत्तविहा पन्नत्ता, तं०—रयणप्पभापुढविनेरइया १ सक्करप्पभापुढविनेरइया २ वालुयप्पभापुढविनेरइया ३ पंकप्पभापुढविनेरइया ४ धूमप्पभापुढविनेरइया ५ तमप्पभापुढविनेरइया ६ तमतमप्पभापुढविनेरइया ७, ते समासओ दुविहा पन्नत्ता, तं०–पज्जत्तगा य अपज्जत्तगा य, से त्तं नेरइया ॥ (सू० ३१)

प्र. ८

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र पञ्चइन्द्रिय-जीवस्य प्रज्ञापना मध्ये नैरयिक-जीवस्य प्रज्ञापना आरभ्यते

प्रत सूत्रांक [३१]

दीप अनुक्रम [१५५]

सप्तविधत्वं नैरयिकाणां पृथिवीभेदेन अन्यथा प्रभूतभेदत्वमपि घटते, ततः पृथिवीभेदत एव सप्तविधत्वं तद्यथेत्यादिनोपदर्शयति–रत्नानि–वज्रवैडूर्यादीनि, प्रभाशब्दोऽत्र सर्वत्रापि स्वभाववाची रत्नानि प्रभा–स्वरूपं यस्याः सा रत्नप्रभा–रत्नबहुला रत्नमयीति भावार्थः, सा चासौ पृथिवी च २ तस्यां नैरयिका रत्नप्रभापृथिवीनैरयिकाः, एवं 'सक्करप्पहापुढविनेरइया' इत्यादि भावनीयम्, उपसंहारमाह–'सेत्तं नेरइया' ॥ अधुनोद्देशक्रमप्रामाण्यानुसरणतस्तिर्यक्पञ्चेन्द्रियान् प्रतिपिपादयिषुराह—

से किं तं पंचिंदियतिरिक्खजोणिया ?, पंचिंदियतिरिक्खजोणिया तिविहा पन्नत्ता, तं०–१ जलयरपंचिंदियतिरिक्खजोणिया य १ थलयरपंचिंदियतिरिक्खजोणिया य २ खहयरपंचिंदियतिरिक्खजोणिया य ३ । (सू० ३२)

अथ के ते पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकाः ?, सूरिराह–पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकास्त्रिविधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथेत्यादि, 'जलयरे–' त्यादि, जले चरन्ति–पर्यटन्तीति जलचराः, 'आधारादिति' टप्रत्ययः, ते च ते पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकाश्च जलचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकाः, स्थले चरन्तीति स्थलचराः, खे–आकाशे चरन्तीति खचराः, प्राकृतत्वादार्षत्वाच्च 'खहचरा' इति सूत्रे पाठः, तत उभयत्रापि पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकशब्देन सह विशेषणसमासः ।

से किं तं जलयरपंचिंदियतिरिक्खजोणिया ?, जलयरपंचिंदियतिरिक्खजोणिया पंचविहा पन्नत्ता, तं०—१ मच्छा २ कच्छभा ३ गाहा ४ मगरा ५ सुसुमारा ॥ से किं तं मच्छा ?, मच्छा अणेगविहा पन्नत्ता, तं०—सण्हमच्छा खवल्लमच्छा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र पञ्चइन्द्रिय-जीवस्य प्रज्ञापना मध्ये तिर्यञ्चयोनिक-जीवस्य प्रज्ञापना आरभ्यते

जुंगमच्छा विज्झडियमच्छा हलिमच्छा मगरिमच्छा रोहियमच्छा हलीसागरा गागरा वडा वडगरा गब्भया उसगारा तिमितिमिंगिला णक्का तंदुलमच्छा कणिक्कामच्छा सालिसत्थियामच्छा लंभणमच्छा पडागा पडागाइपडागा जे यावन्ने तहप्पगारा, सेत्तं मच्छा ॥ से किं तं कच्छभा ?, कच्छभा दुविहा पन्नत्ता, तं०—अट्ठिकच्छभा य मंसकच्छभा य, से त्तं कच्छभा ॥ से किं तं गाहा ?, गाहा पंचविहा पन्नत्ता, तं०—१ दिली २ वेढगा ३ मुद्धया ४ पुलया ५ सीमागारा, से त्तं गाहा ॥ से किं तं मगरा ?, मगरा दुविहा पन्नत्ता, तं—१ सोंडमगरा य २ मट्ठमगरा य, से त्तं मगरा ॥ से किं तं सुसुमारा ?, सुसुमारा एगागारा पन्नत्ता, से त्तं सुसुमारा । जे यावन्ने तहप्पगारा । ते समासओ दुविहा प० तं०–संमुच्छिमा य गब्भवक्कंतिया य, तत्थ णं जे ते संमुच्छिमा ते सव्वे नपुंसगा, तत्थ णं जे ते गब्भवक्कंतिया ते तिविहा प०, तं०–इत्थी पुरिसा नपुंसगा । एएसिणं एवमाइयाणं जलयरपंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं अद्धतेरसजाइकुलकोडिजोणिप्पमुहसयसहस्सा भवन्तीति मक्खायं । सेत्तं जलयरपंचिंदियतिरिक्खजोणिया ॥ (सू० ३३)

अथ के ते जलचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकाः ?, सूरिराह–जलचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकाः पञ्चविधाः प्रज्ञप्ताः, तदेव पञ्चविधत्वं तद्यथेत्यादिनोपदर्शयति १ मत्स्याः २ कच्छपाः, सूत्रे पकारस्य भकारः प्राकृतत्वात् ३ ग्राहा ४ मकराः ५ शिशुमाराः, प्राकृतत्वात्सूत्रे 'सुसुमारा' इति पाठः । मत्स्यादीनां च विशेषा लोकतो वेदितव्याः, नवरमस्थिकच्छपा मांसकच्छपा इति–ये अस्थिबहुलाः कच्छपास्ते अस्थिकच्छपाः ये मांसबहुलास्ते मांसकच्छपाः ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

'ते समासओ' इत्यादि, ते जलचरपञ्चेन्द्रियतैर्यग्योनिकाः समासतः–संक्षेपेण द्विविधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–संमूर्च्छिमाश्च गर्भव्युत्क्रान्तिकाश्च, "मूर्च्छा मोहसमुच्छ्राययोः" अस्मात् संपूर्वात् संमूर्च्छनं संमूर्च्छः, "अकर्तरि" इति भावे घञ्प्रत्ययः, गर्भोपपातव्यतिरेकेण एवमेव प्राणिनामुत्पाद इति भावः, तेन निर्वृत्ताः संमूर्च्छिमाः "भावादिम" इति इमप्रत्ययः । गर्भे व्युत्क्रान्तिः–उत्पत्तिर्येषां ते, व्युत्क्रान्तिशब्दोऽत्रोत्पत्तिवाची, तथा पूर्वाचार्यप्रसिद्धेः, यदिवा 'गर्भात्' गर्भावासाद् व्युत्क्रान्तिः–निष्क्रमणं येषां ते गर्भव्युत्क्रान्तिकाः "शेषाद् वा" इति कच्समासान्तः। चशब्दौ प्रत्येकं स्वगतानेकभेदसूचकौ । तत्र ये ते संमूर्च्छिमास्ते सर्वे नपुंसकाः, संमूर्च्छिमभावस्य नपुंसकत्वाविनाभावित्वात् । ये तु गर्भव्युत्क्रान्तिकास्ते त्रिविधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–स्त्रियः पुरुषा नपुंसकाः । एतेषां चोभयेषामपि शरीरावगाहनादिषु द्वारेषु यच्चिन्तनं यच्च गर्भव्युत्क्रान्तिकानां स्त्रीपुंसनपुंसकानां परस्परमल्पबहुत्वचिन्तनं तज्जीवाभिगमटीकायां कृतमिति ततोऽवधार्यम् । 'एएसिणं' इत्यादि, एतेषामेवमादिकानामुपदर्शितप्रकारादीनां जलचरपञ्चेन्द्रियतैर्यग्योनिकानां पर्याप्तापर्याप्तानां सर्वसंख्ययाऽर्धत्रयोदशजातिकुलकोटीनां योनिप्रमुखानि–योनिप्रवहाणि शतसहस्राणि भवन्तीत्याख्यातं भगवद्भिस्तीर्थकरैः । उपसंहारमाह–'सेत्तं' इत्यादि, तदेवमुक्ता जलचरपञ्चेन्द्रियतैर्यग्योनिकाः ॥ सम्प्रति स्थलचरपञ्चेन्द्रियतैर्यग्योनिकानभिधित्सुराह—

से किं तं थलयरपंचिंदियतिरिक्खजोणिया ?, थलयरपंचिंदियतिरिक्खजोणिया दुविहा प०, तं०—चउप्पयथलयरपंचिं-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३४]

दीप अनुक्रम [१६१]

दियतिरिक्खजोणिया य परिसप्पथलयरपंचिंदियतिरिक्खजोणिया य । से किं तं चउप्पयथलयरपंचिंदियतिरिक्खजोणिया ?, चउप्पयथलयरपंचिंदियतिरिक्खजोणिया चउव्विहा प०, तं०–एगखुरा बिखुरा गंडीपदा सणप्फदा । से किं तं एगखुरा ?, एगखुरा अणेगविहा प०, तं०—अस्सा अस्सतरा घोडगा गद्दभा गोरक्खरा कंदलगा सिरिकंदलगा आवत्तगा जे यावन्ने तहप्पगारा, सेत्तं एगखुरा । से किं तं दुखुरा ?, दुखुरा अणेगविहा प०, तं०–उट्टा गोणा गवया रोज्झा पसुया महिसा मिया संबरा वराहा अया एलगरुरुसरभचमरकुरंगगोकन्नमादि जे यावन्ने तहप्पगारा, सेत्तं दुखुरा । से किं तं गंडीपया ?, गंडीपया अणेगविहा पं०, तं०–हत्थी हत्थीपूयणया मंकुणहत्थी खगा (ग्गा) गंडा जे यावन्ने०, सेत्तं गंडीपया । से किं तं सणप्फया ?, अणेगविहा पं०, तं०–सीहा वग्घा दीविया अच्छा मरच्छा परस्सरा सियाला बिडाला सुणगा कोलसुणगा (ग्रं–५००) कोकंतिया ससगा चित्तगा चिल्लगा जे यावन्ने०, सेत्तं सणप्फया । ते समासओ दुविहा पं०, तं०–संमुच्छिमा य गब्भवक्कन्तिया य, तत्थ णं जे ते संमुच्छिमा ते सव्वे नपुंसगा, तत्थ णं जे ते गब्भवक्कंतिया ते तिविहा पं०, तं०— इत्थी पुरिसगा नपुंसगा । एएसिणं एवमाइयाणं थलयरपंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं पज्जत्तापज्जताणं दस जाइकुलकोडि-जोणिप्पमुहसयसहस्सा भवन्तीतिमक्खायं । सेत्तं चउप्पयथलयरपंचिंदियतिरिक्खजोणिया । (सू० ३४)

चत्वारि पदानि येषां ते चतुष्पदाः–अश्वादयः ते च ते स्थलचरपञ्चेन्द्रियतैर्यग्योनिकाश्च चतुष्पदस्थलचरपञ्चेन्द्रिय-तैर्यग्योनिकाः, उरसा भुजाभ्यां वा परिसर्प्पन्तीति परिसर्प्पाः–अहिनकुलादयः, ततः पूर्ववत् स्थलचरपञ्चेन्द्रियतै-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

र्येगग्योनिकपदेन सह विशेषणसमासः, चशब्दौ प्रत्येकं खगतानेकभेदसूचकौ, तदेवानेकभेदत्वं क्रमेण प्रतिपिपादयिषुरिदमाह–'से किं तं' इत्यादि, अथ के ते चतुष्पदस्थलचरपञ्चेन्द्रियतैर्यग्योनिकाः ?, सूरिराह–चतुष्पदस्थलचरपञ्चेन्द्रियतैर्यग्योनिकाश्चतुर्विधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–'एगखुरा' इत्यादि, तत्र प्रतिपदमेकः खुरः–शफो येषां ते एकखुराः–अश्वादयः, द्वौ द्वौ खुरौ प्रतिपदं येषां ते द्विखुराः–उष्ट्रादयः, तथा चैकैकस्मिन् पदे द्वौ द्वौ शफौ दृश्येते, गण्डीव–सुवर्णकाराधिकरणीस्थानमिव पदं येषां ते गण्डीपदाः–हस्त्यादयः, तथा सनखानि–दीर्घनखपरिकलितानि पदानि येषां ते सनखपदाः–श्वादयः, प्राकृतत्वाच्च सणप्फया इति सूत्रे निर्देशः । अधुना एतानेव एकखुरादीन् भेदतः क्रमेण प्रतिपिपादयिषुरिदमाह–'से किं तं' इत्यादि, सुगमम्, नवरं ये केचिज्जीवभेदाः प्रतीतास्ते लोकतो वेदितव्याः । 'ते समासओ दुविहा पन्नत्ता' इत्यादि सूत्रं प्राग्वद् भावनीयम्, नवरमत्र जातिकुलकोटीनां योनिप्रमुखानि शतसहस्राणि दश भवन्तीति वेदितव्यम् । अत्रापि च संमूर्च्छिमानां गर्भव्युत्क्रान्तिकानां च प्रत्येकं यत् शरीरादिद्वारेषु चिन्तनं यच्च स्त्रीपुंनपुंसकानां परस्परमल्पबहुत्वं तज्जीवाभिगमटीकातो वेदितव्यम्, 'सेत्तं चउप्पया' इत्यादि ॥

से किं तं परिसप्पथलयरपंचिंदियतिरिक्खजोणिया ?, परिसप्पथलयरपंचिंदियतिरिक्खजोणिया दुविहा पं०, तं०—उरपरिसप्पथलयरपंचिंदियतिरिक्खजोणिया य भुयपरिसप्पथलयरपंचिंदियतिरिक्खजोणिया य । से किं तं उरपरिसप्पथलयरपंचिंदियतिरिक्खजोणिया ?, उरपरिसप्पथलयरपंचिंदियतिरिक्खजोणिया चउविहा पं०, तं०—अही अयगरा आसालिया

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३५]

दीप अनुक्रम [१६२]

महोरगा ॥ से किं तं अही ?, अही दुविहा पं०, तं०–दव्वीकरा य मउलिणो य, से किं तं दव्वीकरा ?, दव्वीकरा अणेगविहा पं०, तं०–आसीविसा दिट्ठीविसा उग्गविसा भोगविसा तयाविसा लालाविसा उस्सासविसा नीसासविसा कण्हसप्पा सेदसप्पा काओदरा दज्झपुप्फा कोलाहा मेलिमिंदा सेसिंदा जे यावन्ने तहप्पगारा, सेत्तं दव्वीकरा । से किं तं मउलिणो ?, मउलिणो अणेगविहा पं०, तं०–दिव्वागा गोणसा कसाहीया वइउला चित्तलिणो मंडलिणो मालिणो अही अहिसलागा वासपडागा जे यावन्ने तहप्पगारा, सेत्तं मउलिणो, सेत्तं अही । से किं तं अयगरा ?, अयगरा एगागारा प०, सेत्तं अयगरा । से किं तं आसालिया ?, कहि णं भंते! आसालिया संमुच्छति ?, गोयमा ! अंतो मणुस्सखित्ते अड्ढाइज्जेसु दीवेसु निव्वाघाएणं पन्नरससु कम्मभूमिसु वाघायं पडुच्च पंचसु महाविदेहेसु चक्कवट्टिखंधावारेसु वासुदेवखंधावारेसु बलदेवखंधावारेसु मंडलियखंधावारेसु महामंडलियखंधावारेसु गामनिवेसेसु णगरनिवेसेसु णिगमनिवेसेसु खेडनिवेसेसु कब्बडनिवेसेसु मडंबनिवेसेसु दोणमुहनिवेसेसु पट्टणनिवेसेसु आगरनिवेसेसु आसमनिवेसेसु संवाहनिवेसेसु रायहाणीनिवेसेसु एएसिणं चेव विणासेसु एत्थ णं आसालिया संमुच्छति । जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागमित्ताए ओगाहणाए उक्कोसेणं बारसजोयणाइं तयणुरूवं च णं विक्खंभबाहल्लेणं भूमीं दालित्ता णं समुट्ठेइ, असन्नी मिच्छदिट्ठी अण्णाणी अंतोमुहुत्तऽद्धाउया चेव कालं करेइ, सेत्तं आसालिया । से किं तं महोरगा ?, महोरगा अणेगविहा पं०, तं०—अत्थेगइआ अंगुलंपि अंगुलपुहुत्तियावि वियत्थिंपि वियत्थिपुहुत्तियावि रयणिंपि रयणिपुहुत्तियावि कुच्छिंपि कुच्छिपुहुत्तियावि धणुंपि धणुपुहुत्तयावि गाउयंपि गाउयपुहुत्तयावि जोयणंपि जोयणपुहुत्तयावि जोयणसयंपि जोयणसयपुहुत्तयावि जोयणसहस्संपि, ते णं थले जाता जलेऽवि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३५]

दीप अनुक्रम [१६२]

चरंति थलेऽवि चरन्ति, ते णत्थि इहं, बाहिरएसु दीवेसु समुद्दएसु हवन्ति, जे यावन्ने तहप्पगारा, सेत्तं महोरगा । ते समासओ दुविहा पं० तं०–संमुच्छिमा य गब्भवक्कंतिया य, तत्थ णं जे ते संमुच्छिमा ते सव्वे नपुंसगा, तत्थ णं जे ते गब्भवक्कंतिया ते णं तिविहा पं०, तं०—इत्थी पुरिसगा नपुंसगा । एएसिणं एवमाइयाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं उरपरिसप्पाणं दस जाइकुलकोडिजोणिप्पमुहसयसहस्सा भवन्तीतिमक्खायं, सेत्तं उरपरिसप्पा । से किं तं भुयपरिसप्पा ?, भुयपरिसप्पा अणेगविहा प० तं०–नउला सेहा सरडा सल्ला सरंठा सारा खोरा घरोइला विस्संभरा मूसा मंगुसा पयलाइया छीरविरालिया जहा चउप्पाइया, जे यावन्ने तहप्पगारा, ते समासओ दुविहा प० तं०–संमुच्छिमा य गब्भवक्कंतिया य, तत्थ णं जे ते संमुच्छिमा ते सव्वे नपुंसगा, तत्थ णं जे ते गब्भवक्कंतिया ते णं तिविहा पं० तं०—इत्थी पुरिसा नपुंसगा । एएसिणं एवमाइयाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं भुयपरिसप्पाणं नव जाइकुलकोडिजोणिपमुहसयसहस्सा भवन्तीति मक्खायं, सेत्तं भुयपरिसप्पथलयरपंचिंदियतिरिक्खजोणिया, सेत्तं परिसप्पथलयरपंचिंदियतिरिक्खजोणिया । (सू० ३५)

अथ के ते परिसर्प्पस्थलचरपञ्चेन्द्रियतैर्यग्योनिकाः ?, सूरिराह—परिसर्पस्थलचरपञ्चेन्द्रियतैर्यग्योनिका द्विविधाः–द्विप्रकाराः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–'उरपरिसप्प' इत्यादि, उरसा परिसर्पन्तीति उरःपरिसर्पाः ते च ते स्थलचरपञ्चेन्द्रियतैर्यग्योनिकाः उरःपरिसर्पस्थलचरपञ्चेन्द्रियतैर्यग्योनिकाः, भुजाभ्यां परिसर्पन्तीति भुजपरिसर्पाः ते च ते स्थलचरपञ्चेन्द्रियतैर्यग्योनिकाश्च भुजपरिसर्पस्थलचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकाः, चशब्दौ प्रत्येकं स्वगतानेकभेदसूचकौ, तत्रोरःपरिसर्पस्थल-

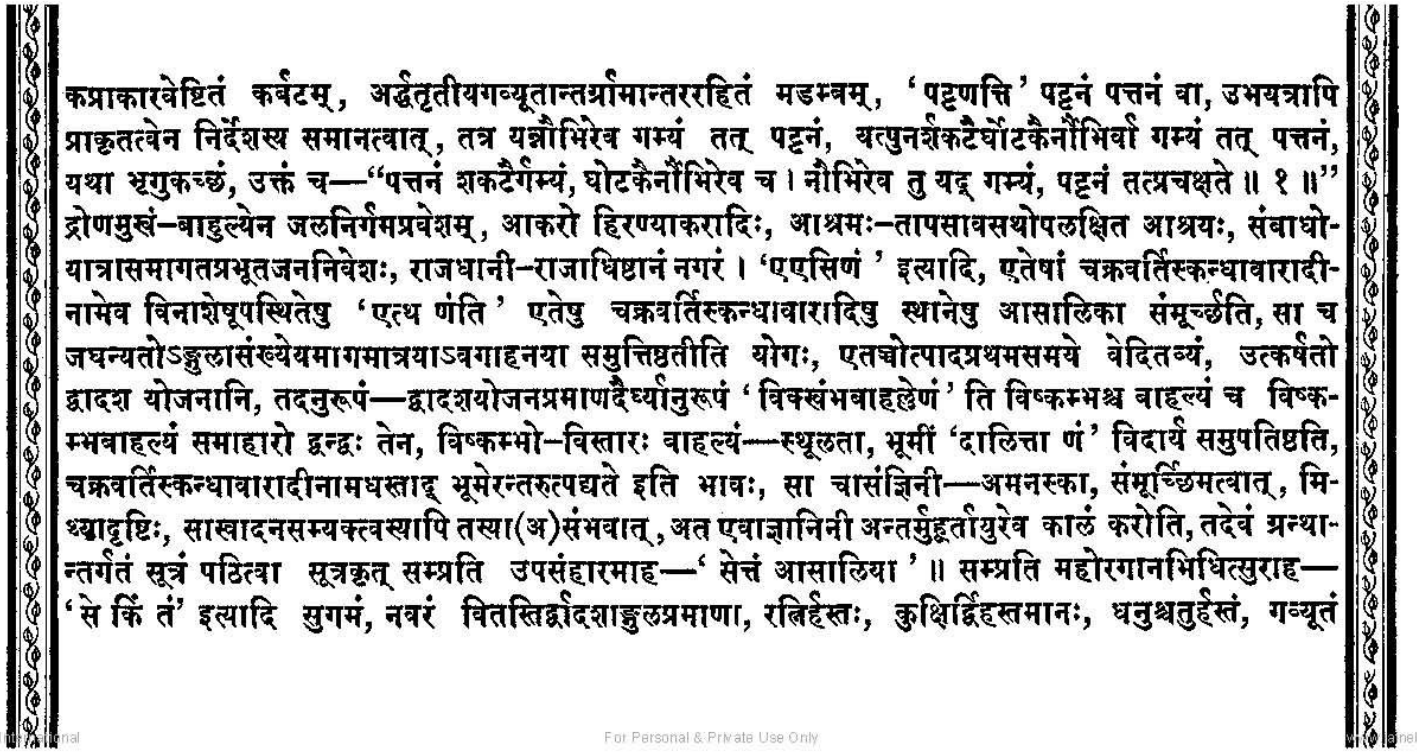
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चरपञ्चेन्द्रियतैर्यग्योनिकभेदानुपदिदर्शयिषुरिदमाह–'से किं तं उरपरिसप्प' इत्यादि, अथ के ते उरःपरिसर्पस्थलचरपञ्चेन्द्रियतैर्यग्योनिकाः?, सूरिराह–उरःपरिसर्पस्थलचरपञ्चेन्द्रियतैर्यग्योनिकाश्चतुर्विधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–अहयोऽजगरा आसालिगा महोरगाः ॥ एतेषामेव भेदानामवगमाय प्रश्ननिर्वचनसूत्राण्याह—'से किं तं' इत्यादि, अथ के तेऽहयः ?, गुरुराह–अहयो द्विविधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–दर्वीकराश्च मुकुलिनश्च, तत्र दर्वीव दर्वी–फणा तत्करणशीला दर्वीकराः, मुकुलं–फणाविरहयोग्या शरीरावयवविशेषाकृतिः सा विद्यते येषां ते मुकुलिनः, फणाकरणशक्तिविकला इत्यर्थः, अत्रापि चशब्दौ स्वगतानेकभेदसूचकौ । तत्र दर्वीकरभेदानभिधित्सुराह—'से किं तं' इत्यादि, आश्यो—दंष्ट्राः तासु विषं येषां ते आशीविषाः, उक्तं च—"आसी दाढा तग्गयविसा य आसीविसा मुणेयव्वा" इति, दृष्टौ विषं येषां ते दृष्टिविषाः उग्रं विषं येषां ते उग्रविषाः भोगः—शरीरं तत्र विषं येषां ते भोगविषाः त्वचि विषं येषां ते त्वग्विषाः प्राकृतत्वाच्च 'तयाविसा' इति पाठः लाला—मुखात् स्रावः तत्र विषं येषां ते लालाविषाः निःश्वासे विषं येषां ते निःश्वासविषाः कृष्णसर्पादयो जातिभेदा लोकतः प्रतिपत्तव्याः, उपसंहारमाह–'सेत्तं दव्वीकरा'। मुकुलिनः प्रतिपिपादयिषुरिदमाह—'से किं तं' इत्यादि, एतेऽपि लोकतोऽवसेयाः । अजगराणामवान्तरजातिभेदा न विद्यन्ते तत उक्तम्–एकाकारा अजगराः प्रज्ञप्ताः । आसालिगामभिधित्सुराह—'से किं तं आसालिया' अथ का सा आसालिगा ?, एवं शिष्येण प्रश्ने कृते सति भगवान् आर्यश्यामो यदेव ग्रन्थान्तरेषु आसालिगाप्रतिपादकं गौ-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तमप्रश्नभगवन्निर्वचनरूपं सूत्रमस्ति तदेवागमबहुमानतः पठति–'कहि णं भंते !' इत्यादि, क्व 'णं' इति वाक्यालङ्कारे भदन्त !—परमकल्याणयोगिन् ! आसालिगा संमूर्च्छति ?, एषा हि गर्भजा न भवति किन्तु संमूर्च्छिमैव तत उक्तं संमूर्च्छति, भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि, गौतम ! अन्तः–मध्ये मनुष्यक्षेत्रे–मनुष्यक्षेत्रस्य न बहिः, एतावता मनुष्यक्षेत्राद् बहिरस्या उत्पादो न भवतीति प्रतिपादितं, तत्रापि मनुष्यक्षेत्रे सर्वत्र न भवति किन्त्वर्द्धतृतीयेषु द्वीपेषु अर्द्धं तृतीयं येषां तेऽर्द्धतृतीयाः, अवयवेन विग्रहः, समुदायः समासार्थः, तेषु, एतावता लवणसमुद्रे कालोदसमुद्रे वा न भवतीत्यावेदितमित्यर्थः 'निव्वाघाएणं' इत्यादि, निर्व्याघातेन–व्याघातस्याभावो निर्व्याघातं तेन यदि पञ्चसु भरतेषु पञ्चसु ऐरवतेषु सुषमसुषमादिरूपो दुष्षमदुष्षमादिरूपश्च कालो व्याघातहेतुत्वाद् व्याघातो न भवति तदा पञ्चदशसु कर्मभूमिषु संमूर्च्छति, व्याघातं प्रतीत्य, किमुक्तं भवति ?–यदि पञ्चसु भरतेषु पञ्चस्वैरवतेषु यथोक्तरूपो व्याघातो भवति ततः पञ्चसु महाविदेहेषु संमूर्च्छति, एतावता त्रिंशत्यप्यकर्मभूमिषु नोपजायते इति प्रतिपादितम्, पञ्चदशसु कर्मभूमिषु पञ्चसु वा महाविदेहेषु न सर्वत्र संमूर्च्छति, किन्तु चक्रवर्तिस्कन्धावारेषु, वाशब्दः सर्वत्रापि विकल्पार्थो द्रष्टव्यः, बलदेवस्कन्धावारेषु वासुदेवस्कन्धावारेषु, माण्डलिकः–सामान्यराजाऽल्पर्द्धिकः, महामाण्डलिकः स एवानेकदेशाधिपतिः तत्स्कन्धावारेषु, 'गामनिवेसेसु' इत्यादि, ग्रसति बुद्ध्यादीन् गुणानिति ग्रामः, यदिवा गम्यः शास्त्रप्रसिद्धानामष्टादशकराणामिति ग्रामः, निगमः–प्रभूततरवणिग्वर्गावासः, पांसुप्राकारनिबद्धं खेटं, क्षुल्ल-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



कप्राकारवेष्टितं कर्वटम्, अर्द्धतृतीयगव्यूतान्तर्ग्रामान्तररहितं मडम्बम्, 'पट्टणत्ति' पट्टनं पत्तनं वा, उभयत्रापि प्राकृतत्वेन निर्देशस्य समानत्वात्, तत्र यन्नौभिरेव गम्यं तत् पट्टनं, यत्पुनर्शकटैर्घोटकैर्नौभिर्वा गम्यं तत् पत्तनं, यथा भृगुकच्छं, उक्तं च—"पत्तनं शकटैर्गम्यं, घोटकैर्नौभिरेव च। नौभिरेव तु यद् गम्यं, पट्टनं तत्प्रचक्षते ॥ १ ॥" द्रोणमुखं–बाहुल्येन जलनिर्गमप्रवेशम्, आकरो हिरण्याकरादिः, आश्रमः–तापसावसथोपलक्षित आश्रयः, संबाधो-यात्रासमागतप्रभूतजननिवेशः, राजधानी–राजाधिष्ठानं नगरं। 'एएसिणं' इत्यादि, एतेषां चक्रवर्तिस्कन्धावारादी-नामेव विनाशेषूपस्थितेषु 'एत्थ णंति' एतेषु चक्रवर्तिस्कन्धावारादिषु स्थानेषु आसालिका संमूर्च्छति, सा च जघन्यतोऽङ्गुलासंख्येयभागमात्रयाऽवगाहनया समुत्तिष्ठतीति योगः, एतच्चोत्पादप्रथमसमये वेदितव्यं, उत्कर्षतो द्वादश योजनानि, तदनुरूपं—द्वादशयोजनप्रमाणदैर्घ्यानुरूपं 'विक्खंभबाहल्लेणं' ति विष्कम्भश्च बाहल्यं च विष्क-म्भबाहल्यं समाहारो द्वन्द्वः तेन, विष्कम्भो–विस्तारः बाहल्यं—स्थूलता, भूमीं 'दालित्ता णं' विदार्य समुपतिष्ठति, चक्रवर्तिस्कन्धावारादीनामधस्ताद् भूमेरन्तरुत्पद्यते इति भावः, सा चासंज्ञिनी—अमनस्का, संमूर्च्छिमत्वात्, मि-थ्यादृष्टिः, सास्वादनसम्यक्त्वस्यापि तस्या(अ)संभवात्, अत एवाज्ञानिनी अन्तर्मुहूर्तायुरेव कालं करोति, तदेवं ग्रन्था-न्तर्गतं सूत्रं पठित्वा सूत्रकृत् सम्प्रति उपसंहारमाह—'सेत्तं आसालिया'॥ सम्प्रति महोरगानभिधित्सुराह—'से किं तं' इत्यादि सुगमं, नवरं वितस्तिर्द्वादशाङ्गुलप्रमाणा, रत्निर्हस्तः, कुक्षिर्द्विहस्तमानः, धनुश्चतुर्हस्तं, गव्यूतं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३५]

दीप अनुक्रम [१६२]

द्विधनुःसहस्रप्रमाणं, चत्वारि गव्यूतानि योजनं, इदं च वितस्त्यादि उच्छ्रयाङ्गुलापेक्षया द्रष्टव्यं, शरीरप्रमाणस्य परिचिन्त्यमानत्वात्, तथा अस्तीति निपातोऽत्र बहुत्वाभिधायी प्रतिपदं च संबध्यते, ततोऽयमर्थः—सन्त्येके केचन महोरगा अङ्गुलमपि शरीरावगाहनया भवन्ति, तथा सन्त्येके केचन येऽङ्गुलपृथक्त्विका अपि, अङ्गुलपृथक्त्वं विद्यते येषां ते अङ्गुलपृथक्त्विकाः, "अतोऽनेकस्वरात्" इति इकप्रत्ययः, तेऽपि शरीरावगाहनया भवन्ति, अङ्गुलपृथक्त्वमानशरीरावगाहना अपि भवन्तीति भावः, एवं शेषसूत्राण्यपि भावनीयानि। 'ते णं' इत्यादि, ते अनन्तरोदितस्वरूपा महोरगाः स्थलचरविशेषत्वात् स्थले जायन्ते, स्थले च जाताः सन्तो जलेऽपि स्थल इव चरन्ति स्थलेऽपि चरन्ति, तथाभवस्वाभाव्यात्, यद्येवं ते कस्मादिह न दृश्यन्ते इत्याशङ्कायामाह—'ते नत्थि इहं' इत्यादि, 'ते' यथोक्तस्वरूपा महोरगा 'इह' मानुषे क्षेत्रे 'नत्थित्ति' न सन्ति, किन्तु बाह्येषु द्वीपसमुद्रेषु भवन्ति, समुद्रेष्वपि च पर्वतदेवनगर्यादिषु स्थलेषूत्पद्यन्ते न जलेषु, स्थूलतरत्वात्, तत इह न दृश्यन्ते। 'जे यावन्ने तहप्पगारा' इति, येऽपि चान्ये अङ्गुलदशकादिशरीरावगाहनमानास्तथाप्रकाराः सन्ति तेऽपि महोरगा ज्ञातव्याः। उपसंहारमाह–'सेत्तं' इत्यादि, 'ते समासओ' इत्यादि प्राग्वद् भावनीयम्। एतेषामपि दश जातिकुलकोटीनां योनिप्रमुखाणि शतसहस्राणि। एतेषामपि च यत् शरीरादिषु द्वारेषु चिन्तनं यच्च स्त्रीपुंनपुंसकानामल्पबहुत्वं तज्जीवाभिगमटीकातो भावनीयम्। उरःपरिसर्पवक्तव्यतोपसंहारमाह–'से त्तं उरपरिसप्पा'। अधुना भुजपरिसर्पानभिधित्सुराह—सुगमं, नवरं ये भुज-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३५]

दीप अनुक्रम [१६२]

परिसर्पविशेषा अप्रतीतास्ते लोकतोऽवसेयाः । अमीषां च नव जातिकुलकोटीनां योनिप्रमुखानि शतसहस्राणि भवन्ति, यत्पुनः शरीरादिषु द्वारेषु चिन्तनं यच्च स्त्रीपुंनपुंसकानामल्पबहुत्वं तज्जीवाभिगमटीकातो वेदितव्यं 'सेत्तं' इत्यादि । सम्प्रति खचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकानभिधित्सुराह—

से किं तं खहयरपंचिंदियतिरिक्खजोणिया ?, खहयरपंचिंदियतिरिक्खजोणिया चउविहा पं०, तं०—चम्मपक्खी लोमपक्खी समुग्गपक्खी वियपक्खी, से किं तं चम्मपक्खी ?, चम्मपक्खी अणेगविहा प०, तं०–वग्गुली जलोया अडिल्ला भारंडपक्खी जीवंजीवा समुद्दवायसा कण्णत्तिया पक्खिविरालिया, जे यावन्ने तहप्पगारा, सेत्तं चम्मपक्खी । से किं तं लोमपक्खी ?, लोमपक्खी अणेगविहा प०, तं–ढंका कंका कुरला वायसा चक्कागा हंसा कलहंसा रायहंसा पायहंसा आडा सेडी बगा बलागा पारिप्पवा कोंचा सारसा मेसरा मसूरा मयूरा सत्तहत्था गहरा पोंडरिया कागा कामिंजुया वंजुलगा तित्तिरा वट्टगा लावगा कवोया कविंजला पारेवया चिडगा चासा कुक्कुडा सुगा बरहिणा मयणसलागा कोइला सेहा वरिल्लगमाइ, सेत्तं लोमपक्खी । से किं तं समुग्गपक्खी ?, समुग्गपक्खी एगागारा पन्नत्ता, ते णं नत्थि इहं, बाहिरएसु दीवसमुद्देसु भवन्ति, सेत्तं समुग्गपक्खी । से किं तं वियपक्खी ?, वियपक्खी एगागारा पन्नत्ता, ते णं नत्थि इहं, बाहिरएसु दीवसमुद्देसु भवन्ति, सेत्तं वियपक्खी । ते समासओ दुविहा प०, तं०–संमुच्छिमा य गब्भवक्कंतिया य, तत्थ णं जे ते संमुच्छिमा ते सव्वे नपुंसगा,तत्थ णं जे ते गब्भवक्कंतिया ते णं तिविहा प०, तं०–इत्थी पुरिसा नपुंसगा। एएसिणं एवमाइ-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

याणं खहयरपंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं बारस जाइकुलकोडिजोणिपमुहसयसहस्सा भवन्तीति मक्खायं। सत्तट्ठजाइकुलकोडिलक्ख नव अद्धतेरसाइं च । दस दस य होन्ति नवगा तह बारस चेव बोद्धव्वा ॥ १०७ ॥ सेत्तं खहयरपंचिंदियतिरिक्खजोणिया, सेत्तं पंचिंदियतिरिक्खजोणिया । (सू० ३५)

अथ के ते खचरपञ्चेन्द्रियतैर्यग्योनिकाः ?, सूरिराह–खचरपञ्चेन्द्रियतैर्यग्योनिकाश्चतुर्विधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—'चम्मपक्खी' इत्यादि, चर्मात्मकौ पक्षौ चर्मपक्षौ तौ विद्येते येषां ते चर्मपक्षिणः, लोमात्मकौ पक्षौ लोमपक्षौ तद्वन्तो लोमपक्षिणः, तथा गच्छतामपि समुद्गकवत् स्थितौ पक्षौ समुद्गकपक्षौ तद्वन्तः समुद्गकपक्षिणः, विततौ नित्यमनाकुञ्चितौ पक्षौ येषां (तौ) विततपक्षौ तद्वन्तो विततपक्षिणः। 'से किं तं' इत्यादि, अथ के ते चर्मपक्षिणः ?, चर्मपक्षिणोऽनेकविधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–वल्गुली इत्यादि, एते च भेदा लोकतोऽवसेयाः, 'जे यावन्ने तहप्पगारा' इति,येऽपि चान्ये तथाप्रकाराः–एवंरूपास्ते चर्मपक्षिणो द्रष्टव्याः, उपसंहारमाह–'सेत्तं चम्मपक्खी'। लोमपक्षिप्रतिपादनार्थमाह–'से किं तं' इत्यादि, एते च लोमपक्षिभेदा लोकतो वेदितव्याः।समुद्गकपक्षिप्रतिपादनार्थमाह–'से किं तं' इत्यादि पाठसिद्धं, एवं विततपक्षिसूत्रमपि। 'ते समासओ' इत्यादि प्रागवद् भावनीयं, एतेषां द्वादश जातिकुलकोटीनां योनिप्रमुखानि शतसहस्राणि।अमीषामपि शरीरादिषु द्वारेषु चिन्तनं स्त्रीपुंनपुंसकानामल्पबहुत्वं च जीवाभिगमटीकातः प्रतिपत्तव्यं, इह तु ग्रन्थगौरवभयान्न लिख्यते। अधुना विनेयजनानुग्रहाय द्वीन्द्रियप्रभृति-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३६] + गाथा दीप अनुक्रम [१६३--१६५]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति: जातिकुलकोटिशतसहस्रसंख्याप्रतिपादिका संग्रहिणीगाथामाह—अत्र द्वीन्द्रियेभ्य आरभ्य यथासंख्येन संख्यापदयोजना, सा चैवं–द्वीन्द्रियाणां सप्त जातिकुलकोटिलक्षाणि, त्रीन्द्रियाणामष्टौ, चतुरिन्द्रियाणां नव, जलचरपञ्चेन्द्रियाणामर्द्धत्रयोदशानि, चतुष्पदस्थलचरपञ्चेन्द्रियाणां दश, उरःपरिसर्पस्थलचरपञ्चेन्द्रियाणां दश, भुजपरिसर्पस्थलचरपञ्चेन्द्रियाणां नव, खचरपञ्चेन्द्रियाणां द्वादशेति । उपसंहारमाह–'सेत्तं' इत्यादि । तदेवमुक्ताः पञ्चेन्द्रियतैर्यग्योनिकाः । सम्प्रति मनुष्यानभिधित्सुराह— से किं तं मणुस्सा ?, मणुस्सा दुविहा पं०, तं०–संमुच्छिममणुस्सा य गब्भवक्कंतियमणुस्सा य, से किं तं संमुच्छिममणुस्सा ?, कहि णं भन्ते ! संमुच्छिममणुस्सा संमुच्छंति ?, गोयमा ! अंतो मणुस्सखित्ते पणयालीसाए जोयणसयसहस्सेसु अड्ढाइज्जेसु दीवसमुद्देसु पन्नरससु कम्मभूमीसु तीसाए अकम्मभूमीसु छपन्नाए अंतरदीवएसु गब्भवक्कंतियमणुस्साणं चेव उच्चारेसु वा पासवणेसु वा खेलेसु वा सिंघाणएसु वा वंतेसु वा पित्तेसु वा पूएसु वा सोणिएसु वा सुक्केसु वा सुक्कपुग्गलपरिसाडेसु वा विगयजीवकलेवरेसु वा थीपुरिससंजोएसु वा णगरनिद्धमणेसु वा सव्वेसु चेव असुइट्ठाणेसु, एत्थ णं संमुच्छिममणुस्सा संमुच्छंति, अंगुलस्स असंखेज्जइभागमेत्ताए ओगाहणाए असन्नी मिच्छदिट्ठी अन्नाणी सव्वाहिं पज्जत्तीहिं अपज्जत्तगा अंतोमुहुत्ताउया चेव कालं करेंति। से त्तं संमुच्छिममणुस्सा ॥ से किं तं गब्भवक्कंतियमणुस्सा ?, गब्भवक्कंतियमणुस्सा तिविहा प०, तं०–कम्मभूमगा अकम्मभूमगा अन्तरदीवगा, से किं तं अन्तरदीवगा ?, अंतरदीवगा अट्ठावीसविहा प०,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	अत्र पञ्चइन्द्रिय-जीवस्य प्रज्ञापना मध्ये मनुष्य-जीवस्य प्रज्ञापना आरभ्यते

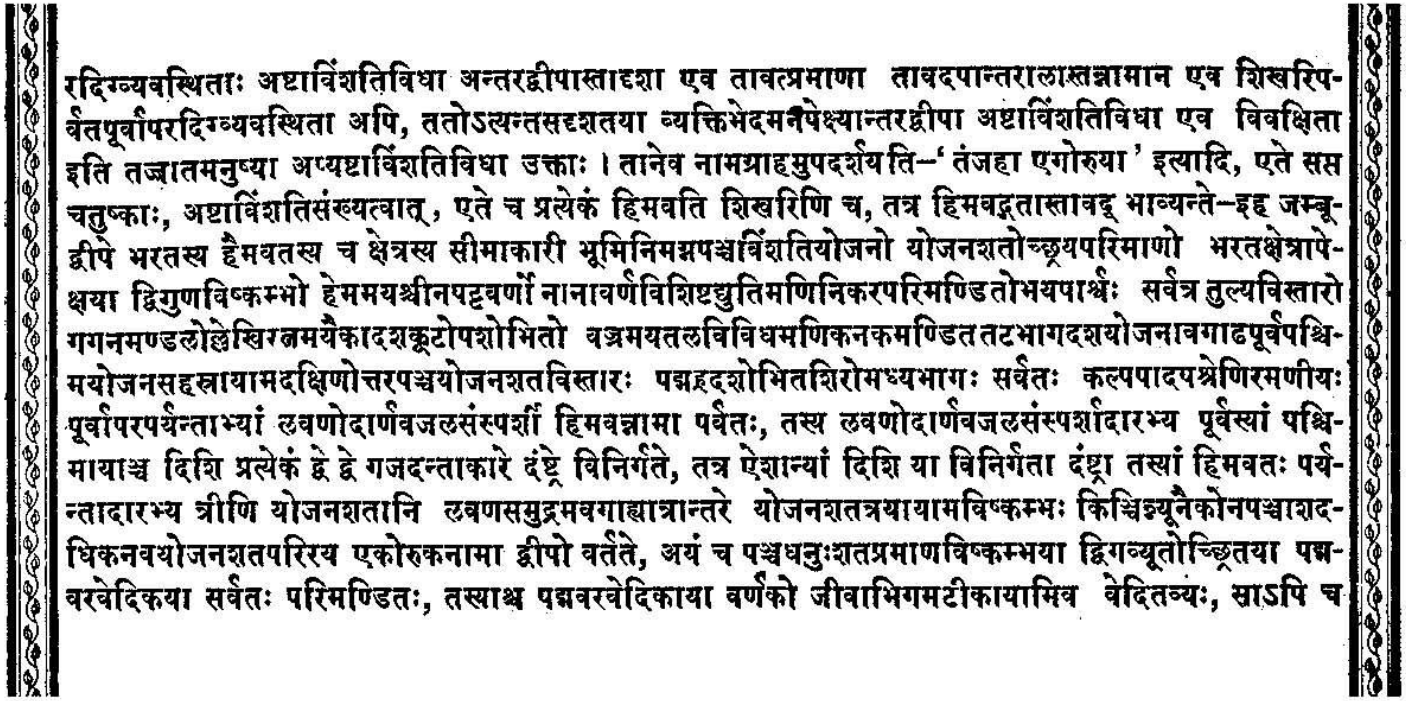
तं–एगोरुया आभासिया वेसाणिया णंगोलिया हयकन्ना गयकन्ना गोकन्ना संकुलिकन्ना आयंसमुहा मेंढमुहा अयोमुहा गोमुहा आसमुहा हत्थिमुहा सीहमुहा वग्घमुहा आसकन्ना हरिकन्ना अकन्ना कण्णपाउरणा उक्कामुहा मेहमुहा विज्जुमुहा विज्जुदंता घणदंता लट्ठदंता गूढदंता सुद्धदंता । सेत्तं अन्तरदीवगा । से किं तं अकम्मभूमगा ?, अकम्मभूमगा तीसविहा प०, तं०– पंचहिं हेमवएहिं पंचहिं हिरण्णवएहिं पंचहिं हरिवासेहिं पंचहिं रम्मगवासेहिं पंचहिं देवकुरूहिं पंचहिं उत्तरकुरूहिं । सेत्तं अकम्मभूमगा ॥

अत्रापि संमूर्च्छिममनुष्यविषये प्रवचनबहुमानतः शिष्याणामपि च साक्षाद् भगवतेदमुक्तमिति बहुमानोत्पादनार्थमङ्गान्तर्गतमालापकं पठति–'कहि णं भन्ते' इत्यादि, सुगमं, नवरं 'सवेसु चेव असुइट्ठाणेसुत्ति' अन्यान्यपि यानि कानिचिद् मनुष्यसंसर्गवशादशुचिभूतानि स्थानानि तेषु सर्वेष्विति । उक्ताः संमूर्च्छिममनुष्याः, अधुना गर्भव्युत्क्रान्तिकमनुष्यप्रतिपादनार्थमाह—'कम्मभूमगा' इति कर्म–कृषिवाणिज्यादि मोक्षानुष्ठानं वा कर्मप्रधाना भूमिर्येषां ते कर्मभूमाः आर्षत्वात् समासान्तोऽप्रत्ययः कर्मभूमा एव कर्मभूमकाः, एवमकर्मा–यथोक्तकर्मविकला भूमिर्येषां ते अकर्मभूमाः ते एव अकर्मभूमकाः, अन्तरशब्दो मध्यवाची, अन्तरे–लवणसमुद्रस्य मध्ये द्वीपा अन्तरद्वीपाः तद्गता अन्तरद्वीपगाः, "अस्ति पश्चानुपूर्वी" इ(व्यपी)ति न्यायख्यापनार्थं प्रथमतोऽन्तरद्वीपगान् प्रतिपादयति–'से किं तं' इत्यादि सुगमं, नवरमष्टाविंशतिविधा इति यादृशा एव यावत्प्रमाणा यावदपान्तराला यन्नामानो हिमवत्पर्वतपूर्वापर-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३७]

दीप अनुक्रम [१६६]



रदिग्व्यवस्थिताः अष्टाविंशतिविधा अन्तरद्वीपास्तादृशा एव तावत्प्रमाणा तावदपान्तरालास्तन्नामान एव शिखरिपर्वतपूर्वापरदिग्व्यवस्थिता अपि, ततोऽत्यन्तसदृशतया व्यक्तिभेदमनपेक्ष्यान्तरद्वीपा अष्टाविंशतिविधा एव विवक्षिता इति तज्जातमनुष्या अप्यष्टाविंशतिविधा उक्ताः । तानेव नामग्राहमुपदर्शयति–' तंजहा एगोरुया ' इत्यादि, एते सप्त चतुष्काः, अष्टाविंशतिसंख्यत्वात्, एते च प्रत्येकं हिमवति शिखरिणि च, तत्र हिमवद्वृत्तास्तावद् भाव्यन्ते–इह जम्बूद्वीपे भरतस्य हैमवतस्य च क्षेत्रस्य सीमाकारी भूमिनिमग्नपञ्चविंशतियोजनो योजनशतोच्छ्रयपरिमाणो भरतक्षेत्रापेक्षया द्विगुणविष्कम्भो हेममयश्चीनपट्टवर्णो नानावर्णविशिष्टद्युतिमणिनिकरपरिमण्डितोभयपार्श्वः सर्वत्र तुल्यविस्तारो गगनमण्डलोल्लेखिरत्नमयैकादशकूटोपशोभितो वज्रमयतलविविधमणिकनकमण्डिततटभागदशयोजनावगाढपूर्वपश्चिममयोजनसहस्रायामदक्षिणोत्तरपञ्चयोजनशतविस्तारः पद्महृदशोभितशिरोमध्यभागः सर्वतः कल्पपादपश्रेणिरमणीयः पूर्वापरपर्यन्ताभ्यां लवणोदार्णवजलसंस्पर्शी हिमवन्नामा पर्वतः, तस्य लवणोदार्णवजलसंस्पर्शादारभ्य पूर्वस्यां पश्चिमायाञ्च दिशि प्रत्येकं द्वे द्वे गजदन्ताकारे दंष्ट्रे विनिर्गते, तत्र ऐशान्यां दिशि या विनिर्गता दंष्ट्रा तस्यां हिमवतः पर्यन्तादारभ्य त्रीणि योजनशतानि लवणसमुद्रमवगाह्यात्रान्तरे योजनशतत्रयायामविष्कम्भः किञ्चिदूनैकोनपञ्चाशदधिकनवयोजनशतपरिरय एकोरुकनामा द्वीपो वर्तते, अयं च पञ्चधनुःशतप्रमाणविष्कम्भया द्विगव्यूतोच्छ्रितया पद्मवरवेदिकया सर्वतः परिमण्डितः, तस्याश्च पद्मवरवेदिकाया वर्णको जीवाभिगमटीकायामिव वेदितव्यः, साऽपि च

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पद्मवरवेदिका सर्वतः सामस्त्येन वनखण्डपरिक्षिप्ता, वनाच्च वनखण्डस्यायं विशेषः–प्रायो बहूनां समानजातीयानामुत्तमानां महीरुहाणां समुदायो वनं, यथा अशोकवनं चम्पकवनमिति, अनेकजातीयानामुत्तमानां महीरुहाणां समूहो वनखण्डः, उक्तं च जीवाभिगममूलटीकायाम्–"एगजाइएहिं खण्डेहिं वणं, अणेगजाइएहिं उत्तमेहिं वणसंडे" इति, तस्य च वनखण्डस्य चक्रवालतया विष्कम्भो देशोने द्वे योजने, परिक्षेपः पद्मवरवेदिकाप्रमाणः, अस्य च वनखण्डस्य वर्णकः प्रतिपादितोऽस्ति, स चातीव गरीयानिति नोपदर्शितः, केवलं जीवाभिगमटीकातोऽवसेयः, तस्यैव हिमवतः पर्यन्तादारभ्य दक्षिणपूर्वस्यां दिशि त्रीणि योजनशतानि लवणसमुद्रमवगाह्य द्वितीयदंष्ट्राया उपरि एकोरुकद्वीपप्रमाण आभासिकनामा द्वीपो वर्तते, तथा तस्यैव हिमवतः पश्चिमायां दिशि पर्यन्तादारभ्य दक्षिणपश्चिमायां–नैर्ऋतकोण इत्यर्थः, त्रीणि योजनशतानि लवणसमुद्रमवगाह्य दंष्ट्राया उपरि यथोक्तप्रमाणो वैषाणिकनामा द्वीपः, तथा तस्यैव हिमवतः पश्चिमायां दिशि पर्यन्तादारभ्य पश्चिमोत्तरस्यां दिशि–वायव्यकोणे इत्यर्थः, त्रीणि योजनशतानि लवणसमुद्रमध्ये दंष्ट्रामतिक्रम्यात्रान्तरे पूर्वोक्तप्रमाणो नाङ्गोलिकनामा द्वीपः, एवमेते चत्वारो द्वीपा हिमवतश्चतसृष्वपि विदिक्षु तुल्यप्रमाणा अवतिष्ठन्ते, उक्तं च–"चुल्लहिमवंतपुव्वावरेण विदिसासु सागरं तिसए। गंतूणंतरदीवा तिण्णि सए हुन्ति विच्छिन्ना ॥ १॥ अउणापन्ननवसुए किंचूणं परिहि तेसिमे नामा। एगोरुयगाभासिय वेसाणिय चेव नंगूली ॥ २॥" तत एषामेकोरुकादीनां चतुर्णां द्वीपानां परतो यथाक्रमं पूर्वोत्तरादिविदिक्षु

१ प्रज्ञापनापदे मनुष्यप्रज्ञा. (सू. ३६)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३७]

दीप अनुक्रम [१६६]

प्रत्येकं चत्वारि चत्वारि योजनशतान्यतिक्रम्य चतुर्योजनशतायामविष्कम्भाः किञ्चिन्यूनपञ्चषष्टिसहितद्वादशयोजनशतपरिक्षेपाः यथोक्तपद्मवरवेदिकावनखण्डमण्डितपरिसराः जम्बूद्वीपवेदिकातश्चतुर्योजनशतप्रमाणान्तरा हयकर्णगजकर्णगोकर्णशष्कुलीकर्णनामानश्चत्वारो द्वीपाः,तद्यथा–एकोरुकस्य परतो हयकर्णः आभासिकस्य परतो गजकर्णः वैषाणिकस्य परतो गोकर्णः नाङ्गोलिकस्य परतो शष्कुलीकर्ण इति। तत एतेषामपि हयकर्णादीनां चतुर्णां द्वीपानां परतः पुनरपि यथाक्रमं पूर्वोत्तरादिविदिक्षु प्रत्येकं पञ्च पञ्च योजनशतानि व्यतिक्रम्य पञ्चयोजनशतायामविष्कम्भा एकाशीत्यधिकपञ्चदशयोजनशतपरिक्षेपाः पूर्वोक्तप्रमाणपद्मवरवेदिकावनखण्डमण्डितबाह्यप्रदेशा जम्बूद्वीपवेदिकातः पञ्चयोजनशतप्रमाणान्तरा आदर्शमुख १ मेण्ढमुख २ अयोमुख ३ गोमुख ४ नामानश्चत्वारो द्वीपाः, तद्यथा–हयकर्णस्य परत आदर्शमुखः गजकर्णस्य परतो मेण्ढमुखः गोकर्णस्य परतोऽयोमुखः शष्कुलीकर्णस्य परतो गोमुख इति । एवमग्रेऽपि भावना कार्या, एतेषामप्यादर्शमुखादीनां चतुर्णां द्वीपानां परतो भूयोऽपि यथाक्रमं पूर्वोत्तरादिविदिक्षु प्रत्येकं षट् षट् योजनशतान्यतिक्रम्य षड्योजनशतायामविष्कम्भाः सप्तनवत्यधिकाष्टादशयोजनशतपरिक्षेपा यथोक्तप्रमाणपद्मवरवेदिकावनखण्डमण्डितपरिसरा जम्बूद्वीपवेदिकातः षड्योजनशतप्रमाणान्तरा अश्वमुखहस्तिमुखसिंहमुखव्याघ्रमुखनामानश्चत्वारो द्वीपाः । एतेषामप्यश्वमुखादीनां चतुर्णां द्वीपानां परतो यथाक्रमं पूर्वोत्तरादिविदिक्षु प्रत्येकं सप्त २ योजनशतान्यतिक्रम्य सप्तयोजनशतायामविष्कम्भास्त्रयोदशाधिकद्वाविंशतियोजनशतपरिरयाः पूर्वोक्तप्रमाणपद्म-

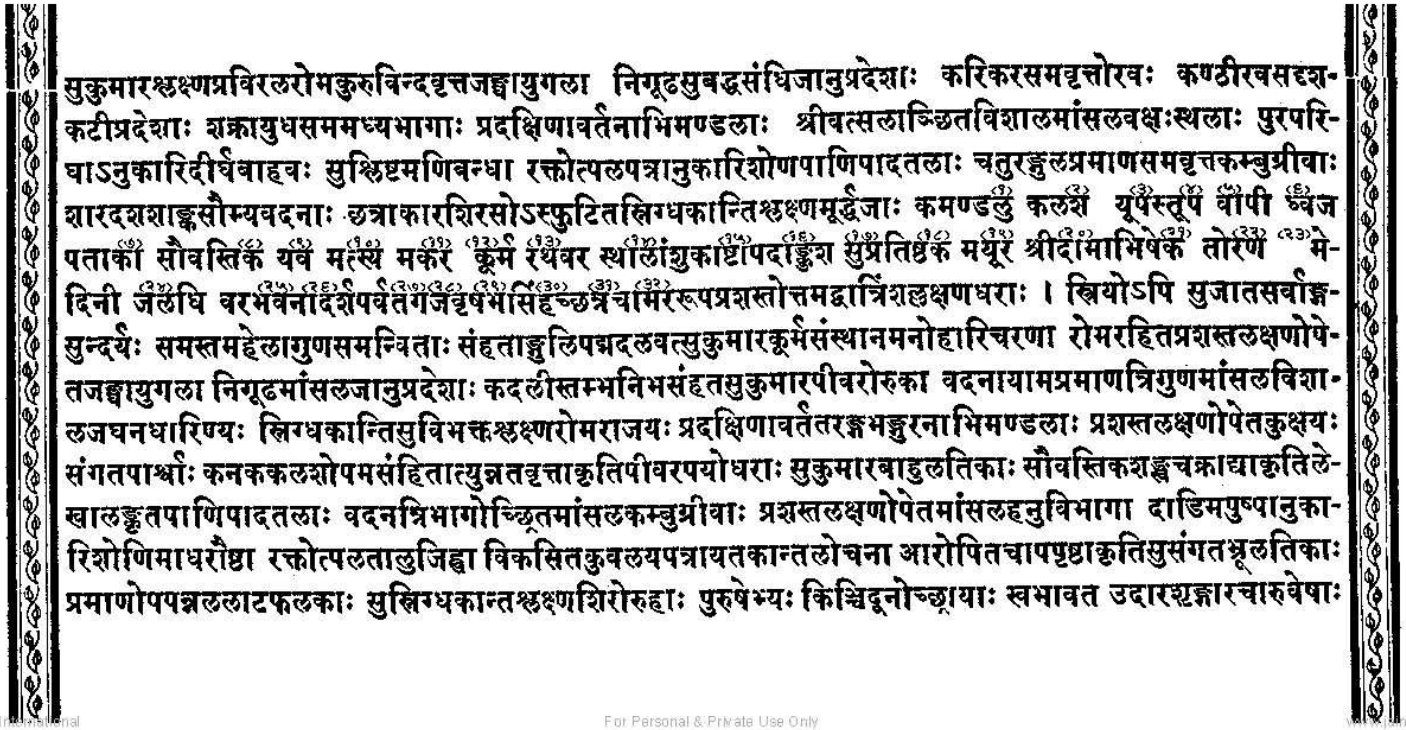
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वरवेदिकावनखण्डसमवगूढा जम्बूद्वीपवेदिकातः सप्तयोजनशतप्रमाणान्तरा अश्वकर्णहरिकर्णाकर्णकर्णप्रावरणनामानश्चत्वारो द्वीपाः । तत एतेषामश्वकर्णादीनां चतुर्णां द्वीपानां परतो यथाक्रमं पूर्वोत्तरादिविदिक्षु प्रत्येकमष्टावष्टौ योजनशतान्यतिक्रम्याष्टयोजनशतायामविष्कम्भा एकोनत्रिंशदधिकपञ्चविंशतियोजनशतपरिक्षेपा यथोक्तप्रमाणपद्मवरवेदिकावनखण्डमण्डितपरिसरा जम्बूद्वीपवेदिकातोऽष्टयोजनशतप्रमाणान्तरा उल्कामुखमेघमुखविद्युन्मुखविद्युद्दन्ताभिधानाश्चत्वारो द्वीपाः । ततोऽमीषामपि उल्कामुखादीनां चतुर्णां द्वीपानां परतो यथाक्रमं पूर्वोत्तरादिविदिक्षु प्रत्येकं नव नव योजनशतान्यतिक्रम्य नवयोजनशतायामविष्कम्भाः पञ्चचत्वारिंशदधिकाष्टाविंशतियोजनशतपरिक्षेपा यथोक्तप्रमाणपद्मवरवेदिकावनखण्डसमवगूढा जम्बूद्वीपवेदिकातो नवयोजनशतप्रमाणान्तरा घनदन्तलष्टदन्तगूढदन्तशुद्धदन्तनामानश्चत्वारो द्वीपाः । एवमेते हिमवति पर्वते चतसृषु विदिक्षु व्यवस्थिताः सर्वसंख्ययाऽष्टाविंशतिः, एवं हिमवच्चुल्यवर्णप्रमाणे पद्महृदप्रमाणायामविष्कम्भावगाहपुण्डरीकह्रदोपशोभिते शिखरिण्यपि पर्वते लवणोदार्णवजलसंस्पर्शादारभ्य यथोक्तप्रमाणान्तरासु चतसृषु विदिक्षु व्यवस्थिता एकोरुकादिनामानोऽक्षुण्णापान्तरालायामविष्कम्भा अष्टाविंशतिसंख्या द्वीपा वक्तव्याः, सर्वसंख्यया षट्पञ्चाशदन्तरद्वीपाः, एतद्गता मनुष्या अप्येतन्नामानः उपचारात्, भवति च तात्स्थ्यात् तद्व्यपदेशः, यथा पञ्चालदेशनिवासिनः पुरुषाः पञ्चाला इति, ते च मनुष्या वज्रर्षभनाराचसंहननिनः कङ्कपक्षिपरिणामा अनुलोमवायुवेगा समचतुरस्रसंस्थानाः, तद्यथा–सुप्रतिष्ठितकूर्मचारुचरणाः

१ प्रज्ञापनापदे मनुष्यप्रज्ञा. (सू.३६)

॥ ५२ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



सुकुमारश्लक्ष्णप्रविरलरोमकुरुविन्दवृत्तजङ्घायुगला निगूढसुबद्धसंधिजानुप्रदेशाः करिकरसमवृत्तोरवः कण्ठीरवसदृश-
कटीप्रदेशाः शक्रायुधसममध्यभागाः प्रदक्षिणावर्तनाभिमण्डलाः श्रीवत्सलाञ्छितविशालमांसलवक्षःस्थलाः पुरपरि-
घाऽनुकारिदीर्घबाहवः सुश्लिष्टमणिबन्धा रक्तोत्पलपत्रानुकारिशोणपाणिपादतलाः चतुरङ्गुलप्रमाणसमवृत्तकम्बुग्रीवाः
शारदशशाङ्कसौम्यवदनाः छत्राकारशिरसोऽस्फुटितस्निग्धकान्तिश्लक्ष्णमूर्द्धजाः कमण्डलु कलश यूपस्तूप वापी ध्वज
पताका सौवस्तिक यव मत्स्य मकर कूर्म रथवर स्थालांशुकाष्टापदाङ्कुश सुप्रतिष्ठक मयूर श्रीदामाभिषेक तोरण मे-
दिनी जलधि वरभवनादर्शपर्वतगजवृषभसिंहच्छत्रचामररूपप्रशस्तोत्तमद्वात्रिंशल्लक्षणधराः । स्त्रियोऽपि सुजातसर्वाङ्ग-
सुन्दर्यः समस्तमहेलागुणसमन्विताः संहताङ्गुलिपद्मदलवत्सुकुमारकूर्मसंस्थानमनोहारिचरणा रोमरहितप्रशस्तलक्षणोपेत-
तजङ्घायुगला निगूढमांसलजानुप्रदेशाः कदलीस्तम्भनिभसंहतसुकुमारपीवरोरुका वदनायामप्रमाणत्रिगुणमांसलविशा-
लजघनधारिण्यः स्निग्धकान्तिसुविभक्तश्लक्ष्णरोमराजयः प्रदक्षिणावर्ततरङ्गभङ्गुरनाभिमण्डलाः प्रशस्तलक्षणोपेतकुक्षयः
संगतपार्श्वाः कनककलशोपमसंहितात्युन्नतवृत्ताकृतिपीवरपयोधराः सुकुमारबाहुलतिकाः सौवस्तिकशङ्खचक्राद्याकृतिले-
खालङ्कृतपाणिपादतलाः वदनप्रभागोच्छ्रितमांसलकम्बुग्रीवाः प्रशस्तलक्षणोपेतमांसलहनुविभागा दाडिमपुष्पानुका-
रिशोणिमाधरौष्ठा रक्तोत्पलतालुजिह्वा विकसितकुवलयपत्रायतकान्तलोचना आरोपितचापपृष्ठाकृतिसुसंगतभ्रूलतिकाः
प्रमाणोपपन्नललाटफलकाः सुस्निग्धकान्तश्लक्ष्णशिरोरुहाः पुरुषेभ्यः किञ्चिदूनोच्छ्रायाः स्वभावत उदारशृङ्गारचारुवेषाः

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३७]

दीप अनुक्रम [१६६]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्तिः

प्रकृत्यैव हसितभणितविलासविषयपरमनैपुण्योपेताः। तथा मनुष्या मानुष्यश्च स्वभावत एव सुरभिवदनाः प्रतनुक्रोधमानमायालोभाः संतोषिणो निरौत्सुक्या मार्दवार्जवसंपन्नाः सत्यपि मनोहारिणि मणिकनकमौक्तिकादौ ममत्वकारणे ममत्वाभिनिवेशरहिताः सर्वथाऽपगतवैरानुबन्धा हस्त्यश्वकरभगोमहिष्यादिसद्भावेऽपि तत्परिभोगपराङ्मुखाः पादविहारिणो ज्वरादिरोगयक्षभूतपिशाचादिग्रहमारिव्यसनोपनिपातविकलाः परस्परप्रेष्यप्रेषकभावरहितत्वादहमिन्द्राः, तेषां पृष्ठकरण्डकानि चतुःषष्टिसंख्याकानि चतुर्थातिक्रमे चाहारग्रहणं, आहारोऽपि च न शाल्यादिधान्यनिष्पन्नः किन्तु पृथ्वीमृत्तिका कल्पद्रुमाणां पुष्पफलानि च, तथाहि–जायन्ते खलु तत्रापि विस्रसात एव शालिगोधूममाषमुद्गादीनि धान्यानि, परं न तानि मनुष्याणामुपभोगं गच्छन्ति, या तु पृथ्वी सा शर्करातोऽप्यनन्तगुणमाधुर्या, यश्च कल्पद्रुमपुष्पफलानामास्वादः स चक्रवर्तिभोजनादप्यधिकगुणः,तथा चोक्तम्–"तेसिणं भंते! पुप्फफलाणं केरिसए आसाए पन्नते ?,गोयमा ! से जहानामए रन्नो चाउरंतस्स चक्कवट्टिस्स कल्लाणे भोयणजाए सयसहस्सनिप्फन्ने वन्नोवए रसोवए फासोवए आसायणिज्जे दप्पणिज्जे मयणिज्जे बिंहणिज्जे सव्वेंदियगायपल्हायणिज्जे आसाएणं पन्नत्ते, एत्तोवि इट्ठतराए चेव पन्नत्ते"। ततः पृथ्वी कल्पद्रुमपुष्पफलानि च तेषामाहारः, तथाभूतं चाहारमाहार्य प्रासादादिसंस्थाना

१ तेषां भदन्त ! पुष्पफलानां कीदृश आस्वादः प्रज्ञप्तः ?,गौतम ! स यथानामकः राज्ञश्चातुरन्तस्य चक्रवर्तिनः कल्याणं भोजनजातं शतसहस्रनिष्पन्नं वर्णोपगं रसोपगं स्पर्शोपगं आस्वादनीयं दर्पणीयं मदनीयं बृंहणीयं सर्वेन्द्रियगात्रप्रह्लादनीयमास्वादेन प्रज्ञप्तं, इतोऽपीष्टतरक एव प्रज्ञप्तः।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३७]

दीप अनुक्रम [१६६]

ये गृहाकाराः कल्पवृक्षास्तेषु यथासुखमवतिष्ठन्ते, न च तत्र क्षेत्रे दंशमशकयूकामत्कुणमक्षिकादयः शरीरोपद्रवकारिणो जन्तव उपजायन्ते, येऽपि च जायन्ते भुजगव्याघ्रसिंहादयस्तेऽपि मनुष्याणां न बाधायै प्रभवन्ति, नापि ते परस्परं हिंस्याहिंसकभावे वर्तन्ते, क्षेत्रानुभावतो रौद्रानुभावरहितत्वात्, मनुष्ययुगलानि च पर्यवसानसमये युगलं प्रसुवते, तच्च युगलमेकोनाशीतिदिनानि पालयन्ति, तेषां शरीरोच्छ्रयोऽष्टौ धनुःशतानि, पल्योपमासंख्येयभागप्रमाणमायुः, उक्तं च–"अन्तरदीवेसु नरा धणुसयमट्ठुसिया सया मुइया। पालंति मिहुणधम्मं पल्लस्स असंखभागाऊ ॥ ॥ १ ॥ चउसट्ठि पिट्ठकरंडयाणि मणुयाण तेसिमाहारो। भत्तस्स चउत्थस्स य गुणसीइदिणाणि पालणया ॥ २ ॥" स्तोककषायतया स्तोकप्रेमानुबन्धतया च ते मृत्वा दिवमुपसर्पन्ति, मरणं च तेषां जृम्भिकाकासक्षुतादिमात्रव्यापारपुरस्सरं भवति, न शरीरपीडारम्भपुरस्सरमिति। तदेवमुक्ता अन्तरद्वीपगाः ॥ साम्प्रतमकर्मभूमकप्रतिपादनार्थमाह— अथ के तेऽकर्मभूमकाः ?, सूरिराह–अकर्मभूमकास्त्रिंशद्विधाः प्रज्ञप्ताः, तच्च त्रिंशद्विधत्वं क्षेत्रभेदात्, तथा चाह— 'तंजहा–पंचहिं हेमवएहिं' इत्यादि, पञ्चभिर्हैमवतैः पञ्चभिर्हैरण्यवतैः पञ्चभिर्हरिवर्षैः पञ्चभी रम्यकवर्षैः पञ्चभिर्दैवकुरुभिः पञ्चभिरुत्तरकुरुभिर्भिद्यमाना त्रिंशद्विधा भवन्ति, षण्णां पञ्चानां त्रिंशत्संख्यात्मकत्वात्। तत्र पञ्चसु हैमवतेषु पंचसु हैरण्यवतेषु मनुष्या गव्यूतप्रमाणशरीरोच्छ्रयाः पल्योपमायुषो वज्रर्षभनाराचसंहननाः समचतुरस्रसंस्थानाः चतुःषष्टिपृष्ठकरण्डकाश्चतुर्थातिक्रमभोजिन एकोनाशीतिदिनान्यपत्यपालकाः, उक्तं च–"गाउअमुच्चा पलि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३७]

दीप अनुक्रम [१६६]

ओवमाउणो वज्जरिसहसंघयणा । हेमवएरन्नवए अहमिंदनरा मिहुणवासी ॥ १ ॥ चउसट्ठी पिट्ठकरंडयाण मणुयाण तेसिमाहारो । भत्तस्स चउत्थस्स य गुणसीदिणऽवचपालणया ॥ २ ॥" पञ्चसु हरिवर्षेषु पञ्चसु रम्यकेषु द्विपल्योपमायुषो द्विगव्यूतप्रमाणशरीरोच्छ्राया वज्रर्षभनाराचसंहननाः समचतुरस्रसंस्थानाः षष्ठभक्तातिक्रमे आहारग्राहिणो अष्टाविंशत्यधिकशतसंख्यपृष्ठकरण्डकाश्चतुःषष्टिदिनान्यपत्यपालकाः, आह च–"हरिवासरम्मएसुं आउपमाणं सरीरमुस्सेहो । पलिओवमाणि दोन्नि उ दोन्नि उ कोसुस्सिया भणिया ॥ १ ॥ छट्ठस्स य आहारो चउसट्ठिदिणाणि पालणा तेसिं । पिट्ठकरंडाण सयं अट्ठावीसं मुणेयव्वं ॥ २ ॥" पञ्चसु देवकुरुषु पञ्चसूत्तरकुरुषु त्रिपल्योपमायुषो गव्यूतत्रयप्रमाणशरीरोच्छ्रायाः समचतुरस्रसंस्थाना वज्रर्षभनाराचसंहननिनः षट्पञ्चाशदधिकशतद्वयप्रमाणपृष्ठकरण्डका अष्टमभक्तातिक्रमाहारिण एकोनपञ्चाशद्दिनान्यपत्यपालकाः, तथा चोक्तम्–"दोसुवि कुरूसु मणुया तिपल्लपरमाउणो तिकोसुच्चा । पिट्ठिकरंडसयाइं दो छप्पन्नाइं मणुयाणं ॥१॥ सुसमसुसमाणुभावं अणुभवमाणाणऽवचगोवणया । अउणापण्णदिणाइं अट्ठमभत्तस्समाहारो ॥ २ ॥" एतेषु सर्वेष्वपि क्षेत्रेष्वन्तरद्वीपेष्विव मनुष्याणामुपभोगाः कल्पद्रुमसंपादिताः, नवरमन्तरद्वीपापेक्षया पञ्चसु हैमवतेषु पञ्चसु हैरण्यवतेषु मनुष्याणामुत्थानबलवीर्यादिकं कल्पपादपफलानामास्वादो भूमेर्माधुर्यमित्येवमादिका भावाः पर्यायानधिकृत्यानन्तगुणा द्रष्टव्याः, तेभ्योऽपि पञ्चसु हरिवर्षेषु पञ्चसु

१ प्रज्ञापनापदे मनुष्यप्रज्ञा. (सू. ३६)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रम्यकवर्षेषु अनन्तगुणाः, तेभ्योऽपि पञ्चसु देवकुरुषु पञ्चसूत्तरकुरुषु अनन्तगुणाः, तदेवमुक्ता अकर्मभूमकाः ॥ संप्रति कर्मभूमकप्रतिपादनार्थमाह—

से किं तं कम्मभूमगा ?, कम्मभूमगा पन्नरसविहा पं०, तं०–पंचहिं भरहेहिं पंचहिं एरवएहिं पंचहिं महाविदेहेहिं, ते समासओ दुविहा पं०, तं०—आ[य]रिया य मिलिक्खू य, से किं तं मिलिक्खू ?, मिलिक्खू अणेगविहा पं०, तं०–सगा जवणा चिलाया सबरबब्बरमुरंडोट्टभडगनिण्णगपक्कणिया कुलक्खगोंडसिंहलपारसगोधा कोंचअंबडइदमिलचिल्लपुलिंदहारोसदोबवोक्काणगन्धा हारवा पहलियअज्झलरोमपासपउसा मलया य बंधुया य सूयलिकोंकणगमेयपल्हवमालव मग्गर आभासिआ कणवीर लहसिय खसा खासिय णेदूर मोंढ डोंबिल गलओस पओस ककेय अक्खाग हूणरोमग चूणरोमग भरु मरुय चिलाय वियवासी य एवमाइ, सेचं मिलिक्खू ।

अथ के ते कर्मभूमकाः ?, सूरिराह कर्मभूमकाः पञ्चदशविधाः प्रज्ञप्ताः, तच्च पञ्चदशविधत्वं क्षेत्रभेदात्, तथा चाह–'पञ्चहिं भरहेहिं' इत्यादि, पञ्चभिर्भरतैः पञ्चभिरैरवतैः पञ्चभिर्महाविदेहैर्भिद्यमानाः पञ्चदशविधा भवन्ति, ते च पञ्चदशविधा अपि समासतो द्विविधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–आर्या म्लेच्छाश्च, तत्र आराद् हेयधर्मेभ्यो याताः–प्राप्ता उपादेयधर्मैरित्यार्याः, "गृषोदरादयः" इति रूपनिष्पत्तिः, म्लेच्छाः–अव्यक्तभाषासमाचाराः, "म्लेच्छ अव्यक्तायां वाचि" इति वचनात्, भाषाग्रहणं चोपलक्षणं, तेन शिष्टाऽसंमतसकलव्यवहारा म्लेच्छा इति प्रतिपत्तव्यं ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तत्राल्पवक्तव्यत्वात् प्रथमतो म्लेच्छवक्तव्यतामाह—'से किं तं' इत्यादि, अथ के ते म्लेच्छाः ?, 'मिलिक्खू' इति निर्देशः प्राकृतत्वाद् आर्षत्वाच्च, सूरिराह—म्लेच्छा अनेकविधाः प्रज्ञप्ताः, तचानेकविधत्वं शक–यवन–चिलात–शबर–बर्बरादिदेशभेदात्, तथा चाह—'तंजहा सगा' इत्यादि, शकदेशनिवासिनः शकाः, यवनदेशनिवासिनो यवनाः, एवं सर्वत्र, नवरममी नानादेशा लोकतो विज्ञेयाः ॥ आर्यप्रतिपादनार्थमाह—

से किं तं आ[य]रिया ?, आ[य]रिया दुविहा पं०, तं०–इड्ढिपत्ता[य]रिया य अणिड्ढिपत्ता[य]रिया य, से किं तं इड्ढिपत्ता-[य]रिया ?, इड्ढिपत्ता[य]रिया छव्विहा पं०, तं०–अरहंता चक्कवट्टी बलदेवा वासुदेवा चारणा विज्जाहरा, सेत्तं इड्ढिपत्ता-[य]रिया । से किं तं अणिड्ढिपत्ता[य]रिया ?, अणिड्ढिपत्ता[य]रिया नवविहा प०, तं०–खेत्ता[य]रियाऽ जातिआ[य]रियाऽ कुलारिआऽ कम्मारियाँ सिप्पारिआऽ भासारियाँ नाणारियाँ दंसणारियाँ चारित्तारियाऽ । से किं तं खेत्तारिया ?, खेत्तारिया अद्धछव्वीसतिविहाणा पं०, तं०–रायगिह मगह चंपा अंगा तह तामलित्ति वंगा य । कंचणपुरं कलिंगा वाणारसी चेव कासी य ॥१०८॥ साएय कोसला गयपुरं च कुरु सोरियं कुसट्टा य । कंपिल्लं पंचाला अहिछत्ता जंगला चेव॥१०९॥ बारवई सोरट्ठा मिहिलं विदेहा य वच्छ कोसंबी । नंदिपुरं संडिल्ला भद्दिलपुरमेव मलया य॥११०॥ वइराड वच्छ वरणा अच्छा तह मत्तियावइ दसण्णा । सोत्तियवई य चेदी वीयभयं सिंधुसोवीरा ॥१११॥ महुरा य सूरसेणा पावा भंगी य मासपुरिवट्टा । सावत्थी य कुणाला कोडीवरिसं च लाढा य ॥ ११२॥ सेयवियावि य णयरी केकयअद्धं च आरियं भणियं । इत्थुप्पत्ती

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जिणाणं चक्कीणं रामकण्हाणं ॥ ११३ ॥ से त्तं खेत्तारिया ॥ से किं तं जाइआरिया ?, जाइआरिया छव्विहा पं०, तं०— अंबट्ठा य कलिंदा य, विदेहा वेदगाइया । हरिया चुंचुणा चेव, छ एया इब्भजाईओ ॥११४॥ सेत्तं जाइआरिया । से किं तं कुलारिया ?, कुलारिया छव्विहा पं०, तं०—उग्गा भोगा राइन्ना इक्खागा णाया कोरव्वा, सेत्तं कुलारिया । से किं तं कम्मारिया ?, कम्मारिया अणेगविहा प०, तं०—दोसिया सुत्तिया कप्पासिया सुत्तवेयालिया भंडवेयालिया कोलालिया नरवाहणिया जे यावन्ने तहप्पगारा, से त्तं कम्मारिया । से किं तं सिप्पारिया ?, सिप्पारिया अणेगविहा प०, तं०–तुण्णागा तंतुवाया पट्टागा देयडा वरुट्टा छविया कट्टपाउयारा मुंजपाउयारा छत्तारा वज्झारा पुच्छारा लेप्पारा चित्तारा संखारा दंतारा भंडारा जिज्झगारा सेल्लारा कोडिगारा, जे यावन्ने तहप्पगारा, से त्तं सिप्पारिया ॥ से किं तं भासारिया ?, भासारिया जे णं अद्धमागहाए भासाए भासेंति, तत्थऽवि य णं जत्थ बंभी लिवी पवत्तइ, बंभीए णं लिवीए अट्ठारसविहे लेक्खविहाणे प०, तं०—बंभी जवणाणिया दोसापुरिया खरोट्टी पुक्खरसारिया भोगवइया पहराइया अंतक्खरिया अक्खरपुट्ठिया वेणइया निण्हइया अंकलिवी गणियलिवी गंधव्वलिवी आयंसलिवी माहेसरी दोमिलिवी पोलिन्दी, से त्तं भासारिया। से किं तं नाणारिया ?, नाणारिया पंचविहा प०, तं०–आभिणिबोहियनाणारिया सुयनाणारिया ओहिनाणारिया मणपज्जवनाणारिया केवलनाणारिया, सेत्तं नाणारिया । से किं तं दंसणारिया ?, दंसणारिया दुविहा पं०, तं०—सरागदंसणारिया य वीयरायदंसणारिया य, से किं तं सरागदंसणारिया ?, सरागदंसणारिया दसविहा प०, तं—निसग्गुवएसरुई आणरुई सुत्तबीयरुइमेव । अभिगमवित्थाररुई किरियासंखेवधम्मरुई ॥११५॥ भूयत्थेणाहिगया जीवाजीवे य पुण्णपावं च ।

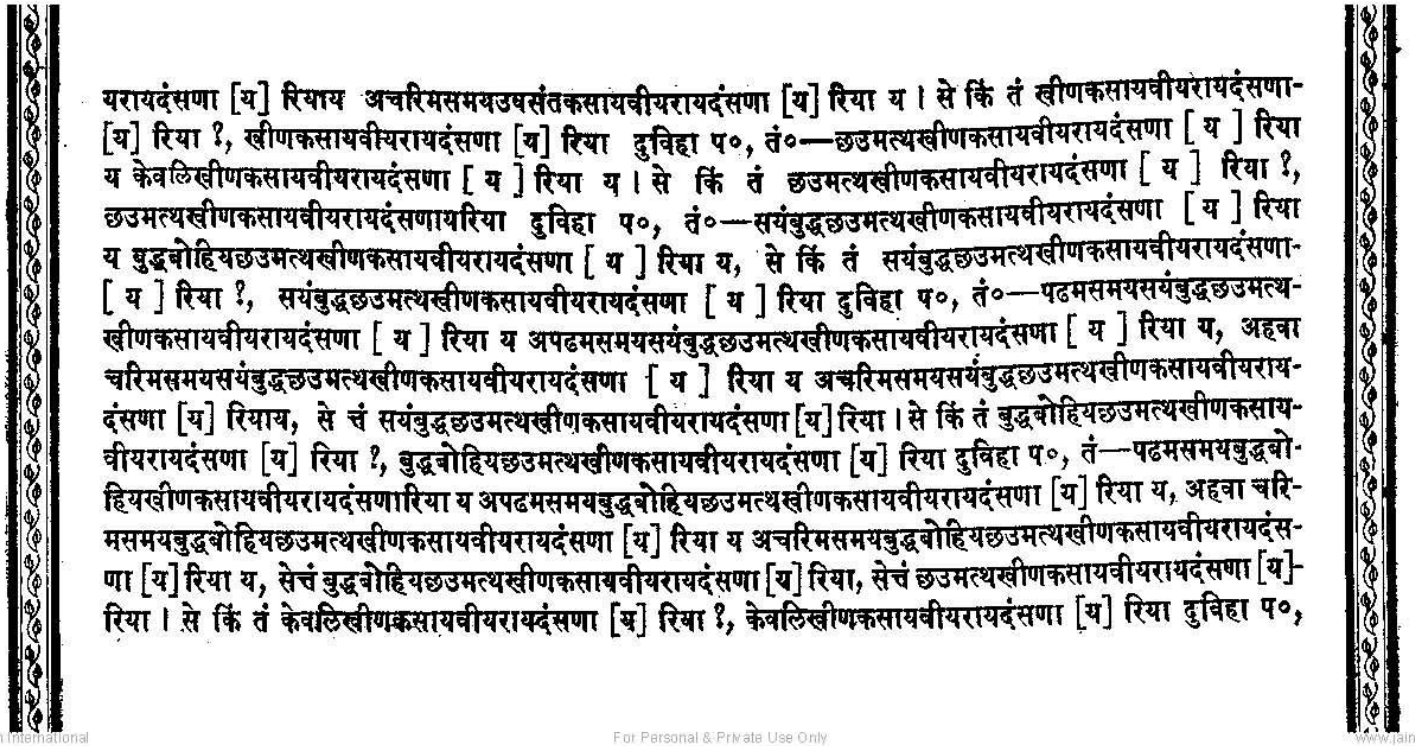
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३७] + गाथा: दीप अनुक्रम [१६६--१९०]]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति:

सहसंमुइया आसवसंवरे य रोएइ उ निसग्गो ॥११६॥ जो जिणदिट्ठे भावे चउविहे सद्दहाइ सयमेव । एमेव नन्नहत्तिय निसग्गरुइत्ति नायव्वो ॥११७॥ एए चेव उ भावे उवदिट्ठे जो परेण सद्दहइ । छउमत्थेण जिणेण व उवएसरुइत्ति नायव्वो ॥ ॥११८॥ जो हेउमयाणंतो आणाए रोयए पवयणं तु । एमेव नन्नहत्ति य एसो आणारुई नाम ॥११९॥ जो सुत्तमहिज्जन्तो सुएण ओगाहई उ सम्मत्तं । अंगेण बाहिरेण व सो सुत्तरुइत्ति णायव्वो॥१२०॥ एगपएणेगाइं पदाइं जो पसरई उ सम्मत्तं । उदएव तिलबिंदू सो बीयरुइत्ति नायव्वो ॥१२१॥ सो होइ अभिगमरुई सुयनाणं जस्स अत्थओ दिट्ठं । इक्कारस अंगाइं पइन्नगा दिट्ठिवाओ य ॥१२२॥ दवाण सवभावा सवपमाणेहिं जस्स उवलद्धा । सवाहिं नयविहीहिं वित्थाररुइत्ति नायव्वो ॥१२३॥दंसणनाणचरित्ते तवविणए सवसमिइगुत्तीसु । जो किरियाभावरुई सो खलु किरियारुई नाम ॥१२४॥ अणभिगहियकुदिट्ठी संखेवरुइत्ति होइ नायव्वो । अविसारओ पवयणे अणभिग्गहिओ य सेसेसु॥१२५॥जो अत्थिकायधम्मं सुयधम्मं खलु चरित्तधम्मं च । सद्दहइ जिणाभिहियं सो धम्मरुइत्ति नायव्वो ॥१२६॥ परमत्थसंथवो वा सुदिट्ठपरमत्थसेवणा वावि । वावन्नकुदंसणवज्जणा य सम्मत्तसद्दहणा ॥ १२७ ॥ निस्संकिय निक्कंखिय निवितिगिच्छा अमूढदिट्ठी य । उववूहथिरीकरणे वच्छल्लपभावणे अट्ठ ॥१२८॥ से त्तं सरागदंसणारिया । से किं तं वीयरायदंसणा [य] रिया ?, वीयरायदंसणा [य] रिया दुविहा प०, तं०–उवसंतकसायवीयरायदंसणा [य] रिया य खीणकसायवीयरायदंसणा [य] रिया य । से किं तं उवसंतकसायवीयरायदंसणा [य] रिया ?, उवसंतकसायवीयरायदंसणा [य] रिया दुविहा प०, तं०—पढमसमयउवसंतकसायवीयरायदंसणा [य] रियाय अपढमसमयउवसंतकसायवीयरायदंसणा [य] रिया य, अहवा चरिमसमयउवसंतकसायवी-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



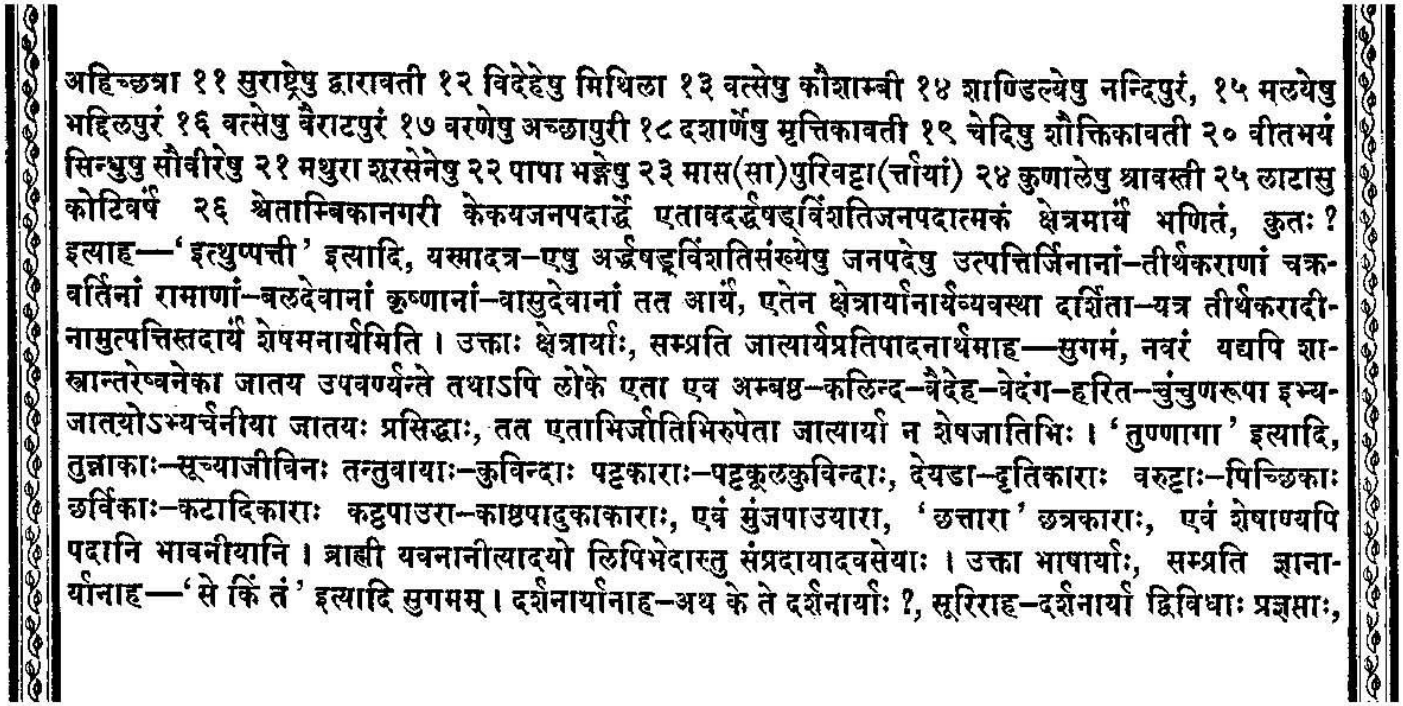
यरायदंसणा [य] रियाय अचरिमसमयउवसंतकसायवीयरायदंसणा [य] रिया य । से किं तं खीणकसायवीयरायदंसणा-[य] रिया ?, खीणकसायवीयरायदंसणा [य] रिया दुविहा प०, तं०—छउमत्थखीणकसायवीयरायदंसणा [य] रिया य केवलिखीणकसायवीयरायदंसणा [य] रिया य । से किं तं छउमत्थखीणकसायवीयरायदंसणा [य] रिया ?, छउमत्थखीणकसायवीयरायदंसणायरिया दुविहा प०, तं०—सयंबुद्धछउमत्थखीणकसायवीयरायदंसणा [य] रिया य बुद्धबोहियछउमत्थखीणकसायवीयरायदंसणा [य] रिया य, से किं तं सयंबुद्धछउमत्थखीणकसायवीयरायदंसणा-[य] रिया ?, सयंबुद्धछउमत्थखीणकसायवीयरायदंसणा [य] रिया दुविहा प०, तं०—पढमसमयसयंबुद्धछउमत्थ-खीणकसायवीयरायदंसणा [य] रिया य अपढमसमयसयंबुद्धछउमत्थखीणकसायवीयरायदंसणा [य] रिया य, अहवा चरिमसमयसयंबुद्धछउमत्थखीणकसायवीयरायदंसणा [य] रिया य अचरिमसमयसयंबुद्धछउमत्थखीणकसायवीयराय-दंसणा [य] रियाय, से त्तं सयंबुद्धछउमत्थखीणकसायवीयरायदंसणा [य] रिया । से किं तं बुद्धबोहियछउमत्थखीणकसाय-वीयरायदंसणा [य] रिया ?, बुद्धबोहियछउमत्थखीणकसायवीयरायदंसणा [य] रिया दुविहा प०, तं—पढमसमयबुद्धबो-हियखीणकसायवीयरायदंसणारिया य अपढमसमयबुद्धबोहियछउमत्थखीणकसायवीयरायदंसणा [य] रिया य, अहवा चरि-मसमयबुद्धबोहियछउमत्थखीणकसायवीयरायदंसणा [य] रिया य अचरिमसमयबुद्धबोहियछउमत्थखीणकसायवीयरायदंस-णा [य] रिया य, सेत्तं बुद्धबोहियछउमत्थखीणकसायवीयरायदंसणा [य] रिया, सेत्तं छउमत्थखीणकसायवीयरायदंसणा [य]-रिया । से किं तं केवलिखीणकसायवीयरायदंसणा [य] रिया ?, केवलिखीणकसायवीयरायदंसणा [य] रिया दुविहा प०,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तं०—सजोगिकेवलिखीणकसायवीयरायदंसणा [य] रिया य अजोगिकेवलिखीणकसायवीयरायदंसणा [य] रिया य। से किं तं सजोगिकेवलिखीणकसायवीयरायदंसणा [य]रिया ?, सजोगिकेवलिखीणकसायवीयरायदंसणा [य] रिया दुविहा प०, तं०—पढमसमयसजोगिकेवलिखीणकसायवीयरायदंसणा [य] रिया य अपढमसमयसजोगिकेवलिखीणकसायवीयरायदंसणा [य] रिया य, अहवा चरिमसमयसजोगिकेवलिखीणकसायवीयरायदंसणा [य] रिया य अचरिमसमयसजोगिकेवलिखीणकसायवीयरायदंसणा [य] रिया य। सेत्तं सजोगिकेवलिखीणकसायवीयरायदंसणा [य] रिया। से किं तं अजोगिकेवलिखीणकसायवीयरायदंसणा [य] रिया ?, अजोगिकेवलिखीणकसायवीयरायदंसणा [य] रिया दुविहा प०, तं०—पढमसमयअजोगिकेवलिखीणकसायवीयरायदंसणा [य] रिया य अपढमसमयअजोगिकेवलिखीणकसायवीयरायदंसणा [य] रिया य, अहवा चरिमसमयअजोगिकेवलिखीणकसायवीयरायदंसणा [य]रिया य अचरिमसमयअजोगिकेवलिखीणकसायवीयरायदंसणा [य]-रिया य, सेत्तं अजोगिकेवलिखीणकसायवीयरायदंसणा [य] रिया, सेत्तं केवलिखीणकसायवीयरायदंसणा [य] रिया, सेत्तं खीणकसायवीयरायदंसणा [य] रिया, सेत्तं दंसणा [य] रिया ॥

सुगमं, नवरं 'रायगिहमगह' इत्यादि, राजगृहं नगरम्, मगधो जनपदः, एवं सर्वत्रापि अक्षरसंस्कारो विधेयः, भावार्थस्त्वयम्–१ मगधेषु जनपदेषु राजगृहं नगरम्, २ अङ्गेषु चम्पा ३ वङ्गेषु तामलिप्ती ४ कलिङ्गेषु काञ्चनपुरं ५ काशिषु वाराणसी ६ कोसलासु साकेतं ७ कुरुषु गजपुरं ८ कुशावर्तेषु सौरिकं ९ पाञ्चालेषु काम्पिल्यं, १० जङ्गलेषु

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



अहिच्छत्रा ११ सुराष्ट्रेषु द्वारावती १२ विदेहेषु मिथिला १३ वत्सेषु कौशाम्बी १४ शाण्डिल्येषु नन्दिपुरं, १५ मलयेषु भद्दिलपुरं १६ वत्सेषु वैराटपुरं १७ वरणेषु अच्छापुरी १८ दशार्णेषु मृत्तिकावती १९ चेदिषु शौक्तिकावती २० वीतभयं सिन्धुषु सौवीरेषु २१ मथुरा शूरसेनेषु २२ पापा भङ्गेषु २३ मास(सा)पुरिवट्टा(र्त्तायां) २४ कुणालेषु श्रावस्ती २५ लाटासु कोटिवर्षं २६ श्वेताम्बिकानगरी केकयजनपदार्द्धे एतावदर्द्धषड्विंशतिजनपदात्मकं क्षेत्रमार्यं भणितं, कुतः ? इत्याह—'इत्थुप्पत्ती' इत्यादि, यस्मादत्र–एषु अर्द्धषड्विंशतिसंख्येषु जनपदेषु उत्पत्तिर्जिनानां–तीर्थकराणां चक्रवर्तिनां रामाणां–बलदेवानां कृष्णानां–वासुदेवानां तत आर्यं, एतेन क्षेत्रार्यानार्यव्यवस्था दर्शिता–यत्र तीर्थकरादीनामुत्पत्तिस्तदार्यं शेषमनार्यमिति । उक्ताः क्षेत्रार्याः, सम्प्रति जात्यार्यप्रतिपादनार्थमाह—सुगमं, नवरं यद्यपि शास्त्रान्तरेष्वनेका जातय उपवर्ण्यन्ते तथाऽपि लोके एता एव अम्बष्ठ–कलिन्द–वैदेह–वेदंग–हरित–चुंचुणरूपा इभ्यजातयोऽभ्यर्चनीया जातयः प्रसिद्धाः, तत एताभिर्जातिभिरुपेता जात्यार्या न शेषजातिभिः । 'तुण्णागा' इत्यादि, तुन्नाकाः–सूच्याजीविनः तन्तुवायाः–कुविन्दाः पट्टकाराः–पट्टकूलकुविन्दाः, देयडा–दृतिकाराः वरुट्टाः–पिच्छिकाः छर्विकाः–कट्टादिकाराः कट्ठपाउरा–काष्ठपादुकाकाराः, एवं मुंजपाउयारा, 'छत्तारा' छत्रकाराः, एवं शेषाण्यपि पदानि भावनीयानि । ब्राह्मी यवनानीत्यादयो लिपिभेदास्तु संप्रदायादवसेयाः । उक्ता भाषार्याः, सम्प्रति ज्ञानार्यानाह—'से किं तं' इत्यादि सुगमम् । दर्शनार्यानाह–अथ के ते दर्शनार्याः ?, सूरिराह–दर्शनार्या द्विविधाः प्रज्ञप्ताः,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३७] + गाथा: दीप अनुक्रम [१६६--१९०]

तद्यथा—सरागदर्शनार्या वीतरागदर्शनार्याश्च, तत्र सरागं–सकषायं यद्दर्शनं तेनार्याः सरागदर्शनार्याः वीतरागं—उपशान्तकषायं क्षीणकषायं वा यद्दर्शनं तेनार्या वीतरागदर्शनार्याः। तत्र सरागदर्शनार्यप्रतिपादनार्थमाह–'से किं तं' इत्यादि, अथ के ते सरागदर्शनार्याः ?, सूरिराह—सरागदर्शनार्या दशविधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—'निसग्गुवएस'-इत्यादि, अत्र रुचिशब्दः प्रत्येकमभिसंबध्यते, ततो निसर्गरुचिरिति द्रष्टव्यं, तत्र निसर्गः–स्वभावः तेन रुचिः–जिनप्रणीततत्त्वाभिलाषरूपा यस्य स निसर्गरुचिः, उपदेशो–गुर्वादिना वस्तुतत्त्वकथनं तेन रुचिः–उक्तस्वरूपा यस्य स उपदेशरुचिः, आज्ञा–सर्वज्ञवचनात्मिका तस्यां रुचिः–अभिलाषो यस्य स आज्ञारुचिः, जिनाज्ञैव मे तत्त्वं न शेषं युक्तिजातमिति योऽभिमन्यते स आज्ञारुचिरिति भावार्थः, 'सुत्तबीयरुइमेवत्ति' अत्रापि रुचिशब्दः प्रत्येकमभिसंबध्यते, सूत्रम्–आचाराङ्गाद्यङ्गप्रविष्टं अङ्गबाह्यम्–आवश्यकदशवैकालिकादि तेन रुचिर्यस्य स तथा, सूत्रमाचारादिकमङ्गप्रविष्टमङ्गबाह्यमावश्यकादिकमधीयानो यः सम्यक्त्वमवगाहते प्रसन्नप्रसन्नतराध्यवसायश्च भवति स सूत्ररुचिरिति भावार्थः, बीजमिव बीजं–यदेकमप्यनेकार्थप्रबोधोत्पादकं वचः तेन रुचिर्यस्य स बीजरुचिः, अनयोश्च पदयोः समाहारद्वन्द्वः तेन नपुंसकनिर्देशः, एवेति समुच्चये, 'अहिगमवित्थाररुइत्ति' अत्रापि रुचिशब्दस्य प्रत्येकमभिसंबन्धः, अधिगमरुचिर्विस्ताररुचिश्च, तत्राधिगमो—विशिष्टं परिज्ञानं तेन रुचिर्यस्यासावधिगमरुचिः, विस्तारो–व्यासः सकलद्वादशाङ्गस्य नयैः पर्यालोचनमिति भावः, तेनोपबृंहिता रुचिर्यस्य स विस्ताररुचिः, 'किरियासंखेव-

१ प्रज्ञापनापदे मनुष्यप्रज्ञा. (सू.३७)

॥ ५८ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

धम्मरुइत्ति' रुचिशब्दस्यात्रापि प्रत्येकं संबन्धात् क्रियारुचिः संक्षेपरुचिर्धर्मरुचिरिति द्रष्टव्यं, तत्र क्रिया–सम्यक्-संयमानुष्ठानं तत्र रुचिर्यस्य स क्रियारुचिः, संक्षेपः—संग्रहः तत्र रुचिर्यस्य विस्तरार्थापरिज्ञानात् स संक्षेपरुचिः धर्मे-अस्तिकायधर्मे श्रुतधर्मादौ वा रुचिर्यस्य स धर्मरुचिरिति गाथासंक्षेपार्थः ॥ व्यासार्थं तु सूत्रकृदेव स्वत आह—'भूय-त्थेण' इत्यादि, 'भूयत्थेण' इति भावप्रधानो निर्देशः, ततोऽयमर्थः–भूतार्थत्वेन–सद्भूता अमी पदार्था इत्येवंरूपेण यस्याधिगताः–परिज्ञाता जीवाजीवाः पुण्यं पापमाश्रवं संवरः चशब्दाद् बन्धादयश्च, कथमधिगताः ? इत्याह–'सहस-म्मुइआ' इति आर्षत्वाद् विभक्तिलोपाच्च सहसंमत्या सह–आत्मना या संगता मतिः सा सहसंमतिः तया, किमुक्तं भवति ?—परोपदेशनिरपेक्षया जातिस्मरणप्रतिभादिरूपया मत्या, न केवलमधिगताः, किन्तु तान् जीवादीन् पदा-र्थान् वेदयतेऽनुरोचयति च तत्त्वरूपतयाऽऽत्मसात्परिणामयति चेति भावः, एष निसर्गरुचिर्विज्ञेय इति शेषः। अमुमेवार्थं स्पष्टतरमभिधित्सुराह–'जो जिणदिट्ठे भावे' इत्यादि, यो जिनदृष्टान् भावान् द्रव्यक्षेत्रकालभावभेदतो नामादिभेदतो वा चतुर्विधान् स्वयमेव–उपदेशनिरपेक्षः श्रद्दधाति, केनोल्लेखेन श्रद्दधाति ?, तत आह–'एवमेव एतत्–जीवादि यथा जिनैर्दृष्टं नान्यथा इति, चः समुच्चये, एष निसर्गरुचिरिति ज्ञातव्यः ॥ उपदेशरुचिमाह–'एए चेव' इत्यादि, एतानेव जीवादिभावान् परेण छद्मस्थेन जिनेन चोपदिष्टान् श्रद्दधाति एष उपदेशरुचिरिति ज्ञातव्यः। आज्ञारुचिमाह–'जो हेउमयाणंतो' इत्यादि, यो हेतुं–विवक्षितार्थगमकमजानानः प्रवचनमाज्ञयैव तुशब्द एवकारार्थः

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [३७] + गाथा: दीप अनुक्रम [१६६--१९०]

केवलया रोचते, कथम् ? इत्याह–एवमेतत् प्रवचनोक्तमर्थजातं नान्यथेति एष आज्ञारुचिर्नाम । सूत्ररुचिमाह–'जो सुत्तं' इत्यादि, यः सूत्रम्—अङ्गप्रविष्टमङ्गबाह्यं वा अधीयानस्तेन श्रुतेनाङ्गप्रविष्टेनाङ्गबाह्येन वा सम्यक्त्वमवगाहते स सूत्ररुचिरिति ज्ञातव्यः । बीजरुचिमाह—'एगपएणेगाइं' इत्यादि, एकेन पदेन प्रक्रमाज्जीवादीनामनेकानि पदानि-प्राकृतत्वेन विभक्तिव्यत्ययादनेकेषु जीवादिषु पदेषु यः सम्यक्त्वमिति धर्मधर्मिणोरभेदोपचारात् सम्यक्त्ववान् आत्मा प्रसरति तुशब्दोऽवधारणार्थः प्रसरत्येव, कथम् ? इत्याह–उदक इव तैलबिन्दुः, किमुक्तं भवति ?–यथा उदकैकदे-शगतोऽपि तैलबिन्दुः समस्तमुदकमाक्रामति तथैकदेशोत्पन्नरुचिरप्यात्मा तथाविधक्षयोपशमभावादशेषेषु तत्त्वेषु रुचिमान् भवति स एवंविधो बीजरुचिरिति ज्ञातव्यः । अधिगमरुचिमाह–'सो होइ' इत्यादि, यस्य श्रुतज्ञानम-र्थतो दृष्टमेकादशाङ्गानि, प्रकीर्णकमित्यत्र जातावेकवचनं, ततोऽयमर्थः–प्रकीर्णकानि उत्तराध्ययनादीनि दृष्टिवादः चशब्दादुपाङ्गानि च स भवत्यधिगमरुचिः । विस्ताररुचिमाह–'दवाण' इत्यादि, द्रव्याणां–धर्मास्तिकायादीनामशे-षाणामपि सर्वे भावाः–पर्याया यथायोगं सर्वप्रमाणैः–प्रत्यक्षादिभिः सर्वैश्च नयविधिभिः–नैगमादिनयप्रकारैः उप-लब्धाः स विस्ताररुचिरिति ज्ञातव्यः, सर्ववस्तुपर्यायप्रपञ्चावगमेन तस्या रुचेरतिनिर्मलरूपतया भावात् । क्रियारु-चिमाह—'दंसण' इत्यादि, दर्शनं च ज्ञानं च चारित्रं च दर्शनज्ञानचारित्रं समाहारो द्वन्द्वः तस्मिन् तथा तपसि विनये च तथा सर्वासु समितिषु–ईर्यासमित्यादिषु सर्वासु च गुप्तिषु–मनोगुप्तिप्रभृतिषु यः क्रियाभावः स क्रियारु-

॥ ५९ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३७] + गाथाः

दीप अनुक्रम [१६६--१९०]

चिः, किमुक्तं भवति ?—यस्य भावतो दर्शनाद्याचारानुष्ठाने रुचिरस्ति स खलु क्रियारुचिर्नाम । संक्षेपरुचिमाह—'अणभिग्गहिय' इत्यादि, नाभिगृहीता कुत्सिता दृष्टिर्येनासावनभिगृहीतकुदृष्टिः, अविशारदः प्रवचने जिनप्रणीते शेषेषु च कपिलादिप्रणीतेषु प्रवचनेषु अनभिगृहीतो—न विद्यते आभिमुख्येनोपादेयतया गृहीतं—ग्रहणमस्य इत्यनभिगृहीतः, पूर्वमनभिगृहीतकुदृष्टिरित्यनेन दर्शनान्तरपरिग्रहः प्रतिषिद्धः अनेन परदर्शनपरिज्ञानमात्रमपि निषिद्धमिति विशेषः, स इत्थंभूतः संक्षेपरुचिरिति ज्ञातव्यः ॥ धर्मरुचिमाह—'जो अत्थिकाय' इत्यादि, यः खलु जीवोऽस्तिकायानां—धर्मास्तिकायादीनां धर्मं—गत्युपष्टम्भकत्वादिरूपं स्वभावं श्रुतधर्मं चारित्रधर्मं च जिनाभिहितं श्रद्दधाति स धर्मरुचिरिति ज्ञातव्यः ॥ तदेवं निसर्गाद्युपाधिभेदाद् दशधा रुचिरूपं दर्शनमुक्तं, सम्प्रति यैर्लिङ्गैरिदमुत्पन्नमस्ति इति निश्चीयते तानि लिङ्गान्युपदर्शयन्नाह—'परमत्थसंथवो वा' इत्यादि, परमाश्च—तात्त्विकाश्च तेऽर्थाश्च—जीवादयस्ते परमार्थाः तेषु संस्तवः—परिचयः, तात्पर्येण बहुमानपुरस्सरं जीवादिपदार्थावगमाभ्यास इतियावत्, वाशब्दः समुच्चये, सुष्ठु—सम्यग्रीत्या दृष्टाः परमार्था—जीवादयो यैस्ते सुदृष्टपरमार्थाः तेषां सेवना—पर्युपास्तिः सुदृष्टपरमार्थसेवनं, स्त्रीत्वं प्राकृतत्वात्, वाशब्दोऽनुक्तसमुच्चये, यथाशक्ति तद्वैयावृत्यप्रवृत्तिश्च, अपिः समुच्चये, तथा 'वावन्नकुदंसणत्ति' दर्शनशब्दः प्रत्येकमभिसंबध्यते, व्यापन्नं—विनष्टं दर्शनं येषां ते व्यापन्नदर्शनाः—निह्नवादयः तथा कुत्सितं दर्शनं येषां ते कुदर्शनाः—शाक्यादयस्तेषां वर्जनं व्यापन्नकुदर्शनवर्जनम्, अत्रापि स्त्रीत्वं प्राकृतत्वात्, 'सम्मत्त-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [३७] + गाथा: दीप अनुक्रम [१६६--१९०]

सद्दहणा' इति सम्यक्त्वश्रद्धानं, एतैः परमार्थसंस्तवादिभिः सम्यक्त्वमस्तीति श्रद्धीयते इत्यर्थः । अस्य च दर्शनस्याचारा अष्टौ, ते च सम्यक् परिपालनीयाः, तदतिक्रमेण दर्शनस्याप्यतिक्रमभावात्, अतस्तानुपदर्शयितुमाह–'निस्संकिय' इत्यादि, शङ्कनं शङ्कितं, देशशङ्का सर्वशङ्का चेत्यर्थः, निर्गतं शङ्कितं यस्मादसौ निःशङ्कितः, देशसर्वशङ्कारहित इति भावार्थः, तत्र देशशङ्का—समाने जीवत्वे कथमेको भव्यः अपरस्त्वभव्य इति ?, सर्वशङ्का–प्राकृतनिबन्धत्वात्सकलमेवेदं प्रवचनं परिकल्पितं भविष्यतीति, न चेयं देशशङ्का सर्वशङ्का वा युक्ता, यत इह द्विविधा भावाः, तद्यथा–हेतुग्राह्या अहेतुग्राह्याश्च, तत्र हेतुग्राह्या जीवास्तित्वादयः, तत्साधकप्रमाणसद्भावात्, अहेतुग्राह्या अभव्यत्वादयः, अस्मदाद्यपेक्षया तत्साधकहेतूनामसंभवात्, प्रकृष्टज्ञानगोचरत्वात् तद्धेतूनामिति, प्राकृतोऽपि च निबन्धः प्रवचनस्य बालाद्यनुग्रहार्थः, उक्तं च–"बालस्त्रीमूढमूर्खाणां, नृणां चारित्रकाङ्क्षिणाम् । अनुग्रहार्थं तत्त्वज्ञैः, सिद्धान्तः प्राकृतः स्मृतः ॥ १ ॥" अपि च—प्राकृतोऽपि निबन्धः प्रवचनस्य दृष्टेष्टाविरोधी अतः कथमवान्तरपरिकल्पनाशङ्का ?, सर्वज्ञमन्तरेणान्यस्य दृष्टेष्टाविरोधिवचनासंभवात्, निःशङ्कित इति जीव एवार्हच्छासनप्रतिपन्नो दर्शनाचरणात् तत्प्राधान्यविवक्षायां दर्शनाचार उच्यते, एतेन दर्शनदर्शिनोः कथंचिदभेदमाह, एकान्तभेदे तु अदर्शिन इव तत्फलायोगतो मोक्षाभावप्रसङ्गः, एवमुत्तरेष्वपि त्रिषु पदेषु भावना कार्या, तथा 'निष्काङ्क्षित' इति, काङ्क्षणं काङ्क्षितं निर्गतं काङ्क्षितं यस्मादसौ निष्काङ्क्षितः, देशसर्वकाङ्क्षारहित इत्यर्थः, तत्र देशकाङ्क्षा–एकं दिगम्बरादिदर्शनम-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३७] + गाथा: दीप अनुक्रम [१६६--१९०]

भिकाङ्क्षते सर्वकाङ्क्षा–सर्वाण्येव दर्शनानि शोभनानीत्येवमनुचिन्तनं, इयं च द्विधाऽप्ययुक्ता, शेषदर्शनेषु षड्जीवनिकायपीडाया असत्प्ररूपणायाश्च भावात् । तथा विचिकित्सा–मतिविभ्रमः फलं प्रति संशय इतियावत् निर्गता विचिकित्सा यस्मादसौ निर्विचिकित्सः, 'साध्वेवं जिनशासनं, किन्तु प्रवृत्तस्य सतो ममास्मात् फलं भविष्यति न वा ?, क्रियायाः कृषिवलादिषु उभयथाऽप्युपलब्धेः' इतिविकल्परहितः, न ह्यविकल उपाय उपेयवस्तुप्रापको न भवतीति संजातनिश्चयो निर्विचिकित्स इति भावः, एतावताऽंशेन निःशङ्कितात् भिन्नः, यद्वा 'निव्विदुगुंछो' इति निर्विद्वज्जुगुप्सः साधुजुगुप्सारहित इत्यर्थः, उदाहरणं च विद्वज्जुगुप्सायां श्रावकदुहिता । तथा 'अमूढदिट्ठी यत्ति' बालतपस्वितपोविद्यातिशयदर्शनैर्न मूढा–स्वभावाचलिता दृष्टिः–सम्यग्दर्शनरूपा यस्यासावमूढदृष्टिः, अत्रोदाहरणं सुलसाश्राविका, सा ह्यम्बडपरिव्राजकसमृद्धीरुपलभ्यापि न संमोहं गता । तदेवं गुणिप्रधान आचार उक्तः, सम्प्रति गुणप्रधानमाह–'उववूह' इत्यादि, उपबृंहणं च स्थिरीकरणं च उपबृंहणस्थिरीकरणे, तत्रोपबृंहणं नाम समानधार्मिकाणां सद्गुणप्रशंसनेन तद्वृद्धिकरणं, स्थिरीकरणं धर्माद् विषीदतां तत्रैव स्थापनं । वात्सल्यं च प्रभावना च वात्सल्यप्रभावने, तत्र वात्सल्यं समानधार्मिकाणां प्रीत्योपकारकरणं, प्रभावना धर्मकथादिभिस्तीर्थप्रख्यापना । अयं च गुणप्रधाननिर्देशो गुणगुणिनोः कथञ्चिदभेदख्यापनार्थः, अन्यथा एकान्ताभेदे गुणनिवृत्तौ गुणिनोऽपि निवृत्तेः

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३७] + गाथा: दीप अनुक्रम [१६६--१९०]

शून्यतापत्तिः । एतेऽष्टौ दर्शनाचाराः ॥ तदेवमुक्ताः सरागदर्शनभेदाः, तदभिधानाच्चाभिहिताः सरागदर्शनार्यभेदाः ॥ सम्प्रति वीतरागदर्शनार्यादिभेदानाह–(से किं तमित्यादि, तदेवं दर्शनार्यभेदानुक्त्वा चारित्रार्यभेदानाह—)

से किं तं चरित्ता[य]रिया ?, चरित्तारिया दुविहा प०, तं०—सरागचरित्तारिया य वीयरागचरित्तारिया य, से किं तं सरागचरित्तारिया ?, सरागचरित्तारिया दुविहा प०, तं०—सुहुमसंपरायसरागचरित्तारिया य बायरसंपरायसरागचरित्तारिया य । से किं तं सुहुमसंपरायसरागचरित्तारिया ?, सुहुमसंपरायसरागचरित्तारिया दुविहा प०, तं०—पढमसमयसुहुमसंपरायसरागचरित्तारिया य अपढमसमयसुहुमसंपरायसरागचरित्तारिया य, अहवा चरिमसमयसुहुमसंपरायसरागचरित्तारिया य अचरिमसमयसुहुमसंपरायसरागचरित्तारिया य, अहवा सुहुमसंपरायसरागचरित्तारिया दुविहा प०, तं०—संकिलिस्समाणा य विसुज्झमाणा य, सेत्तं सुहुमसंपरायसरागचरित्तारिया । से किं तं बादरसंपरायसरागचरित्तारिया ?, बादरसंपरायसरागचरित्तारिया दुविहा प०, तं०—पढमसमयबादरसंपरायसरागचरित्तारिया अपढमसमयबादरसंपरायसरागचरित्तारिया य, अहवा चरिमसमयबादरसंपरायसरागचरित्तारिया य अचरिमसमयबादरसंपरायसरागचरित्तारिया य, अहवा बादरसंपरायसरागचरित्तारिया दुविहा प०, तं०—पडिवाई य अपडिवाई य, सेत्तं बादरसंपरायसरागचरित्तारिया, सेत्तं सरागचरित्तारिया । से किं तं वीयरायचरित्तारिया ?, वीयरायचरित्तारिया दुविहा प०, तं०—उवसंतकसायवीयरायचरित्तारिया य खीणकसायवीयरायचरित्तारिया य । से किं तं उवसंतकसायवीयरायचरित्तारिया ?, उवसंतकसायवीयरायचरित्तारिया दुविहा प०,तं ०—पढमसमयउवसंतकसायवीयरायचरित्तारिया य अपढमसम-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

यउवसंतकसायवीयरायचरित्तारिया य,अहवा चरिमसमयउवसंतकसायवीयरायचरित्तारिया य अचरिमसमयउवसंतकसायवीयरायचरित्तारिया य, सेत्तं उवसंतकसायवीयरायचरित्तारिया । से किं तं खीणकसायवीयरायचरित्तारिया ?, खीणकसायवीयरायचरित्तारिया दुविहा प०, तं०—छउमत्थखीणकसायवीयरायचरित्तारिया य केवलिखीणकसायवीयरायचरित्तारिया य । से किं तं छउमत्थखीणकसायवीयरायचरित्तारिया ?, छउमत्थखीणकसायवीयरायचरित्तारिया दुविहा प०, तं०—सयंबुद्धछउमत्थखीणकसायवीयरायचरित्तारिया य बुद्धबोहियछउमत्थखीणकसायवीयरायचरित्तारिया य । से किं तं सयंबुद्धछउमत्थखीणकसायवीयरायचरित्तारिया ?, सयंबुद्धछउमत्थखीणकसायवीयरायचरित्तारिया दुविहा प०, तं०—पढमसमयसयंबुद्धछउमत्थखीणकसायवीयरायचरित्तारिया य अपढमसमयसयंबुद्धछउमत्थखीणकसायवीयरायचरित्तारिया य, अहवा चरिमसमयसयंबुद्धछउमत्थखीणकसायवीयरायचरित्तारिया य अचरिमसमयसयंबुद्धछउमत्थखीणकसायवीयरायचरित्तारिया य । सेत्तं सयंबुद्धखीणकसायवीयरायचरित्तारिया । से किं तं बुद्धबोहियछउमत्थखीणकसायवीयरायचरित्तारिया ?, बुद्धबोहियछउमत्थखीणकसायवीयरायचरित्तारिया दुविहा प०, तं०—पढमसमयबुद्धबोहियछउमत्थखीणकसायवीयरायचरित्तारिया य अपढमसमयबुद्धबोहियछउमत्थखीणकसायवीयरायचरित्तारिया य, अहवा चरिमसमयबुद्धबोहियछउमत्थखीणकसायवीयरायचरित्तारिया य अचरिमसमयबुद्धबोहियछउमत्थखीणकसायवीयरायचरित्तारिया य, सेत्तं बुद्धबोहियछउमत्थखीणकसायवीयरायचरित्तारिया, सेत्तं छउमत्थखीणकसायवीयरायचरित्तारिया । से किं तं केवलिखीणकसायवीयरायचरित्तारिया ?, केवलिखीणकसायवीयरायचरित्तारिया दुविहा प०, तं० सजोगिकेवलिखीणक-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सायवीयरायचरित्तारिया य अजोगिकेवलिखीणकसायवीयरायचरित्तारिया य । से किं तं सजोगिकेवलिखीणकसायवीयरायचरित्तारिया ?, सजोगिकेवलिखीणकसायवीयरायचरित्तारिया दुविहा प०, तं०—पढमसमयसजोगिकेवलिखीणकसायवीयरायचरित्तारिया य अपढमसमयसजोगिकेवलिखीणकसायवीयरायचरित्तारिया य, अहवा चरिमसमयसजोगिकेवलिखीणकसायवीयरायचरित्तारिया य अचरिमसमयसजोगिकेवलिखीणकसायवीयरायचरित्तारिया य, सेत्तं सजोगिकेवलिखीणकसायवीयरायचरित्तारिया । से किं तं अजोगिकेवलिखीणकसायवीयरायचरित्तारिया ?, अजोगिकेवलिखीणकसायवीयरायचरित्तारिया दुविहा प०, तं०—पढमसमयअजोगिकेवलिखीणकसायवीयरायचरित्तारिया य अपढमसमयअजोगिकेवलिखीणकसायवीयरायचरित्तारिया य, अहवा चरिमसमयअजोगिकेवलिखीणकसायवीयरायचरित्तारिया य अचरिमसमयअजोगिकेवलिखीणकसायवीयरायचरित्तारिया य, सेत्तं अजोगिकेवलिखीणकसायवीयरायचरित्तारिया, सेत्तं केवलिखीणकसायवीयरायचरित्तारिया, सेत्तं खीणकसायवीयरायचरित्तारिया सेत्तं वीयरायचरित्तारिया । अहवा चरित्तारिया पंचविहा प०, तं०—सामाइअचरित्तारिया छेदोवट्ठावणीयचरित्तारिया परिहारविसुद्धिचरित्तारिया सुहुमसंपरायचरित्तारिया अहक्खायचरित्तारिया य । से किं तं सामाइयचरित्तारिया ?, सामाइयचरित्तारिया दुविहा प०, तं०—इत्तरियसामाइयचरित्तारिया य आवकहियसामाइयचरित्तारिया य, सेत्तं सामाइयचरित्तारिया । से किं तं छेदोवट्ठावणियचरित्तारिया ?, छेदोवट्ठावणियचरित्तारिया दुविहा प०, तं०—साइयारछेदोवट्ठावणियचरित्तारिया य निरइयारछेदोवट्ठावणियचरित्तारिया य, सेत्तं छेदोवट्ठावणियचरित्तारिया । से किं तं परिहारविसुद्धियचरित्तारिया ?, परिहारविसुद्धियचरित्तारिया

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३७]

दीप अनुक्रम [१९०]

दुविहा प०, तं०—निविस्समाणपरिहारविसुद्धियचरित्तारिया य निविट्ठकाइयपरिहारविसुद्धियचरित्तारिया य, से त्तं परिहारविसुद्धियचरित्तारिया । से किं तं सुहुमसंपरायचरित्तारिया ?, सुहुमसंपरायचरित्तारिया दुविहा प०, तं०—संकिलिस्समाणसुहुमसंपरायचरित्तारिया य विसुज्झमाणसुहुमसंपरायचरित्तारिया य, सेत्तं सुहुमसंपरायचरित्तारिया । से किं तं अहक्खायचरित्तारिया ?, अहक्खायचरित्तारिया दुविहा प०, तं०—छउमत्थअहक्खायचरित्तारिया य केवलिअहक्खायचरित्तारिया य, सेत्तं अहक्खायचरित्तारिया, सेत्तं चरित्तारिया, सेत्तं अणिद्धिपत्तारिया, सेत्तं कम्मभूमगा, सेत्तं गब्भवक्कंतिया, सेत्तं मणुस्सा । (सू० ३७)

'से किं तं' इत्यादि सुगमं, यावद् 'अहवा चरित्तारिया पंचविहा पन्नत्ता तंजहा–सामाइअचरित्तारिया' इत्यादि, नवरं पढमसमय० अपढमसमय० इति, ये तेषामेवोपशान्तकषायत्वादीनां विशेषाणां प्रथमे समये वर्तन्ते ते प्रथमसमयाः, ततो द्वितीयादिषु समयेषु वर्तमाना अप्रथमसमयाः, तथा 'चरिमसमय० अचरिमसमय०' इति ये तेषामेवोपशान्तकषायत्वादीनां विशेषाणामन्त्यसमये वर्तन्ते ते चरमसमयाः, ये ततोऽर्वागू द्विचरमत्रिचरमादिषु समयेषु वर्तन्ते ते अचरमाः। सामायिकादिचारित्राणां स्वरूपमिदम्–समो रागद्वेषरहितत्वाद् आयो गमनं समायः एष चान्यासामपि साधुक्रियाणामुपलक्षणं, सर्वासामपि साधुक्रियाणां रागद्वेषरहितत्वात्, समायेन निर्वृत्तं समाये भवं वा सामायिकं, यद्वा समानां–ज्ञानदर्शनचारित्राणामायो–लाभः समायः समाय एव सामायिकं विनयादेराकृतिगणतया "विन-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति:

यादिभ्यः" (पा०५-४-३४) इत्यनेन स्वार्थिक इकण्, तच्च सर्वसावद्यविरतिरूपं, यद्यपि च सर्वमपि चारित्रमविशेषतः सामायिकं तथाऽपि छेदादिविशेषैर्विशेष्यमाणमर्थतः शब्दान्तरतश्च नानात्वं भजते,प्रथमं पुनरविशेषणात् सामान्यशब्द एवावतिष्ठते सामायिकमिति,तच्च द्विधा–इत्वरं यावत्कथिकं च,तत्रेत्वरं भरतैरावतेषु प्रथमपश्चिमतीर्थकरतीर्थेष्वनारोपितमहाव्रतस्य शैक्षकस्य विज्ञेयं,यावत्कथिकं प्रव्रज्याप्रत्तिपत्तिकालादारभ्याप्राणोपरमात्,तच्च भरतैरावतभाविमध्यद्वाविंशतितीर्थकरतीर्थान्तरगतानां विदेहतीर्थकरतीर्थान्तरगतानां च साधूनामवसेयं,तेषामुपस्थापनाया अभावात्, उक्तं च–"सव्वमिणं सामाइय छेयाइविसेसियं पुण विभिन्नं। अविसेसं सामाइय चियमिह सामन्नसन्नाए ॥१॥ सावज्जजोगविरइत्ति तत्थ सामाइयं दुहा तं च। इत्तरमावकहंति य पढमं पढमंतिमजिणाणं ॥२॥ तित्थेसु अणारोवियवयस्स सेहस्स थोवकालीयं। सेसाणमावकहियं तित्थेसु विदेहयाणं च ॥३॥" ननु च इत्वरमपि सामायिकं करोमि भदन्त! सामायिकं यावज्जीवमित्येवं यावदायुरागृहीतं,तत उपस्थापनाकाले तत्परित्यजतः कथं न प्रतिज्ञाभङ्गः?, उच्यते, ननु प्रागेवोक्तं–सर्वमेवेदं चारित्रमविशेषतः सामायिकं, सर्वत्रापि सावद्ययोगविरतिसद्भावात्, केवलं छेदादिविशुद्धिविशेषैर्विशेष्यमाणमर्थतः शब्दान्तरतश्च नानात्वं भजते, ततो यथा यावत्कथिकं सामायिकं छेदोपस्थापनं च परमविशुद्धिविशेषरूपसूक्ष्मसंपरायादिचारित्रावाप्तौ न भङ्गमास्कन्दति तथेत्वरमपि सामायिकं विशुद्धिविशेषरूपच्छेदोपस्थापनावाप्तौ, यदि हि प्रव्रज्या परित्यज्यते तर्हि तद् भङ्गमापद्यते, न तस्यैव विशुद्धिविशेषावाप्तौ, उक्तं च–"उन्निक्ख-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मओ भंगो जो पुण तं चिय करेइ सुद्धयरं। सन्नामेत्तविसिट्ठं सुहुमंपिव तस्स को भंगो ? ॥१॥" तथा छेदः पूर्वपर्यायस्य उपस्थापना च महाव्रतेषु यस्मिन् चारित्रे तच्छेदोपस्थापनं, तच्च द्विधा–सातिचारं निरतिचारं च, तत्र निरतिचारं यदित्वरसामायिकवतः शैक्षकस्यारोप्यते तीर्थान्तरसंक्रान्तौ वा, यथा पार्श्वनाथतीर्थाद् वर्द्धमानतीर्थं संक्रामतः पञ्चयामप्रतिपत्तौ, सातिचारं यन्मूलगुणघातिनः पुनर्व्रतोच्चारणं, उक्तं च–'सेहस्स निरइयारं तित्थन्तरसंकमे व तं होज्जा। मूलगुणघाइणो साइयारमुभयं च ठियकप्पे ॥ १ ॥" 'उभयं चेति' सातिचारं निरतिचारं च 'स्थितकल्पे' इति प्रथमपश्चिमतीर्थकरतीर्थकाले। तथा परिहरणं परिहारः–तपोविशेषः तेन विशुद्धिर्यस्मिन् चारित्रे तत्परिहारविशुद्धिकं, तच्च द्विधा–निर्विशमानकं निर्विष्टकायिकं च, तत्र निर्विशमानका विवक्षितचारित्रासेवकाः, निर्विष्टकायिका आसेवितविवक्षितचारित्रकायाः, तदव्यतिरेकाचारित्रमप्येवमुच्यते। इह नवको गणः—चत्वारो निर्विशमानकाश्चत्वारश्चानुचारिणः एकः कल्पस्थितो वाचनाचार्यः, यद्यपि च सर्वेऽपि श्रुतातिशयसंपन्नाः तथाऽपि कल्पत्वात् तेषामेकः कश्चित् कल्पस्थितोऽवस्थाप्यते। निर्विशमानकानां चायं परिहारः—परिहारियाण उ तवो जहन्न मज्झो तहेव उक्कोसो। सीउण्हवासकाले भणिओ धीरेहि पत्तेयं ॥ १ ॥ तत्थ जहन्नो गिम्हे चउत्थ छट्ठं तु होइ मज्झिमओ।

१ परिहारिकाणां तु तपः जघन्यं मध्यमं तथैवोत्कृष्टं। शीतोष्णवर्षाकाले भणितं धीरैः प्रत्येकम् ॥ १ ॥ तत्र जघन्यं ग्रीष्मे चतुर्थं षष्ठं तु भवति मध्यमं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अट्ठमंमिह उक्कोसो एत्तो सिसिरे पवक्खामि ॥२॥ सिसिरे उ जहन्नाई छट्ठाई दसमचरिमगो होइ। वासासु अट्ठमाई बारसपज्जन्तगो नेओ ॥ ३ ॥ पारणगे आयामं पंचसु अगहो दोसुऽभिग्गहो भिक्खे । कप्पट्ठिया पइदिणं करेन्ति एमेव आयामं ॥ ४ ॥ एवं छम्मासतवं चरिउं परिहारगा अणुचरन्ति । अणुचरगे परिहारियपयट्ठिए जाव छम्मासा ॥ ५ ॥ कप्पट्ठिएवि एवं छम्मासतवं करेइ सेसा उ। अणुपरिहारिगभावं वयंति कप्पट्ठियत्तं च ॥ ६ ॥ एवेसो अट्ठारसमासपमाणो उ वण्णिओ कप्पो। संखेवओ विसेसो विसेससुत्ताउ नायव्वो ॥ ७ ॥ कप्पसमत्तीएँ तयं जिणकप्पं वा उविंति गच्छं वा। पडिवज्जमाणगा पुण जिणस्सगासे पवज्जंति ॥ ८ ॥ तित्थयरसमीवासेवगस्स पासे व नो उ अन्नस्स। एएसिं जं चरणं परिहारविसुद्धियं तं तु ॥ ९ ॥ अथ एते परिहारविशुद्धिकाः कस्मिन् क्षेत्रे काले वा भव-

अष्टमं तु उत्कृष्टमितः शिशिरे प्रवक्ष्यामि ॥ २ ॥ शिशिरे तु जघन्यादि षष्ठादि दशमचरमकं भवति। वर्षासु अष्टमादि द्वादशपर्यंतकं ज्ञेयं ॥ ३ ॥ पारणके आचाम्लं भिक्षायां च पञ्चानां ग्रहः द्वयोरभिग्रहः। कल्पस्थिता अपि प्रतिदिनं कुर्वन्ति एवमेवाचाम्लं ॥ ४ ॥ एवं षण्मासान् तपश्चरित्वा परिहारिका अनुचरन्ति । अनुचरकाः परिहारिकपदस्थिता यावत्षण्मासान् ॥ ५ ॥ कल्पस्थितोऽप्येवं षण्मासांस्तपः करोति शेषाश्च। अनुपरिहारिकभावं व्रजन्ति कल्पस्थितत्वं च ॥ ६ ॥ एवं एषोऽष्टादशमासप्रमाणस्तु वर्णितः कल्पः। सङ्क्षेपतो विशेषो विशेषसूत्रात् ज्ञातव्यः ॥ ७ ॥ कल्पसमाप्तौ तं (परिहारं) जिनकल्पं वोपयन्ति गच्छं वा। प्रतिपद्यमानकाः पुनर्जिनसकाशात्प्रपद्यन्ते ॥ ८ ॥ तीर्थकरसमीपासेवकस्य पार्श्वे न पुनरन्यस्य। एतेषां यच्चरणं परिहारविशुद्धिकं तत्तु ॥ ९ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३७] दीप अनुक्रम [१९०]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्तिः

न्ति ?, उच्यते, इह क्षेत्रादिनिरूपणार्थं विंशतिद्वाराणि, तद्यथा–१ क्षेत्रद्वारं २ कालद्वारं ३ चारित्रद्वारं ४ तीर्थद्वारं ५ पर्यायद्वारं ६ आगमद्वारं ७ वेदद्वारं ८ कल्पद्वारं ९ लिङ्गद्वारं १० लेश्याद्वारं ११ ध्यानद्वारं १२ गणद्वारं १३ अभिग्रहद्वारं १४ प्रव्रज्याद्वारं १५ मुण्डापनद्वारं १६ प्रायश्चित्तविधिद्वारं १७ कारणद्वारं १८ निष्प्रतिकर्मताद्वारं १९ भिक्षाद्वारं २० बन्धद्वारम् । तत्र क्षेत्रे द्विधा मार्गणा–जन्मतः सद्भावतश्च, यत्र क्षेत्रे जातस्तत्र जन्मतः मार्गणा, यत्र च कल्पे स्थितो वर्तते तत्र सद्भावतः, उक्तं च—"[1]खेत्ते दुहेह मग्गण जम्मणओ चेव संतिभावे य । जम्मणओ जहिं जातो संतीभावो य जहि कप्पो ॥ १ ॥" तत्र जन्मतः सद्भावतश्च पञ्चसु भरतेषु पञ्चसैरावतेषु, न तु महाविदेहेषु, न चैतेषां संहरणमस्ति, येन जिनकल्पिक इव संहरणतः सर्वासु कर्मभूमिषु अकर्मभूमिषु वा प्राप्येरन्, उक्तं च—"[2]खेत्ते भरहेरवएसु होन्ति संहरणवज्जिया नियमा" १। कालद्वारे–अवसर्पिण्यां तृतीये चतुर्थे वाऽरके जन्म, सद्भावः पञ्चमेऽपि, उत्सर्पिण्यां द्वितीये तृतीये चतुर्थे वा जन्म, सद्भावः पुनः तृतीये चतुर्थे वा, उक्तं च—"[3]ओसप्पिणीए दोसुं जम्मणओ तीसु संतीभावेण । उस्सप्पिणि विवरीओ जम्मणओ संतिभावेण ॥ १ ॥" नोत्सर्पिण्यवसर्पिणीरूपे तु चतुर्थारकप्रतिभागकाले न संभवन्ति, महाविदेहक्षेत्रे तेषामसंभवात् २। चारित्रद्वारे–संयमस्था-

१ क्षेत्रे द्विधेह मार्गणा जन्मतश्चैव सद्भावे च । जन्मतो यत्र जातः सद्भावतश्च यत्र कल्पः ॥ १ ॥ २ क्षेत्रे भरतैरावतेषु भवन्ति संहरणवर्जिता नियमात् । ३ अवसर्पिण्यां द्वयोर्जन्मतः तिसृषु सद्भावतः । उत्सर्पिण्यां विपरीतो जन्मतः सद्भावेन ॥ १ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नद्धारेण मार्गणा, तत्र सामायिकस्य छेदोपस्थापनस्य च चारित्रस्य यानि जघन्यानि संयमस्थानानि तानि परस्परं तुल्यानि, समानपरिणामत्वात्, ततोऽसंख्येयलोकाकाशप्रदेशप्रमाणानि संयमस्थानान्यतिक्रम्योर्द्धं यानि संयमस्थानानि तानि परिहारविशुद्धिकयोग्यानि, तान्यपि च केवलिप्रज्ञया परिभाव्यमानानि असंख्येयलोकाकाशप्रदेशप्रमाणानि, तानि प्रथमद्वितीयचारित्राविरोधीनि, तेष्वपि संभवात्, तत ऊर्ध्वं यानि संख्यातीतानि संयमस्थानानि तानि सूक्ष्मसंपराययथाख्यातचारित्रयोग्यानि, उक्तं च—"तुल्ला जहन्नठाणे संजमठाणाणि पढमबिइयाणं । तत्तो असंखलोए गंतुं परिहारियट्ठाणा ॥ १ ॥ तेऽवि असंखा लोगा अविरुद्धा चेव पढमबिइयाणं । उवरिंपि तउ असंखा संजमठाणा उ दोण्हंपि ॥ २ ॥" तत्र परिहारविशुद्धिककल्पप्रतिपत्तिः स्वकीयेष्वेव संयमस्थानेषु वर्तमानस्य भवति न शेषेषु, यदा त्वतीतनयमधिकृत्य पूर्वप्रतिपन्नो विवक्ष्यते तदा शेषेष्वपि संयमस्थानेषु भवति, परिहारविशुद्धिकल्पसमाप्त्यनन्तरमन्येष्वपि चारित्रेषु संभवात्, तेष्वपि च वर्तमानस्यातीतनयमपेक्ष्य पूर्वप्रतिपन्नत्वाविरोधात्, उक्तं च—"सट्ठाणे पडिवत्ती अन्नेसुवि होज्ज पुव्वपडिवन्नो । तेसुवि वट्टन्तो सो तीतनयं पप्प वुच्चति उ ॥१॥ ३।"

१ तुल्यानि जघन्यस्थाने संयमस्थानानि प्रथमद्वितीययोः । ततोऽसंख्यलोकान् गत्वा परिहारिकस्थानानि॥ १ ॥ तान्यपि असंख्या लोका अविरुद्धा एव प्रथमद्वितीययोः । उपर्यपि ततोऽसंख्येयानि संयमस्थानानि द्वयोस्तु ॥ २ ॥ २ स्वस्थाने प्रतिपत्तिरन्येष्वपि भवेत् पूर्वप्रतिपन्नः । तेष्वपि वर्त्तमानः सोऽतीतनयं प्राप्योच्यते तु ॥ १ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तीर्थद्वारे परिहारविशुद्धिको नियमतस्तीर्थे प्रवर्तमाने एव सति भवति, न तच्छेदे नानुत्पत्त्यां वा तदभावे जातिस्मरणादिना, उक्तं च—"तित्थंत्ति नियमतोचिय होइ स तित्थंमि न उण तदभावे । विगएऽणुप्पन्ने वा जाइसरणाइएहिंतो ॥१॥ ४।" पर्यायद्वारे—पर्यायो द्विधा–गृहस्थपर्यायो यतिपर्यायश्च, एकैकोऽपि द्विधा–जघन्यत उत्कृष्टतश्च, तत्र गृहस्थपर्यायो जघन्यत एकोनत्रिंशद् वर्षाणि,यतिपर्यायो विंशतिः, द्वावपि च उत्कर्षतो देशोनपूर्वकोटिप्रमाणौ, उक्तं च—"एयस्स एस नेओ गिहिपज्जाओ जहन्निगुणतीसा । जइपज्जाओ वीसा दोसुवि उक्कोस देसूणा ॥१॥ ५।" आगमद्वारे–अपूर्वमागमं स नाधीते,यस्मात् तं कल्पमधिकृत्य प्रगृहीतोचितयोगाराधनत एव स कृतकृत्यतां भजते, पूर्वाधीतं तु विस्रोतसिकाक्षयनिमित्तं नित्यमेवैकाग्रमनाः सम्यक् प्रायेणानुस्मरति, आह च–"अप्पुव्वं नाहिज्जइ आगममेसो पडुच्च तं कप्पं । जमुचियपगहिअजोगाराहणओ चेव कयकिच्चो ॥ १ ॥ पुव्वाहीयं तु तयं पायमणुसरइ निच्चमेवेस । एगग्गमणो सम्मं विस्सोयसिगाइखयहेऊ ॥२॥ ६।" वेदद्वारे—प्रवृत्तिकाले वेदतः पुरुष-

१ तीर्थमिति नियमत एव भवति स तीर्थे न पुनस्तदभावे । विगतेऽनुत्पन्ने वा जातिस्मरणादिभिः ॥ १ ॥ २ एतस्यैष ज्ञातव्यो गृहिपर्यायो जघन्यत एकोनत्रिंशत् । यतिपर्यायो विंशतिः द्वयोरप्युत्कर्षतो देशोना (पूर्वकोटी) ॥ १ ॥ ३ अपूर्वं नाधीते आगममेष प्रतीत्य तं कल्पम् । यदुचितप्रगृहीतयोगाराधनतश्चैव कृतकृत्यः ॥ १ ॥ पूर्वाधीतं तु तत् प्रायोऽनुस्मरति नित्यमेवैषः । एकाग्रमनाः सम्यक् विश्रोतसिकादिक्षयहेतोः ॥ २ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वेदो वा भवेत् नपुंसकवेदो वा, न स्त्रीवेदः, स्त्रियाः परिहारविशुद्धिकल्पप्रतिपत्त्यसंभवात्, अतीतनयमधिकृत्य पुनः पूर्वप्रतिपन्नश्चिन्त्यमानः सवेदो वा भवेत् अवेदो वा, तत्र सवेदः श्रेणिप्रतिपत्त्यभावे उपशमश्रेणिप्रतिपत्तौ वा, क्षपकश्रेणिप्रतिपत्तौ त्ववेद इति, उक्तं च–"वेदो पवित्तिकाले इत्थीवज्जो उ होइ एगयरो । पुव्वपडिवन्नगो पुण होज्ज सवेदो अवेदो वा ॥१॥ ७।" कल्पद्वारे–स्थितकल्पे एवायं नास्थितकल्पे, "ठियकप्पंमि य नियमा" इति वचनात्, तत्राचेलक्यादिषु दशस्वपि स्थानेषु ये स्थिताः साधवः तत्कल्पः स्थितकल्प उच्यते, ये पुनश्चतुर्षु शय्यातरपिण्डादिष्वस्थितेषु कल्पेषु स्थिताः शेषेषु चाचेलक्यादिषु षट्स्वस्थिताः तत्कल्पोऽस्थितकल्पः, उक्तं च–"ठियअठियओ य कप्पो आचेलक्काइएसु ठाणेसु । सवेसु ठिया पठमो चउ ठिय छसु अट्ठिया बीओ ॥ १ ॥" आचेलक्यादीनि च दश स्थानान्यमूनि–"[3]आचेलकुद्देसियसेज्जाययरायपिंडकिइकम्मे । वयजेट्ठपडिक्कमणे मासं पज्जोसवणकप्पो ॥ १ ॥ चत्वारश्चावस्थिताः कल्पा इमे–"सेज्जायरपिंडम्मी चाउज्जामे य पुरिसजेट्ठे य । किइकम्मस्स य करणे चत्तारि अवट्ठिया कप्पा ॥१॥ ८।" लिङ्गद्वारे–नियमतो द्विविधेऽपि लिङ्गे भवति, तद्यथा—द्रव्यलिङ्गे भावलिङ्गे च, एकेनापि विना

१ वेदः प्रवृत्तिकाले स्त्रीवर्जस्तु भवत्येकतरः । पूर्वप्रतिपन्नकः पुनर्भवेत् सवेदोऽवेदो वा ॥ १ ॥ २ स्थितास्थितश्च कल्प आचेलक्यादिकेषु स्थानेषु । सर्वेषु स्थिताः प्रथमः चतुर्षु स्थिताः षट्स्वस्थिता द्वितीयः ॥ १ ॥ ३ आचेलक्यमाधाकर्मिकं शय्यातरः राजपिण्डः कृतिकर्म । व्रतानि ज्येष्ठः प्रतिक्रमणं मासः पर्युषणाकल्पः ॥ १ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विवक्षितकल्पोचितसामाचार्ययोगात् ९। लेश्याद्वारे—तेजःप्रभृतिकासूत्तरासु तिसृषु विशुद्धासु लेश्यासु परिहार-विशुद्धिकं कल्पं प्रतिपद्यते, पूर्वप्रतिपन्नः पुनः सर्वास्वपि कथञ्चिद् भवति, तत्रापीतरास्वविशुद्धलेश्यासु नात्यन्तसंक्लि-ष्टासु वर्तते, तथाभूतासु वर्तमानो(ऽपि)न प्रभूतकालमवतिष्ठते, किंतु स्तोकं, यतः स्वकीर्यवशात् झटित्येव ताभ्यो व्यावर्तते, अथ प्रथमत एव कस्मात् प्रवर्तते ?, उच्यते, कर्मवशात्, उक्तं च—"लेसासु विसुद्धासुं पडिवज्जइ तीसु न उण सेसासु। पुवपडिवन्नओ पुण होज्जा सव्वासुवि कहंचि ॥ १ ॥ णऽच्चंतसंकिलिट्ठासु थोवं कालं स हंदि इय-रासु। चित्ता कम्माण गई तहा विवरीयं (वि विरियं) फलं देइ ॥ २॥" १०। ध्यानद्वारे—धर्मध्यानेन प्रवर्धमानेन परिहारविशुद्धिकं कल्पं प्रतिपद्यते, पूर्वप्रतिपन्नः पुनरार्त्तरौद्रयोरपि भवति, केवलं प्रायेण निरनुबन्धः, आह च—"झाणंमिवि धम्मेणं पडिवज्जइ सो पवड्ढमाणेणं। इयरेसुवि झाणेसुं पुवपवन्नो न पडिसिद्धो ॥ १ ॥ एवं च झाण-जोगे उद्दामे तिव्वकम्मपरिणामा। रोद्दऽट्टेसुवि भावो इमस्स पायं निरणुबन्धो ॥२॥" ११। गणनाद्वारे—जघन्यतः त्रयो गणाः प्रतिपद्यन्ते, उत्कर्षतस्तु शतसंख्याः, पूर्वप्रतिपन्ना जघन्यत उत्कृष्टतो वा शतशः, पुरुषगणनया जघन्य-तः प्रतिपद्यमानाः सप्तविंशतिः उत्कर्षतः सहस्रं, पूर्वप्रतिपन्नकाः पुनर्जघन्यतः शतशः उत्कर्षतः सहस्रशः, आह च—"गणओ तिन्नेव गणा जहन्न पडिवत्ति सहस उक्कोसा। उक्कोस जहन्नेणं सयसोचिय पुवपडिवन्ना ॥ १ ॥ सत्तावीस जहन्ना सहस्समुक्कोसओ य पडिवत्ती। सयसो सहस्ससो वा पडिवन्न जहन्नउक्कोसा ॥ २ ॥" अन्यच्च—

यदा पूर्वप्रतिपन्नः कल्पमध्यादेको निर्गच्छति अन्यः प्रविशति तदोनप्रक्षेपे प्रतिपत्तौ कदाचिदेकोऽपि भवति पृथक्त्वं वा, पूर्वप्रतिपन्नोऽप्येवं भजनया कदाचिदेकः प्राप्यते पृथक्त्वं वा, उक्तं च–"पंडिवज्जमाण भयणाऍ होज्ज एक्कोऽवि ऊणपक्खेवे । पुव्वपडिवन्नयावि य भइआ एक्को पुहुत्तं वा ॥१॥" १२ । अभिग्रहद्वारे–अभिग्रहाश्चतुर्विधाः, तद्यथा–द्रव्याभिग्रहाः क्षेत्राभिग्रहाः कालाभिग्रहाः भावाभिग्रहाश्च, एते चान्यत्र चर्चिता इति न भूयश्चर्च्यन्ते, तत्र परिहारविशुद्धिकस्यैतेऽभिग्रहा न भवन्ति, यस्मादेतस्य कल्प एव यथोदितरूपोऽभिग्रहो वर्तते, उक्तं च—"दव्वाईअभिग्गह विचित्तरूवा न होन्ति पुण केइ । एअस्स जीअकप्पो कप्पोचियऽभिग्गहो जेणं ॥ १ ॥ एयंमि गोयराई नियया नियमेण निरववादा य । तप्पालणं चिय परं एअस्स विसुद्धिठाणं तु ॥२॥" १३ । प्रव्रज्याद्वारे–नासावन्यं प्रव्राजयति, कल्पस्थितिरेषेतिकृत्वा, आह च—"पव्वावेइ न एसो अन्नं कप्पट्ठिइत्ति काउणं" इति, उपदेशं पुनर्यथाशक्ति प्रयच्छति १४ । मुण्डापनद्वारेऽपि नासावन्यं मुण्डयति, अथ प्रव्रज्यानन्तरं नियमतो मुण्डनमिति प्रव्रज्याग्रहणेनैव तद् गृहीतमिति किमर्थं पृथग्द्वारं ?, तदयुक्तं, प्रव्रज्याद्वारे नियमतो मुण्डनस्यासंभवात्, अयोग्यस्य कथञ्चिद्दत्तायामपि प्रव्रज्यायां पुनरयोग्यतापरिज्ञाने मुण्डनायोगात्, अतः पृथगिदं द्वारमिति १५ । प्रायश्चित्तविधिद्वारे—मनसाऽपि सूक्ष्ममप्यतिचारमापन्नस्य नियमतश्चतुर्गुरुकं प्रायश्चित्तमस्य, यत एष कल्प एकाग्रताप्रधानः, ततस्तद्भङ्गे गुरुतरो दोष इति १६ । कारणद्वारे–तथा कारणं नामालम्बनं तत्पुनः सुपरिशुद्धं ज्ञानादिकं तच्चास्य न

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र मूल-संपादने सूत्र-क्रमांकने मुद्रण-दोष: वर्तते— 'सू० ३७' स्थाने 'सू० ३८' इति मुद्रितं

विद्यते येन तदाश्रित्यापवादसेविता स्यात्, एष हि सर्वत्र निरपेक्षः क्लिष्टकर्मक्षयनिमित्तं प्रारब्धमेव स्वं कल्पं यथोक्तविधिना समापयन् महात्मा वर्तते, उक्तं च—"कारणमालंबणमो तं पुण नाणाइअं सुपरिसुद्धं । एअस्स तं न विज्जइ उचियं तवसाहणो पायं ॥ १ ॥ सव्वत्थ निरवयक्खो आढत्तं चिय दढं समाणंतो । वट्टइ एस महप्पा किलिट्ठकम्मक्खयनिमित्तं ॥ २ ॥" १७ । निष्प्रतिकर्मताद्वारे–एष महात्मा निष्प्रतिकर्मशरीरः अक्षिमलादिकमपि कदाचिन्नापनयति, न च प्राणान्तिकेऽपि समापतिते व्यसने द्वितीयं पदं सेवते, उक्तं च–"निप्पडिकम्मसरीरो अच्छिमलाईवि नावणेइ सया । पाणन्तिएऽविय महावसणंमि न वट्टए बीए ॥१॥ अप्पबहुत्तालोयणविसयातीओ उ होइ एसत्ति । अहवा सुहभावाओ बहुगं एयं चिय इमस्स ॥ २ ॥" १८ । भिक्षाद्वारे–भिक्षा विहारक्रमश्च तृतीयस्यां पौरुष्यां भवति, शेषासु च पौरुषीषु कायोत्सर्गः, निद्राऽपि चास्याल्पा द्रष्टव्या, यदि पुनः कथमपि जङ्घाबलमस्य परिक्षीणं भवति तथाऽप्येषोऽविहरन्नपि महाभागो न द्वितीयपदमापद्यते, किन्तु तत्रैव यथाकल्पमात्मीयं योगं विदधातीति, उक्तं च–"तइयाए पोरसीए भिक्खाकालो विहारकालो उ । सेसासुं उस्सग्गो पायं अप्पा य निद्दत्ति ॥१॥ जंघाबलंमि खीणे अविहरमाणोऽवि न परिभावज्जे । तत्थेव अहाकप्पं कुणइ उ जोगं महाभागो ॥२॥" १९ । (बन्धेऽष्ट सप्त वा २०) एते च परिहारविशुद्धिका द्विविधाः, तद्यथा–इत्वरा यावत्कथिकाश्च, तत्र ये कल्पसमाप्त्यनन्तरं तमेव कल्पं गच्छं वा समुपयास्यन्ति ते इत्वराः, ये पुनः कल्पसमाप्त्यनन्तरमव्यवधानेन जिनकल्पं प्रतिपत्स्यन्ते ते

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३७]

दीप अनुक्रम [१९०]

यावत्कथिकाः, उक्तं च—"इत्तरिय थेरकप्पे जिणकप्पे आवकहियत्ति" अत्र स्थविरकल्पग्रहणमुपलक्षणं, स्वकल्पे चेति द्रष्टव्यं, तत्रेत्वराणां कल्पप्रभावाद् देवमनुष्यतैर्यग्योनिकृता उपसर्गाः सद्योघातिन आतङ्का अतीवाविषह्याश्च वेदना न प्रादुष्यन्ति, यावत्कथिकानां संभवेयुरपि, ते हि जिनकल्पं प्रतिपत्स्यमाना जिनकल्पभावमनुविदधति, जिनकल्पिकानां चोपसर्गादयः संभवन्तीति, उक्तं च–"इत्तरियाणुवसग्गा आतंका वेयणा य न हवन्ति । आवकहियाण भइआ०" इति । तथा सूक्ष्मो लोभांशावशेषः संपरायः—कषायोदयो यत्र तत् सूक्ष्मसंपरायं, तच्च द्विधा–विशुध्यमानकं संक्लिश्यमानकं च, तत्र विशुध्यमानकं क्षपकश्रेणिमुपशमश्रेणिं वा समारोहतः, संक्लिश्यमानकं तूपशमश्रेणितः प्रच्यवमानस्य । 'अथाख्यात'मिति अथशब्दो यथार्थे आङ् अभिविधौ याथातथ्येनाभिविधिना वा यत्ख्यातं—कथितं अकषायं चारित्रमिति तदथाख्यातं, उक्तं च—"अहसद्दो(उ) जहत्थे आङोऽभिविहीऍ कहियमक्खायं । चरणमकसायमुइयं तमहक्खायं जहक्खायं ॥ १ ॥" 'यथाख्यात'मिति द्वितीयं नाम, तस्यायमन्वर्थः–यथा सर्वस्मिन् लोके ख्यातं—प्रसिद्धं अकषायं भवति चारित्रमिति तथैव यद् तद् यथाख्यातं, तच्च द्विधा—छाद्मस्थिकं कैवलिकं च, तत्र छाद्मस्थिकमुपशान्तमोहगुणस्थानके क्षीणमोहगुणस्थानके वा कैवलिकं सयोगिकेवलिभवमयोगिकेवलिभवं च । 'सेत्तं' इत्यादि उपसंहारकदम्बसूत्रं सुगमं ॥ तदेवमुक्ता मनुष्याः, सम्प्रति देवप्रतिपादनार्थमाह—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र मूल-संपादने सूत्र-क्रमांकने मुद्रण-दोषः वर्तते— 'सू० ३७' स्थाने 'सू० ३८' इति मुद्रितं

प्रत सूत्रांक [३८]

दीप अनुक्रम [१९१]

से किं तं देवा ?, देवा चउविहा प०, तं०—भवणवासी वाणमंतरा जोइसिआ वेमाणिआ । से किं तं भवणवासी ?, भवणवासी दसविहा प०, तं०—असुरकुमारा नागकुमारा सुवन्नकुमारा विज्जुकुमारा अग्गिकुमारा दीवकुमारा उदहिकुमारा दिसाकुमारा वाउकुमारा थणियकुमारा, ते समासओ दुविहा प०, तं०—पज्जत्तगा य अपज्जत्तगा य, सेत्तं भवणवासी । से किं तं वाणमंतरा ?, वाणमंतरा अट्ठविहा प०, तं०–किन्नरा किंपुरिसा महोरगा गंधव्वा जक्खा रक्खसा भूया पिसाचा, ते समासओ दुविहा प०, तं०–पज्जत्तगा य अपज्जत्तया य, सेत्तं वाणमन्तरा । से किं तं जोइसिया ?, जोइसिया पंचविहा प०, तं०–चंदा सूरा गहा नक्खत्ता तारा, ते समासओ दुविहा प०, तं०–पज्जत्तगा य अपज्जत्तगा य, सेत्तं जोइसिया ॥ से किं तं वेमाणिया ?, वेमाणिआ दुविहा प०, तं०–कप्पोवगा य कप्पाईया य, से किं तं कप्पोवगा ?, कप्पोवगा बारसविहा प०, तं०–सोहम्मा ईसाणा सणंकुमारा माहिंदा बंभलोया लंतया महासुक्का सहस्सारा आणया पाणया आरणा अच्चुया, ते समासओ दुविहा प०, तं०–पज्जत्तगा य अपज्जत्तगा य, से त्तं कप्पोवगा । से किं तं कप्पाईया ?, कप्पाईया दुविहा प०, तं०—गेविज्जगा य अणुत्तरोववाइया य, से किं तं गेविज्जगा ?, गेविज्जगा नवविहा प०, तं०–हिट्ठिमहिट्ठिमगेविज्जगा हिट्ठिममज्झिमगेविज्जगा हिट्ठिमउवरिमगेविज्जगा मज्झिमहेट्ठिमगेविज्जगा मज्झिममज्झिमगेविज्जगा मज्झिमउवरिमगेविज्जगा उवरिमहेट्ठिमगेविज्जगा उवरिममज्झिमगेविज्जगा उवरिमउवरिमगेविज्जगा, ते समासओ दुविहा प०, तं०—पज्जत्तगा य अपज्जत्तगा य, सेत्तं गेविज्जगा । से किं तं अणुत्तरोववाइया ?, अणुत्तरोववाइया पंचविहा प०, तं०—विजया वेजयन्ता जयन्ता अपराजिता सव्वट्ठसिद्धा, ते समासओ दुविहा प०, तं०—पज्जत्तगा य अपज्जत्तगा य, सेत्तं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र पञ्चइन्द्रिय-जीवस्य प्रज्ञापना मध्ये देवयोनिक-जीवस्य प्रज्ञापना आरभ्यते

अणुत्तरोववाइआ, सेत्तं कप्पाईया, सेत्तं वेमाणिआ, सेत्तं देवा, सेत्तं पंचिंदिया, सेत्तं संसारसमावन्नजीवपन्नवणा, से त्तं जीवपन्नवणा, सेत्तं पन्नवणा ॥ (सू० ३८) पन्नवणाए भगवईए पढमपयं सम्मत्तं ।

'से किं तं' इत्यादि, अथ के ते देवाः ?, सूरिराह–देवाश्चतुर्विधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–भवनवासिनो व्यन्तरा ज्योतिष्का वैमानिकाः, तत्र भवनेषु वसन्तीत्येवंशीला भवनवासिनः, एतद् बाहुल्यतो नागकुमाराद्यपेक्षया द्रष्टव्यं, ते हि प्रायो भवनेषु वसन्ति कदाचिदावासेषु, असुरकुमारास्तु प्राचुर्येणावासेषु कदाचिद् भवनेषु, अथ भवनावासानां च कः प्रतिविशेषः ?, उच्यते, भवनानि बहिर्वृत्तान्यन्तः समचतुरस्राणि अधः पुष्करकर्णिकासंस्थानानि, आवासाः कायमानस्थानीया महामण्डपा विविधमणिरत्नप्रदीपप्रभासितसकलदिक्चक्रवाला इति । अन्तरं नामावकाशः, तच्चेहाश्रयरूपं द्रष्टव्यं, विविधं भवननगरावासरूपमन्तरं येषां ते व्यन्तराः । [तत्र भवनानि रत्नप्रभायाः प्रथमे रत्नकाण्डे उपर्यधश्च प्रत्येकं योजनशतमपहाय शेषे अष्टयोजनशतप्रमाणे मध्यभागे भवन्ति, नगराण्यपि तिर्यग्लोके, तत्र तिर्यग्लोके यथा जम्बूद्वीपद्वाराधिपतेर्विजयदेवस्यान्यस्मिन् जम्बूद्वीपे द्वादशयोजनसहस्रप्रमाणा नगरी, आवासाः त्रिष्वपि लोकेषु, तत्रोर्ध्वलोके पण्डकवनादाविति] अथवा विगतमन्तरं मनुष्येभ्यो येषां ते व्यन्तराः तथाहि–मनुष्यानपि चक्रवर्तिवासुदेवप्रभृतीन् भृत्यवदुपचरन्ति केचिद् व्यन्तरा इति मनुष्येभ्यो विगतान्तराः, यदिवा विविधमन्तरं–शैलान्तरं कन्दरान्तरं वनान्तरं वा आश्रयरूपं येषां ते व्यन्तराः, प्राकृतत्वाच्च सूत्रे 'वाणमन्तरा'

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३८]

दीप अनुक्रम [१९१]

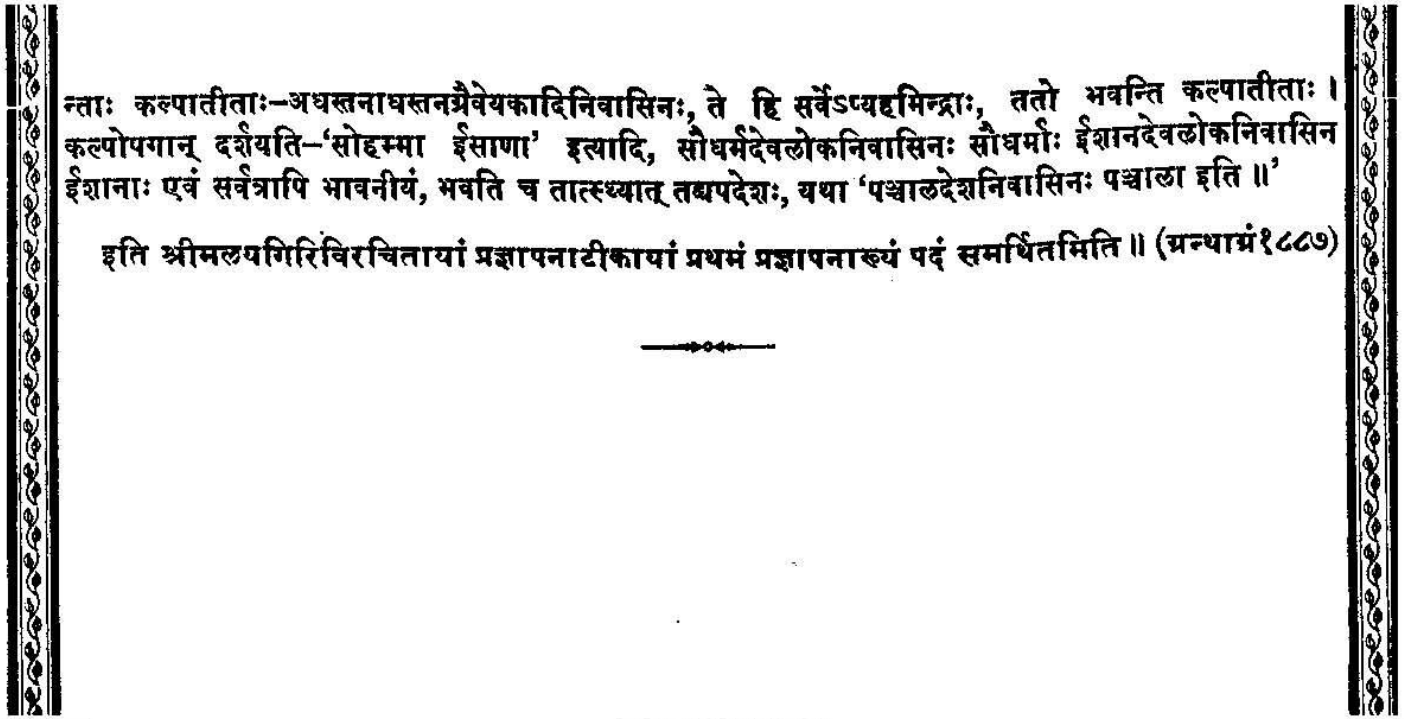
पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति:

इति पाठः, यदिवा 'वानमन्तराः' इति पदसंस्कारः, तत्रेयं व्युत्पत्तिः–वनानामन्तराणि वनान्तराणि तेषु भवाः वानमन्तराः, पृषोदरादित्वाद् उभयपदान्तरालवर्तिमकारागमः, तथा द्योतयन्ति—प्रकाशयन्ति जगदिति ज्योतींषि-विमानानि, औणादिकी शब्दव्युत्पत्तिः, तेषु भवा ज्योतिष्काः "अध्यात्मादिभ्यः" इति इकण्, तत "इवर्णोवर्ण-दोसिसुसः" इति इकण आदेरिकारस्य लोपः, अनभिधानाच्च वृद्ध्यभावः, यदिवा द्योतयन्ति—शिरोमुकुटोपगूहिभिः प्रभामण्डलकल्पैः सूर्यादिमण्डलैः प्रकाशयन्तीति ज्योतिषो–देवाः सूर्यादयः, तथाहि–सूर्यस्य सूर्याकारं मुकुटाग्रभागे चिह्नं चन्द्रस्य चन्द्राकारं नक्षत्रस्य नक्षत्राकारं ग्रहस्य ग्रहाकारं तारकस्य तारकाकारं तैः प्रकाशयन्तीति, आह च तत्त्वार्थभाष्यकृत्—"द्योतयन्तीति ज्योतींषि—विमानानि तेषु भवा ज्योतिष्काः, यदिवा ज्योतिषो–देवाः ज्योतिष एव ज्योतिष्काः, मुकुटैः शिरोमुकुटोपगूहिभिः प्रभामण्डलैरुज्ज्वलैः सूर्यचन्द्रग्रहनक्षत्रतारकाणां मण्ड-लैर्यथास्वं चिह्नैर्विराजमाना द्युतिमन्तो ज्योतिष्का भवन्ती"ति। तथा विविधं मान्यन्ते–उपभुज्यन्ते पुण्यवद्भिर्जीवै-रिति विमानानि तेषु भवा वैमानिकाः ॥ सम्प्रति एतेषामेव क्रमेण भेदानभिधित्सुराह—'से किं तं भवणवासी' इत्यादि, असुराश्च ते कुमाराश्च असुरकुमाराः, एवं नागकुमारा इत्याद्यपि भावनीयम्, अथ कस्मादेते कुमारा इति व्यपदिश्यन्ते ?, उच्यते, कुमारवच्चेष्टनात्, तथाहि—कुमारा इवैते सुकुमारा मृदुमधुरललितगतयः शृङ्गारा-भिप्रायकृतविशिष्टविशिष्टतरोत्तररूपक्रियाः कुमारवच्चोद्धतरूपवेषभाषाभरणप्रहरणावरणयानवाहनाः कुमारवच्चोल्ब-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

णरागाः क्रीडनपराश्च ततः कुमारा इव कुमारा इति ॥ 'किंनरा' इत्यादि किन्नरा दशविधाः, तद्यथा—किन्नराः किंपुरुषाः किंपुरुषोत्तमाः किंनरोत्तमाः हृदयङ्गमा रूपशालिनः अनिन्दिताः मनोरमा रतिप्रिया रतिश्रेष्ठाः । किंपुरुषा दशविधाः, तद्यथा—पुरुषाः सत्पुरुषा महापुरुषाः पुरुषवृषभाः पुरुषोत्तमा अतिपुरुषा महादेवा मरुतः मेरुप्रभाः यशस्वन्तः । महोरगा दशविधाः, तद्यथा–भुजगा भोगशालिनः महाकाया अतिकायाः स्कन्धशालिनो मनोरमा महावेगा महे(हा)यक्षा मेरुकान्ता भास्वन्तः । गन्धर्वा द्वादशविधाः, हाहाः हूहूः तुम्बरवः नारदाः ऋषिवादिका भूतिवादिकाः कादम्बा महाकादम्बा रैवताः विश्वावसवः गीतरतयः गीतयशसः । यक्षास्त्रयोदशविधाः, तद्यथा–पूर्णभद्रा माणिभद्रा श्वेतभद्रा हरितभद्राः सुमनोभद्रा व्यतिपातिकभद्राः सुभद्राः सर्वतोभद्रा मनुष्ययक्षा वनाधिपतयः वनाहारा रूपयक्षा यक्षोत्तमाः । राक्षसाः सप्तविधाः, तद्यथा—भीमा महाभीमा विघ्ना विनायका जलराक्षसा राक्षसराक्षसा ब्रह्मराक्षसाः । भूता नवविधाः, तद्यथा–सुरूपाः प्रतिरूपा अतिरूपा भूतोत्तमाः स्कन्दा महास्कन्दा महावेगाः प्रतिच्छन्ना आकाशगाः । पिशाचाः षोडशविधाः, तद्यथा–कूष्माण्डाः पटकाः सुजा(जो)षा आह्निकाः कालो महाकालाः चोक्षा अचोक्षाः तालपिशाचा मुखरपिशाचा अधस्तारका देहा विदेहा महादेहाः तूष्णीका वनपिशाचा इति । 'कप्पोवगा कप्पाईय'त्ति कल्पः–आचारः स चेह इन्द्रसामानिकत्रायस्त्रिंशादिव्यवहाररूपः तमुपगाः—प्राप्ताः कल्पोपगाः सौधर्मेशानादिदेवलोकनिवासिनः, यथोक्तरूपं कल्पमतीताः—अतिक्रा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३८] दीप अनुक्रम [१९१]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति:  न्ताः कल्पातीताः–अधस्तनाधस्तनग्रैवेयकादिनिवासिनः, ते हि सर्वेऽप्यहमिन्द्राः, ततो भवन्ति कल्पातीताः । कल्पोपगान् दर्शयति–'सोहम्मा ईसाणा' इत्यादि, सौधर्मदेवलोकनिवासिनः सौधर्माः ईशानदेवलोकनिवासिन ईशानाः एवं सर्वत्रापि भावनीयं, भवति च तात्स्थ्यात् तद्व्यपदेशः, यथा 'पञ्चालदेशनिवासिनः पञ्चाला इति ॥' इति श्रीमलयगिरिविरचितायां प्रज्ञापनाटीकायां प्रथमं प्रज्ञापनाख्यं पदं समर्थितमिति ॥ (ग्रन्थाग्रं१८८७) Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org
	अत्र पद (०१) "प्रज्ञापना" परिसमाप्तम्

प्रत सूत्रांक [३९]

दीप अनुक्रम [१९२]

तदेवं व्याख्यातं प्रथमपदं, सम्प्रति द्वितीयं पदमारभ्यते, तस्य चायमभिसंबन्धः—प्रथमपदे पृथ्वीकायादयः प्ररूपिताः, इह तु तेषामेव स्थानानि प्ररूप्यन्ते, तत्र चेदमादिसूत्रम्—

कहि णं भंते ! बादरपुढवीकाइयाणं पज्जत्तगाणं ठाणा प० ?, गोयमा ! सट्ठाणेणं अट्ठसु पुढवीसु, तं०—रयणप्पभाए सक्करप्पभाए वालुयप्पभाए पंकप्पभाए धूमप्पभाए तमप्पभाए तमतमप्पभाए ईसीप्पब्भाराए, अहोलोए पायालेसु भवणेसु भवणपत्थडेसु निरएसु निरयावलियासु निरयपत्थडेसु, उड्ढलोए कप्पेसु विमाणेसु विमाणावलियासु विमाणपत्थडेसु, तिरियलोए टंकेसु कूडेसु सेलेसु सिहरीसु पब्भारेसु विजएसु वक्खारेसु वासेसु वासहरपव्वएसु वेलासु वेइयासु दारेसु तोरणेसु दीवेसु समुद्देसु, एत्थ णं बायरपुढवीकाइयाणं पज्जत्तगाणं ठाणा प०, उववाएणं लोयस्स असंखेज्जभागे समुग्घायेणं लोयस्स असंखेज्जभागे सट्ठाणेणं लोगस्स असंखेज्जभागे । कहि णं भंते ! बादरपुढवीकाइयाणं अपज्जत्तगाणं ठाणा प० ?, गोयमा ! जत्थेव बादरपुढवीकाइयाणं पज्जत्तगाणं ठाणा पन्नत्ता तत्थेव बादरपुढवीकाइयाणं अपज्जत्तगाणं ठाणा प०, उववाएणं सव्वलोए समुग्घाएणं सव्वलोए सट्ठाणेणं लोयस्स असंखेज्जइभागे । कहि णं भंते ! सुहुमपुढवीकाइयाणं पज्जत्तगाणं अपज्जत्तगाण य ठाणा प० ?, गोयमा ! सुहुमपुढवीकाइया जे पज्जत्तगा जे अपज्जत्तगा ते सव्वे एगविहा अविसेसा अणाणत्ता सव्वलोयपरियावन्नगा प० समणाउसो ! । कहि णं भन्ते ! बादरआउकाइयाणं पज्जत्तगाणं ठाणा प० ?, गोयमा ! सट्ठाणेणं सत्तसु घणोदहीसु सत्तसु घणोदहिवलयेसु अहोलोए पायालेसु भवणेसु भवणपत्थडेसु उड्ढलोए कप्पेसु विमा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ पद (०२) "स्थानं" आरभ्यते

अत्र पृथ्वि-अप्-तेजस्कायिक जीवानाम् स्थानानि कथ्यते

णेसु विमाणावलियासु विमाणपत्थडेसु तिरियलोए अगडेसु तलायेसु नदीसु दहेसु वावीसु पुक्खरिणीसु दीहियासु गुंजालियासु सरेसु सरपंतियासु सरसरपंतियासु बिलेसु बिलपंतियासु उज्झरेसु निज्झरेसु चिल्ललएसु पल्ललएसु वप्पणेसु दीवेसु समुद्देसु सव्वेसु चेव जलासएसु जलट्ठाणेसु एत्थ णं बादरआउकाइयाणं पज्जत्तगाणं ठाणा प०, उववाएणं लोयस्स असंखेज्जइभागे समुग्घायेणं लोयस्स असंखेज्जइभागे सट्ठाणेणं लोयस्स असंखेज्जइभागे। कहि णं भंते! बादरआउकाइयाणं अपज्जत्तगाणं ठाणा प०?, गोयमा! जत्थेव बादरआउकाइयाणं पज्जत्तगाणं ठाणा प० तत्थेव बादरआउकाइयाणं अपज्जत्तगाणं ठाणा प० उववाएणं सव्वलोए समुग्घायेणं सव्वलोए सट्ठाणेणं लोयस्स असंखेज्जइभागे। कहि णं भंते! सुहुमआउकाइयाणं पज्जत्तगाणं अपज्जत्तगाणं ठाणा प०?, गोयमा! सुहुमआउकाइया जे पज्जत्तगा जे अपज्जत्तगा ते सव्वे एगविहा अविसेसा अणाणत्ता सव्वलोयपरियावन्नगा प० समणाउसो!। कहि णं भंते! बायरतेउकाइयाणं पज्जत्तगाणं ठाणा प०, गोयमा! सट्ठाणेणं अंतोमणुस्सखेत्ते अड्ढाइज्जेसु दीवसमुद्देसु निव्वाघाएणं पन्नरससु कम्मभूमीसु वाघायं पडुच्च पंचसु महाविदेहेसु एत्थ णं बादरतेउकाइयाणं पज्जत्तगाणं ठाणा प० उववाएणं लोयस्स असंखेज्जइभागे समुग्घाएणं लोगस्स असंखेज्जइभागे सट्ठाणेणं लोयस्स असंखेज्जइभागे। कहि णं भन्ते! बायरतेउकाइयाणं अपज्जत्तगाणं ठाणा प०, गोयमा! जत्थेव बायरतेउकाइयाणं पज्जत्तगाणं ठाणा तत्थेव बायरतेउकाइयाणं अपज्जत्तगाणं ठाणा प०, उववाएणं लोयस्स दोसु उड्ढकवाडेसु तिरियलोयतट्टे य समुग्घाएणं सव्वलोए सट्ठाणेणं लोयस्स असंखेज्जइभागे। कहि णं भंते! सुहुमतेउकाइयाणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पज्जत्तगाण य अपज्जत्तगाण य ठाणा प० ?, गोयमा ! सुहुमतेउकाइआ जे पज्जत्तगा जे अपज्जत्तगा ते सव्वे एगविहा अविसेसा अणाणत्ता सव्वलोयपरियावन्नगा प० समणाउसो ! । (सू० ३९)

'कहिं'ति कस्मिन्, णंशब्दो वाक्यालङ्कारे, भदन्तेति परमगुर्वामन्त्रणे, बादरपृथ्वीकायिकानां पर्याप्तानां स्थानानि—स्वस्थानादीनि 'प्रज्ञप्तानि ?' प्ररूपितानि, एवं गौतमस्वामिना प्रश्ने कृते भगवानाह वर्धमानस्वामी—'गोयमा ! सट्ठाणेणं' इत्यादि, ननु गौतमोऽपि भगवानुपचितकुशलमूलो गणधरः तीर्थकरभाषितमातृकापदश्रवणमात्रावाप्तप्रकृष्टश्रुतज्ञानावरणक्षयोपशमश्चतुर्दशपूर्ववित् सर्वाक्षरसन्निपातीति विवक्षितार्थप्रतिज्ञानसमन्वित एव ततः किमर्थं पृच्छति ?, न हि चतुर्दशपूर्वविदः सर्वोत्कृष्टश्रुतलब्धिसमन्वितस्य किञ्चित्प्रज्ञापनीयमविदितमस्ति, यत उक्तम्—"संखाईए वि भवे साहइ जं वा परो उ पुच्छेज्जा । न य णं अणाइसेसी वियाणई एस छउमत्थो ॥ १ ॥"[1] सत्यमेतत्, केवलं जानन्नेव गौतमस्वामी भगवानन्यत्र विनेयेभ्यः प्रतिपाद्य तत्संप्रत्ययनिमित्तं विवक्षितमर्थं पृच्छति, यदिवा प्रायः सर्वत्र गणधरप्रश्नतीर्थकरनिर्वचनरूपं सूत्रमतो भगवानार्यश्यामोऽपि इत्थमेव सूत्रं रचयति, अथवा संभवति तस्यापि गणभृतो गौतमस्वामिनोऽनाभोगः, छद्मस्थत्वात्, उक्तं च—"न हि नामानाभोगश्छद्मस्थस्येह कस्यचिद् नास्ति । ज्ञानावरणीयं हि ज्ञानावरणप्रकृति कर्म ॥ १ ॥" ततो जातसंशयः सन् पृच्छतीति न कश्चिद्

१ संख्यातीतानपि भवान् कथयति यं वा परः पृच्छेत् । नैवैनं अनतिशायी विजानात्येष छद्मस्थः ॥ १ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३९]

दीप अनुक्रम [१९२]

दोषः, 'गोयमा' इति लोकप्रथितमहाविशिष्टगोत्राभिधायकोऽयमामन्त्रणध्वनिः, हे गौतमगोत्रेति भावार्थः । 'सट्ठाणेणं' इति स्वस्थानं यत्रासते बादरपृथ्वीकायिकाः पर्याप्ताः आसीनाश्च वर्णादिविभागेनादेष्टुं शक्यन्ते तत्स्वस्थानमिति भावः, स्वस्थानग्रहणमुपपातसमुद्घातस्थाननिवृत्त्यर्थं, तेन स्वस्थानेन स्वस्थानमङ्गीकृत्येति भावः । अष्टासु पृथ्वीषु सर्वत्र बादरपृथ्वीकायिकानां पर्याप्तानां स्थानानीति योगः, ता एव अष्टौ पृथ्वीर्नामग्राहमाह—'तंजहा' इत्यादि, रत्नप्रभायां यावदष्टम्यामीषत्प्राग्भारायाम्, तथाऽधोलोके पातालेषु पातालकलशेषु—वलयामुखप्रभृतिषु भवनेषु—भवनपतिनिकायावासरूपेषु, भवनप्रस्तटेषु–भवनभूमिकारूपेषु, इह भवनग्रहणेन भवनानामेव केवलानां ग्रहणं, भवनप्रस्तटग्रहणेन तु भवनानामपान्तरालस्यापि । तथा नरकेषु–प्रकीर्णकरूपेषु नरकावासेषु, नरकावलिकासु–आवलिकाव्यवस्थितेषु नरकावासेषु, नरकप्रस्तटेषु—नरकभूमिरूपेषु, अत्रापि नरकनरकावलिकाग्रहणेन केवला एव नरकावासाः परिगृह्यन्ते, नरकप्रस्तटग्रहणेन तु नरकापान्तरालमपि । ऊर्द्धलोके कल्पेषु—सौधर्मिकादिकल्पेषु, अनेन द्वादशदेवलोकपरिग्रहः, विमानेषु–ग्रैवेयकसंबन्धिषु प्रकीर्णकरूपेषु, विमानावलिकासु–आवलिकाप्रविष्टेषु ग्रैवेयकादिविमानेषु, विमानप्रस्तटेषु विमानभूमिकारूपेषु, अत्रापि प्रस्तटग्रहणं विमानापान्तरालभाविनामपि यथासंभवभाविनां बादरपर्याप्तपृथ्वीकायिकानां स्थानपरिग्रहार्थं, तथा तिर्यग्लोके टङ्केषु–छिन्नटङ्केषु कूटेषु–सिद्धायतनकूटप्रभृतिषु शैलेषु–शिखरहीनपर्वतेषु शिखरिषु–शिखरयुक्तेषु पर्वतेषु प्राग्भारेषु–ईषत्कुब्जेषु विजयेषु—कच्छादिषु

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वक्षस्कारेषु–विद्युत्प्रभादिषु पर्वतेषु वर्षेषु–भरतादिषु वर्षधरेषु–हिमवदादिपर्वतेषु वेलासु–समुद्रादिपानीयरमणभूमिषु वेदिकासु—जम्बूद्वीपजगत्यादिसंबन्धिनीषु द्वारेषु–विजयादिषु तोरणेषु—द्वारादिसंबन्धिषु, किं बहुना ?, सामस्त्येन सर्वेषु द्वीपेषु सर्वेषु समुद्रेषु, 'एत्थ णं' इत्यादि, अत्रैतेषु स्थानेषु बादरपृथ्वीकायिकानां पर्याप्तानां स्थानानि प्रज्ञप्तानि मया अन्यैश्च तीर्थकृद्भिः, 'उववाएणं' इत्यादि, उपपतनमुपपातः, बादरपृथ्वीकायिकानां पर्याप्तानां यदनन्तरमुक्तं स्थानं तत्प्राप्त्याभिमुख्यमिति भावः, तेनोपपातेन, उपपातमङ्गीकृत्येति भावः, लोकस्य–चतुर्दशरज्ज्वात्मकस्यासंख्येये भागे, अत्रैके व्याचक्षते—ऋजुसूत्रनयो विचित्रः ततो यदा परिस्थूरऋजुसूत्रनयदर्शनेन बादरपृथ्वीकायिकाः पर्याप्ताश्चिन्त्यन्ते तदा ये स्वस्थानप्राप्ता आहारादिपर्याप्तिपरिसमाप्त्या विशिष्टविपाकतो बादरपर्याप्तपृथ्वीकायिकायुर्वेदयन्ते ते एव द्रष्टव्याः, नापान्तरालगतावपि, तदानीं विपाकायुर्वेदनासंभवात्, स्वस्थानं च तेषां रत्नप्रभादिकं समुदितमपि लोकस्यासंख्येयभागे वर्तते, तत उपपातेनापि लोकस्यासंख्येयभागता वेदितव्या, अन्ये त्वभिदधति–पर्याप्ता हि नाम बादरपृथ्वीकायिकाः सर्वस्तोकाः, ततस्तेऽपान्तरालगतावपि परिगृह्यमाणा लोकस्यासंख्येयभागे एवेति न कश्चिद्दोषः, तथा च समुद्घातेनापि लोकस्यासंख्येयभागे एव वक्ष्यन्ते, अन्यथा समुद्घातावस्थायामपि स्वस्थानातिरेकेण क्षेत्रान्तरवर्तित्वसंभवादसंख्येयभागवर्तिता नोपपद्यते इति, तत्त्वं पुनः केवलिनो विदन्ति विशिष्टश्रुतविदो वा । तथा 'समुग्घाएणं लोगस्स असंखेज्जभागे' इति समुद्घातेन—समुद्घातमधिकृत्य

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

लोकस्यासंख्येयभागे, इयमत्र भावना–यदा बादरपर्याप्ताः पृथ्वीकायिकाः सोपक्रमायुषो निरुपक्रमायुषो वा त्रिभागाद्यवशेषायुषः पारभविकमायुर्बद्ध्वा मारणान्तिकसमुद्घातेन समवहन्यन्ते तदा ते विक्षिप्तात्मप्रदेशदण्डा अपि लोकस्यासंख्येयतमे एव भागे वर्तन्ते, स्तोकत्वाद्, बादरपृथ्वीकायिकपर्याप्तायुश्चाद्याप्यक्षीणमिति पर्याप्तबादरपृथ्वीकायिका अपि लभ्यन्ते। इह पूर्वं पृथ्व्यादिषु स्वस्थानमात्रमुक्तम्, इदानीं स्वस्थानेनापि कियति लोकस्य भागे वर्तन्ते इति निरूपयति–'सट्ठाणेणं लोगस्स असंखिज्जे भागे' इति, स्वस्थानं रत्नप्रभादि, तच्च समुदितमपि लोकस्यासंख्येयभागवर्ति, तथाहि–रत्नप्रभा अशीतियोजनसहस्राधिकलक्षप्रमाणपिण्डभावा, एवं शेषा अपि पृथ्व्यः स्वस्वघनभावेन वक्तव्याः पातालकलशा अपि योजनलक्षावगाहा नरकावासाः त्रिसहस्रयोजनोच्छ्रयाः विमानान्यपि द्वात्रिंशद्योजनशतबाहल्यानि ततः सर्वेषामपि परिमितभावात् समुदितानामप्यसंख्येयभागवर्तितैवेति। बादरापर्याप्तपृथ्वीकायिकसूत्रे 'उववाएणं सव्वलोए समुग्घाएणं सव्वलोए' इति, इहापर्याप्ता बादरपृथ्वीकायिका अपान्तरालगतावपि स्वस्थानेऽपि चापर्याप्तबादरपृथ्वीकायिकायुर्विशिष्टविपाकतो वेदयन्ते तथा देवनैरयिकवर्जेभ्यः शेषसर्वकायेभ्यश्चोत्पद्यन्ते, उद्वृत्ता अपि च देवनैरयिकवर्जेषु शेषेषु सर्वेष्वपि स्थानेषु गच्छन्ति, ततोऽपान्तरालगतावपि वर्तमाना अमी गृह्यन्ते, अतिप्रभूताश्च स्वभावतोऽपी(तोऽमी इ)त्युपपातेन समुद्घातेन (च) सर्वलोके वर्तन्ते। अन्ये त्वभिदधति–स्वभावत एवामी बहव इति उपपातेन समुद्घातेन च सर्वलोकव्यापिनः, तत्रोपपातः केषांचिद् ऋजुगत्या

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

केषांचिद् वक्रगत्या । तत्र ऋजुगतिः सुप्रतीता, वक्रस्थापना चैवम्, अत्र यदैव प्रथमं वक्रमेके संहरन्ति तदैवापरे तद्वक्रदेशमापूरयन्ति, एवं द्वितीयवक्रदेशसंहरणेऽपि वक्रोत्पत्तावपि प्रवाहतो निरन्तरमापूरणं भावनीयम् । 'सट्ठाणेणं लोगस्स असंखेज्जइभागे' इति यथा पर्याप्तानां भावितं तथाऽपर्याप्तानामपि भावनीयम्, तन्निश्रया तेषामुत्पादभावात् । सूक्ष्मपृथिवीकायिकपर्याप्तापर्याप्तसूत्रे 'जे पज्जत्ता अपज्जत्ता ते सव्वे एगविहा अविसेसा अणाणत्ता सव्वलोयपरियावन्नगा' इति सूक्ष्मपृथिवीकायिका ये पर्याप्ता ये चापर्याप्ताः ते सर्वेऽप्येकविधाः–एकप्रकाराः, प्राक्कृतं स्वस्थानादिविचारमधिकृत्य भेदाभावात्, अविशेषा–विशेषरहिताः, यथा पर्याप्तास्तथेतरेऽपीति भावः 'अनानात्वा' नानात्ववर्जिताः, देशभेदेनालक्षितनानात्वा इत्यर्थः, किमुक्तं भवति ?—एष्वाधारभूतेष्वाकाशप्रदेशेषु एके तेष्वेव इतरेऽपीति, सर्वलोकपर्यापन्नाः—सर्वलोकव्यापिनः, उपपातसमुद्घातस्वस्थानैः प्रज्ञप्ताः मया अन्यैश्च ऋषभादिभिस्तीर्थकृद्भिः, अनेन आगमस्य कथंचिद् नित्यत्वमावेदितम्, हे श्रमण ! हे आयुष्मन्! आमन्त्रणमिदं भगवत्प्रयुक्तं गौतमस्य । एवमप्कायिकसूत्राण्यपि बादरसूक्ष्मविषयाणि । नवरं—पर्याप्तबादराप्कायिकसूत्रे 'सत्तसु घणोदहिवलएसुत्ति' सप्त घनोदधिवलयानि स्वस्वपृथिवीपर्यन्तवेष्टकानि वलयाकाराणि । 'अहोलोए पायालेसुत्ति' पातालकलशेषु वलयामुखप्रभृतिषु, तेष्वपि द्वितीये त्रिभागे देशतः, तृतीये त्रिभागे सर्वात्मना जलभावात् । भवनेषु कल्पेषु विमानेषु च जलं वाप्यादिषु, विमानादीनि चात्र कल्पगतानि वेदितव्यानि, ग्रैवेयकादिषु वापीनामसंभवतो जला-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३९]

दीप अनुक्रम [१९२]

संभवात् । अवटाः कूपाः । तडागानि प्रतीतानि । नद्यो गङ्गासिन्धुप्रभृतयः । ह्रदाः पद्महदादयः । वाप्यश्चतुरस्राकाराः । ता एव वृत्ताकाराः पुष्करिण्यः, यदिवा पुष्कराणि पद्मानि विद्यन्ते यासु ताः पुष्करिण्यः । दीर्घिका ऋजुलघुनद्यः । ता एव वक्रा गुंजालिका । बहूनि केवलकेवलानि पुष्पावकीर्णानि सरांसीत्युच्यन्ते । तथा बहूनि सरांसि एकपङ्क्त्या व्यवस्थितानि सरपङ्क्तिस्ता बह्व्यः सरःपङ्क्तयः । तथा येषु सरःसु पङ्क्त्या व्यवस्थितेषु कूपोदकं प्रणालिकया संचरति सा सरःसरःपङ्क्तिः, ता बह्व्यः सरःसरःपङ्क्तयः । बिलानीव बिलानि स्वभावनिष्पन्ना जगत्यादिषु कूपिकास्तेषां पङ्क्तयो बिलपङ्क्तयः । उज्झरा गिरिष्वम्भसां प्रस्रवाः । ते एव सदावस्थायिनो निर्झराः । छिल्लराणि–अस्वाताः स्तोकजलाश्रयभूता भूप्रदेशा गिरिप्रदेशा वा । पल्वलानि अस्वातानि सरांसि । वप्राः केदाराः । किं बहुना ?, सर्वेष्वेव जलाशयेषु, एतदेव व्याचष्टे–जलस्थानेषु । शेषभावना प्राग्वत् । अधुना बादरपर्याप्ततेजःकायिकस्थानानि पृच्छति–'कहि णं भंते ! बादरतेउकाइयाणं' इत्यादि प्रश्नसूत्रं सुगमं, भगवानाह–'गोयमा !' इत्यादि, गौतम ! 'सस्थानेन' स्वस्थानमङ्गीकृत्य अन्तर्मनुष्यक्षेत्रे—मनुष्यक्षेत्रमध्ये इत्यर्थः, अर्द्धं तृतीयं येषां ते अर्द्धतृतीयाः तत्रान्तर्मनुष्यक्षेत्रस्यार्द्धं तृतीयं समुद्राणां न विद्यते इतीदं विशेषणं द्वीपानां द्रष्टव्यं, द्वीपाश्च समुद्रौ च द्वीपसमुद्रास्तेषु 'निर्व्याघातेन' व्याघातस्याभावो निर्व्याघातं तेन निर्व्याघातेन "वा तृतीयायाः" इति पाक्षिकोऽमादेशाभावः, व्याघाताभावेनेत्यर्थः, 'पञ्चदशसु कर्मभूमिषु' पञ्चभरतपञ्चैरावतपञ्चमहाविदेहरूपासु 'व्याघातं प्रतीत्य' व्याघाते

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सतीति भावः पञ्चसु महाविदेहेषु, इयमत्र भावना–व्याघातो नाम अतिस्निग्धोऽतिरूक्षो वा कालः, तस्मिन् सत्यग्न्यव्यवच्छेदात्, ततो यदा पञ्चसु भरतेषु पञ्चस्वैरावतेषु सुषमसुषमासुषमासुषमदुष्षमा वा वर्तते तदाऽतिस्निग्धः कालः दुष्षमदुष्षमायां चातिरूक्ष इत्यस्ति व्यवच्छेदः तस्मिन् सति पञ्चसु महाविदेहेषु, शेषकालं पञ्चदशस्वपि कर्मभूमिषु, 'एत्थ णं' इत्यादि, अत्र–एतेषु स्थानेषु बादरतेजःकायिकानां स्थानानि प्रज्ञप्तानि, 'उववाएणं' इत्यादि, 'उपपातेन' यथोक्तस्थानप्राप्त्याऽऽभिमुख्येन, अपान्तरालगतावपीति भावः, चिन्त्यमाना लोकस्यासंख्येये भागे, स्तोकत्वात्, समुद्घातेनापि चिन्त्यमाना लोकस्यासंख्येये भागे, मारणान्तिकसमुद्घातवशतो विक्षिप्तात्मप्रदेशदण्डानामपि स्तोकतया लोकासंख्येयभागमात्रव्यापित्वात्, स्वस्थानेन लोकस्यासंख्येयभागे, मनुष्यक्षेत्रस्य पञ्चचत्वारिंशद्योजनलक्षप्रमाणायामविष्कम्भतया लोकासंख्येयभागमात्रत्वात् । अपर्याप्तबादरतेजःकायिकस्थानानि पृच्छति—'कहि णं भंते !' इत्यादि प्रश्नसूत्रं गतार्थं, भगवानाह—'गोयमा !' इत्यादि, गौतम ! यत्रैव बादरतेजःकायिकानां पर्याप्तानां स्थानानि तत्रैव बादरतेजःकायिकानामपर्याप्तानामपि स्थानानि प्रज्ञप्तानि, पर्याप्तनिश्रयैवापर्याप्तानामवस्थानात्, 'उववाएणं लोगस्स दोसु उड्ढकवाडेसु तिरियलोयतट्टे य' इति, इहार्धतृतीयद्वीपसमुद्रनिःसृते अर्द्धतृतीयद्वीपसमुद्रप्रमाणबाहल्ये पूर्वापरदक्षिणोत्तरस्वयम्भूरमणपर्यन्ते ये कपाटे केवलिसमुद्घातकपाटवत् ऊर्द्धमपि लोकान्तं स्पृष्टे ते अधोऽपि च लोकान्तं स्पृष्टे ते ऊर्द्धकपाटे तयोः ऊर्द्धकपाटयोः, तथा 'तिरियलोयतट्टे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

य' इति, तट्टं–स्थालं तिर्यग्लोके तट्टमिव तिर्यग्लोकतट्टं तस्मिंश्च स्वयम्भूरमणसमुद्रवेदिकापर्यन्ते अष्टादशयोजनशतबाहल्ये, समस्ततिर्यग्लोके चेत्यर्थः, उपपातेन बादरतेजःकायिकानामपर्याप्तानां स्थानानि प्रज्ञप्तानि, केचित् 'तिरियलोयतट्टे य' इत्येवं व्याचक्षते–तयोः–कपाटयोः स्थितः तत्स्थः तिर्यग्लोकश्चासौ तत्स्थः, तयोरूर्द्धकपाटयोरन्तर्वर्तितिर्यग्लोक इत्यर्थः तस्मिंश्च, किमुक्तं भवति ?–द्वयोरूर्द्धकपाटयोर्यथोक्तस्वरूपयोस्तिर्यग्लोकेऽपि च तयोरेव कपाटयोरन्तर्गते नान्यत्र, शेषतिर्यग्लोकव्यवच्छेदपरमेतद् वाक्यं, न विधानपरं, विधानस्य कपाटग्रहणेनैव सिद्धत्वात्, तत्त्वं पुनः केवलिना विशिष्टश्रुतविदा वा गम्यं, इयमत्र भावना–इह त्रिविधा बादरपर्याप्ततेजःकायिकाः, तद्यथा–एकभविका बद्धायुषोऽभिमुखनामगोत्राश्च, तत्र ये एकस्माद् विवक्षिताद् भवादनन्तरं बादरापर्याप्ततेजःकायिकत्वेनोत्पत्स्यन्ते ते एकभविकाः, ये तु पूर्वभवत्रिभागादिसमयैर्बद्धबादरापर्याप्ततेजःकायिकायुषस्ते बद्धायुषः, ये पुनर्बादरापर्याप्ततेजःकायिकायुर्नामगोत्राणि पूर्वभवमोचनानन्तरं साक्षाद् वेदयन्ते तेऽभिमुखनामगोत्राः, तत्रैकभविका बद्धायुषश्च द्रव्यतो बादरापर्याप्ततेजःकायिका न भावतः, तदाऽऽयुर्नामगोत्रवेदनाभावात्, ततो न तैरिहाधिकारः, किन्तु अभिमुखनामगोत्रैः, तेषामेवोपपातस्य स्वस्थानप्राप्त्याभिमुख्यलक्षणस्य लभ्यमानत्वात्, तत्र यद्यपि ऋजुसूत्रनयदर्शनेन बादरापर्याप्ततेजःकायिकायुर्नामगोत्रवेदनाद् यथोक्तकपाटद्वयतिर्यग्लोकबाह्यव्यवस्थिता अपि बादरापर्याप्ततेजःकायिकव्यपदेशं लभन्ते तथाप्यत्र व्यवहारनयदर्शनाभ्युपगमाद् ये स्वस्थानसमश्रेणिकपाटद्वयव्यव-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

स्थिताः ये च स्वस्थानानुगते तिर्यग्लोके प्रविष्टास्ते एव बादरापर्याप्ततेजःकायिका व्यपदिश्यन्ते न शेषाः कपाटा-पान्तरालव्यवस्थिताः, विषमस्थानवर्तित्वात्, तेन येऽद्यापि कपाटद्वयं न प्रविशन्ति नापि तिर्यग्लोकं ते किल पूर्व-भवावस्था एवेति न गण्यन्ते, उक्तं च–"पणयाललक्खपिहुला दुन्नि कवाडा य छद्दिसिं पुट्ठा । लोगन्ते तेसिऽंतो जे तेऊ ते उ घिप्पन्ति ॥ १ ॥" तत उक्तं–'उववाएणं दोसु उड्ढकवाडेसु तिरियलोयतट्टे य' इति, स्थापना– तदेवमिदं सूत्रं व्यवहारनयप्रदर्शनेन व्याख्यातं, तथासंप्रदायात्, युक्तं चैतत् "विचित्रा सूत्राणां गतिः" इति वचनादिति । 'समुग्घाएणं सव्वलोए' इति, इह द्वयोः कपाटयोर्यथोक्तस्वरूपयोर्यान्यपान्तरालानि तेषु ये सूक्ष्मपृथिवीकायिकादयो बादरापर्याप्ततेजःकायिकेषूत्पद्यमाना मारणान्तिकसमुद्घातेन समवहताः ते किल विष्कम्भबाहल्याभ्यां शरीरप्रमाणमात्रानायामत उत्कर्षतो लोकान्तं यावदात्मप्रदेशान् विक्षिपन्ति, तथा चावगा-हनासंस्थानपदे वक्ष्यते–"पुढवीकाइअस्स णं भंते ! मारणंतियसमुग्घाएणं समोहयस्स तेयासरीरस्स के महालिया सरीरोगाहणा प० ?, गोयमा ! सरीरप्पमाणमेत्तविक्खंभबाहल्लेणं आयामेणं जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागे उक्को-सेणं लोगंतो" इति, ततस्ते सूक्ष्मपृथिवीकायिकादय उत्पत्तिदेशं यावद् विक्षिप्तात्मप्रदेशदण्डा अपान्तरालगतौ वर्त-माना बादरापर्याप्ततेजःकायिकायुर्वेदनाद् लब्धबादरापर्याप्ततेजःकायिकव्यपदेशाः समुद्घातगता एवापान्तराल-

१ पञ्चचत्वारिंशल्लक्षपृथू द्वौ कपाटौ च षट्सु दिक्षु स्पृष्टौ । लोकान्तात् तयोरन्तर्ये तेजःकायिकास्ते तु गृह्यन्ते ॥ १ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३९]

दीप अनुक्रम [१९२]

गतौ वर्तमाना इति, समुद्घातगताश्च सकललोकमापूरयन्ति, उक्तं च–'समुद्घातेन सर्वलोके' इति, अन्ये त्वभिदधति–अतिबहवः खलु बादरापर्याप्ततेजःकायिकाः, एकैकपर्याप्तनिश्रया असंख्येयानामपर्याप्तानामुत्पादात्, ते च सूक्ष्मेष्वपि समुत्पद्यन्ते, सूक्ष्माश्च सर्वत्र विद्यन्ते इति, बादरापर्याप्ततेजःकायिकाः स्वभवपर्यन्ते कृतमारणान्तिकसमुद्घाताः सन्तः सकलमपि लोकमापूरयन्ति इति न कश्चिद्दोषः, अपि तु निरुपचरिततेजःकायिकसमुद्घातप्ररूपणागुणः, स्थापना–। स्वस्थानेन लोकस्यासंख्येये भागे इति, पर्याप्तनिश्रयाऽपर्याप्तानामुत्पादात्, पर्याप्तानां च स्थानं मनुष्यक्षेत्रं, तच्च लोकासंख्येयतमभागमात्रमिति । सूक्ष्मपर्याप्तापर्याप्ततेजःकायिकसूत्रं सूक्ष्मपर्याप्तापर्याप्तपृथिवीकायिकसूत्रवद् भावनीयमिति ।

कहि णं भंते ! बादरवाउकाइयाणं ठाणा प० ?, गोयमा ! सट्ठाणेणं सत्तसु घणवाएसु सत्तसु घणवायवलएसु सत्तसु तणुवाएसु सत्तसु तणुवायवलयेसु अहोलोए पायालेसु भवणेसु भवणपत्थडेसु भवणछिद्देसु भवणनिक्खुडेसु निरएसु निरयावलियासु निरयपत्थडेसु निरयछिद्देसु निरयनिक्खुडेसु उड्ढलोए कप्पेसु विमाणेसु विमाणावलियासु विमाणपत्थडेसु विमाणछिद्देसु विमाणनिक्खुडेसु तिरियलोए पाईणपडीणदाहिणउदीण सव्वेसु चेव लोगागासछिद्देसु लोगनिक्खुडेसु य, एत्थ णं बादरवाउकाइआणं पज्जत्तगाणं ठाणा प०, उववाएणं लोयस्स असंखेज्जेसु भागेसु, समुग्घाएणं लोयस्स असंखेज्जेसु भागेसु, सट्ठाणेणं लोयस्स असंखेज्जेसु भागेसु । कहि णं भंते ! अपज्जत्तबादरवाउकाइयाणं ठाणा प० ?, गोयमा ! जत्थेव

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र वायु-वनस्पतिकायिक जीवानाम् स्थानानि कथ्यते

बादरवाउकाइयाणं पज्जत्तगाणं ठाणा तत्थेव बादरवाउकाइयाणं अपज्जत्तगाणं ठाणा प०, उववाएणं सव्वलोए समुग्घाएणं सव्वलोए, सट्ठाणेणं लोयस्स असंखेज्जेसु भागेसु । कहि णं भंते! सुहुमवाउकाइयाणं पज्जत्तगाणं अपज्जत्तगाणं ठाणा प० ?, गोयमा! सुहुमवाउकाइया जे पज्जत्तगा जे य अपज्जत्तगा ते सव्वे एगविहा अविसेसा अणाणत्ता सव्वलोयपरियावन्नगा प० समणाउसो!। कहि णं भंते! बादरवणस्सइकाइयाणं पज्जत्तगाणं ठाणा प० ?, गोयमा! सट्ठाणेणं सत्तसु घणोदहिसु सत्तसु घणोदहिवलयेसु अहोलोए पायालेसु भवणेसु भवणपत्थडेसु, उड्ढलोए कप्पेसु विमाणेसु विमाणावलियासु विमाणपत्थडेसु, तिरियलोए अगडेसु तडागेसु नदीसु दहेसु वावीसु पुक्खरिणीसु दीहियासु गुंजालियासु सरेसु सरपंतियासु सरसरपंतियासु विलेसु विलपंतियासु उज्झरेसु निज्झरेसु चिल्ललेसु पल्ललेसु वप्पिणेसु दीवेसु समुद्देसु सव्वेसु चेव जलासएसु जलठाणेसु, एत्थ णं बादरवणस्सइकाइयाणं पज्जत्तगाणं ठाणा प०, उववाएणं सव्वलोए समुग्घाएणं सव्वलोए सट्ठाणेणं लोयस्स असंखेज्जइभागे। कहि णं भंते! बादरवणस्सइकाइयाणं अपज्जत्तगाणं ठाणा प० ?, गोयमा! जत्थेव बादरवणस्सइकाइयाणं पज्जत्तगाणं ठाणा तत्थेव बादरवणस्सइकाइयाणं अपज्जत्तगाणं ठाणा प०, उववाएणं सव्वलोए समुग्घाएणं सव्वलोए सट्ठाणेणं लोयस्स असंखेज्जइभागे। कहि णं भंते! सुहुमवणस्सइकाइयाणं पज्जत्तगाणं अपज्जत्तगाण य ठाणा प० ?, गोयमा! सुहुमवणस्सइकाइया जे य पज्जत्तगा जे य अपज्जत्तगा ते सव्वे एगविहा अविसेसा अणाणत्ता सव्वलोयपरियावन्नगा प० समणाउसो! ॥ (सू० ४०)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एवं बादरवायुकायिकवनस्पतिकायिकसूत्राण्यपि प्रत्येकं त्रीणि त्रीणि भावनीयानि, नवरं बादरपर्याप्तवायुकायिकसूत्रे भवनच्छिद्राणि–भवनानामवकाशान्तराणि भवननिष्कुटा–गवाक्षादिकल्पाः केचन भवनप्रदेशाः नरकच्छिद्राणि नरकनिष्कुटा–गवाक्षादिकल्पा नरकावासप्रदेशाः, एवं विमानच्छिद्राणि विमाननिष्कुटाश्च प्रतिपत्तव्याः, 'उववाएणं लोगस्स असंखेज्जेसु भागेसु' इत्यादि, वायवो हि पर्याप्ता अतिबहवः, यतो यत्र सुषिरं तत्र वायुः, सुषिरबहुलश्च लोक इति त्रिष्वप्युपपातादिषु लोकस्यासंख्येयेषु भागेष्वित्युक्तं । अपर्याप्तबादरवायुकायिकसूत्रे 'उववाएणं समुग्घाएण य सव्वलोए' इति, इह देवनारकवर्जेभ्यः शेषकायेभ्यः सर्वेभ्यो बादरापर्याप्तवायुकायेषु समुत्पद्यन्ते, बादरापर्याप्ताश्चापान्तरालगतावपि लभ्यन्ते, बहूनि च स्वस्थानानि बादरपर्याप्तापर्याप्तवायुकायिकानां, ततो व्यवहारनयमतेनाप्युपपातमधिकृत्य सकललोकव्यापिता घटते इति न काचित् क्षतिः, समुद्घातेन च सकललोकव्यापिता सुप्रतीतैव, सर्वेषु सूक्ष्मेषु सर्वत्र च लोके तेषां समुत्पादसंभवात् । बादरपर्याप्तवनस्पतिकायिकसूत्रे 'उववाएणं सव्वलोए' इह पर्याप्तबादरवनस्पतिकायिकानां स्वस्थानं घनोदध्यादि, तत्र बादरनिगोदानां शैवालादीनां संभवात्, सूक्ष्मनिगोदानां भवस्थितिरन्तर्मुहूर्तं ततस्ते बादरनिगोदेषु पर्याप्तेषु समुत्पद्यमाना बादरनिगोदपर्याप्तायुरनुभवन्तः सुविशुद्धऋजुसूत्रनयदर्शनाभ्युपगमेन लब्धबादरपर्याप्तवनस्पतिकायिकव्यपदेशा उपपातेन सकलकालं सर्वलोकं व्याप्नुवन्ति, तत उक्तम्—'उपपातेन सर्वलोके' इति । 'समुग्घाएणं सव्वलोए' इति, यदा बादरनिगोदाः

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सूक्ष्मनिगोदेषु आयुर्बद्धा पर्याप्ते मारणान्तिकसमुद्घातेन समवहता आत्मप्रदेशानुत्पत्तिदेशं यावद् विक्षिपन्ति तदा बादरनिगोदपर्याप्तायुरद्याप्यक्षीणमिति बादरपर्याप्तनिगोदा एव समुद्घातगताश्च सकललोकव्यापिनश्चेति समुद्घातेन सर्वलोके, स्वस्थानेन लोकस्यासंख्येयतमे भागे, घनोदध्यादीनां सर्वेषामपि समुदितानां लोकस्यासंख्येयभागमात्रवर्तित्वात्, शेषं सुगमं ॥ (ग्रन्थाग्रं २०००)

कहि णं भंते ! बेइंदियाणं पज्जत्तापज्जत्तगाणं ठाणा प० ?, गोयमा ! उड्ढलोए तदेकदेसभागे अहोलोए तदेकदेसभागे तिरियलोए अगडेसु तलाएसु नदीसु दहेसु वावीसु पुक्खरिणीसु दीहियासु गुंजालियासु सरेसु सरपंतियासु सरसरपंतियासु बिलेसु बिलपंतियासु उज्झरेसु निज्झरेसु चिल्ललेसु पल्ललेसु वप्पिणेसु दीवेसु समुद्देसु सव्वेसु चेव जलासयेसु जलठाणेसु एत्थ णं बेइंदियाणं पज्जतापज्जत्तगाणं ठाणा प०, उववाएणं लोगस्स असंखेज्जइभागे, समुग्घाएणं लोगस्स असंखेज्जइभागे, सट्ठाणेणं लोयस्स असंखेज्जइभागे । कहि णं भंते ! तेइंदियाणं पज्जतापज्जत्तगाणं ठाणा प० ?, गोयमा ! उड्ढलोए तदेकदेसभाए अहोलोए तदेकदेसभाए तिरियलोए अगडेसु तलाएसु नदीसु दहेसु वावीसु पुक्खरिणीसु दीहियासु गुंजालियासु सरेसु सरपंतियासु सरसरपंतियासु बिलेसु बिलपंतियासु उज्झरेसु निज्झरेसु चिल्ललेसु पल्ललेसु वप्पिणेसु दीवेसु समुद्देसु सव्वेसु चेव जलासएसु जलठाणेसु एत्थ णं तेइंदियाणं पज्जत्तापज्जत्तगाणं ठाणा प० उववाएणं लोयस्स असंखेज्जइभागे समुग्घाएणं लोयस्स असंखेज्जइभागे सट्ठाणेणं लोयस्स असंखेज्जइभागे ॥ कहि णं भंते ! चउरिंदियाणं पज्जत्ता-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र द्वि-त्रि-चतु: इन्द्रिय जीवानाम् स्थानानि कथ्यते

प्रत सूत्रांक [४१]

दीप अनुक्रम [१९४]

पज्जत्तगाणं ठाणा प० ?, गोयमा ! उड्ढलोए तदेकदेसभागे अहोलोए तदेकदेसभागे तिरियलोए अगडेसु तलाएसु नदीसु दहेसु वावीसु पुक्खरिणीसु दीहियासु गुंजालियासु सरेसु सरपंतियासु सरसरपंतियासु बिलेसु बिलपंतियासु उज्झरेसु निज्झरेसु चिल्ललेसु पल्ललेसु वप्पिणेसु दीवेसु समुद्देसु सव्वेसु चेव जलासएसु जलठाणेसु एत्थ णं चउरिंदियाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा प०, उववाएणं लोयस्स असंखेज्जइभागे, समुग्घाएणं लोयस्स असंखेज्जइभागे, सट्ठाणेणं लोयस्स असंखेज्जइभागे ॥ कहि णं भंते ! पंचिंदियाणं पज्जत्तापज्जत्तगाणं ठाणा प० ?, गोयमा ! उड्ढलोयस्स तदेकदेसभाए अहोलोयस्स तदेकदेसभाए तिरियलोए अगडेसु तलाएसु नदीसु दहेसु वावीसु पुक्खरिणीसु दीहियासु गुंजालियासु सरेसु सरपंतियासु सरसरपंतियासु बिलेसु बिलपंतियासु उज्झरेसु निज्झरेसु चिल्ललेसु पल्ललेसु वप्पिणेसु दीवेसु समुद्देसु सव्वेसु चेव जलासएसु जलठाणेसु एत्थ णं पंचिंदियाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा प०, उववाएण लोयस्स असंखेज्जइभागे, समुग्घाएणं लोयस्स असंखेज्जइभागे, सट्ठाणेणं लोयस्स असंखेज्जइभागे ॥ (सू० ४१)

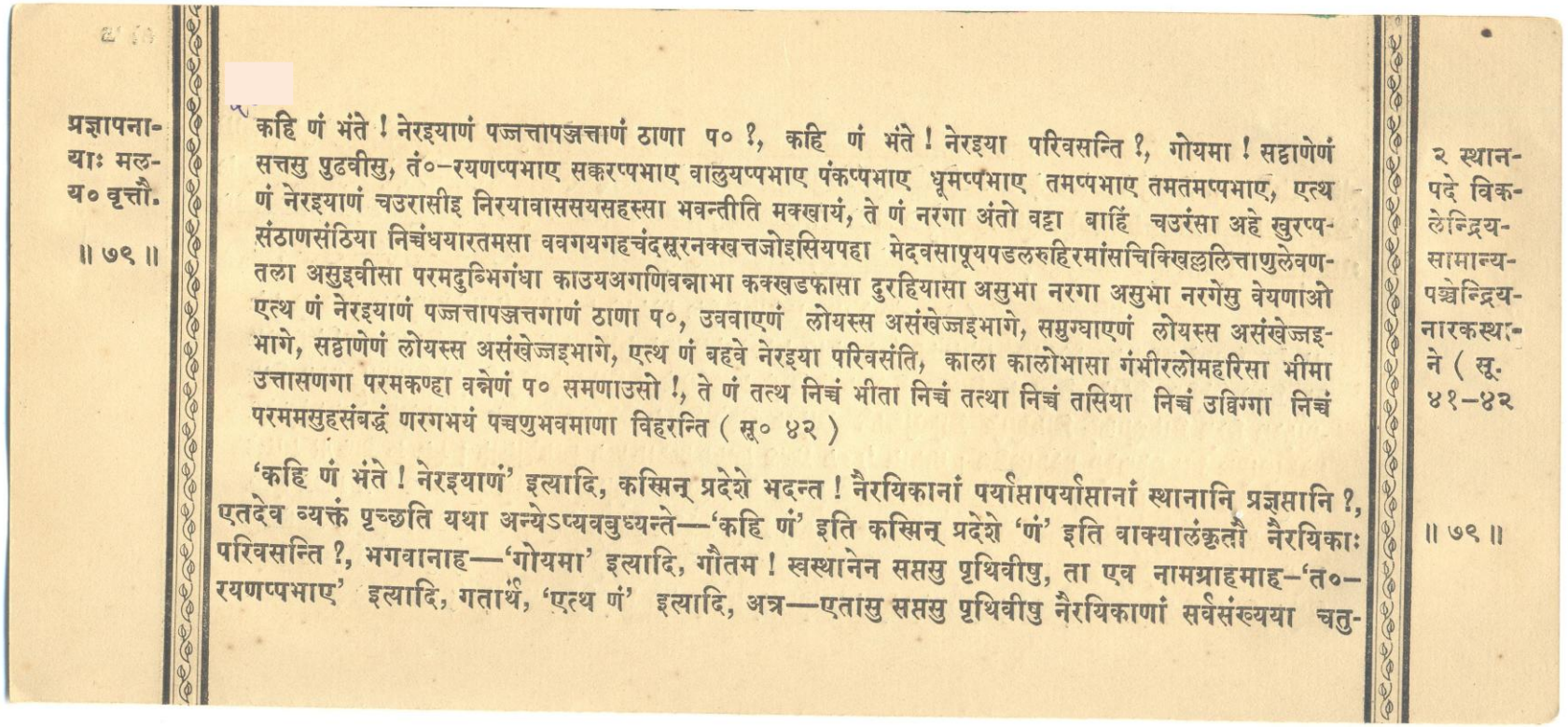
एवं द्वीन्द्रियत्रीन्द्रियचतुरिन्द्रियसामान्यपञ्चेन्द्रियसूत्राण्वपि भावनीयानि, नवरं द्वीन्द्रियादयो बहवो जलसंभूताः शङ्खप्रभृतय इति सर्वेष्वपि सूत्रेषु स्थानान्यवटादीन्युक्तानि, तथा ऊर्द्धलोके तदेकदेशभागे–मन्दरादिवाप्यादिषु, अधोलोके तदेकदेशे(शभागे)—अधोलौकिकग्रामकूपतडागादिषु, शेषमुपयुज्य स्वयं परिभावनीयम् ॥ अधुना पर्याप्तापर्याप्तनैरयिकस्थानप्ररूपणार्थमाह—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [४२]

दीप अनुक्रम [१९५]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति:



प्रज्ञापनायाः मलय० वृत्तौ. ॥ ७९ ॥

कहि णं भंते ! नेरइयाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा प० ?, कहि णं भंते ! नेरइया परिवसन्ति ?, गोयमा ! सट्ठाणेणं सत्तसु पुढवीसु, तं०–रयणप्पभाए सक्करप्पभाए वालुयप्पभाए पंकप्पभाए धूमप्पभाए तमप्पभाए तमतमप्पभाए, एत्थ णं नेरइयाणं चउरासीइ निरयावाससयसहस्सा भवन्तीति मक्खायं, ते णं नरगा अंतो वट्टा बाहिं चउरंसा अहे खुरप्पसंठाणसंठिया निच्चंधयारतमसा ववगयगहचंदसूरनक्खत्तजोइसियपहा मेदवसापूयपडलरुहिरमांसचिक्खिल्ललित्ताणुलेवणतला असुइवीसा परमदुब्भिगंधा काउयअगणिवन्नाभा कक्खडफासा दुरहियासा असुभा नरगा असुभा नरगेसु वेयणाओ एत्थ णं नेरइयाणं पज्जत्तापज्जत्तगाणं ठाणा प०, उववाएणं लोयस्स असंखेज्जइभागे, समुग्घाएणं लोयस्स असंखेज्जइभागे, सट्ठाणेणं लोयस्स असंखेज्जइभागे, एत्थ णं बहवे नेरइया परिवसंति, काला कालोभासा गंभीरलोमहरिसा भीमा उत्तासणगा परमकण्हा वन्नेणं प० समणाउसो !, ते णं तत्थ निच्चं भीता निच्चं तत्था निच्चं तसिया निच्चं उव्विग्गा निच्चं परममसुहसंबद्धं णरगभयं पच्चणुभवमाणा विहरन्ति (सू० ४२)

'कहि णं भंते ! नेरइयाणं' इत्यादि, कस्मिन् प्रदेशे भदन्त ! नैरयिकानां पर्याप्तापर्याप्तानां स्थानानि प्रज्ञप्तानि ?, एतदेव व्यक्तं पृच्छति यथा अन्येऽप्यवबुध्यन्ते—'कहि णं' इति कस्मिन् प्रदेशे 'णं' इति वाक्यालंकृतौ नैरयिकाः परिवसन्ति ?, भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि, गौतम ! स्वस्थानेन सप्तसु पृथिवीषु, ता एव नामग्राहमाह–'त०–रयणप्पभाए' इत्यादि, गतार्थं, 'एत्थ णं' इत्यादि, अत्र—एतासु सप्तसु पृथिवीषु नैरयिकाणां सर्वसंख्यया चतु-

२ स्थानपदे विकलेन्द्रियसामान्यपञ्चेन्द्रियनारकस्थाने (सू. ४१–४२ ॥ ७९ ॥

अत्र नैरयिक-पञ्चेन्द्रिय जीवानाम् स्थानानि कथ्यते

प्रत सूत्रांक [४२]

दीप अनुक्रम [१९५]

रशीतिर्नरकावासशतसहस्राणि भवन्ति, तथाहि—रत्नप्रभायां त्रिंशन्नरकावासशतसहस्राणि भवन्ति, शर्कराप्रभायां पञ्चविंशतिः शतसहस्राणि, वालुकाप्रभायां पञ्चदश लक्षाः, पङ्कप्रभायां दश लक्षाः, धूमप्रभायां त्रीणि लक्षाः, तमःप्रभायामेकं शतसहस्रं पञ्चोनं, तमस्तमःप्रभायां पञ्चेति, सर्वसंख्यया चतुरशीतिर्लक्षा नरकावासानामित्याख्यातं मया शेषैस्तीर्थकृद्भिः (श्र), 'ते णं नरकावासा' इत्यादि, ते नरकावासाश्चतुरशीतिर्लक्षप्रमाणाः सर्वेऽपि प्रत्येकमन्तः—मध्यभागे (वृत्ता) वृत्ताकारा बहिर्भागे चतुरस्राः—चतुरस्राकाराः, इदं च पीठोपरिवर्तिनं मध्यभागमधिकृत्य प्रोच्यते, सकलपीठाद्यपेक्षया त्वावलिकाप्रविष्टा वृत्तव्यस्रचतुरस्रसंस्थानाः, पुष्पावकीर्णास्तु नानासंस्थानाः प्रतिपत्तव्याः, 'अहे खुरप्पसंठाणसंठिया' इति अधो—भूमीतले क्षुरप्रस्येव—प्रहरणविशेषस्य यत्संस्थानम्—आकारविशेषस्तीक्ष्णतालक्षणस्तेन संस्थिताः, तथाहि—तेषु नरकावासेषु भूमितले मसृणत्वाभावतः शर्करिले पादेषु न्यस्यमानेषु शर्करामात्रसंस्पर्शेऽपि क्षुरप्रेणेव पादाः कृत्यन्ते, 'निच्चंधयारतमसा' इति तमसा नित्यान्धकाराः—उद्योताभावतो यत्तमः तदिह तम उच्यते तेन तमसा नित्यं—सर्वकालमन्धकाराः, त(अ)त्रापवरकादिष्वपि तमोऽन्धकारोऽस्ति केवलं बहिः सूर्यप्रकाशे मन्दतमो भवति, नरकेषु तु तीर्थकरजन्मदीक्षादिकालव्यतिरेकेणान्यदा सर्वकालमप्युद्योतलेशस्याप्यभावतो जात्यन्धस्येव मेघच्छन्नकालार्धरात्र इवातीव बहलतरो वर्तते तत उक्तं—तमसा नित्यान्धकाराः, तमश्च तत्र सदाऽवस्थितं, उद्योतकारिणामसंभवात्, तथा चाह—'ववगयगहचंदसूरनक्खत्तजोइसियपहा' व्यपगताः—परिभ्रष्टो

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ग्रहचन्द्रसूर्यनक्षत्ररूपाणा उपलक्षणमेतत् तारारूपाणां च ज्योतिष्काणा पन्था—मार्गो येभ्यस्ते व्यपगतग्रहचन्द्रसूर्यनक्षत्रज्योतिष्कपथाः, तथा 'मेयवसापूयरुधिरमांसचिक्खिल्ललित्ताणुलेवणतला' इति स्वभावसंपन्नैर्मेदोवसापूतिरुधिरमांसैर्यश्चिक्खिल्लः—कर्दमः तेन लिप्तं–उपदिग्धमनुलेपनेन—सकृद्लिप्तस्य पुनः पुनरुपलेपनेन तलं—भूमिका येषां ते मेदोवसापूतिरुधिरमांसचिक्खिल्ललिप्तानुलेपनतलाः, अत एवाशुचयः—अपवित्रा बीभत्साः दर्शनेऽप्यतिजुगुप्सोत्पत्तेः, क्वचिद् 'वीसा' इति पाठः, तत्र विस्रा–आमगन्धिकाः परमदुरभिगन्धा मृतगवादिकडेवरेभ्योऽप्यतीवानिष्टदुरभिगन्धाः । 'काउयअगणिवन्नाभा' इति, लोहे धम्यमाने यादृक् कपोतो बहुकृष्णरूपोऽग्नेर्वर्णः, किमुक्तं भवति ?—यादृशी बहुकृष्णवर्णभूता अग्निज्वाला विनिर्गच्छतीति तादृश्याभा—आकारो येषां ते कपोताग्निवर्णाभाः, धम्यमानलोहाग्निज्वालाकल्पा इति भावः, नारकोत्पत्तिस्थानव्यतिरेकेणान्यत्र सर्वत्राप्युष्णरूपत्वात्, एतच्च षष्ठसप्तमपृथ्वीवर्जमवसेयं, तथा च वक्ष्यति—'नवरं छट्ठसत्तमीसु णं काउअगणिवन्नाभा न भवन्ति' तथा कर्कशः–अतिदुःसहोऽसिपत्रस्येव स्पर्शो येषु ते कर्कशस्पर्शाः, अत एव 'दुरहियासा' इति, दुःखेनाध्यास्यन्ते–सह्यन्ते दुरध्यासा अशुभा दर्शनतो नरकाः, तथा गन्धरसस्पर्शशब्दैरशुभा–अतीवासातरूपा नरकेषु वेदना, 'एत्थ णं' इत्यादि, यावत् तत्थ णं बहवे निरया परिवसन्ति' 'काला' इत्यादि, कालाः–कृष्णाः, तत्र कोऽपि निष्प्रभतया मन्दकृष्णोऽपि भवति ततस्तदाशङ्काव्यवच्छेदार्थं विशेषणान्तरमाह–कालावभासाः–कालः–कृष्णोऽवभासः–प्रभाविनिर्गमो

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [४२]

दीप अनुक्रम [१९५]

येभ्यस्ते कालावभासाः, कृष्णप्रभापटलोपचिता इति भावः, अत एव गम्भीरलोमहर्षाः–गम्भीरः—अतीवोत्कटो लोमहर्षो–लोमोद्धर्षो भयवशाद् येभ्यस्ते गम्भीरलोमहर्षाः, किमुक्तं भवति ?–एवं नाम कृष्णाः कृष्णावभासा यद् दर्शनमात्रेऽपि शेषनारकजन्तूनां भयसंपादनेन मात्रातिगं लोमहर्षमुत्पादयन्तीति, अत एव 'भीमाः' भयानकाः, भीमत्वादेव उत्त्रासनकाः–उत्त्रास्यन्ते शेषनारकजन्तव एभिरित्युत्त्रासनाः उत्त्रासना एवोत्त्रासनकाः, किं बहुना ?–'वर्णेन' वर्णमधिकृत्य परमकृष्णाः, यत ऊर्ध्वं न किमपि कृष्णमस्ति भयानकं वा, बहूत्कर्षप्राप्तकृष्णवर्णाः प्रज्ञप्ता मया शैषैश्च तीर्थकरैः हे श्रमण ! हे आयुष्मन् ! 'ते णं निच्चं भीया' इत्यादि, ते नैरयिकाः 'णं' इति वाक्यालङ्कारे 'नित्यं' सर्वकालं क्षेत्रस्वभावजनितमहानिबिडान्धकारदर्शनतो भीताः 'नित्यं' सर्वकालं त्रस्ताः परमाधार्मिकपरस्परोदीरितदुःखसंपातभयादग्रेऽपि त्रास(स)मुपपन्नाः 'नित्यं' सर्वकालं परमाधार्मिकैः परस्परं वा त्रासिताः—त्रासं ग्राहिताः तथा 'नित्यं' सर्वकालं यथायोगं परमदुःसहशीतोष्णवेदनानुभवतः परमाधार्मिकपरस्परोदीरितदुःखानुभवतश्चोद्विग्नाः–तद्गतवासपराङ्मुखचित्ताः एवं 'नित्यं' सर्वकालं परममशुभं–एकान्तेनाशुभं संबद्धम्–अनुबद्धं न तु जातुचिदपि मनागप्यपान्तराले व्यवच्छिन्नसंतानं 'नरकभयं' नरकदुःखं 'प्रत्यनुभवन्तः' प्रत्येकं वेदयमाना 'विहरन्ति' अवतिष्ठन्ते ।

कहि णं भंते ! रयणप्पभापुढवीनेरइयाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा प० ?, कहि णं भंते ! रयणप्पभापुढवीनेरइआ परिव-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सन्ति ?, गोयमा ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए असीउत्तरजोयणसयसहस्सबाहल्लाए उवरि एगं जोयणसहस्समोगाहित्ता हेट्ठा चेगं जोयणसहस्सं वज्जित्ता मज्झे अट्ठहुत्तरे जोयणसयसहस्से एत्थ णं रयणप्पभापुढवीनेरइयाणं तीसं निरयावाससयसहस्सा भवन्तीति मक्खायं, ते णं णरगा अंतो वट्टा बाहिं चउरंसा अहे खुरप्पसंठाणसंठिया निच्चंधयारतमसा ववगयगहचंदसूरणक्खत्तजोइसप्पहा मेदवसापूयपडलरुहिरमांसचिक्खिल्ललित्ताणुलेवणतला असुइवीसा परमदुब्भिगंधा काउअगणिवन्नाभा कक्खडफासा दुरहियासा असुभा णरगा असुभा णरगेसु वेयणाओ, एत्थ णं रयणप्पभापुढवीनेरइयाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा प०, उववाएणं लोयस्स असंखेज्जइभागे, समुग्घाएणं लोयस्स असंखेज्जइभागे, सट्ठाणेणं लोयस्स असंखेज्जइभागे, तत्थ णं बहवे रयणप्पभापुढवीनेरइया परिवसन्ति, काला कालोभासा गंभीरलोमहरिसा भीमा उत्तासणगा परमकिण्हा वन्नेणं प० समणाउसो !, ते णं निच्चं भीता निच्चं तत्था निच्चं तसिया निच्चं उव्विग्गा निच्चं परममसुहसंबद्धं णरगभयं पच्चणुभवमाणा विहरन्ति । कहि णं भंते ! सक्करप्पभापुढवीनेरइयाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा प० ?, कहि णं भंते ! सक्करप्पभापुढवीनेरइया परिवसन्ति ?, गोयमा ! सक्करप्पभापुढवीए बत्तीसुत्तरजोयणसयसहस्सबाहल्लाए उवरिं एगं जोयणसहस्सं ओगाहित्ता हेट्ठा चेगं जोयणसहस्सं वज्जित्ता मज्झे तीसुत्तरे जोयणसयसहस्से एत्थ णं सक्करप्पभापुढवीनेरइयाणं पणवीसं निरयावाससयसहस्सा हवन्तीति मक्खायं, ते णं णरगा अंतो वट्टा बाहिं चउरंसा अहे खुरप्पसंठाणसंठिया निच्चंधयारतमसा ववगयगहचंदसूरनक्खत्तजोइसियप्पहा मेदवसापूयपडलरुहिरमांसचिक्खिल्ललित्ताणुलेवणतला असुइवीसा परमदुब्भिगंधा काउअगणिवन्नाभा कक्खडफासा दुरहियासा असुभा णरगा असुभा णरगेसु वेयणाओ, एत्थ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [४३]

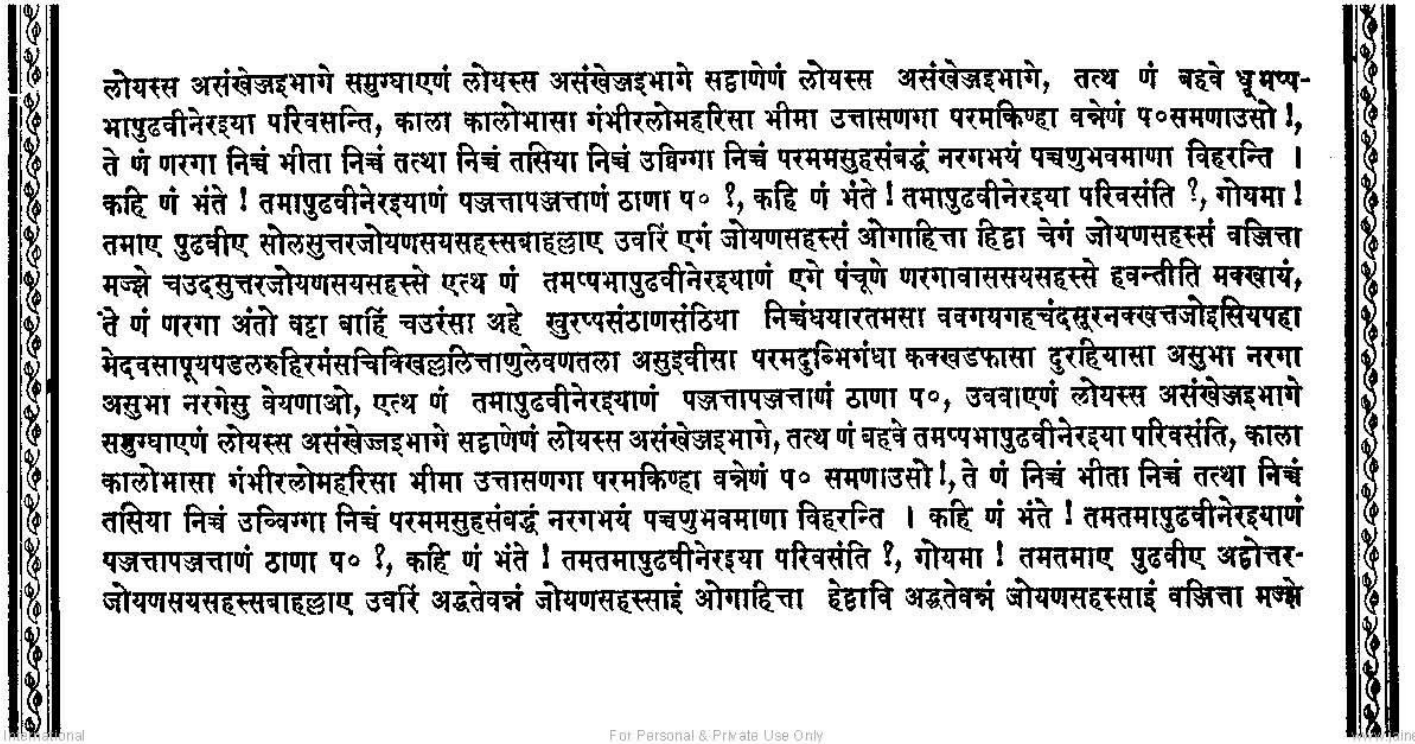
दीप अनुक्रम [१९६]

णं सक्करप्पभापुढवीनेरइयाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा प०, उववाएणं समुग्घाएणं सट्ठाणेणं लोगस्स असंखेज्जइभागे, तत्थ णं बहवे सक्करप्पभापुढवीनेरइआ परिवसन्ति, काला कालोभासा गंभीरलोमहरिसा भीमा उत्तासणगा परमकिण्हा वन्नेणं प० समणाउसो ! ते णं निच्चं भीता निच्चं तत्था निच्चं तसिया निच्चं उव्विग्गा निच्चं परममसुहसंबद्धं नरगभयं पच्चणुभवमाणा विहरन्ति । कहि णं भंते ! वालुयप्पभापुढवीनेरइयाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा प० ?, कहि णं भंते ! वालुयप्पभापुढवीनेरइया परिवसंति ?, गोयमा ! वालुयप्पभापुढवीए अट्ठावीसुत्तरजोयणसयसहस्सबाहल्लाए उवरिं एगं जोयणसहस्सं ओगाहित्ता हेट्ठा चेगं जोयणसहस्सं वज्जित्ता मज्झे छव्वीसुत्तरजोयणसयसहस्से एत्थ णं वालुयप्पभापुढवीनेरइयाणं पन्नरसनरयावाससयसहस्सा भवन्तीति मक्खायं, ते णं णरगा अंतो वट्टा बाहिं चउरंसा अहे खुरप्पसंठाणसंठिया निच्चंधयारतमसा ववगयगहचंदसूरनक्खत्तजोइसप्पहा मेदवसापूयपडलरुहिरमंसचिक्खिल्ललित्ताणुलेवणतला असुइवीसा परमदुब्भिगंधा काउअगणिवन्नाभा कक्खडफासा दुरहियासा असुभा नरगा असुभा नरगेसु वेयणाओ एत्थ णं वालुयप्पभापुढवीनेरइयाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा प०, उववाएणं लोयस्स असंखेज्जइभागे, समुग्घाएणं लोयस्स असंखेज्जइभागे, सट्ठाणेणं लोयस्स असंखेज्जइभागे, तत्थ णं बहवे वालुयप्पभापुढवीनेरइया परिवसंति, काला कालोभासा गंभीरलोमहरिसा भीमा उत्तासणगा परमकिण्हा वन्नेणं प० समणाउसो !, ते णं निच्चं भीता निच्चं तत्था निच्चं तसिआ निच्चं उव्विग्गा निच्चं परममसुहं संबद्धं णरगभयं पच्चणुभवमाणा विहरन्ति । कहि णं भंते ! पंकप्पभापुढवीनेरइयाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा प० ?, कहि णं भंते ! पंकप्पभापुढवीनेरइया परिवसंति ?, गोयमा ! पंकप्पभापुढवीए वीसुत्तरजोय-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

णसयसहस्सबाहल्लाए उवरिं एगं जोयणसहस्सं ओगाहित्ता हिट्ठा चेगं जोयणसहस्सं वज्जित्ता मज्झे अट्ठारसुत्तरे जोयण-सयसहस्से एत्थ णं पंकप्पभापुढवीनेरइयाणं दस निरयावाससयसहस्सा भवन्तीति मक्खायं, ते णं णरगा अंतो वट्टा बाहिं चउरंसा अहे खुरप्पसंठाणसंठिया निच्चंधयारतमसा ववगयगहचंदसूरनक्खत्तजोइसियपहा मेदवसापूयपडलरुहिरमंस-चिक्खिल्ललित्ताणुलेवणतला असुइवीसा परमदुब्भिगंधा काउअगणिवन्नाभा कक्खडफासा दुरहियासा असुभा नरगा असुभा नरगेसु वेयणाओ एत्थ णं पंकप्पभापुढवीनेरइयाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा प०, उववाएणं लोयस्स असंखेज्जइ-भागे, समुग्घाएणं लोयस्स असंखेज्जइभागे, सट्ठाणेणं लोयस्स असंखेज्जइभागे, तत्थ णं बहवे पंकप्पभापुढवीनेरइआ परिवसंति, काला कालोभासा गंभीरलोमहरिसा भीमा उत्तासणगा परमकिण्हा वन्नेणं प० समणाउसो !, ते णं निच्चं भीया णिच्चं तत्था णिच्चं तसिया णिच्चं परममसुहसंबद्धं णरगभयं पच्चणुभवमाणा विहरन्ति । कहि णं भन्ते ! धूमप्पभा-पुढवीनेरइयाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा प० ?, कहि णं भंते ! धूमप्पभापुढवीनेरइआ परिवसन्ति ?, गोयमा ! धूमप्पभा-पुढवीए अट्ठारसुत्तरजोयणसयसहस्सबाहल्लाए उवरिं एगं जोयणसहस्सं ओगाहित्ता हेट्ठा चेगं जोयणसहस्सं वज्जित्ता मज्झे सोलसुत्तरजोयणसयसहस्से एत्थ णं धूमप्पभापुढवीनेरइयाणं तिन्नि निरयावाससयसहस्सा भवन्तीति मक्खायं, ते णं णरगा अंतो वट्टा बाहिं चउरंसा अहे खुरप्पसंठाणसंठिया निच्चंधयारतमसा ववगयगहचंदसूरनक्खत्तजोइसियपहा मेदवसापूयपडलरुहिरमंसचिक्खिल्ललित्ताणुलेवणतला असुइवीसा परमदुब्भिगंधा काउअगणिवन्नाभा कक्खडफासा दुरहि-यासा असुभा नरगा असुभा नरगेसु वेयणाओ एत्थ णं धूमप्पभापुढवीनेरइयाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा प०, उववाएणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



लोयस्स असंखेज्जइभागे समुग्घाएणं लोयस्स असंखेज्जइभागे सट्ठाणेणं लोयस्स असंखेज्जइभागे, तत्थ णं बहवे धूमप्प-भापुढवीनेरइया परिवसन्ति, काला कालोभासा गंभीरलोमहरिसा भीमा उत्तासणगा परमकिण्हा वन्नेणं प०समणाउसो !, ते णं णरगा निच्चं भीता निच्चं तत्था निच्चं तसिया निच्चं उव्विग्गा निच्चं परममसुहसंबद्धं नरगभयं पच्चणुभवमाणा विहरन्ति । कहि णं भंते ! तमापुढवीनेरइयाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा प० ?, कहि णं भंते ! तमापुढवीनेरइया परिवसंति ?, गोयमा ! तमाए पुढवीए सोलसुत्तरजोयणसयसहस्सबाहल्लाए उवरिं एगं जोयणसहस्सं ओगाहित्ता हिट्ठा चेगं जोयणसहस्सं वज्जित्ता मज्झे चउद्दसुत्तरजोयणसयसहस्से एत्थ णं तमप्पभापुढवीनेरइयाणं एगे पंचूणे णरगावाससयसहस्से हवन्तीति मक्खायं, ते णं णरगा अंतो वट्टा बाहिं चउरंसा अहे खुरप्पसंठाणसंठिया निच्चंधयारतमसा ववगयगहचंदसूरनक्खत्तजोइसियपहा मेदवसापूयपडलरुहिरमंसचिक्खिल्ललित्ताणुलेवणतला असुइवीसा परमदुब्भिगंधा कक्खडफासा दुरहियासा असुभा नरगा असुभा नरगेसु वेयणाओ, एत्थ णं तमापुढवीनेरइयाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा प०, उववाएणं लोयस्स असंखेज्जइभागे समुग्घाएणं लोयस्स असंखेज्जइभागे सट्ठाणेणं लोयस्स असंखेज्जइभागे, तत्थ णं बहवे तमप्पभापुढवीनेरइया परिवसंति, काला कालोभासा गंभीरलोमहरिसा भीमा उत्तासणगा परमकिण्हा वन्नेणं प० समणाउसो !, ते णं निच्चं भीता निच्चं तत्था निच्चं तसिया निच्चं उव्विग्गा निच्चं परममसुहसंबद्धं नरगभयं पच्चणुभवमाणा विहरन्ति । कहि णं भंते ! तमतमापुढवीनेरइयाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा प० ?, कहि णं भंते ! तमतमापुढवीनेरइया परिवसंति ?, गोयमा ! तमतमाए पुढवीए अट्ठोत्तर-जोयणसयसहस्सबाहल्लाए उवरिं अद्धतेवन्नं जोयणसहस्साइं ओगाहित्ता हेट्ठावि अद्धतेवन्नं जोयणसहस्साइं वज्जित्ता मज्झे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तीसु जोयणसहस्सेसु एत्थ णं तमतमापुढवीनेरइयाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं पंचदिसि पंच अणुत्तरा महइमहालया महानिरया प०, तं०—काले महाकाले रोरुए महारोरुए अपइट्ठाणे, ते णं णरगा अंतो वट्टा बाहिं चउरंसा अहे खुरप्पसंठाणसंठिआ निच्चंधयारतमसा ववगयगहचंदसूरनक्खत्तजोइसियपहा मेदवसापूयपडलरुहिरमंसचिक्खिल्ललित्ताणुलेवणतला असुइवीसा परमदुब्भिगंधा कक्खडफासा दुरहियासा असुभा नरगा असुभा नरगेसु वेयणाओ, एत्थ णं तमतमापुढवीनेरइयाणं ठाणा प०, उववाएणं लोयस्स असंखेज्जइभागे समुग्घाएणं लोयस्स असंखेज्जइभागे सट्ठाणेणं लोयस्स असंखेज्जइभागे तत्थ णं बहवे तमतमापुढवीनेरइआ परिवसंति, काला कालोभासा गंभीरलोमहरिसा भीमा उत्तासणगा परमकिण्हा वन्नेणं प० समणाउसो !, ते णं निच्चं भीता निच्चं तत्था निच्चं तसिया निच्चं उव्विग्गा निच्चं परममसुहसंबद्धं णरगभयं पच्चणुभवमाणा विहरन्ति ॥ आसीयं बत्तीसं अट्ठावीसं च हुंति वीसं च । अट्ठारससोलसगं अट्ठुत्तरमेव हिट्ठिमिया ॥ १ ॥ अट्ठुत्तरं च तीसं छव्वीसं चेव सयसहस्सं तु । अट्ठारस सोलसगं चउद्दसमहियं तु छट्ठीए ॥ २ ॥ अद्धतिवन्नसहस्सा उवरिमहे वज्जिऊण तो भणियं । मज्झे तिसहस्सेसुं होन्ति उ नरगा तमतमाए ॥ ३ ॥ तीसा य पन्नवीसा पन्नरस दसेव सयसहस्साइं । तिन्नि य पंचूणेगं पंचेव अणुत्तरा नरगा ॥ ४ ॥ (सू० ४३)

तदेवं सामान्यतो नैरयिकसूत्रं व्याख्यातं, एवं रत्नप्रभादिविषयाण्यपि सूत्राणि यथायोगं परिभावनीयानि, प्राय उक्तव्याख्यानुसारेण सुगमत्वात्, केवलं षष्ठपृथिव्यां सप्तमपृथिव्यां च नरकावासाः कपोताग्निवर्णाभा न वक्तव्याः,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [४३]

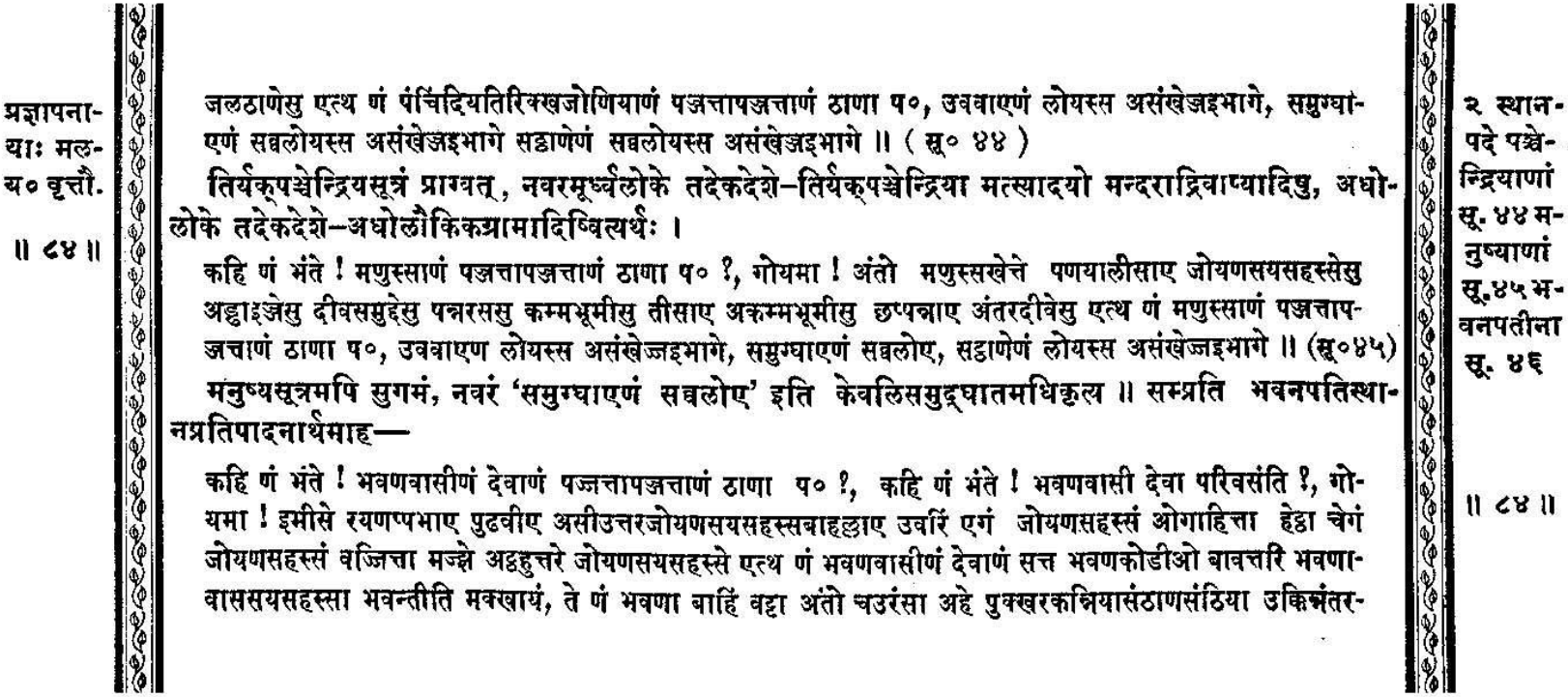
दीप अनुक्रम [१९६--२००]

नारकोत्पत्तिस्थानव्यतिरेकेणान्यत्र सर्वत्रापि तेषां शीतपरिणामत्वात्, तथा चाह–"नवरं छट्ठसत्तमीसु णं काउअ-अगणिवन्नाभा न भवन्ति"। सम्प्रति यथोक्तपृथिवीबाहल्यपरिमाणप्रतिपादिकां संग्रहणीगाथामाह—'आसीयं बत्तीसं' इत्यादि, आशीतं–अशीतिसहस्राधिकं शतसहस्रं रत्नप्रभाया बाहल्यं द्वात्रिंशं–द्वात्रिंशत्सहस्राधिकं शर्कराप्रभायाः 'अट्ठाविंशं' अष्टाविंशतिसहस्राधिकं वालुकाप्रभायाः विंशतिसहस्राधिकं पङ्कप्रभायाः अष्टादशसहस्राधिकं धूमप्रभायाः षोडशसहस्राधिकं तमःप्रभायाः अष्टोत्तरम्–अष्टसहस्राधिकं लक्षं 'हेट्ठिमिया' सर्वाधस्तन्यास्तमस्तमःप्रभाया इति। संप्रति उपर्यधश्चैकैकं योजनसहस्रं मुक्त्वा यावत्प्रमाणं नरकावासयोग्यं पृथिवीबाहल्यं तावत्संग्रहीतुकाम आह—'अट्ठुत्तरं च' इत्यादिगाथाद्वयं, रत्नप्रभाया हि अशीतिसहस्राधिकं लक्षं बाहल्यपरिमाणं तस्योपरितनमेकं योजनसहस्रमेकं चाधो योजनसहस्रं वर्जयित्वा शेषं नरकावासाधारभूतं, अतो रत्नप्रभाया नरकावासयोग्यं बाहल्यपरिमाणमष्टसप्ततिसहस्राधिकं लक्षं भवति, एवं सर्वत्राप्युपयुज्य भावनीयं। साम्प्रतं नरकावाससंख्याप्रतिपादनाय संग्रहणीगाथामाह—'तीसा य' इत्यादि, गतार्था ॥

कहि णं भंते ! पंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा प० ?, गोयमा ! उड्ढलोए तदेकदेसभाए अहोलोए तदेकदेसभाए तिरियलोए अगडेसु तलायेसु नदीसु दहेसु वावीसु पुक्खरिणीसु दीहियासु गुंजालियासु सरेसु सरपंतियासु सरसरपंतियासु बिलेसु बिलपंतियासु उज्झरेसु निज्झरेसु चिल्ललेसु पल्ललेसु वप्पिणेसु दीवेसु समुद्देसु सव्वेसु चेव जलासएसु

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र तिर्यञ्च-पञ्चेन्द्रिय जीवानाम् स्थानानि कथ्यते

प्रत सूत्रांक [४४] दीप अनुक्रम [२०१]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति:  प्रज्ञापनायाः मलय० वृत्तौ. ॥ ८४ ॥ जलठाणेसु एत्थ णं पंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा प०, उववाएणं लोयस्स असंखेज्जइभागे, समुग्घाएणं सव्वलोयस्स असंखेज्जइभागे सट्ठाणेणं सव्वलोयस्स असंखेज्जइभागे ॥ (सू० ४४) तिर्यक्पञ्चेन्द्रियसूत्रं प्राग्वत्, नवरमूर्ध्वलोके तदेकदेशे–तिर्यक्पञ्चेन्द्रिया मत्स्यादयो मन्दराद्रिवाप्यादिषु, अधोलोके तदेकदेशे–अधोलौकिकग्रामादिष्वित्यर्थः । कहि णं भंते ! मणुस्साणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा प० ?, गोयमा ! अंतो मणुस्सखेत्ते पणयालीसाए जोयणसयसहस्सेसु अट्ठाइज्जेसु दीवसमुद्देसु पन्नरससु कम्मभूमीसु तीसाए अकम्मभूमीसु छप्पन्नाए अंतरदीवेसु एत्थ णं मणुस्साणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा प०, उववाएण लोयस्स असंखेज्जइभागे, समुग्घाएणं सव्वलोए, सट्ठाणेणं लोयस्स असंखेज्जइभागे ॥ (सू०४५) मनुष्यसूत्रमपि सुगमं, नवरं 'समुग्घाएणं सव्वलोए' इति केवलिसमुद्घातमधिकृत्य ॥ सम्प्रति भवनपतिस्थानप्रतिपादनार्थमाह— कहि णं भंते ! भवणवासीणं देवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा प० ?, कहि णं भंते ! भवणवासी देवा परिवसंति ?, गोयमा ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए असीउत्तरजोयणसयसहस्सबाहल्लाए उवरिं एगं जोयणसहस्सं ओगाहित्ता हेट्ठा चेगं जोयणसहस्सं वज्जित्ता मज्झे अट्ठहुत्तरे जोयणसयसहस्से एत्थ णं भवणवासीणं देवाणं सत्त भवणकोडीओ बावत्तरि भवणावाससयसहस्सा भवन्तीति मक्खायं, ते णं भवणा बाहिं वट्टा अंतो चउरंसा अहे पुक्खरकन्नियासंठाणसंठिया उक्किन्नंतर- २ स्थानपदे पञ्चेन्द्रियाणां सू. ४४ मनुष्याणां सू.४५ भवनपतीना सू. ४६ ॥ ८४ ॥ Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org
	अत्र मनुष्य एवं देवयोनिक-पञ्चेन्द्रिय जीवानाम् स्थानानि कथ्यते अथ देवयोनिक-पञ्चेन्द्रिय जीवानाम् मध्ये भवनवासीदेवानाम् स्थानानि कथ्यते

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [४६] + गाथा

दीप अनुक्रम [२०३--२०४]

विउलगंभीरखातफलिहा पागारट्टालयकवाडतोरणपडिदुवारदेसभागा जंतसयग्घिमुसंढिपरियारिया अउज्झा सदाजया सदागुत्ता अडयालकोट्ठगरइया अडयालकयवणमाला खेमा सिवा किंकरामरदंडोवरक्खिया लाउल्लोइयमहिया गोसीससरसरत्तचंदणदद्दरदिन्नपंचंगुलितला उवचियचंदणकलसा चंदणघडसुकयतोरणपडिदुवारदेसभागा आसत्तोसत्तविउलवट्टवग्घारियमल्लदामकलावा पंचवन्नसरससुरभिमुक्कपुप्फपुंजोवयारकलिया (ग्रंथाग्रं १०००) कालागुरुपवरकुंदुरुक्कतुरुक्कधूवमघमघंतगंधुद्धुयाभिरामा सुगंधवरगंधिया गंधवट्टिभूया अच्छरगणसंघसंविगिन्ना दिव्वतुडियसद्दसंपणातिया सव्वरयणामया अच्छा सण्हा लण्हा घट्ठा मट्ठा णीरया निम्मला निप्पंका निक्कंकडच्छाया सप्पहा ससिरिया समिरिया सउज्जोया पासादीया दरिसणिज्जा अभिरूवा पडिरूवा, एत्थ णं भवणवासिदेवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पं०, उववाएणं लोयस्स असंखेज्जइभागे, समुग्घाएणं लोयस्स असंखेज्जइभागे, सट्ठाणेणं लोयस्स असंखेज्जइभागे, तत्थ णं बहवे भवणवासी देवा परिवसंति, तं०—असुरा नाग सुवन्ना विज्जू अग्गी य दीव उदही य। दिसिपवणथणियनामा दसहा एए भवणवासी ॥ १२९ ॥ चूडामणिमउडरयणभूसणणागफडगरुलवइरपुन्नकलसंकउप्फेसा सीहमगरगयंकअस्सेवरवद्धमाणनिज्जुत्तचित्तचिंधगता सुरूवा महड्ढिया महज्जुइआ महब्बला महायसा महाणुभावा महासोक्खा हारविराइअवच्छा कडगतुडियथंभियभुआ अंगदकुंडलमट्ठगंडतलकन्नपीढधारी विचित्तहत्थाभरणा विचित्तमालामउलिमउडा कल्लाणगपवरवत्थपरिहिया कल्लाणगपवरमल्लाणुलेवणधरा भासुरबोंदिपलंबवणमालधरा दिव्वेणं वन्नेणं दिव्वेणं गंधेणं दिव्वेणं फासेणं दिव्वेणं संघयणेणं दिव्वेणं संठाणेणं दिव्वाए इड्ढीए दिव्वाए जुईए दिव्वाए पभाए दिव्वाए छायाए दिव्वाए अच्चीए दिव्वेणं तेएणं दिव्वाए लेसाए दस दिसाओ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [४६] + गाथा

दीप अनुक्रम [२०३--२०४]

उज्जोवेमाणा पभासेमाणा ते णं तत्थ साणं साणं भवणावाससयसहस्साणं साणं साणं सामाणियसाहस्सीणं साणं साणं तायत्तीसाणं साणं साणं लोगपालाणं साणं साणं अग्गमहिसीणं साणं साणं परिसाणं साणं साणं अणिआणं साणं साणं अणिआहिवईणं साणं साणं आयरक्खदेवसाहस्सीणं अन्नेसिं च बहूणं भवणवासीणं देवाण य देवीण य आहेवच्चं पोरेवच्चं सामित्तं भट्टित्तं महत्तरगत्तं आणाईसरसेणावच्चं कारेमाणा पालेमाणा महताहतनट्टगीयवाइयतंतितलतालतुडियघणमुइंगपडुप्पवाइयरवेणं दिव्वाइं भोगभोगाइं भुंजमाणा विहरंति ।

'कहि णं भंते ! भवणवासीणं देवाणं' इत्यादि, 'असीउत्तरजोयणसयसहस्सबाहल्लाए' इति अशीत्युत्तरं—अशीतिसहस्राधिकयोजनशतसहस्रं बाहल्यं यस्याः सा तथा तस्याः 'सत्त भवणकोडीओ बावत्तरि भवणावाससयसहस्सा भवन्तीति मक्खायं' इति असुरकुमाराणां हि चतुःषष्टिशतसहस्राणि भवनानां, ततः सर्वसंख्यया यथोक्तं भवनसंख्यानं भवति, 'ते णं भवणा' इत्यादि, तानि 'णं' इति वाक्यालङ्कारे, पुंस्त्वं प्राकृतत्वात्, भवनानि बहिर्वृत्तानि—वृत्ताकाराणि अन्तः समचतुरस्राणि अधस्तनभागे पुष्करकर्णिकासंस्थानसंस्थितानि कर्णिका नाम उन्नतसमचित्रबिन्दुकिनी 'उक्किन्नंतरविउलगंभीरखातफलिहा' इति उत्कीर्णमिवोत्कीर्णमतीव व्यक्तमित्यर्थः, उत्कीर्णमन्तरं यासां खातपरिखाणां ता उत्कीर्णान्तराः, किमुक्तं भवति ?—खातानां च परिखाणां च स्पष्टवैविक्त्योन्मीलनार्थमपान्तराले महती पाली समस्तीति, खातानि च परिखाश्च खातपरिखाः उत्कीर्णान्तरा विपुला—विस्तीर्णा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गम्भीरा—अलब्धमध्यभागा खातपरिखा येषा भवनाना परितस्तानि उत्कीर्णान्तरविपुलगम्भीरखातपरिखानि, खातपरिखानां चायं प्रतिविशेषः—परिखा उपरि विशाला अधः संकुचिता, खातं तु उभयत्रापि सममिति, 'पागारट्टालयकवाडतोरणपडिदुवारदेसभागा' इति, प्रतिभवनं प्राकारेषु–सालेषु अट्टालककपाटतोरणप्रतिद्वाराणि–अट्टालककपाटतोरणप्रतिद्वाररूपा देशभागा–देशविशेषा येषु तानि प्राकाराट्टालककपाटतोरणप्रतिद्वारदेशभागानि, तत्राट्टालकाः–प्राकारस्योपरि भृत्याश्रयविशेषाः कपाटानि–प्रतोलीद्वारसत्कानि, एतेन प्रतोल्यः सर्वत्र सूचिताः, अन्यथा कपाटानामसंभवात्, तोरणानि प्रतोलीद्वारेषु प्रतिद्वाराणि–स्थूलद्वारापान्तरालवर्तीनि लघुद्वाराणि, तथा 'जंतसयग्घिमुसलमुसंढिपरिवारिया' इति यन्त्राणि–नानाप्रकाराणि शतघ्न्यो–महायष्टयो महाशिला वा याः पातिताः सत्यः पुरुषाणां शतानि घ्नन्ति मुशलानि–प्रतीतानि मुसण्ढ्यः–प्रहरणविशेषाः तैः परिवारितानि–समन्ततो वेष्टितानि, अत एवायोध्यानि–परैर्योद्धुमशक्यानि, अयोध्यत्वादेव च 'सदाजयानि' सदा–सर्वकालं जयो येषु तानि सदाजयानि, सर्वकालं जयवन्तीत्यर्थः, तथा सदा–सर्वकालं गुप्तानि प्रहरणैः पुरुषैश्च योद्धृभिः सर्वतः–समन्ततो निरन्तरं परिवारिततया परेषामसहमानानां मनागपि प्रवेशासंभवात्, 'अडयालकोट्ठगरइया' इति अष्टचत्वारिंशद्भेदभिन्नविच्छित्तिकलिताः कोष्ठका–अपवरका रचिताः–स्वयमेव रचनां प्राप्ता येषु तानि अष्टचत्वारिंशत्कोष्ठकरचितानि, सुखादिदर्शनात् पाक्षिको निष्ठान्तस्य परनिपातः, तथा अष्टचत्वारिंशद्भेदभिन्नविच्छित्तयः कृता वनमाला येषु

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [४६] + गाथा दीप अनुक्रम [२०३--२०४]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति:

तानि अष्टचत्वारिंशत्कृतवनमालानि, अन्ये त्वभिदधति—अडयालशब्दो देशीवचनत्वात् प्रशंसावाची, ततोऽयमर्थः—प्रशस्तकोष्ठकरचितानि प्रशस्तकृतवनमालानीति, तथा क्षेमाणि—परकृतोपद्रवरहितानि, शिवानि—सदा मङ्गलोपेतानि, तथा किङ्कराः—किङ्करभूता येऽमरास्तैर्दण्डैः कृत्वोपरक्षितानि सर्वतः—समन्ततो रक्षितानि किङ्करामरदण्डोपरक्षितानि, 'लाउल्लोइयमहिया' इति लाइयं नाम—यद् भूमेर्गोमयादिनोपलेपनं उल्लोइयं—कुड्यानां मालस्य च सेटिकादिभिः संमृष्टीकरणं, लाउल्लोइयाभ्यां महितानि—पूजितानि लाउल्लोइयमहितानि, तथा गोशीर्षेण—गोशीर्षनामकचन्दनेन सरसरक्तचन्दनेन च दर्दरेण—बहलेन चपेटाप्रकारेण वा दत्ताः पञ्चाङ्गुलयस्तला—हस्तका येषु तानि गोशीर्षसरसरक्तचन्दनदर्दरदत्तपञ्चाङ्गुलितलानि, तथा उपचिता—निवेशिताः चन्दनकलशा—माङ्गल्यकलशा येषु तानि उपचितचन्दनकलशानि, 'चन्दनघडसुकयतोरणपडिदुवारदेसभागा' इति चन्दनघटैः—चन्दनकलशैः सुकृतानि—सुष्ठुकृतानि शोभितानीति तात्पर्यार्थः यानि तोरणानि तानि चन्दनघटसुकृततोरणानि प्रतिद्वारदेशभागे येषु तानि चन्दनघटसुकृततोरणप्रतिद्वारदेशभागानि तथा 'आसत्तोसत्तविउलवट्टवग्घारियमल्लदामकलावा' इति आ—अवाङ् अधोभूमौ सक्त आसक्तो भूमौ लग्न इत्यर्थः ऊर्ध्वं सक्त उत्सक्तः उल्लोचतले उपरि संबद्ध इत्यर्थः विपुला—विस्तीर्णः वृत्तो—वर्तुलः 'वग्घारिय' इति प्रलम्बितो माल्यदामकलापः—पुष्पमालासमूहो येषु तान्यासक्तोत्सक्तविपुलवृत्तप्रलम्बितमाल्यदामकलापानि, तथा पञ्चवर्णेन सुरभिणा मुक्तेन—क्षिप्तेन पुष्पपुञ्जलक्षणेन उपचारेण—पूजया कलितानि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [४६] + गाथा दीप अनुक्रम [२०३--२०४]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति: पञ्चवर्णसुरभिमुक्तपुष्पपुञ्जोपचारकलितानि, 'कालागुरुपवरकुन्दुरुक्कतुरुक्कधूवमघमघंतगन्धुद्धूयाभिरामे'इति कालागुरुः प्रसिद्धः प्रवरः—प्रधानः कुन्दुरुक्कः–चीडा तुरुष्कं–सिल्हकं कालागुरुश्च प्रवरकुन्दुरुक्कतुरुष्के च कालागुरुप्रवरकुन्दुरुक्कतुरुष्काणि तेषां धूपस्य यो मघमघायमानो गन्ध उद्धूत–इतस्ततो विप्रसृतस्तेनाभिरामाणि—रमणीयानि कालागुरुप्रवरकुन्दुरुक्कतुरुष्कधूपमघमघायमानगन्धोद्धूताभिरामाणि, तथा शोभनो गन्धो येषां ते सुगन्धाः ते च ते वरगन्धाश्च–वासाः सुगन्धवरगन्धास्तेषां गन्धः स एष्वस्तीति सुगन्धवरगन्धगन्धिकानि, "अतोऽनेकस्वरात्" इति इकप्रत्ययः, अत एव गन्धवर्तिभूतानि—सौरभ्यातिशयाद् गन्धद्रव्यगुटिकाकल्पानीति भावः, तथा अप्सरोगणानां संघः–समुदायः तेन सम्यक्–रमणीयतया विकीर्णानि–व्याप्तानि अप्सरोगणसङ्घविकीर्णानि, तथा दिव्यानां त्रुटितानाम्—आतोद्यानां वेणुवीणामृदङ्गादीनां ये शब्दास्तैः संप्रणदितानि—सम्यक्–श्रोतृमनोहारितया प्रकर्षेण सर्वकालं नदितानि–शब्दवन्ति, 'सर्वरत्नमयानि' सर्वात्मना–सामस्त्येन न त्वेकदेशेन रत्नमयानि समस्तरत्नमयानि वा, अच्छानि–आकाशस्फटिकवदतिस्वच्छानि, श्लक्ष्णानि–श्लक्ष्णपुद्गलस्कन्धनिष्पन्नानि श्लक्ष्णदलनिष्पन्नपटवत्, 'लण्हानि' मसृणानि घुण्टितपटवत्, 'घट्ठा' इति घृष्टानीव घृष्टानि खरशाणया पाषाणप्रतिमावत्, 'मट्ठा' इति, मृष्टानि, सुकुमारशाणया पाषाणप्रतिमेव, अत एव नीरजांसि स्वाभाविकरजोरहितत्वाद् निर्मलानि आगन्तुकमलाभावात् निष्पङ्कानि–कलङ्कविकलानि कर्दमरहितानि वा 'निकंकडच्छाया' इति निष्कङ्कटा–निष्कवचा निरावरणा Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [४६] + गाथा

दीप अनुक्रम [२०३--२०४]

निरुपघातेति भावार्थः छाया–दीप्तिर्येषां तानि निष्कङ्कटच्छायानि, सप्रभाणि–स्वरूपतः प्रभावन्ति, समरीचीनि–बहिर्विनिर्गतकिरणजालानि, सोद्योतानि—बहिर्व्यवस्थितवस्तुस्तोमप्रकाशनकराणि, 'प्रसादीयानि' प्रसादाय–मनः-प्रसत्तये हितानि प्रसादीयानि—मनःप्रसत्तिकारीणीति भावः, तथा दर्शनीयानि—दर्शनयोग्यानि यानि पश्यतः चक्षुषी न श्रमं गच्छत इति तात्पर्यार्थः 'अभिरूपा' इति अभि–सर्वेषां द्रष्टृणां मनःप्रसादानुकूलतया अभिमुखं रूपं येषां तानि अभिरूपाणि अत्यन्तकमनीयानीत्यर्थः, अत एव 'पडिरूवा' इति प्रतिविशिष्टं रूपं येषां तानि प्रतिरू-पाणि, अथवा प्रतिक्षणं नवं नवं रूपं येषां तानि प्रतिरूपाणि। 'एते भवणवासी' इत्यादि, एते अनन्तरोक्ता असु-रकुमारादयो भवनवासिनो यथाक्रमं चूडामणिमुकुटरत्नभूषणनियुक्तनागस्फटादिचित्रचिह्नधराश्च, तथाहि–असुर-कुमारभवनवासिनश्च चूडामणिमुकुटरत्नाः, चूडामणिर्नाम मुकुटे रत्नं चिह्नभूतं येषां ते तथा, नागकुमारा भूषणनि-युक्तनागस्फटारूपचिह्नधराः, सुवर्णकुमारा भूषणनियुक्तगरुडरूपचिह्नधराः, विद्युत्कुमारा भूषणनियुक्तवज्ररूपचिह्न-धराः, वज्रं नाम शक्रस्यायुधं, अग्निकुमारा मुकुटनियुक्तपूर्णकलशरूपचिह्नधराः, द्वीपकुमारा भूषणनियुक्तसिंहरूप-(चिह्न) धराः, उदधिकुमारा भूषणनियुक्तहयवररूपचिह्नधराः दिक्कुमारा भूषणनियुक्तगजरूपचिह्नधराः, वायुकु-मारा भूषणनियुक्तमकररूपचिह्नधराः, स्तनितकुमारा भूषणनियुक्तवरवर्द्धमानरूपचिह्नधराः, वर्द्धमानकं–शरावसंपुटं। अक्षरगमनिका त्वेवम्–भूषणेषु नागस्फटागरुडवज्राणि येषां ते भूषणनागस्फटागरुडवज्राः, पूर्णकलशेनाङ्कित उप्फे-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सो–मुकुटो येषां ते पूर्णकलशाङ्कितोप्फेसाः, तथा सिंहहयवरगजा अङ्का अर्थाद् भूषणेषु येषां ते सिंहहयवरगजाङ्काः, तथा मकरवर्द्धमानके नियुक्ते–भूषणेषु नियोजिते चिह्ने गते—स्थिते येषां ते मकरवर्द्धमानकनियुक्तचित्रचिह्नगतास्ततः पूर्वपदैर्द्वन्द्वसमासः । पुनः सर्वे कथंभूताः ? इत्याह—'सुरूपाः' शोभनं रूपं येषां ते तथा, अत्यन्तकमनीयरूपा इत्यर्थः, तथा 'महिड्ढिया' इति महती ऋद्धिः—भवनपरिवारादिका येषां ते महर्द्धिकाः, तथा महती द्युतिः–शरीरगता आभरणगता च येषामिति महाद्युतयः, तथा महद् बलं—शारीरः प्राणो येषां ते महाबलाः, तथा महद् यशः–ख्यातिर्येषां ते महायशसः, तथा महाननुभागः–सामर्थ्यं शापानुग्रहविषयं येषां ते महानुभागाः, तथा 'महेसक्खा' इति महान् ईश–ईश्वर इत्याख्या—प्रसिद्धिर्येषां ते महेशाख्याः, अथवा ईशनमीशो भावे घञ्प्रत्ययः ऐश्वर्यमित्यर्थः 'ईश ऐश्वर्ये' इति वचनात् तमीशम्–ऐश्वर्यमात्मानं ख्यान्ति–अन्तर्भूतण्यर्थतया ख्यापयन्ति-प्रथयन्ति इति ईशाख्याः महान्तश्च ते ईशाख्याश्च महेशाख्याः, क्वचिद् 'महासोक्खा' इति पाठः तत्र महत् सौख्यं प्रभूतसद्वेद्योदयवशाद् येषां ते महासौख्याः, अन्ये पठन्ति–'महासक्खा' इति, तत्रायं शब्दसंस्कारो–महाथाक्षाः, इयं चात्र पूर्वसूरिप्रदर्शिता व्युत्पत्तिः—आशुगमनादश्वो–मनः अक्षाणि–इन्द्रियाणि स्वस्वविषयव्यापकत्वात् अश्वश्च अक्षाणि चेत्यश्वाक्षाणि महान्त्यश्वाक्षाणि येषां ते महाश्वाक्षाः, 'हारविराइयवच्छा' इति हारैर्विराजितं वक्षो येषां ते हारविराजितवक्षसः, 'कडगतुडियथंभियभुया' इति कटकानि–कलाचिकाऽऽभरणानि त्रुटितानि–बाहुरक्षकास्तैः

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

स्तम्भितौ इव स्तम्भितौ भुजौ येषां ते कटकत्रुटितस्तम्भितभुजाः, तथा अङ्गदानि–बाहुशीर्षाऽऽभरणविशेषरूपाणि कुण्डले–कर्णाभरणविशेषरूपे तथा मृष्टौ–मृष्टीकृतौ गण्डौ–कपोलौ यैस्तानि मृष्टगण्डानि, कर्णपीठानि–कर्णाभरणविशेषरूपाणि धारयन्तीत्येवंशीला अङ्गदकुण्डलमृष्टगण्डकर्णपीठधारिणः, तथा विचित्राणि–नानारूपाणि हस्ताभरणानि येषां ते विचित्रहस्ताभरणाः, तथा 'विचित्तमालामउलिमउडा' विचित्रा माला–कुसुमस्रग् मौलौ—मस्तके मुकुटं च येषां ते विचित्रमालामौलिमुकुटाः, तथा कल्याणकं–कल्याणकारि प्रवरं वस्त्रं परिहितं यैस्ते कल्याणकप्रवरवस्त्रपरिहिताः, सुखादिदर्शनाद् निष्ठान्तस्यात्र पाक्षिकः परनिपातः, तथा कल्याणकं—कल्याणकारि यत् प्रवरं माल्यं–पुष्पदाम यच्चानुलेपनं तद् धरन्तीति कल्याणकप्रवरमाल्यानुलेपनधराः, तथा भास्वरा–देदीप्यमाना बोन्दिः–शरीरं येषां ते भास्वरबोन्दयः, तथा प्रलम्ब इति–प्रलम्बा या वनमाला ता धरन्तीति प्रलम्बवनमालाधराः, 'दिव्वेणं संघयणेणं'ति शक्तिविशेषमपेक्ष्य संहननेनेव संहननेन न तु साक्षात् संहननेन, देवानां संहननासंभवात्, संहननं हि अस्थिरचनात्मकं, न च देवानां अस्थीनि सन्ति, तथा चोक्तं जीवाभिगमे–"देवा असंघयणी, जम्हा तेसिं नेवट्ठी नेव सिरा" इत्यादि, 'दिवाए इड्ढीए' दिव्यया–प्रधानया ऋद्ध्या–परिवारादिकया दिव्यया द्युत्या–इष्टार्थसंप्रयोगलक्षणया 'द्यु अभिगमने' इति वचनात्, दिव्यया प्रभया–भवनावासगतया, दिव्यया छायया–समुदायशोभया, दिव्येनार्चिषा–शरीरस्थरत्नादितेजोज्वालया, दिव्येन तेजसा शरीरप्रभवेन, दिव्यया लेश्यया–देहवर्णसुन्दर-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तया दश दिश उद्योतयन्तः–प्रकाशयन्तः 'पभासेमाणा' शोभमानास्ते भवनवासिनो देवा 'णं' इति वाक्यालङ्कारे, तत्र स्वस्थाने 'साणं साणं' इति स्वेषां स्वेषामात्मीयात्मीयानामित्यर्थः 'आहेवच्चं पोरेवच्चं' इत्यादि अधिपतेः कर्म आधिपत्यं रक्षा इत्यर्थः, सा च रक्षा सामान्येनाप्यारक्षकेणेव क्रियते तत आह–पुरस्य पतिः पुरपतिः तस्य कर्म पौरपत्यं सर्वेषामात्मीयानामग्रेसरत्वमिति भावः, तच्चाग्रेसरत्वं नायकत्वमन्तरेणापि स्वनायकनियुक्ततथाविधगृहचिन्तकसामान्यपुरुषस्येव भवति ततो नायकत्वप्रतिपत्त्यर्थमाह–स्वामित्वं–स्वमस्यास्तीति स्वामी तद्भावः स्वामित्वं नायकत्वमित्यर्थः, तदपि च नायकत्वं कस्यचित् पोषकत्वमन्तरेणापि भवति यथा हरिणाधिपतेर्हरिणस्य तत आह—भर्तृत्वं—पोषकत्वं, अत एव महत्तरकत्वं, तदपि महत्तरकत्वं कस्यचिदाज्ञाविकलस्यापि भवति यथा कस्यचिद् वणिजः स्वदासवर्गं प्रति तत आह—'आणाईसरसेणावच्चं' आज्ञया ईश्वर आज्ञेश्वरः सेनायाः पतिः सेनापतिः आज्ञेश्वरश्चासौ सेनापतिश्च आज्ञेश्वरसेनापतिस्तस्य कर्म आज्ञेश्वरसेनापत्यं स्वसैन्यं प्रत्यद्भुतमाज्ञाप्राधान्यमिति भावः, कारयन्तोऽन्यैर्नियुक्तकैः पुरुषैः पालयन्तः स्वयमेव महता रवेणेति योगः, 'अहयत्ति' आख्यानकप्रतिबद्धानि यदिवा अहतानि—अव्याहतानि नित्यानुबन्धीनीति भावः ये नाट्यगीते–नाट्यं–नृत्यं गीतं—गानं यानि च वादितानि—तन्त्रीतलतालत्रुटितानि तत्र तन्त्री—वीणा तलौ—हस्ततलौ तालः–कंसिका त्रुटितानि—वादित्राणि तथा यश्च घनमृदङ्गः पटुना पुरुषेण प्रवादितः, तत्र घनमृदङ्गो नाम घनसमानध्वनिर्यो मृदङ्गः, तत एतेषां

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

द्वन्द्वः, तेषां रवेण दिव्यान्–दिवि भवान् प्रधानानिति भावः, भोगार्हाः भोगाः–शब्दादयो भोगभोगास्तान् भुञ्जमाना 'विहरन्ति' आसते ॥

कहि णं भंते ! असुरकुमाराणं देवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा प० ?, कहि णं भंते ! असुरकुमारा देवा परिवसंति ?, गोयमा ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए असीउत्तरजोयणसयसहस्सबाहल्लाए उवरि एगं जोयणसहस्सं ओगाहित्ता हेट्ठा चेगं जोयणसहस्सं वज्जित्ता मज्झे अट्ठहुत्तरे जोयणसयसहस्से एत्थ णं असुरकुमाराणं देवाणं चउसट्ठिं भवणावाससयसहस्सा भवन्तीति मक्खायं । ते णं भवणा बाहिं वट्टा अंतो चउरंसा अहे पुक्खरकन्नियासंठाणसंठिया उक्किन्नंतरविउलगंभीरखायफलिहा पागारट्टालयकवाडतोरणपडिदुवारदेसभागा जंतसयग्घिमुसलमुसंढिपरिवारिया अउज्झा सदाजया सदागुत्ता अडयालकोट्ठगरइया अडयालकयवणमाला खेमा सिवा किंकरामरदंडोवरक्खिया लाउल्लोइयमहिया गोसीससरसरत्तचंदणदद्दरदिन्नपंचंगुलितला उवचितचंदणकलसा चंदणघडसुकयतोरणपडिदुवारदेसभागा आसत्तोसत्तविउलवट्टवग्घारियमल्लदामकलावा पंचवन्नसरसुरभिमुक्कपुप्फपुंजोवयारकलिया कालागुरुपवरकुंदुरुक्कतुरुक्कडज्झंतधूवमघमघंतगंधुद्धुयाभिरामा सुगंधवरगंधिया गंधवट्टिभूया अच्छरगणसंघसंविगिन्ना दिव्वतुडियसद्दसंपणादिया सव्वरयणामया अच्छा सण्हा लण्हा घट्ठा मट्ठा णीरया निम्मला निप्पंका निक्कंकडच्छाया सप्पभा सस्सिरीया समिरीया सउज्जोया पासादीया दरिसणिज्जा अभिरूवा पडिरूवा एत्थ णं असुरकुमाराणं देवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पन्नत्ता, उववाएणं लोयस्स असंखेज्जइभागे, समु-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



ग्घायेणं लोयस्स असंखेज्जइभागे, सट्ठाणेणं लोयस्स असंखेज्जइभागे, तत्थ णं बहवे असुरकुमारा देवा परिवसंति, काला लोहियक्खतिबिंबोट्ठा धवलपुप्फदंता असियकेसा वामे एगकुंडलधरा अद्दचंदणाणुलित्तगत्ता ईसीसिलिंधपुप्फपगासाइं असंकिलिट्ठाइं सुहुमाइं वत्थाइं पवरपरिहिया वयं च पढमं समइक्कंता विइयं च वयं असंपत्ता भद्दे जोव्वणे वट्टमाणा तलभंगयतुडियपवरभूसणनिम्मलमणिरयणमंडितभुया दसमुद्दामंडियग्गहत्था चूडामणिविचित्तचिंधगया सुरूवा महिड्ढिया महज्जुइया महायसा महब्बला महाणुभागा महासोक्खा हारविराइयवच्छा कडयतुडियथंभियभुया अंगयकुंडलमट्ठगंडयलकन्नपीढधारी विचित्तहत्थाभरणा विचित्तमालामउली कल्लाणगपवरवत्थपरिहिया कल्लाणगमल्लाणुलेवणधरा भासुरबोंदी पलंबवणमालधरा दिव्वेणं वन्नेणं दिव्वेणं गंधेणं दिव्वेणं फासेणं दिव्वेणं संघयणेणं दिव्वेणं संठाणेणं दिव्वाए इड्ढीए दिव्वाए जुईए दिव्वाए पभाए दिव्वाए छायाए दिव्वाए अच्चीए दिव्वेणं तेएणं दिव्वाए लेसाए दस दिसाओ उज्जोवेमाणा पभासेमाणा ते णं तत्थ साणं साणं भवणावाससयसहस्साणं साणं साणं सामाणियसाहस्सीणं साणं साणं तायत्तीसाणं साणं साणं लोगपालाणं साणं साणं अग्गमहिसीणं साणं साणं परिसाणं साणं साणं अणियाणं साणं साणं अणियाहिवईणं साणं साणं आयरक्खदेवसाहस्सीणं अन्नेसिं च बहूणं भवणवासीणं देवाण य देवीण य आहेवच्चं पोरेवच्चं सामित्तं भट्टित्तं महत्तरगत्तं आणाईसरसेणावच्चं कारेमाणा पालेमाणा महताहतनट्टगीतवाइयतंतीतलतालतुडियघणमुइंगपडुप्पवाइयरवेणं दिव्वाइं भोगभोगाइं भुंजमाणा विहरंति ॥ चमरबलिणो इत्थ दुवे असुरकुमारिंदा असुरकुमारराया परिवसंति, काला महानीलसरिसा णीलगुलिअगवलअयसिकुसुमप्पगासा वियसियसयवत्तणिम्मलईसिसिवरत्तंबणयणा गरुलायतउज्जुतुंगनासा उव-



Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चियसियप्पवालबिंबफलसंनिहाहरोट्ठा पंडुरससिसगलविमलनिम्मलदहिघणसंखगोक्खीरकुंददगरयमुणालियाधवलदंतसेढी हुयवहनिद्धंतधोयतत्ततवणिज्जरत्ततलतालुजीहा अंजणघणकसिणगरुयगरमणिज्जणिद्धकेसा वामेयकुंडलधरा अद्दचंदणाणुलित्तगत्ता ईसिसिलिंधपुप्फपगासाइं असंकिलिट्ठाइं सुहुमाइं वत्थाइं पवरपरिहिया वयं च पढमं समइक्कंता बिइयं तु असंपत्ता भद्दे जोव्वणे वट्टमाणा तलभंगयतुडियपवरभूसणणिम्मलमणिरयणमंडियभुया दसमुद्दामंडियग्गहत्था चूडामणिचित्तचिंधगया सुरूवा महड्ढिया महज्जुईआ महायसा महाबला महाणुभागा महासोक्खा हारविराइयवच्छा कडयतुडियथंभियभुया अंगदकुंडलमट्ठगंडतलकन्नपीढधारी विचित्तहत्थाभरणा विचित्तमालामउली कल्लाणगपवरवत्थपरिहिया कल्लाणगपवरमल्लाणुलेवणधरा भासुरबोंदी पलंबवणमालधरा दिव्वेणं वन्नेणं दिव्वेणं गंधेणं दिव्वेणं फासेणं दिव्वेणं संघयणेणं दिव्वेणं संठाणेणं दिव्वाए इड्ढीए दिव्वाए जुईए दिव्वाए पभाए दिव्वाए छायाए दिव्वाए अच्चीए दिव्वेणं तेएणं दिव्वाए लेसाए दस दिसाओ उज्जोवेमाणा पभासेमाणा ते णं तत्थ साणं साणं भवणावाससयसहस्साणं साणं साणं सामाणियसाहस्सीणं साणं साणं तायत्तीसाणं साणं साणं लोगपालाणं साणं साणं अग्गमहिसीणं साणं साणं परिसाणं साणं साणं अणियाणं साणं साणं अणियाहिवईणं साणं साणं आयरक्खदेवसाहस्सीणं अन्नेसिं च बहूणं भवणवासीणं देवाण य देवीण य आहेवच्चं पोरेवच्चं सामित्तं भट्टित्तं महत्तरगत्तं आणाईसरसेणावच्चं कारेमाणा पालेमाणा महयाहयनट्टगीयवाइयतंतीतलतालतुडियघणमुइंगपडुप्पवाइयरवेणं दिव्वाइं भोगभोगाइं भुंजमाणा विहरंति ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र मूल-संपादने सूत्र-क्रमांकने मुद्रण-दोष: वर्तते—सू० ४६ स्थाने सू० ४७ इति मुद्रितं

असुरकुमारसूत्रे कालाः—कृष्णवर्णाः 'लोहियक्खाबिम्बोट्ठा' लोहिताक्षरत्नवद् बिम्बीफलवच्च ओष्ठौ येषां ते लोहिताक्षबिम्बोष्ठाः, आरक्तोष्ठा इति भावः, धवलपुष्पधत्सामर्थ्यात् कुन्दकलिका इव दन्ता येषां ते धवलपुष्पदन्ताः, असिताः—कृष्णाः केशा येषां ते असितकेशाः, दन्ताः केशाश्चामीषां वैक्रिया द्रष्टव्याः, न स्वाभाविकाः, वैक्रियशरीरत्वात् 'वामेय (एग) कुंडलधरा' एककर्णावसक्तकुण्डलधारिणः, तथा आर्द्रेण—सरसेन चन्दनेनानुलिप्तं गात्रं यैस्ते आर्द्रचन्दनानुलिप्तगात्राः, तथा ईषद्—मनाक् शिलिन्ध्रपुष्पप्रकाशानि—शिलिन्ध्रपुष्पसदृशवर्णानि ईषद्रक्तानीत्यर्थः असंक्लिष्टानि—अत्यन्तसुखजनकतया मनागपि संक्लेशानुत्पादकानि सूक्ष्माणि—मृदुलघुस्पर्शानि अच्छानि चेति भावः वस्त्राणि प्रवराणि अत्र सूत्रे विभक्तिलोपः प्राकृतत्वात् 'परिहिताः' परिहितवन्तः, तथा वयः प्रथमं—कुमारत्वलक्षणमतिक्रान्तास्तत्पर्यन्तवर्तिन इति भावः द्वितीयं च—मध्यमलक्षणं वयोऽसंप्राप्ताः, एतदेव व्यक्तीकरोति—भद्रे—अतिप्रशस्ये यौवने वर्तमानाः 'तलभंगयतुडियवरभूसणनिम्मलमणिरयणमंडियभुजा' इति तलभङ्गका—बाह्याभरणविशेषाः तुटितानि—बाहुरक्षिकाः अन्यानि च यानि वराणि भूषणानि बाह्याभरणानि तेषु ये निर्मला मणयः—चन्द्रकान्ताद्या यानि रत्नानि च—इन्द्रनीलादीनि तैर्मण्डितौ भुजौ—हस्ताग्रौ येषां ते तथा, तथा दशभिर्मुद्राभिर्मण्डितौ अग्रहस्तौ येषां ते दशमुद्रामण्डिताग्रहस्ताः, 'चूडामणिविचित्तचिंधगया' इति चूडामणिनामकं चित्रम्—अद्भुतं चिह्नं गतं स्थितं येषां ते चूडामणिचित्रचिह्नगताः ॥ चमरबलिसामान्यसूत्रे कालाः—कृष्णवर्णाः, एतदेवोपमानतः प्रतिपाद-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

यति–'महानीलसरिसा' महानीलं यत् किमपि वस्तुजातं लोके प्रसिद्धं तेन सदृशाः, एतदेव व्याचष्टे—नीलगुटिका—नील्या गुटिका गवलं–माहिषं शृङ्गं अतसीकुसुमं प्रतीतं तेषामिव प्रकाशः–प्रभा येषां ते नीलगुटिकागवलातसीकुसुमप्रकाशाः, तथा विकसितशतपत्रमिव निर्मले ईषद्–देशविभागेन मनाक् सिते रक्ते ताम्रे च नयने येषां ते विकसितशतपत्रनिर्मलेषत्सितरक्ताम्रनयनाः, गरुडस्येवायता–दीर्घा ऋज्वी–अकुटिला तुङ्गा–उन्नता नासा–नासिका येषां ते गरुडायतर्जुतुङ्गनासाः, तथा उवचियं–तेजितं यत् शिलाप्रवालं–विद्रुमरत्नं यच्च बिम्बफलं–बिम्ब्याः सत्कं फलं तत्सन्निभोऽधरोष्ठो येषां ते तथा, तथा पाण्डुरं न तु सन्ध्याकालभाव्यारक्तं शशिशकलं–चन्द्रखण्डं तदपि च कथंभूतमित्याह–विमलं–रजसा रहितं कलङ्कविकलं वा तथा निर्मलो यो दधिघनः शङ्खो गोक्षीरं यानि कुन्दानि–कुन्दकुसुमानि दकरजः–पानीयकणाः मृणालिका च तद्वद् धवला दन्तश्रेणिर्येषां ते तथा, विमलशब्दस्य विशेष्यात् परनिपातः प्राकृतत्वात्, तथा हुतवहेन–वैश्वानरेण निर्ध्मातं सद् यज्जायते धौतं–निर्मलं तप्तम्–उत्तप्तं तपनीयमारक्तं सुवर्णं तद्वद् रक्तानि हस्तपादतलानि तालुजिह्वे च येषां ते हुतवहनिर्ध्मातधौततप्ततपनीयरक्ततलतालुजिह्वाः, तथा अञ्जनं–सौवीराञ्जनं घनः–प्रावृट्कालभावी मेघस्तद्वत्कृष्णा रुचकरत्नवद् रमणीया स्निग्धाश्च केशा येषां ते अञ्जनघनकृष्णरुचकरमणीयस्निग्धकेशाः ॥

कहिं णं भंते ! दाहिणिल्लाणं असुरकुमाराणं देवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा प० ?, कहि णं भंते ! दाहिणिल्ला असुरकु-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [४६]

दीप अनुक्रम [२०५]

मारा देवा परिवसंति ?, गोयमा ! जंबूदीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स दाहिणेणं इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए असीउत्तरजोयणसयसहस्सबाहल्लाए उवरिं एगं जोयणसहस्सं ओगाहित्ता हिट्ठा चेगं जोयणसहस्सं वज्जित्ता मज्झे अट्ठहुत्तरे जोयणसयसहस्से एत्थ णं दाहिणिल्लाणं असुरकुमाराणं देवाणं चउत्तीसं भवणावाससयसहस्सा भवन्तीति मक्खायं, ते णं भवणा बाहिं वट्टा अंतो चउरंसा सो चेव वण्णओ जाव पडिरूवा, एत्थ णं दाहिणिल्लाणं असुरकुमाराणं देवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पन्नत्ता, तीसुवि लोगस्स असंखेज्जइभागे, तत्थ णं बहवे दाहिणिल्ला असुरकुमारा देवा देवीओ परिवसंति, काला लोहियक्खा तहेव जाव भुंजमाणा विहरंति, एएसिणं तहेव तायतीसगलोगपाला भवन्ति, एवं सव्वत्थ भाणियव्वं । भवणवासी णं चमरे इत्थ असुरकुमारिंदे असुरकुमारराया परिवसति काले महानीलसरिसे जाव पभासेमाणे, से णं तत्थ चउतीसाए भवणावाससयसहस्साणं चउसट्ठीए सामाणियसाहस्सीणं तायत्तीसाए तायत्तीसगाणं चउण्हं लोगपालाणं पंचण्हं अग्गमहिसीणं सपरिवाराणं तिण्हं परिसाणं सत्तण्हं अणियाणं सत्तण्हं अणियाहिवईणं चउण्ह य चउसट्ठीणं आयरक्खदेवसाहस्सीणं अन्नेसिं च बहूणं दाहिणिल्लाणं देवाणं देवीण य आहेवच्चं पोरेवच्चं जाव विहरंति ॥ कहि णं भंते ! उत्तरिल्लाणं असुरकुमाराणं देवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पन्नत्ता ?, कहि णं भंते ! उत्तरिल्ला असुरकुमारा देवा परिवसंति ?, गोयमा ! जंबूदीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स उत्तरेणं इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए असीउत्तरजोयणसयसहस्सबाहल्लाए उवरिं एगं जोयणसहस्सं ओगाहित्ता हिट्ठा चेगं जोयणसहस्सं वज्जित्ता मज्झे अट्ठहुत्तरे जोयणसयसहस्से एत्थ णं उत्तरिल्लाणं असुरकुमाराणं देवाणं तीसं भवणावाससयसहस्सा भवन्तीति मक्खायं, ते णं भवणा बाहिं वट्टा अंतो चउ-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [४६]

दीप अनुक्रम [२०५]

रंसा सेसं जहा दाहिणिल्लाणं जाव विहरंति, बली एत्थ वइरोयणिंदे वइरोयणराया परिवसति काले महानीलसरिसे जाव पभासेमाणे । से णं तत्थ तीसाए भवणावाससयसहस्साणं सट्ठीए सामाणियसाहस्सीणं तायत्तीसाए तायत्तीसगाणं चउण्हं लोगपालाणं पंचण्हं अग्गमहिसीणं सपरिवाराणं तिण्हं परिसाणं सत्तण्हं अणियाणं सत्तण्हं अणियाहिवईणं चउण्ह य सट्ठीणं आयरक्खदेवसाहस्सीणं अन्नेसिं च बहूणं उत्तरिल्लाणं असुरकुमाराणं देवाण य देवीण य आहेवच्चं पोरवेच्चं कुव्वमाणे विहरइ ॥ कहि णं भंते ! नागकुमाराणं देवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पन्नत्ता ?, कहि णं भंते ! नागकुमारा देवा परिवसंति ?, गोयमा ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए असीउत्तरजोयणसयसहस्सबाहल्लाए उवरिं एगं जोयणसहस्सं ओगाहित्ता हिट्ठा चेगं जोयणसहस्सं वज्जित्ता मज्झे अट्ठहुत्तरे जोयणसयसहस्से एत्थ णं नागकुमाराणं देवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं चुलसीइ भवणावाससयसहस्सा भवन्तीतिमक्खायं, ते णं भवणा बाहिं वट्टा अंतो चउरंसा जाव पडिरूवा, तत्थ णं णागकुमाराणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पन्नत्ता, तीसुवि लोगस्स असंखेज्जइभागे, तत्थ णं बहवे नागकुमारा देवा परिवसंति महिड्ढिया महज्जुईआ सेसं जहा ओहियाणं जाव विहरंति । धरणभूयाणंदा एत्थ णं दुवे नागकुमारिंदा णागकुमाररायाणो परिवसंति महड्ढिया सेसं जहा ओहियाणं जाव विहरंति । कहि णं भंते ! दाहिणिल्लाणं नागकुमाराणं देवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पन्नत्ता ?, कहि णं भंते ! दाहिणिल्ला नागकुमारा देवा परिवसंति ?, गोयमा ! जंबूदीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स दाहिणेणं इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए असीउत्तरजोयणसयसहस्सबाहल्लाए उवरिं एगं जोयणसहस्सं ओगाहित्ता हिट्ठा चेगं जोयणसहस्सं वज्जित्ता मज्झे अट्ठहुत्तरे जोयणसयसहस्से एत्थ णं दाहिणिल्लाणं नागकुमाराणं देवाणं चउया-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

लीसं भवणावाससयसहस्सा भवन्तीतिमक्खायं, ते णं भवणा बाहिं वट्टा जाव पडिरूवा, एत्थ णं दाहिणिल्लाणं नागकुमाराणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पन्नत्ता, तीसुवि लोयस्स असंखेज्जइभागे, एत्थ णं दाहिणिल्ला नागकुमारा देवा परिवसंति महिड्ढिया जाव विहरंति, धरणे इत्थ नागकुमारिंदे नागकुमारराया परिवसइ महड्ढिए जाव पभासेमाणे, से णं तत्थ चउयालीसाए भवणावाससयसहस्साणं छण्हं सामाणियसाहस्सीणं तायत्तीसाए तायत्तीसगाणं चउण्हं लोगपालाणं छण्हं अग्गमहिसीणं सपरिवाराणं तिण्हं परिसाणं सत्तण्हं अणियाणं सत्तण्हं अणियाहिवईणं चउवीसाए आयरक्खदेवसाहस्सीणं अन्नेसिं च बहूणं दाहिणिल्लाणं नागकुमाराणं देवाण य देवीण य आहेवच्चं पोरेवच्चं कुव्वमाणे विहरइ। कहि णं भंते उत्तरिल्लाणं णागकुमाराणं देवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पन्नत्ता ?, कहि णं भंते ! उत्तरिल्ला नागकुमारा देवा परिवसंति ?, गोयमा ! जम्बुद्दीवे दीवे मन्दरस्स पव्वयस्स उत्तरेणं इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए असीउत्तरजोयणसयसहस्सबाहल्लाए उवरिं एगं जोयणसहस्सं ओगाहित्ता हेट्ठा चेगं जोयणसहस्सं वज्जित्ता मज्झे अट्ठहुत्तरे जोयणसयसहस्से एत्थ णं उत्तरिल्लाणं नागकुमाराणं देवाणं चत्तालीसं भवणावाससयसहस्सा भवन्तीतिमक्खायं, ते णं भवणा बाहिं वट्टा सेसं जहा दाहिणिल्लाणं जाव विहरंति, भूयाणंदे एत्थ नागकुमारिंदे नागकुमारराया परिवसइ, महिड्ढीए जाव पभासेमाणे, से णं तत्थ चत्तालीसाए भवणावाससयसहस्साणं आहेवच्चं जाव विहरइ ॥ कहि णं भंते ! सुवन्नकुमाराणं देवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पन्नत्ता ?, कहि णं भंते ! सुवन्नकुमारा देवा परिवसंति ?, गोयमा ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए जाव एत्थ णं सुवन्नकुमाराणं देवाणं बावत्तरिं भवणावाससयसहस्सा भवन्तीतिमक्खायं। ते णं भवणा बाहिं वट्टा जाव पडिरूवा, तत्थ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [४६]

दीप अनुक्रम [२०५--२१६]

णं सुवन्नकुमाराणं देवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पन्नत्ता, जाव तिसुवि लोगस्स असंखेज्जइभागे, तत्थ णं बहवे सुवन्नकुमारा देवा परिवसंति महिड्ढिया सेसं जहा ओहियाणं जाव विहरंति, वेणुदेवे वेणुदाली य इत्थ दुवे सुवण्णकुमारिंदा सुवण्णकुमाररायाणो परिवसंति, महड्ढिया जाव विहरंति। कहि णं भंते ! दाहिणिल्लाणं सुवण्णकुमाराणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पन्नत्ता ?, कहि णं भंते ! दाहिणिल्ला सुवण्णकुमारा देवा परिवसंति ?, गोयमा ! इमीसे जाव मज्झे अट्ठहुत्तरे जोयणसयसहस्से एत्थ णं दाहिणिल्लाणं सुवण्णकुमाराणं अट्ठत्तीसं भवणावाससयसहस्सा भवन्तीतिमक्खायं। ते णं भवणा बाहिं वट्टा जाव पडिरूवा, एत्थ णं दाहिणिल्लाणं सुवण्णकुमाराणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पन्नत्ता, तिसुवि लोगस्स असंखेज्जइभागे, एत्थ णं बहवे सुवण्णकुमारा देवा परिवसंति, वेणुदेवे य इत्थ सुवन्निंदे सुवन्नकुमारराया परिवसइ, सेसं जहा नागकुमाराणं ॥ कहि णं भंते ! उत्तरिल्लाणं सुवन्नकुमाराणं देवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पन्नत्ता ?, कहि णं भंते ! उत्तरिल्ला सुवन्नकुमारा देवा परिवसंति ?, गोयमा ! इमीसे रयणप्पभाए जाव एत्थ णं उत्तरिल्लाणं सुवन्नकुमाराणं चउतीसं भवणावाससयसहस्सा भवन्तीतिमक्खायं, ते णं भवणा जाव एत्थ णं बहवे उत्तरिल्ला सुवन्नकुमारा देवा परिवसंति महिड्ढिया जाव विहरंति, वेणुदाली इत्थ सुवन्नकुमारिंदे सुवन्नकुमारराया परिवसइ महिड्ढीए सेसं जहा नागकुमाराणं ॥ एवं जहा सुवन्नकुमाराणं वत्तव्वया भणिया तहा सेसाणवि चउदसण्हं इंदाणं भाणियव्वा, नवरं भवणणाणत्तं इंदणाणत्तं वन्नणाणत्तं परिहाणणाणत्तं च इमाहिं गाहाहिं अणुगंतव्वं–चउसट्ठिं असुराणं चुलसीतं चेव होंति नागाणं। बावत्तरिं सुवन्ने वाउकुमाराण छन्नउई ॥१३०॥ दीवदिसाउदहीणं विज्जुकुमारिंदथणियमग्गीणं। छण्हंपि जुअलयाणं बावत्तरिमो सयसहस्सा ॥१३१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [४६]

दीप अनुक्रम [२०५--२१६]

चउतीसा चउयाला अट्ठत्तीसं च सयसहस्साइं। पन्ना चत्तालीसा दाहिणओ हुंति भवणाइं ॥१३२॥ तीसा चत्तालीसा चउतीसं चेव सयसहस्साइं। छायाला छत्तीसा उत्तरओ हुंति भवणाइं ॥१३३॥ चउसट्ठी सट्ठी खलु छच्च सहस्साइं असुरवज्जाणं। सामाणिआ उ एए चउग्गुणा आयरक्खा उ ॥१३४॥ चमरे धरणे तह वेणुदेवे हरिकंत अग्गिसीहे य। पुन्ने जलकंते या अमिय विलम्बे य घोसे य ॥१३५॥ बलि भूयाणंदे वेणुदालि हरिस्सहे अग्गिमाणव विसिट्ठे। जलपह तहऽमियवाहणे पभंजणे य महाघोसे ॥१३६॥ उत्तरिल्ला णं जाव विहरंति। काला असुरकुमारा नागा उदही य पंडुरा दोवि। वरकणगनिहसगोरा हुंति सुवन्ना दिसा थणिया ॥१३७॥ उत्तत्तकणगवन्ना विज्जू अग्गी य होंति दीवा य। सामा पियंगुवन्ना वाउकुमारा मुणेयव्वा ॥१३८॥ असुरेसु हुंति रत्ता सिलिंधपुप्फप्पभा य नागुदही। आसासगवसणधरा होंति सुवन्ना दिसा थणिया ॥१३९॥ नीलाणुरागवसणा विज्जू अग्गी य हुंति दीवा य। संझाणुरागवसणा वाउकुमारा मुणेयव्वा ॥१४०॥(सू.४६)

'तीसुवि लोगस्स असंखेज्जइभागे' इति स्वस्थानोपपातसमुद्घातरूपेषु त्रिष्वपि स्थानेषु लोकस्यासंख्येयतमे भागे वक्तव्यानि। 'चउसट्ठिं असुराणं' इत्यादिगाथाद्वयं सामान्यतोऽसुरकुमारादीनां भवनसंख्याप्रतिपादकं सुगमं। 'चउतीसा चउयाला' इत्यादिका गाथा दाक्षिणात्यानामसुरकुमारादीनां भवनसंख्याऽभिधायिका, तस्या व्याख्या—दक्षिणतोऽसुरकुमाराणां भवनानि चतुस्त्रिंशच्छतसहस्राणि, नागकुमाराणां चतुश्चत्वारिंशत्, सुवर्णकुमाराणामष्टात्रिंशत्, वायुकुमाराणां पञ्चाशत्, द्वीपदिगुदधिविद्युत्स्तनिताग्निकुमाराणां षण्णां प्रत्येकं चत्वारिंश्छतसहस्राणि भव-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नाना ॥ 'तीसा चत्तालीसा' इत्यादि, उत्तरतः—उत्तरस्यां दिशि असुरकुमाराणां भवनानि त्रिंशच्छतसहस्राणि, नागकुमाराणां चत्वारिंशत्, सुवर्णकुमाराणां चतुस्त्रिंशत्, वायुकुमाराणां षट्चत्वारिंशत्, द्वीपदिगुदधिविद्युत्स्तनिताग्निकुमाराणां प्रत्येकं षट्त्रिंशत् भवनशतसहस्राणि । सम्प्रति सामानिकात्मरक्षकदेवसंख्यासंग्रहार्थमाह—'चउसट्ठी सट्ठी खलु' इत्यादि, दाक्षिणात्यस्यासुरकुमारेन्द्रस्य सामानिका देवाः चतुःषष्टिसहस्राणि, उत्तराहस्य षष्टिसहस्राणि, असुरवर्जानाम्—असुरकुमारेन्द्रवर्जानां शेषाणां सर्वेषामपि दाक्षिणात्यानामौत्तराहाणां च षट् षट् सहस्राणि प्रत्येकं 'सामाणिआ उ एए' इति एतेऽनन्तरोक्तसंख्याका देवाः सामानिका ज्ञातव्याः, आत्मरक्षकाः पुनः सर्वत्रापि सामानिकचतुर्गुणाः प्रतिपत्तव्याः ॥ इदानीं दाक्षिणात्यानामौत्तराहाणां चासुरकुमारादीनां यथाक्रममिन्द्रादीन् निर्दिशति—'चमरे धरणे' इत्यादि, दाक्षिणात्यानामसुरकुमाराणामधिपतिश्चमरः, नागकुमाराणां धरणः, सुवर्णकुमाराणां वेणुदेवः, विद्युत्कुमाराणां हरिकान्तः, अग्निकुमाराणामग्निसिंहः, द्वीपकुमाराणां पूर्णः, उदधिकुमाराणां जलकान्तः, दिक्कुमाराणाममितः, वायुकुमाराणां वेलम्बः, स्तनितकुमाराणां घोषः । 'बलिभूयाणंदे' इत्यादि, उत्तरदिग्वर्तिनामसुरकुमाराणामिन्द्रो बलिः, नागकुमाराणां भूतानन्दः, सुवर्णकुमाराणां वेणुदालिः, विद्युत्कुमाराणां हरिस्सहः, अग्निकुमाराणामग्निमाणवः, द्वीपकुमाराणां विशिष्टः, उदधिकुमाराणां जलप्रभः, दिक्कुमाराणाममितवाहनः, वायुकुमाराणां प्रभञ्जनः, स्तनितकुमाराणां महाघोषः ॥ सम्प्रति वर्णसंग्रहार्थमाह—'काला असुरकुमारा'

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [४६]

दीप अनुक्रम [२०५--२१६]

इत्यादि गाथाद्वयं, असुरकुमाराः सर्वेऽपि कालाः—कृष्णवर्णाः, नागकुमारा उदधिकुमाराश्चैते उभयेऽपि पाण्डुराः—श्वेतवर्णाः, वरं–जात्यं यत्कनकं तस्य निघर्षः—कषपट्टके रेखा तद्वद् गौरा भवन्ति सुवर्णकुमारा दिक्कुमाराः स्तनितकुमाराश्च, तथा विद्युत्कुमारा अग्निकुमारा द्वीपकुमारा भवन्त्युत्तप्तकनकवर्णाः, ईषद्रक्तवर्णा इति भावः, वायुकुमाराः श्यामाः, श्यामत्वमेव स्पष्टयति—प्रियङ्गुवर्णाः ॥ सम्प्रति वस्त्रगतवर्णप्रतिपादनार्थमाह–'असुरेसु हुंति रत्ता' इत्यादि गाथाद्वयं, असुरेषु—असुरकुमारेषु भवन्ति वस्त्राणि रक्तानि, नागकुमारेषूदधिकुमारेषु च शिलिन्ध्रपुष्पप्रभाणि नीलवर्णानीत्यर्थः, सुवर्णकुमारा दिक्कुमाराः स्तनितकुमाराश्चाश्वास्यगवसनधराः—अश्वस्यास्यं—मुखं अश्वास्यं तत्र गतो यः फेनः सोऽश्वास्यगतः तद्वद् धवलं यद् वस्त्रं तद् धरन्तीत्यश्वास्यगवसनधराः, बाहुल्येन श्वेतवस्त्रपरिधानशीला इत्यर्थः, विद्युत्कुमारा द्वीपकुमारा अग्निकुमाराश्च नीलानुरागवसनाः, वायुकुमाराः सन्ध्यानुरागवसनाः ॥

कहि णं भंते ! वाणमंतराणं देवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पन्नत्ता ?, कहि णं भंते ! वाणमंतरा देवा परिवसंति ?, गोयमा ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए रयणामयस्स कंडस्स जोयणसहस्सबाहल्लस्स उवरिं एगं जोयणसयं ओगाहित्ता हिट्ठावि एगं जोयणसयं वज्जित्ता मज्झे अट्ठसु जोयणसएसु एत्थ णं वाणमंतराणं देवाणं तिरियमसंखेज्जा भोमेज्जनगरावाससयसहस्सा भवन्तीतिमक्खायं, ते णं भोमेज्जा णगरा बाहिं वट्टा अंतो चउरंसा अहे पुक्खरकण्णियासंठाणसंठिया

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ देवयोनिक-पञ्चेन्द्रिय जीवानाम् मध्ये देवानाम् स्थानानि कथ्यते

उक्किन्नंतरविउलगंभीरखायफलिहा पागारट्टालयकवाडतोरणपडिदुवारदेसभागा जंतसयग्घिमुसलमुसंढिपरिवारिया अउज्झा सदाजया सदागुत्ता अडयालकोट्ठगरइया अडयालकयवणमाला खेमा सिवा किंकरामरदंडोवरक्खिया लाउल्लोइयमहिया गोसीससरसरत्तचंदणदद्दरदिन्नपंचंगुलितला उवचियचंदणकलसा चंदणघडसुकयतोरणपडिदुवारदेसभागा आसत्तोसत्त-विउलवट्टवग्घारियमल्लदामकलावा पंचवण्णसरससुरहिमुक्कपुप्फपुंजोवयारकलिया कालागुरुपवरकुंदुरुक्कतुरुक्कधूवमघमघंतगंधुद्धूयाभिरामा सुगंधवरगंधिया गंधवट्टिभूया अच्छरगणसंघसंविकिन्ना दिव्वतुडियसद्दसंपणाइया पडागमालाउलाभिरामा सव्वरयणामया अच्छा सण्हा लण्हा घट्ठा मट्ठा नीरया निम्मला निप्पंका निक्कंकडच्छाया सप्पहा सस्सिरिया समिरीया सउज्जोया पासाइया दरिसणिज्जा अभिरूवा पडिरूवा एत्थ णं वाणमंतराणं देवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पन्नत्ता, तिसुवि लोयस्स असंखेज्जइभागे, तत्थ णं बहवे वाणमंतरा देवा परिवसंति, तंजहा—पिसाया भूया जक्खा रक्खसा किंनरा किंपुरिसा भुयगवइणो महाकाया गन्धव्वगणा य निउणगंधव्वगीयरइणो अणवन्नियपणवन्नियइसिवाइयभूयवाइयकंदियमहाकंदिया य कुहंडपयंगदेवा चंचलचलचवलचित्तकीलणदवप्पिया गहिरहसियगीयणच्चणरइ वणमालामेलमउडकुंडलसच्छंदविउव्विया-भरणचारुभूसणधरा सव्वोउयसुरभिकुसुमसुरइयपलंबसोहंतकंतविहसंतचित्तवणमालरइयवच्छा कामकामा कामरूवदेहधारी णाणाविहवण्णरागवरवत्थचित्तचिल्ल(ल्ल)गनियंसणा विविहदेसिनेवत्थगहियवेसा पमुइयकंदप्पकलहकेलिकोलाहलप्पिया हासबोलबहुला असिमुग्गरसत्तिकुंतहत्था अणेगमणिरयणविविहनिज्जुत्तविचित्तचिंधगया महिड्ढिया महज्जुइया महायसा महाबला महाणुभागा महासुक्खा हारविराइयवच्छा कडयतुडियथंभियभुया संगयकुंडलमट्ठगंडयलकन्नपीढधारी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [४७]

दीप अनुक्रम [२१७]

विचित्तहत्थाभरणा विचित्तमालामउली कल्लाणगपवरवत्थपरिहिया कल्लाणगपवरमल्लाणुलेवणधरा भासुरबोंदी पलंबवणमालधरा दिव्वेणं वन्नेणं दिव्वेणं गंधेणं दिव्वेणं फासेणं दिव्वेणं संघयणेणं दिव्वेणं संठाणेणं दिव्वाए इड्ढीए दिव्वाए जुईए दिव्वाए पभाए दिव्वाए छायाए दिव्वाए अच्चीए दिव्वेणं तेएणं दिव्वाए लेस्साए दस दिसाओ उज्जोवेमाणा पभासेमाणा ते णं तत्थ साणं साणं असंखेज्जभोमेज्जनगरावाससयसहस्साणं साणं साणं सामाणियसाहस्सीणं साणं साणं अग्गमहिसीणं साणं साणं परिसाणं साणं साणं अणीयाणं साणं साणं अणीयाहिवईणं साणं साणं आयरक्खदेवसाहस्सीणं अन्नेसिं च बहूणं वाणमंतराणं देवाण य देवीण य आहेवच्चं पोरेवच्चं सामित्तं भट्टित्तं महत्तरगत्तं आणाईसरसेणावच्चं कारेमाणा पालेमाणा महयाहयनट्टगीयवाइयतंतीतलतालतुडियघणमुइंगपडुप्पवाइयरवेणं दिव्वाइं भोगभोगाइं भुंजमाणा विहरंति । (सू० ४७)

वानमन्तरसूत्रे 'तिसुवि लोगस्स असंखेज्जइभागे' इति, स्वस्थानोपपातसमुद्घातरूपेषु त्रिष्वपि स्थानेषु लोकस्यासंख्येय(तमे)भागे वक्तव्यानि, तथा 'भुयगवइणो महाकाया महोरगा' किंविशिष्टास्ते? इत्याह—भुजगपतयः गन्धर्वगणाः—गन्धर्वसमुदायाः, किंविशिष्टास्ते? इत्याह—'निपुणगन्धर्वगीतरतयः' निपुणाः—परमकौशलोपेता ये गन्धर्वाः-गन्धर्वजातीयाः देवास्तेषां यद् गीतं तत्र रतिर्येषां ते तथा, एते व्यन्तराणामष्टौ मूलभेदाः, इमे चान्येऽवान्तरभेदा अष्टौ—'अणपन्निय' इत्यादि, कथंभूता एते षोडशापि? इत्यत आह—'चंचलचलचवलचित्तकीलणदवप्पिया' चञ्चलाः—अनवस्थितचित्तास्तथा चलचपलम्—अतिशयेन चपलं यत्क्रीडनं यश्च चित्ते द्रवः—परिहासः तौ प्रियौ येषां ते

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चलचपलचित्तक्रीडनद्रवप्रियाः ततश्च चञ्चलशब्देन विशेषणसमासः, तथा 'गहिरहसियगीयणच्चणरइं' गम्भीरेषु हसितगीतनर्तनेषु रतिर्येषां ते तथा, 'वणमालामेलमउडकुंडलसच्छंदविउव्वियाभरणचारुभूसणधरा' इति वनमालामयानि यानि आमेलमुकुटकुण्डलानि 'आमेल' इति आपीडशब्दस्य प्राकृतलक्षणवशात् आपीडः—शेखरकः, तथा स्वच्छन्दं विकुर्वितानि यानि आभरणानि तैर्यत् चारु भूषणं—मण्डनं तद् धरन्तीति वनमालापीडमुकुटकुण्डलस्वच्छन्दविकुर्विताभरणचारुभूषणधराः, तथा सर्वर्तुकैः—सर्वर्तुभाविभिः सुरभिकुसुमैः सुरचिता—सुष्ठु निर्वर्तिता तथा प्रलम्बते इति प्रलम्बा शोभते इति शोभमाना कान्ता—कमनीया विकसन्ती—अमुकुलिता अम्लानपुष्पमयी चित्रा—नानाप्रकारा वनमाला रचिता वक्षसि यैस्ते सर्वर्तुकसुरभिकुसुमसुरचितप्रलम्बशोभमानकान्तविकसच्चित्रवनमालारचितवक्षसः, तथा कामं—स्वेच्छया गमो येषां ते कामगमाः—स्वेच्छाचारिणः, क्वचित् 'कामकामा' इति पाठः, तत्र कामेन—स्वेच्छया कामो—मैथुनसेवा येषां ते कामकामा अनियतकामा इत्यर्थः, तथा कामं-स्वेच्छया रूपं येषां ते कामरूपास्ते च ते देहाश्च कामरूपदेहास्तान् धरन्तीत्येवंशीलाः कामरूपदेहधारिणः, स्वेच्छाविकुर्वितनानारूपदेहधारिण इत्यर्थः, तथा नानाविधैर्वर्णै रागो—रक्तता येषां तानि नानाविधवर्णरागाणि वराणि—प्रधानानि चित्राणि—नानाविधानि अद्भुतानि वा चिल्लगानि देशीवचनत्वात् देदीप्यमानानि वस्त्राणि निवसनं—परिधानं येषां ते नानाविधवर्णरागवरवस्त्रचित्रचिल्लगनिवसनाः, तथा विविधैर्देशीनेपथ्यैर्गृहीतो वेषो यैस्ते विविधदेशीनेपथ्यगृहीतवेषाः, तथा 'पमुइयकंदप्पकलहकेलिकोलाहलप्पिया' इति कन्दर्पः—कामोद्दीपनं वचनं चेष्टा च कलहो—राटी केलिः—क्रीडा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कोलाहलो—बोलः कन्दर्पकलहकेलिकोलाहलाः प्रिया येषां ते कन्दर्पकलहकेलिकोलाहलप्रियाः, ततः प्रमुदितश-ब्देन सह विशेषणसमासः, 'हासबोलबहुला' इति हासबोलौ बहुलौ–अतिप्रभूतौ येषां ते हासबोलबहुलाः, तथा असिमुद्गरशक्तिकुन्ता हस्ते येषां ते असिमुद्गरशक्तिकुन्तहस्ताः, 'अणेगमणिरयणविविहनिजुत्तचित्तचिंधगया' इति मणयश्च—चन्द्रकान्ताद्या रत्नानि—कर्केतनादीनि अनेकैर्मणिरत्नैर्विविधं—नानाप्रकारं नियुक्तानि विचित्राणि—नानाप्रकाराणि चिह्नानि गतानि–स्थितानि येषां ते तथा, शेषं सुगमम् ।

कहि णं भंते ! पिसायाणं देवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पन्नत्ता ?, कहि णं भंते ! पिसाया देवा परिवसंति ?, गोयमा ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए रयणामयस्स कंडस्स जोयणसयसहस्सबाहल्लस्स उवरिं एगं जोयणसयं ओगाहित्ता हेट्ठा चेगं जोयणसयं वज्जित्ता मज्झे अट्ठसु जोयणसएसु एत्थ णं पिसायाणं देवाणं तिरियमसंखेज्जा भोमेज्जनगरावाससयसहस्सा भवन्तीति मक्खायं, ते णं भोमेज्जनगरा बाहिं वट्टा जहा ओहिओ भवणवन्नओ तहा भाणियव्वो जाव पडिरूवा, एत्थ णं पिसायाणं देवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पन्नत्ता, तिसुवि लोगस्स असंखेज्जइभागे । तत्थ बहवे पिसाया देवा परिवसंति, महिड्ढिया जहा ओहिया जाव विहरन्ति । कालमहाकाला इत्थ दुवे पिसायिंदा पिसायरायाणो परिवसंति, महिड्ढिया महज्जुइया जाव विहरंति । कहि णं भंते ! दाहिणिल्लाणं पिसायाणं देवाणं ठाणा पन्नत्ता ?, कहि णं भंते ! दाहिणिल्ला पिसाया देवा परिवसंति ?, गोयमा ! जंबूदीवे दीवे मन्दरस्स पव्वयस्स दाहिणेणं इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

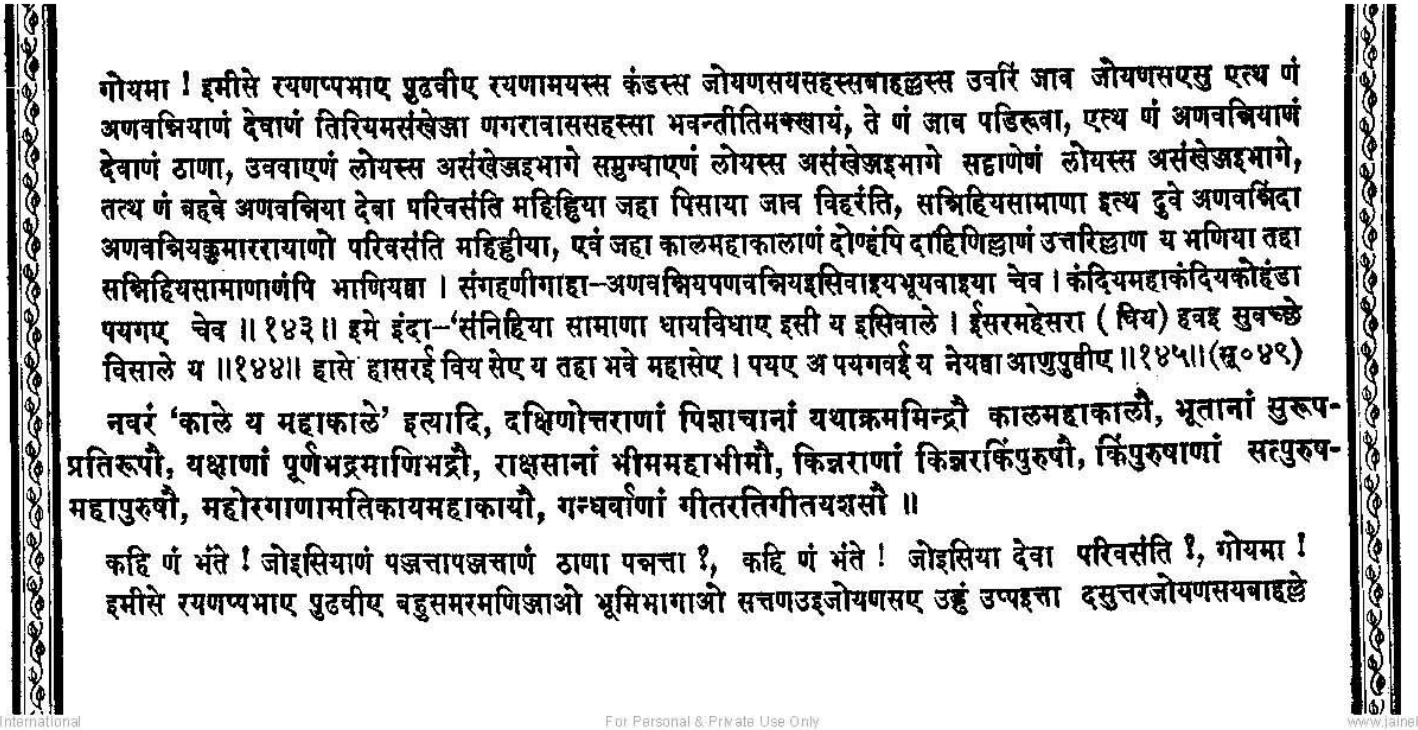
पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [४८-४९] + गाथा: दीप अनुक्रम [२१८--२२४]

रयणामयस्स कंडस्स जोयणसयसहस्सबाहल्लस्स उवरिं एगं जोयणसहस्सं ओगाहित्ता हेट्ठा चेगं जोयणसयं वज्जित्ता मज्झे अट्ठसु जोयणसएसु एत्थ णं दाहिणिल्लाणं पिसायाणं देवाणं तिरियमसंखेज्जा भोमेज्जनगरावाससहस्सा भवन्तीतिमक्खायं, ते णं भवणा जहा ओहिओ भवणवन्नओ तहा भाणियव्वो जाव पडिरूवा, एत्थ णं दाहिणिल्लाणं पिसायाणं देवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पन्नत्ता ?, तिसुवि लोगस्स असंखेज्जइभागे, तत्थ णं बहवे दाहिणिल्ला पिसाया देवा परिवसंति, महिड्ढिया जहा ओहिया जाव विहरंति । काले एत्थ पिसायिंदे पिसायराया परिवसइ, महिड्ढीए जाव पभासेमाणे । से णं तत्थ तिरियमसंखेज्जाणं भोमेज्जनयरावाससयसहस्साणं चउण्हं सामाणियसाहस्सीणं चउण्ह य अग्गमहिसीणं सपरिवाराणं तिण्हं परिसाणं सत्तण्हं अणियाणं सत्तण्हं अणियाहिवईणं सोलसण्हं आयरक्खदेवसाहस्सीणं अन्नेसिं च बहूणं दाहिणिल्लाणं वाणमंतराणं देवाण य देवीण य आहेवच्चं जाव विहरइ । उत्तरिल्लाणं पुच्छा, गोयमा ! जहेव दाहिणिल्लाणं वत्तव्वया तहेव उत्तरिल्लाणंपि, णवरं मन्दरस्स पव्वयस्स उत्तरेणं महाकाले एत्थ पिसायिंदे पिसायराया परिवसइ, जाव विहरइ । एवं जहा पिसायाणं तहा भूयाणंपि, जाव गंधव्वाणं, नवरं इंदेसु णाणत्तं भाणियव्वं इमेण विहिणा—भूयाणं सुरूवपडिरूवा, जक्खाणं पुन्नभद्दमाणिभद्दा, रक्खसाणं भीममहाभीमा, किन्नराणं किन्नरकिंपुरिसा, किंपुरिसाणं सप्पुरिसमहापुरिसा, महोरगाणं अइकायमहाकाया, गंधव्वाणं गीयरइगीयजसा, जाव विहरइ । काले य महाकाले सुरूव पडिरूव पुन्नभद्दे य । तह चेव माणिभद्दे भीमे य तहा महाभीमे ॥१४१॥ किन्नर किंपुरिसे खलु सप्पुरिसे खलु तहा महापुरिसे । अइकायमहाकाए गीयरई चेव गीयजसे ॥१४२॥ (सू० ४८)। कहि णं भंते ! अणवन्नियाणं देवाणं ठाणा पन्नत्ता, कहि णं भंते ! अणवन्निया देवा परिवसंति?,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [४८-४९] + गाथा: दीप अनुक्रम [२१८--२२४]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति:



गोयमा ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए रयणामयस्स कंडस्स जोयणसयसहस्सबाहल्लस्स उवरिं जाव जोयणसएसु एत्थ णं अणवन्नियाणं देवाणं तिरियमसंखेज्जा णगरावाससहस्सा भवन्तीतिमक्खायं, ते णं जाव पडिरूवा, एत्थ णं अणवन्नियाणं देवाणं ठाणा, उववाएणं लोयस्स असंखेज्जइभागे समुग्घाएणं लोयस्स असंखेज्जइभागे सट्ठाणेणं लोयस्स असंखेज्जइभागे, तत्थ णं बहवे अणवन्निया देवा परिवसंति महिड्ढिया जहा पिसाया जाव विहरंति, सन्निहियसामाणा इत्थ दुवे अणवन्निंदा अणवन्नियकुमाररायाणो परिवसंति महिड्ढीया, एवं जहा कालमहाकालाणं दोण्हंपि दाहिणिल्लाणं उत्तरिल्लाण य भणिया तहा सन्निहियसामाणाणंपि भाणियव्वा । संगहणीगाहा–अणवन्नियपणवन्नियइसिवाइयभूयवाइया चेव । कंदियमहाकंदियकोहंडा पयगए चेव ॥ १४३ ॥ इमे इंदा–'संनिहिया सामाणा धायविधाए इसी य इसिवाले । ईसरमहेसरा (विय) हवइ सुवच्छे विसाले य ॥१४४॥ हासे हासरई विय सेए य तहा भवे महासेए । पयए अ पयगवई य नेयव्वा आणुपुव्वीए ॥१४५॥(सू०४९)

नवरं 'काले य महाकाले' इत्यादि, दक्षिणोत्तराणां पिशाचानां यथाक्रममिन्द्रौ कालमहाकालौ, भूतानां सुरूप-प्रतिरूपौ, यक्षाणां पूर्णभद्रमाणिभद्रौ, राक्षसानां भीममहाभीमौ, किन्नराणां किन्नरकिंपुरुषौ, किंपुरुषाणां सत्पुरुष-महापुरुषौ, महोरगाणामतिकायमहाकायौ, गन्धर्वाणां गीतरतिगीतयशसौ ॥

कहि णं भंते ! जोइसियाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पन्नत्ता ?, कहि णं भंते ! जोइसिया देवा परिवसंति ?, गोयमा ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए बहुसमरमणिज्जाओ भूमिभागाओ सत्तणउइजोयणसए उड्ढं उप्पइत्ता दसुत्तरजोयणसयबाहल्ले

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	अथ देवयोनिक-पञ्चेन्द्रिय जीवानाम् मध्ये ज्योतिष्कदेवानाम् स्थानानि कथ्यते

तिरियमसंखेज्जे जोइसविसए एत्थ णं जोइसियाणं देवाणं तिरियमसंखेज्जा जोइसियविमाणावाससयसहस्सा भवन्तीतिमक्खायं, ते णं विमाणा अद्धकविट्ठगसंठाणसंठिया सव्वफालिहमया अब्भुग्गयमूसियपहसिया इव विविहमणिकणगरयणभत्तिचित्ता वाउद्धूयविजयवेजयंतीपडागाछत्ताइछत्तकलिया तुंगा गगणतलमहिलंघमाणसिहरा जालंतररयणपंजलुम्मिलियव्व मणिकणगथूभियागा वियसियसयवत्तपुंडरीया तिलयरयणद्धचंदचित्ता नाणामणिमयदामालंकिया अंतो बहिं च सण्हा तवणिज्जरुइलवालुयापत्थडा सुहफासा सस्सिरीया सुरूवा पासाइया दरिसणिज्जा अभिरूवा पडिरूवा एत्थ णं जोइसियाणं देवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पन्नत्ता तिसुवि लोगस्स असंखेज्जइभागे। तत्थ णं बहवे जोइसिया देवा परिवसंति, तंजहा— बहस्सई चंदा सूरा सुक्का सणिच्छरा राहू धूमकेऊ बुधा अंगारगा तत्ततवणिज्जकणगवन्ना जे य गहा जोइसम्मि चारं चरंति केऊ य गइरइया अट्ठावीसइविहा नक्खत्तदेवतगणा णाणासंठाणसंठियाओ पंचवन्नाओ तारयाओ ठियलेसाचारिणो अविस्साममंडलगई पत्तेयनामंकपागडियचिंधमउडा महिड्ढिया जाव पभासेमाणा, ते णं तत्थ साणं साणं विमाणावाससयसहस्साणं साणं साणं सामाणियसाहस्सीणं साणं साणं अग्गमहिसीणं सपरिवाराणं साणं साणं परिसाणं साणं साणं अणियाणं साणं साणं अणियाहिवईणं साणं साणं आयरक्खदेवसाहस्सीणं अन्नेसिं च बहूणं जोइसियाणं देवाणं देवीण य आहेवच्चं जाव विहरंति। चंदिमसूरिया इत्थ दुवे जोइसिंदा जोइसियरायाणो परिवसंति, महिड्ढिया जाव पभासेमाणा, ते णं तत्थ साणं साणं जोइसियविमाणावाससयसहस्साणं चउण्हं सामाणियसाहस्सीणं चउण्हं अग्गमहिसीणं सपरिवाराणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [५०]

दीप अनुक्रम [२२५]

तिण्हं परिसाणं सत्तण्हं अणीयाणं सत्तण्हं अणीयाहिवईणं सोलसण्हं आयरक्खदेवसाहस्सीणं जाव अन्नेसिं च बहूणं जोइसियाणं देवाणं देवीण य आहेवच्चं जाव विहरंति ॥ (सू० ५०)

ज्योतिष्कसूत्रे 'अद्धकविट्ठगसंठाणसंठियाइं' अर्द्धं कपित्थस्य अर्द्धकपित्थं तस्य संस्थानं तेन संस्थितानि, अत्राक्षेपपरिहारौ चन्द्रपज्ञप्तिटीकायां सूर्यप्रज्ञप्तिटीकायां चाभिहिताविति ततोऽवधार्यौ, 'सव्वफालिहमया' इति सर्वात्मना स्फटिकमयानि, तथा अभ्युद्गता–आभिमुख्येन सर्वतो विनिर्गता उत्सृष्टा–प्रबलतया सर्वासु दिक्षु प्रसृता या प्रभा–दीप्तिस्तया सितानि–धवलानि अभ्युद्गतोत्सृतप्रभासितानि, तथा विविधानां मणिकनकरत्नानां या भक्तयो–विच्छित्तिविशेषास्ताभिश्चित्राणि–आश्चर्यभूतानि विविधमणिकनकभक्तिचित्राणि, 'वाउद्धूयविजयवेजयंतीपडागाछत्ताइछत्तकलिया' वातोद्धूता–वायुकम्पिता विजयः–अभ्युदयस्तत्संसूचिका वैजयन्त्यभिधाना या पताका अथवा विजय इति वैजयन्तीनां पार्श्वकर्णिकोच्यते तत्प्रधाना वैजयन्त्यः–पताकास्ता एव विजयवर्जिता वैजयन्त्यः पताकाः छत्रातिच्छत्राणि—उपर्युपरिस्थितानि छत्राणि तैः कलितानि वातोद्धूतविजयवैजयन्तीपताकाच्छत्रातिच्छत्रकलितानि तुङ्गानि–उच्चानि, तथा गगनतलम्–अम्बरतलं अनुलिखद्–अतिलङ्घयत् शिखरं येषां तानि गगनतलानुलिखच्छिखराणि, तथा जालानि—जालकानि तानि च भवनभित्तिषु लोके प्रतीतानि, तदन्तरेषु विशिष्टशोभानिमित्तं रत्नानि यत्र तानि तथा, पञ्जरादुन्मीलितमिव—बहिष्कृतमिव पञ्जरोन्मीलितवद्, तथाहि–किल किमपि वस्तु पञ्जरात्—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वंशादिमयप्रच्छादनविशेषाद् बहिष्कृतमत्यन्ताविनष्टच्छायत्वात् शोभते तथा तान्यपि विमानानीति भावः, तथा मणिकनकानां संबन्धिनी स्तूपिका—शिखरं येषां तानि मणिकनकस्तूपिकानि, ततः पूर्वपदाभ्यां सह विशेषणसमासः, तथा विकसितानि यानि शतपत्राणि पुण्डरीकाणि च द्वारादौ प्रतिकृतित्वेन स्थितानि तिलकाम्र–भिङ्गादिषु पुण्ड्राणि रत्नमयाश्चार्द्धचन्द्रा द्वारादिषु तैश्चित्राणि विकसितशतपत्रपुण्डरीकतिलकरत्नार्द्धचन्द्रचित्राणि, तथा नानामणिमयीभिर्दामभिरलङ्कृतानि नानामणिमयदामालङ्कृतानि, तथा अन्तर्बहिश्च श्लक्ष्णानि–मसृणानि तथा तपनीयं–सुवर्णविशेषस्तन्मय्या रुचिरायाः वालुकायाः—सिकतायाः प्रस्तटः—प्रस्तरो येषु तानि तपनीयरुचिरवालुकाप्रस्तटानि, तथा सुखस्पर्शानि शुभस्पर्शानि वा, शेषं प्राग्वत् यावत् 'बहस्सई चंदा' इत्यादि, बृहस्पतिचन्द्रसूर्यशुक्रशनैश्चरराहुधूमकेतुबुधाङ्गारकाः, कथंभूता ? इत्याह—तप्ततपनीयकनकवर्णा–ईषद्रक्तवर्णाः, तथा ये च ग्रहा–उक्तव्यतिरिक्ता ज्योतिश्चक्रे चारं चरन्ति केतवो ये च गतिरतिकाः ये चाष्टाविंशतिविधा नक्षत्रदेवगणास्ते सर्वेऽपि नानासंस्थानसंस्थिताः, चशब्दात् तपनीयकनकवर्णाः, तारकाः पञ्चवर्णाः, एते च सर्वेऽपि स्थितलेश्या—अवस्थिततेजोलेश्याकाः तथा ये चारिणः—चाररतास्तेऽविश्राममण्डलगतिकाः, तथा सर्वेऽपि प्रत्येकं नामाङ्केन–स्वस्वनामाङ्केन प्रकटितं चिह्नं मुकुटे येषां ते प्रत्येक[स्व]नामाङ्कप्रकटितचिह्नमुकुटाः, किमुक्तं भवति ?—चन्द्रस्य मुकुटे चन्द्रमण्डललाञ्छनं स्वनामाङ्कप्रकटितं सूर्यस्य सूर्यमण्डलं ग्रहस्य ग्रहमण्डलं नक्षत्रस्य नक्षत्राकारं तारकस्य तारकाकारमिति ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [५१]

दीप अनुक्रम [२२६]

कहि णं भंते ! वेमाणियाणं देवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पन्नत्ता ?, कहि णं भंते ! वेमाणिया देवा परिवसंति ?, गोयमा ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए बहुसमरमणिज्जाओ भूमिभागाओ उड्ढं चंदिमसूरियगहनक्खत्ततारारूवाणं बहूइं जोयणसयाइं बहूइं जोयणसहस्साइं बहूइं जोयणसयसहस्साइं बहुगाओ जोयणकोडीओ बहुगाओ जोयणकोडाकोडीओ उड्ढं दूरं उप्पइत्ता एत्थ णं सोहम्मीसाणसणंकुमारमाहिंदबंभलोयलंतगमहासुक्कसहस्सारआणयपाणयआरणच्चुयगेवेज्जणुत्तरेसु एत्थ णं वेमाणियाणं देवाणं चउरासीइ विमाणावाससयसहस्सा सत्ताणउइं च सहस्सा तेवीसं च विमाणा भवन्तीतिमक्खायं, ते णं विमाणा सव्वरयणामया अच्छा सण्हा लण्हा घट्टा मट्ठा नीरया निम्मला निप्पंका निक्कंकडच्छाया सप्पभा सस्सिरिया सउज्जोया पासादीया दरिसणिज्जा अभिरूवा पडिरूवा, एत्थ णं वेमाणियाणं देवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पन्नत्ता, तिसुवि लोयस्स असंखेज्जइभागे, तत्थ णं बहवे वेमाणिया देवा परिवसंति ?, तं०—सोहम्मीसाणसणंकुमारमाहिंदबंभलोगलंतगमहासुक्कसहस्सारआणयपाणयआरणच्चुयगेवेज्जणुत्तरोववाइया देवा, ते णं मिगमहिसवराहसीहछगलदद्दुरहयगयवइसुयगखग्गउसभविडिमपागडियचिंधमउडा पसिढिलवरमउडकिरीडधारिणो वरकुंडलुज्जोइयाणणा मउडदित्तसिरिया रत्ताभा पउमपम्हगोरा सेया सुहवन्नगंधफासा उत्तमवेउव्विणो पवरवत्थगंधमल्लाणुलेवणधरा महिड्ढिया महज्जुइया महायसा महाबला महाणुभागा महासोक्खा हारविराइयवच्छा कडयतुडियथंभियभुया अंगदकुंडलमट्ठगंडतलकन्नपीढधारी विचित्तहत्थाभरणा विचित्तमालामउली कल्लाणगपवरवत्थपरिहिया कल्लाणगपवरमल्लाणुलेवणा भासुरबोंदी पलंबवणमालधरा दिव्वेणं वन्नेणं दिव्वेणं गंधेणं दिव्वेणं फासेणं दिव्वेणं संघयणेणं दिव्वेणं संठाणेणं दिव्वाए इड्ढीए दिव्वाए जुईए दिव्वाए पभाए दिव्वाए छायाए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ देवयोनिक-पञ्चेन्द्रिय जीवानाम् मध्ये वैमानिकदेवानाम् स्थानानि कथ्यते

दिवाए अच्चीए दिव्वेणं तेएणं दिवाए लेसाए दस दिसाओ उज्जोवेमाणा पभासेमाणा ते णं तत्थ साणं साणं विमाणावास-सयसहस्साणं साणं साणं सामाणियसाहस्सीणं साणं साणं तायत्तीसगाणं साणं साणं लोगपालाणं साणं साणं अग्गमहिसीणं सपरिवाराणं साणं साणं परिसाणं साणं साणं अणियाणं साणं साणं अणियाहिवईणं साणं साणं आयरक्खदेवसाहस्सीणं अन्नेसिं च बहूणं वेमाणियाणं देवाण य देवीण य आहेवच्चं पोरेवच्चं जाव दिवाइं भोगभोगाइं भुंजमाणा विहरंति । (सू०५१)

वैमानिकसूत्रे चतुरशीतिर्विमानलक्षाणि सप्तनवतिर्विमानसहस्राणि त्रयोविंशतिर्विमानानीति, 'बत्तीसट्ठावीसा बारसट्ठचउरो सयसहस्सा' इत्यादिसंख्यामीलनेन परिभावनीयानि, 'ते णं मिगमहिस' इत्यादि, सौधर्मदेवा मृग-रूपप्रकटितचिह्नमुकुटाः ईशानदेवा महिषरूपप्रकटितचिह्नमुकुटाः सनत्कुमारदेवा वराहरूपप्रकटितचिह्नमुकुटाः माहेन्द्रदेवा सिंहरूपप्रकटितमुकुटचिह्नाः ब्रह्मलोकदेवाः छगलरूपप्रकटितमुकुटचिह्नाः लान्तकदेवा दर्दुररूपप्रकटि-तमुकुटचिह्नाः शुक्रकल्पदेवा हयमुकुटचिह्नाः सहस्रारकल्पदेवा गजपतिमुकुटचिह्नाः आनतकल्पदेवा भुजगमुकुट-चिह्नाः प्राणतकल्पदेवाः खड्गमुकुटचिह्नाः खड्गः–चतुष्पदविशेष आटव्यः आरणकल्पदेवा वृषभमुकुटचिह्नाः अच्युत-कल्पदेवा विडिममुकुटचिह्नाः, 'वरकुंडलुज्जोइआणणा' इति वराभ्यां कुण्डलाभ्यामुद्द्योतितं–भास्वरीकृतमाननं येषां ते तथा, शेषं सुगमं ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [५२]

दीप अनुक्रम [२२७]

कहि णं भंते ! सोहम्मगदेवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पन्नत्ता ?, कहि णं भंते ! सोहम्मगदेवा परिवसंति ?, गोयमा ! जंबूद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स दाहिणेणं इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए बहुसमरमणिज्जाओ भूमिभागाओ जाव उड्ढं दूरं उप्पइत्ता एत्थ णं सोहम्मे णामं कप्पे पन्नत्ते पाईणपडीणायए उदीणदाहिणविच्छिन्ने अद्धचंदसंठाणसंठिए अच्चिमालिभासरासिवण्णाभे असंखेज्जाओ जोयणकोडीओ असंखेज्जाओ जोयणकोडाकोडीओ आयामविक्खंभेणं असंखेज्जाओ जोयणकोडाकोडीओ परिक्खेवेणं सव्वरयणामए अच्छे जाव पडिरूवे, तत्थ णं सोहम्मगदेवाणं बत्तीसविमाणावाससयसहस्सा भवन्तीतिमक्खायं, ते णं विमाणा सव्वरयणामया जाव पडिरूवा, तेसिणं विमाणाणं बहुमज्झदेसभागे पंच वडिंसया पन्नत्ता, तंजहा—असोगवडिंसए सत्तवण्णवडिंसए चंपगवडिंसए चूयवडिंसए मज्झे इत्थ सोहम्मवडिंसए, ते णं वडिंसया सव्वरयणामया अच्छा जाव पडिरूवा, एत्थ णं सोहम्मगदेवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पन्नत्ता, तिसुवि लोगस्स असंखिज्जइभागे, तत्थ णं बहवे सोहम्मगदेवा परिवसंति महिड्ढिया जाव पभासेमाणा, ते णं तत्थ साणं साणं विमाणावाससयसहस्साणं साणं साणं अग्गमहिसीणं साणं साणं सामाणियसाहस्सीणं एवं जहेव ओहियाणं तहेव एएसिंपि भाणियव्वं जाव आयरक्खदेवसाहस्सीणं अन्नेसिं च बहूणं सोहम्मगकप्पवासीणं वेमाणियाणं देवाण य देवीण य आहेवच्चं जाव विहरंति। सक्के इत्थ देविंदे देवराया परिवसइ, वज्जपाणी पुरंदरे सयक्कतू सहस्सक्खे मघवं पागसासणे दाहिणड्ढलोगाहिवई बत्तीसविमाणावाससयसहस्साहिवई एरावणवाहणे सुरिंदे अयरंबरवत्थधरे आलइयमालमउडे नवहेमचारुचित्तचंचलकुंडलविलिहिज्जमाणगंडे महिड्ढिए जाव पभासेमाणे से णं तत्थ बत्तीसाए विमाणावाससयसहस्साणं चउरासीए सामाणियसाहस्सीणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तायत्तीसाए तायत्तीसगाणं चउण्हं लोगपालाणं अट्ठण्हं अग्गमहिसीणं सपरिवाराणं तिण्हं परिसाणं सत्तण्हं अणीयाणं सत्तण्हं अणीयाहिवईणं चउण्हं चउरासीणं आयरक्खदेवसाहस्सीणं अन्नेसिं च बहूणं सोहम्मकप्पवासीणं वेमाणियाणं देवाण य देवीण य आहेवच्चं पोरेवच्चं कुव्वेमाणे जाव विहरइ ॥ (सू० ५२)

सौधर्मकल्पसूत्रे 'अर्चिमालिभासरासिवन्नाभे' इति (अर्चिषां मालावत् भासां राशिवत् वर्णकान्तिर्यस्य) 'वज्रपाणी' इति वज्रं पाणावस्य इति वज्रपाणिः, ('पुरंदरे'त्ति) असुरादिपुरदारणात् पुरन्दरः । 'सयक्कतू' इति शतं क्रतूनां—प्रतिमानामभिग्रहविशेषाणां श्रमणोपासकपञ्चमप्रतिमारूपाणां वा कार्तिकश्रेष्ठिभवापेक्षया यस्यासौ शतक्रतुः 'सहस्सक्खे' इति सहस्रमक्ष्णां यस्यासौ सहस्राक्षः, इन्द्रस्य हि किल मन्त्रिणां पञ्च शतानि सन्ति, तदीयानां चाक्ष्णमिन्द्रप्रयोजनव्यापृततया इन्द्रसंबन्धित्वेन विवक्षणात् सहस्राक्षत्वमिन्द्रस्य 'मघवं' इति मघा—महामेघास्ते यस्य वशे सन्ति स मघवान् तथा ('पागसासणे'त्ति) पाको नाम बलवान् रिपुः स शिष्यते—निराक्रियते येन स पाकशासनः, 'अरयंबरवत्थधरे' अरजांसि—रजोरहितानि स्वच्छतया अम्बरवदम्बराणि वस्त्राणि धारयति अरजोऽम्बरवस्त्रधरः, 'आलइयमालमउडे' इति माला च मुकुटश्च मालामुकुटं आलगितम्—आधिद्धं मालामुकुटं येन स आलगितमालामुकुटः 'नवहेमचारुचित्तचंचलकुंडलविलिहिज्जमाणगंडे' इति नवमिव—अत्युत्कटचारुवर्णतया प्रत्यग्रमिव हेम यत्र ते नवहेमनी नवहेमभ्यां चारुचित्राभ्यां चञ्चलाभ्यां कुण्डलाभ्यां विलिख्यमानौ गण्डौ यस्य स तथा ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [५३] + गाथा: दीप अनुक्रम [२२८--२३४]

कहि णं भंते ! ईसाणाणं देवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पन्नत्ता ?, कहि णं भंते ! ईसाणगदेवा परिवसंति ?, गोयमा ! जंबूदीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स उत्तरेणं इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए बहुसमरमणिज्जाओ भूमिभागाओ उड्ढं चंदिमसूरिय-गहनक्खत्ततारारूवाणं बहूइं जोयणसयाइं बहूइं जोयणसहस्साइं जाव उड्ढं उप्पइत्ता एत्थ णं ईसाणे णामं कप्पे पन्नत्ते पाईणपडीणायए उदीणदाहिणविच्छिण्णे एवं जहा सोहम्मे जाव पडिरूवे, तत्थ णं ईसाणगदेवाणं अट्ठावीसं विमाणावास-सयसहस्सा भवन्तीतिमक्खायं, ते णं विमाणा सव्वरयणामया जाव पडिरूवा, तेसिणं बहुमज्झदेसभागे पंच वडिंसया पन्नत्ता, तंजहा—अंकवडिंसए फलिहवडिंसए रयणवडिंसए जातरूववडिंसए मज्झे इत्थ ईसाणवडिंसए, ते णं वडिंसया सव्वरयणामया जाव पडिरूवा, एत्थ णं ईसाणगदेवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पन्नत्ता, तिसुवि लोगस्स असंखेज्जइभागे, सेसं जहा सोहम्मगदेवाणं जाव विहरंति, ईसाणे इत्थ देविंदे देवराया परिवसइ, सूलपाणी वसहवाहणे उत्तरड्ढलोगाहि-वई अट्ठावीसविमाणावाससयसहस्साहिवई अरयंबरवत्थधरे सेसं जहा सक्कस्स जाव पभासेमाणे, से णं तत्थ अट्ठावीसाए विमाणावाससयसहस्साणं असीईए सामाणियसाहस्सीणं तायत्तीसाए तायत्तीसगाणं चउण्हं लोगपालाणं अट्ठण्हं अग्गमहिसीणं सपरिवाराणं तिण्हं परिसाणं सत्तण्हं अणियाणं सत्तण्हं अणियाहिवईणं चउण्हं असीईणं आयरक्खदेवसाहस्सीणं अन्नेसिं च बहूणं ईसाणकप्पवासीणं वेमाणियाणं देवाण य देवीण य आहेवच्चं जाव विहरइ ॥ कहि णं भंते ! सणंकुमारदेवाणं पज्जत्ताप-ज्जत्ताणं ठाणा पन्नत्ता ?, कहि णं भंते ! सणंकुमारा देवा परिवसंति ?, गोयमा ! सोहम्मस्स कप्पस्स उप्पिं सपक्खिं सपडि-दिसिं बहूइं जोयणाइं बहूइं जोयणसयाइं बहूइं जोयणसहस्साइं बहूइं जोयणसयसहस्साइं बहुगाओ जोयणकोडीओ बहुगाओ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जोयणकोडाकोडीओ उड्ढं दूरं उप्पइत्ता एत्थ णं सणंकुमारे णामं कप्पे प० पाईणपडीणायए उदीणदाहिणविच्छिण्णे जहा सोहम्मे जाव पडिरूवे, तत्थ णं सणंकुमाराणं देवाणं बारस विमाणावाससयसहस्सा भवन्तीतिमक्खायं, ते णं विमाणा सव्वरयणामया जाव पडिरूवा, तेसिणं विमाणाणं बहुमज्झदेसभागे पंच वडिंसगा पन्नत्ता, तंजहा—असोगवडिंसए सत्तवन्नवडिंसए चंपगवडिंसए चूयवडिंसए मज्झे एत्थ सणंकुमारवडिंसए, ते णं वडिंसया सव्वरयणामया अच्छा जाव पडिरूवा, एत्थ णं सणंकुमारदेवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पन्नत्ता, तिसुवि लोगस्स असंखेज्जइभागे, तत्थ णं बहवे सणंकुमारदेवा परिवसंति, महिड्ढिया जाव पभासेमाणा विहरंति, नवरं अग्गमहिसीओ णत्थि, सणंकुमारे इत्थ देविंदे देवराया परिवसइ, अरयंबरवत्थधरे, सेसं जहा सक्कस्स, से णं तत्थ बारसण्हं विमाणावाससयसहस्साणं बावत्तरीए सामाणियसाहस्सीणं सेसं जहा सक्कस्स अग्गमहिसीवज्जं, नवरं चउण्हं बावत्तरीणं आयरक्खदेवसाहस्सीणं जाव विहरइ ॥ कहि णं भंते ! माहिंददेवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पन्नत्ता ?, कहि णं भंते ! माहिंदगदेवा परिवसंति ?, गोयमा ! ईसाणस्स कप्पस्स उप्पिं सपक्खिं सपडिदिसिं बहूइं जोयणाइं जाव बहुयाओ जोयणकोडाकोडीओ उड्ढं दूरं उप्पइत्ता एत्थ णं माहिंदे नामं कप्पे प० पाईणपडीणायए, जाव एवं जहेव सणंकुमारे, नवरं अट्ठ विमाणावाससयसहस्सा, वडिंसया जहा ईसाणे, नवरं मज्झे इत्थ माहिंदवडिंसए, एवं जहा सणंकुमाराणं देवाणं जाव विहरंति, माहिंदे इत्थ देविंदे देवराया परिवसइ, अरयंबरवत्थधरे, एवं जहा सणंकुमारे जाव विहरइ, नवरं अट्ठण्हं विमाणावाससयसहस्साणं सत्तरिए सामाणियसाहस्सीणं चउण्हं सत्तरीणं आयरक्खदेवसाहस्सीणं जाव विहरइ ॥ कहि णं भंते ! बंभलोगदेवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं

॥१०२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [५३] + गाथा: दीप अनुक्रम [२२८--२३४]

ठाणा पन्नत्ता ?, कहि णं भंते ! बंभलोगदेवा परिवसंति ?, गोयमा ! सणंकुमारमाहिंदाणं कप्पाणं उप्पिं सपक्खिं सपडिदिसिं बहूइं जोयणाइं जाव उप्पइत्ता एत्थ णं बंभलोए नामं कप्पे पाईणपडीणायए उदीणदाहिणविच्छिण्णे पडिपुन्नचंदसंठाणसंठिए अचिमालीभासरासिप्पभे, अवसेसं जहा सणंकुमाराणं, नवरं चत्तारि विमाणावाससयसहस्सा वडिंसया जहा सोहम्मवडिंसया नवरं मज्झे इत्थ बंभलोयवडिंसए, एत्थ णं बंभलोगदेवाणं ठाणा पन्नत्ता, सेसं तहेव जाव विहरंति, बंभे इत्थ देविंदे देवराया परिवसइ अरयंबरवत्थधरे एवं जहा सणंकुमारे जाव विहरइ, नवरं चउण्हं विमाणावाससयसहस्साणं सट्ठीए सामाणियसाहस्सीणं चउण्हं सट्ठीए आयरक्खदेवसाहस्सीणं अन्नेसिं च बहूणं जाव विहरइ ॥ कहि णं भंते ! लंतगदेवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पन्नत्ता ?, कहि णं भंते ! लंतगदेवा परिवसंति ?, गोयमा ! बंभलोगस्स कप्पस्स उप्पिं सपक्खिं सपडिदिसिं बहूइं जोयणाइं जाव बहुगाओ जोयणकोडाकोडीओ उड्ढं दूरं उप्पइत्ता एत्थ णं लंतए नामं कप्पे पन्नत्ते पाईणपडीणायए जहा बंभलोए, नवरं पण्णासं विमाणावाससहस्सा भवन्तीतिमक्खायं, वडिंसगा जहा ईसाणवडिंसगा नवरं मज्झे इत्थ लंतगवडिंसए देवा तहेव जाव विहरंति, लंतए एत्थ देविंदे देवराया परिवसइ, जहा सणंकुमारे, नवरं पण्णासाए विमाणावाससहस्साणं पण्णासाए सामाणियसाहस्सीणं चउण्ह य पण्णासाणं आयरक्खदेवसाहस्सीणं अन्नेसिं च बहूणं जाव विहरइ ॥ कहि णं भंते ! महासुक्काणं देवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पन्नत्ता ?, कहि णं भंते ! महासुक्का देवा परिवसंति ?, गोयमा ! लंतगस्स कप्पस्स उप्पिं सपक्खिं सपडिदिसिं जाव उप्पइत्ता एत्थ णं महासुक्के नामं कप्पे पन्नत्ते पाईणपडीणायए उदीणदाहिणविच्छिण्णे, जहा बंभलोए, नवरं चत्तालीसविमाणावाससहस्सा भवन्तीतिमक्खायं, वडिंसगा जहा सो-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

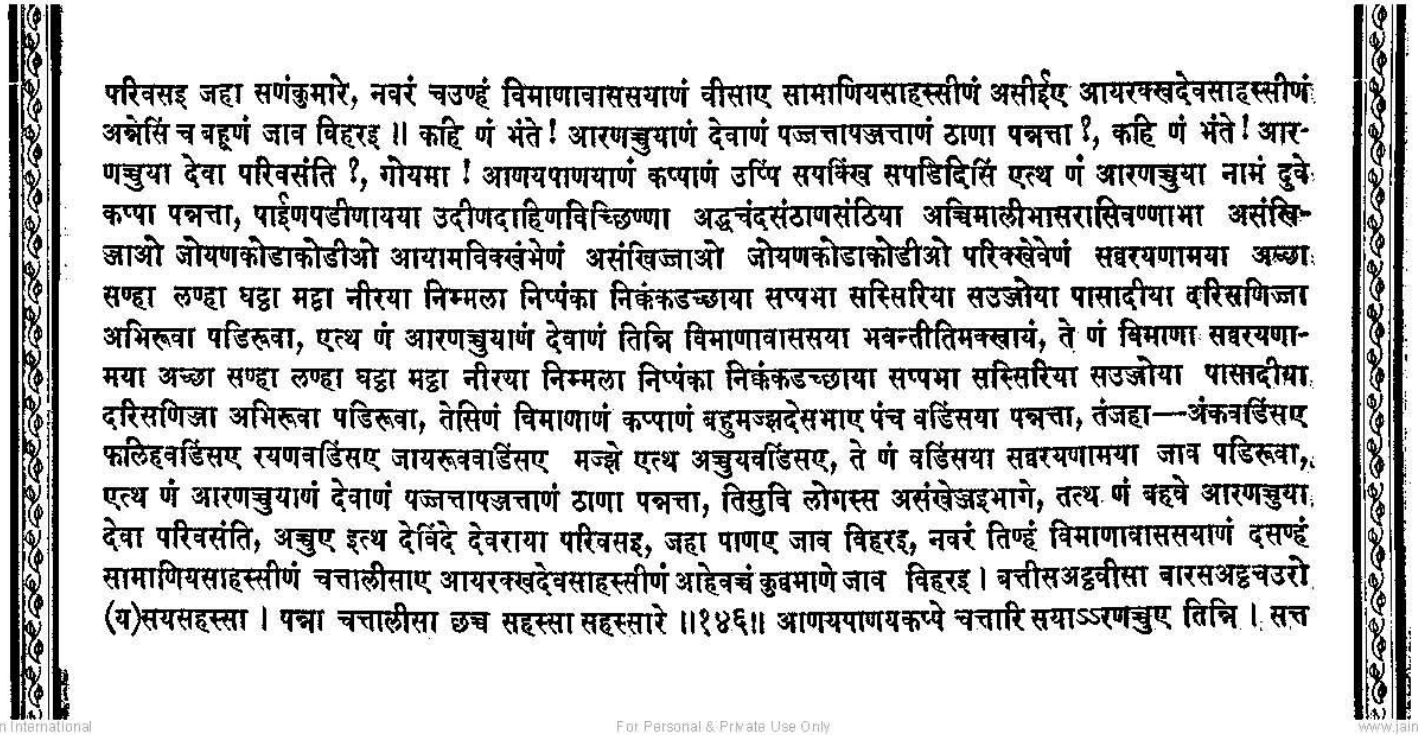
हम्मवडिंसगा, नवरं मज्झे इत्थ महासुक्कवडिंसए जाव विहरंति, महासुक्के इत्थ देविंदे देवराया जहा सणंकुमारे, नवरं चत्तालीसाए विमाणावाससहस्साणं चत्तालीसाए सामाणियसाहस्सीणं चउण्ह य चत्तालीसाणं आयरक्खदेवसाहस्सीणं जाव विहरइ॥ कहि णं भंते! सहस्सारदेवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पन्नत्ता?, कहि णं भंते! सहस्सारदेवा परिवसंति?, गोयमा! महासुक्कस्स कप्पस्स उप्पिं सपक्खिं सपडिदिसिं जाव उप्पइत्ता एत्थ णं सहस्सारे नामं कप्पे पन्नत्ते पाईणपडीणायए, जहा बंभलोए, नवरं छव्विमाणावाससहस्सा भवन्तीतिमक्खायं, देवा तहेव, जाव वडिंसगा जहा ईसाणस्स वडिंसगा, नवरं मज्झे इत्थ सहस्सारवडिंसए जाव विहरंति, सहस्सारे इत्थ देविंदे देवराया परिवसइ जहा सणंकुमारे, नवरं छण्हं विमाणावाससहस्साणं तीसाए सामाणियसाहस्सीणं चउण्ह य तीसाए आयरक्खदेवसाहस्सीणं जाव आहेवच्चं कारेमाणे विहरइ॥ कहि णं भंते! आणयपाणयाणं देवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पन्नत्ता?, कहि णं भंते! आणयपाणया देवा परिवसंति?, गोयमा! सहस्सारस्स कप्पस्स उप्पिं सपक्खिं सपडिदिसिं जाव उप्पइत्ता एत्थ णं आणयपाणयनामा दुवे कप्पा पन्नत्ता पाईणपडीणायया उदीणदाहिणविच्छिण्णा अद्धचंदसंठाणसंठिया अच्चिमालीभासरासिप्पभा, सेसं जहा सणंकुमारे जाव पडिरूवा, तत्थ णं आणयपाणयदेवाणं चत्तारि विमाणावाससया भवन्तीतिमक्खायं जाव पडिरूवा, वडिंसगा जहा सोहम्मे कप्पे, नवरं मज्झे इत्थ पाणयवडिंसए, ते णं वडिंसगा सव्वरयणामया अच्छा जाव पडिरूवा, एत्थ णं आणयपाणयदेवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पन्नत्ता, तिसुवि लोगस्स असंखेज्जइभागे, तत्थ णं बहवे आणयपाणयदेवा परिवसंति महिड्ढिया जाव पभासेमाणा, ते णं तत्थ साणं साणं विमाणावाससयाणं जाव विहरंति, पाणए इत्थ देविंदे देवराया

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [५३] + गाथा:

दीप अनुक्रम [२२८--२३४]



परिवसइ जहा सणंकुमारे, नवरं चउण्हं विमाणावाससयाणं वीसाए सामाणियसाहस्सीणं असीईए आयरक्खदेवसाहस्सीणं अन्नेसिं च बहूणं जाव विहरइ ॥ कहि णं भंते! आरणच्चुयाणं देवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पन्नत्ता ?, कहि णं भंते! आरणच्चुया देवा परिवसंति ?, गोयमा ! आणयपाणयाणं कप्पाणं उप्पिं सपक्खिं सपडिदिसिं एत्थ णं आरणच्चुया नामं दुवे कप्पा पन्नत्ता, पाईणपडीणायया उदीणदाहिणविच्छिण्णा अद्धचंदसंठाणसंठिया अचिमालीभासरासिवण्णाभा असंखिज्जाओ जोयणकोडाकोडीओ आयामविक्खंभेणं असंखिज्जाओ जोयणकोडाकोडीओ परिक्खेवेणं सव्वरयणामया अच्छा सण्हा लण्हा घट्टा मट्टा नीरया निम्मला निप्पंका निक्कंकडच्छाया सप्पभा सस्सिरिया सउज्जोया पासादीया दरिसणिज्जा अभिरूवा पडिरूवा, एत्थ णं आरणच्चुयाणं देवाणं तिन्नि विमाणावाससया भवन्तीतिमक्खायं, ते णं विमाणा सव्वरयणामया अच्छा सण्हा लण्हा घट्टा मट्टा नीरया निम्मला निप्पंका निक्कंकडच्छाया सप्पभा सस्सिरिया सउज्जोया पासादीया दरिसणिज्जा अभिरूवा पडिरूवा, तेसिणं विमाणाणं कप्पाणं बहुमज्झदेसभाए पंच वडिंसया पन्नत्ता, तंजहा—अंकवडिंसए फलिहवडिंसए रयणवडिंसए जायरूववडिंसए मज्झे एत्थ अच्चुयवडिंसए, ते णं वडिंसया सव्वरयणामया जाव पडिरूवा, एत्थ णं आरणच्चुयाणं देवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पन्नत्ता, तिसुवि लोगस्स असंखेज्जइभागे, तत्थ णं बहवे आरणच्चुया देवा परिवसंति, अच्चुए इत्थ देविंदे देवराया परिवसइ, जहा पाणए जाव विहरइ, नवरं तिण्हं विमाणावाससयाणं दसण्हं सामाणियसाहस्सीणं चत्तालीसाए आयरक्खदेवसाहस्सीणं आहेवच्चं कुव्वमाणे जाव विहरइ। बत्तीसअट्ठवीसा बारसअट्ठचउरो (य)सयसहस्सा। पन्ना चत्तालीसा छच्च सहस्सा सहस्सारे ॥१४६॥ आणयपाणयकप्पे चत्तारि सयाऽऽरणच्चुए तिन्नि। सत्त

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [५३] + गाथा: दीप अनुक्रम [२२८--२३४]

विमाणसयाइं चउसुवि एएसु कप्पेसु ॥१४७॥ सामाणियसंगहणीगाहा–चउरासीई असीई बावत्तरी सत्तरी य सट्ठी य । पन्ना चत्तालीसा तीसा वीसा दस सहस्सा ॥१४८॥ एए चेव आयरक्खा चउग्गुणा ॥ कहि णं भंते ! हिट्ठिमगेविज्जगाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पन्नत्ता ?, कहि णं भंते ! हिट्ठिमगेविज्जगा देवा परिवसंति ?, गोयमा ! आरणच्चुयाणं कप्पाणं उप्पिं जाव उड्ढं दूरं उप्पइत्ता एत्थ णं हिट्ठिमगेविज्जगाणं देवाणं तओ गेविज्जगविमाणपत्थडा पन्नत्ता पाईणपडीणायया उदीणदाहिणविच्छिन्ना पडिपुन्नचंदसंठाणसंठिया अच्चिमालीभासरासिवण्णाभा सेसं जहा बंभलोगे जाव पडिरूवा, तत्थ णं हेट्ठिमगेविज्जगाणं देवाणं एक्कारसुत्तरे विमाणावाससए भवन्तीतिमक्खायं, ते णं विमाणा सव्वरयणामया जाव पडिरूवा, एत्थ णं हेट्ठिमगेविज्जगाणं देवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पन्नत्ता, तिसुवि लोगस्स असंखेज्जइभागे, तत्थ णं बहवे हेट्ठिमगेविज्जगा देवा परिवसंति, सव्वे समिड्ढिया सव्वे समज्जुइया सव्वे समजसा सव्वे समबला सव्वे समाणुभावा महासुक्खा अणिंदा अपेस्सा अपुरोहिया अहमिंदा नामं ते देवगणा पन्नत्ता समणाउसो ! ॥ कहि णं भंते ! मज्झिमगाणं गेविज्जगाणं देवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पन्नत्ता ?, कहि णं भंते ! मज्झिमगेविज्जगा देवा परिवसंति ?, गोयमा ! हेट्ठिमगेविज्जगाणं उप्पिं सपक्खिं सपडिदिसिं जाव उप्पइत्ता एत्थ णं मज्झिमगेविज्जगदेवाणं तओ गेविज्जगाणं पत्थडा पन्नत्ता, पाईणपडीणायया जहा हेट्ठिमगेविज्जगाणं, नवरं सत्तुत्तरे विमाणावाससए हवन्तीतिमक्खायं, ते णं विमाणा जाव पडिरूवा, एत्थ णं मज्झिमगेविज्जगाणं जाव तिसुवि लोगस्स असंखिज्जइभागे, तत्थ णं बहवे मज्झिमगेविज्जगा देवा परिवसंति जाव अहमिंदा नाम ते देवगणा पन्नत्ता समणाउसो ! ॥ कहि णं भंते ! उवरिमगेविज्जगाणं देवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पन्न-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

त्ता ?, कहि णं भंते ! उवरिमगेविज्जए देवा परिवसंति ?, गोयमा ! मज्झिमगेविज्जगाणं उप्पिं जाव उप्पइत्ता एत्थ णं उवरिमगेविज्जगाणं तओ गेविज्जगविमाणपत्थडा पन्नत्ता पाईणपडीणायया सेसं जहा हेट्ठिमगेविज्जगाणं, नवरं एगे विमाणावाससए भवन्तीतिमक्खायं, सेसं तहेव भाणियव्वं जाव अहमिंदा नामं ते देवगणा पन्नत्ता समणाउसो ! । एकारसुत्तरं हेट्ठिमेसु सत्तुत्तरं च मज्झिमए। सयमेगं उवरिमए पंचेव अणुत्तरविमाणा ॥१४९॥ कहि णं भंते ! अणुत्तरोववाइयाणं देवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पन्नत्ता ?, कहि णं भंते ! अणुत्तरोववाइया देवा परिवसंति ?, गोयमा ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए बहुसमरमणिज्जाओ भूमिभागाओ उड्ढं चंदिमसूरियगहगणनक्खत्ततारारूवाणं बहूइं जोयणसयाइं बहूइं जोयणसहस्साइं बहूइं जोयणसयसहस्साइं बहुगाओ जोयणकोडीओ बहुगाओ जोयणकोडाकोडीओ उड्ढं दूरं उप्पइत्ता सोहम्मीसाणसणंकुमार जाव आरणअच्चुयकप्पा तिन्निअट्ठारसुत्तरे गेविज्जगविमाणावाससए वीइवइत्ता तेण परं दूरंगया नीरया निम्मला वितिमिरा विसुद्धा पंचदिसिं पंच अणुत्तरा महइमहालया महाविमाणा पन्नत्ता, तंजहा—विजए वेजयंते जयंते अपराजिए सव्वट्ठसिद्धे, ते णं विमाणा सव्वरयणामया अच्छा सण्हा लण्हा घट्ठा मट्ठा नीरया निम्मला निप्पंका निक्कंकडच्छाया सप्पभा सस्सिरिया सउज्जोया पासाइया दरिसणिज्जा अभिरूवा पडिरूवा, एत्थ णं अणुत्तरोववाइयाणं देवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पन्नत्ता, तिसुवि लोगस्स असंखेज्जइभागे, तत्थ णं बहवे अणुत्तरोववाइया देवा परिवसंति, सव्वे समिड्ढिया सव्वे समवला सव्वे समाणुभावा महासुक्खा अणिंदा अप्पेस्सा अपुरोहिया अहमिंदा नामं ते देवगणा पन्नत्ता समणाउसो ! ॥ (सू० ५३)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सनत्कुमारकल्पे 'सपक्खिं सपडिदिसं'ति समानाः पक्षाः—पूर्वापरदक्षिणोत्तररूपाः पार्श्वा यस्मिन् दूरमुत्पतने तत्सपक्षं 'समानस्य धर्मादिषु चे' ति समानस्य सभावः 'सपडिदिसिं'ति समानाः प्रतिदिशो–धिदिशो यत्र तत् सप्रतिदिक् ॥ सामानिकसंग्रहणीगाथा 'चउरासीइ' इत्यादि, सौधर्मेन्द्रस्य चतुरशीतिः सामानिकसहस्राणि ईशानेन्द्रस्याशीतिः सनत्कुमारेन्द्रस्य द्वासप्ततिः माहेन्द्रदेवराजस्य सप्ततिः ब्रह्मलोकेन्द्रस्य षष्टिः लान्तकेन्द्रस्य पञ्चाशत् महाशुक्रेन्द्रस्य चत्वारिंशत् सहस्रारेन्द्रस्य त्रिंशत् आनतप्राणतेन्द्रस्य विंशतिः आरणाच्युतेन्द्रस्य दश सामानिकसहस्राणि, अवतंसकाश्चातिदेशेनोक्ता इति दुरवबोधाः ततो विनेयजनानुग्रहार्थं वैचित्र्येण मूलत आरभ्योपदर्श्यन्ते—सौधर्मे पूर्वस्यामशोकावतंसकः दक्षिणतः सप्तपर्णावतंसकः पश्चिमायां चम्पकावतंसकः उत्तरतश्चूतावतंसकः मध्ये सौधर्मावतंसकः, एवं पूर्वादिक्रमेण ईशाने अङ्कावतंसकः स्फटिकावतंसको रत्नावतंसको जातरूपावतंसकः मध्ये ईशानावतंसकः, सनत्कुमारे अशोकसप्तपर्णचंपकचूतसनत्कुमारावतंसकाः, माहेन्द्रे अङ्कस्फटिकरत्नजातरूपमाहेन्द्रावतंसकाः, ब्रह्मलोके अशोकसप्तपर्णचम्पकचूतब्रह्मलोकावतंसकाः, लान्तके अङ्कस्फटिकरत्नजातरूपलान्तकावतंसकाः, महाशुक्रे अशोकसप्तपर्णचम्पकचूतमहाशुक्रावतंसकाः, सहस्रारे अङ्कस्फटिकरत्नजातरूपसहस्रारावतंसकाः, प्राणते अशोकसप्तपर्णचम्पकचूतप्राणतावतंसकाः, अच्युते अङ्कस्फटिकरत्नजातरूपअच्युतावतंसका इति ॥ ग्रैवेयकसूत्रे 'समिद्धिया' समा ऋद्धिर्येषां ते समर्द्धिकाः, एवं 'समज्जुइया' इत्याद्यपि भावनीयं, 'अणिंदा' इति न विद्यते इन्द्रः—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [५३] + गाथा: दीप अनुक्रम [२२८--२३४]

अधिपतिर्येषां ते अनिन्द्राः 'अपेस्सा' इति न विद्यते प्रेष्यः—प्रेष्यत्वं येषा ते अप्रेष्याः 'अपुरोहि या' इति न विद्यते पुरोहितः—शान्तिकर्मकारी येषां अशान्तेरभावात् ते अपुरोहिताः, किंरूपाः पुनस्ते ? इत्याह—अहमिन्द्रा नाम ते देवगणाः प्रज्ञप्ता हे श्रमण ! हे आयुष्मन् ॥

कहि णं भंते ! सिद्धाणं ठाणा प० कहि णं भंते ! सिद्धा परिवसंति ?, गोयमा ! सव्वट्ठसिद्धस्स महाविमाणस्स उवरिल्लाओ थूभियग्गाओ दुवालस जोयणे उड्ढं अबाहाए एत्थ णं ईसीपब्भारा णामं पुढवी पन्नत्ता, पणयालीसं जोयणसयसहस्साइं आयामविक्खंभेणं एगा जोयणकोडी बायालीसं च सयसहस्साइं तीसं च सहस्साइं दोन्नि य अउणापन्ने जोयणसए किंचि विसेसाहिए परिक्खेवेणं पन्नत्ता, ईसिपब्भाराए णं पुढवीए बहुमज्झदेसभाए अट्ठजोयणिए खेत्ते अट्ठ जोयणाइं बाहल्लेणं पन्नत्ते, तओ अणंतरं च णं मायाए मायाए पएसपरिहाणीए परिहायमाणी परिहायमाणी सव्वेसु चरमंतेसु मच्छियपत्ताओ तणुयतरी अंगुलस्स असंखेज्जइभागं बाहल्लेणं पन्नत्ता, ईसीपब्भाराए णं पुढवीए दुवालस नामधिज्जा पन्नत्ता, तंजहा—ईसि इ वा ईसीपब्भारा इ वा तणू इ वा तणुतणू इ वा सिद्धित्ति वा सिद्धालए वा मुत्तित्ति वा मुत्तालए इ वा लोयग्गेत्ति वा लोयग्गथूभियत्ति वा लोयग्गपडिवुज्झणा इ वा सव्वपाणभूयजीवसत्तसुहावहा इ वा, ईसीपब्भारा णं पुढवी सेया संखदलविमलसोत्थियमुणालदगरयतुसारगोक्खीरहारवण्णा उत्ताणयछत्तसंठाणसंठिया सव्वज्जुणसुवन्नमई अच्छा सण्हा लण्हा घट्ठा मट्ठा नीरया निम्मला निप्पंका निक्कंकडच्छाया सप्पभा सस्सिरिया सउज्जोया पासाईया दरिसणिज्जा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ सिद्ध-जीवानाम् स्थानानि कथ्यते

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति:

अभिरूवा पडिरूवा, ईसीपब्भाराए णं पुढवीए सीआए जोयणम्मि लोगंतो तस्स णं जोयणस्स जे से उवरिल्ले गाउए तस्स णं गाउयस्स जे से उवरिल्ले छब्भागे एत्थ णं सिद्धा भगवंतो साइया अपज्जवसिया अणेगजाइजरामरणजोणिसंसारकलंकलीभावपुणब्भवगब्भवासवसहीपवंचसमइक्कंता सासयमणागयद्धं कालं चिट्ठंति, तत्थवि य ते अवेया अवेयणा निम्ममा असंगा य संसारविप्पमुक्का पएसनिवत्तसंठाणा । कहिं पडिहया सिद्धा, कहिं सिद्धा पइट्ठिया । कहिं बोंदिं चइत्ता णं, कत्थ गंतूण सिज्झइ ? ॥ १५० ॥ अलोए पडिहया सिद्धा, लोयग्गे य पइट्ठिया । इहं बोंदिं चइत्ता णं, तत्थ गंतूण सिज्झइ ॥१५१॥ दीहं वा हस्सं वा जं चरिमभवे हविज्ज संठाणं । तत्तो तिभागहीणा सिद्धाणोगाहणा भणिया ॥१५२ ॥ जं संठाणं तु इहं भवं चयंतस्स चरिमसमयंमि । आसी य पदेसघणं तं संठाणं तहिं तस्स ॥१५३॥ तिन्नि सया तित्तीसा धणुत्तिभागो य होइ नायव्वो । एसा खलु सिद्धाणं उक्कोसोगाहणा भणिया ॥१५४॥ चत्तारि य रयणीओ रयणी तिभागूणिया य बोद्धव्वा । एसा खलु सिद्धाणं मज्झिमओगाहणा भणिया ॥१५५॥ एगा य होइ रयणी अट्ठेव य अंगुलाइं साहि (य) या । एसा खलु सिद्धाणं जहन्नओगाहणा भणिया ॥१५६॥ ओगाहणाइ सिद्धा भवत्तिभागेण होंति परिहीणा । संठाणमणित्थंथं (ग्रन्था० १५००) जरामरणविप्पमुक्काणं ॥१५७॥ जत्थ य एगो सिद्धो तत्थ अणंता भवक्खयविमुक्का । अन्नोऽन्नसमोगाढा पुट्ठा सव्वेवि लोगंते ॥१५८॥ फुसइ अणंते सिद्धे सव्वपएसेहिं नियमसो सिद्धा । तेऽवि य असंखिज्जगुणा देसपएसेहिं जे पुट्ठा ॥१५९॥ असरीरा जीवघणा उवउत्ता दंसणे य नाणे य । सागारमणागारं लक्खणमेयं तु सिद्धाणं ॥१६०॥ केवलनाणुवउत्ता जाणंता सव्वभावगुणभावे । पासंता सव्वओ खलु केवलदिट्ठीहिऽणंताहिं ॥ १६१ ॥ नवि अत्थि माणुसाणं तं सुक्खं नवि य सव्वदेवाणं । जं सिद्धाणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [५४] + गाथा:

दीप अनुक्रम [२३५--२५६]

सुक्खं अव्वाबाहं उवगयाणं ॥१६२॥ सुरगणसुहं समत्तं सव्वद्धापिंडियं अणंतगुणं । नवि पावइ मुत्तिसुहं णंताहिं वग्गवग्गूहिं ॥१६३॥ सिद्धस्स सुहो रासी सव्वद्धापिंडिओ जइ हवेज्जा । सोऽणंतवग्गभइओ सव्वागासे न माइज्जा ॥ १६४ ॥ जह णाम कोइ मिच्छो नगरगुणे बहुविहे वियाणंतो । न चएइ परिकहेउं उवमाएँ तहिं असंतीए ॥१६५॥ इय सिद्धाणं सोक्खं अणोवमं नत्थि तस्स ओवम्मं । किंचि विसेसेणित्तो सारिक्खमिणं सुणह वोच्छं ॥ १६६ ॥ जह सव्वकामगुणियं पुरिसो भोत्तूण भोयणं कोई । तण्हाछुहाविमुक्को अच्छिज्ज जहा अमियतित्तो ॥ १६७॥ इय सव्वकालतित्ता अतुलं निव्वाणमुवगया सिद्धा । सासयमव्वाबाहं चिट्ठंति सुही सुहं पत्ता ॥ १६८ ॥ सिद्धत्ति य बुद्धत्ति य पारगयत्ति । य परंपरगयत्ति उम्मुक्ककम्मकवया अजरा अमरा असंगा य ॥ १५९ ॥ निच्छिन्नसव्वदुक्खा जाइजरामरणबंधणविमुक्का । अव्वाबाहं सोक्खं अणुहोंती सासयं सिद्धा ॥ (सू० ५४) इति बितीयं ठाणपयं सम्मत्तं ॥ २ ॥

सिद्धसूत्रे 'एगा जोयणकोडी' इत्यादि परिरयपरिमाणं 'विक्खंभवग्गदहगुण०' इत्यादिकरणवशात् स्वयमानेतव्यं, सुगमत्वात्, क्षेत्रसमासटीका वा परिभावनीया, तत्र पञ्चचत्वारिंशल्लक्षप्रमाणविष्कम्भमनुष्यक्षेत्रपरिरयस्य एतावत्प्रमाणस्य सविस्तरं भावितत्वात्, तस्याश्च ईषत्प्राग्भारायाः पृथिव्याः बहुमध्यदेशभागे अष्टयोजनिकम्–आयामविष्कम्भाभ्यामष्टयोजनप्रमाणं क्षेत्रं च, अष्टौ योजनानि बाहल्येन चोच्चत्वेन–उच्चैस्त्वेनेति भावः, प्रज्ञप्ता, तदनन्तरं सर्वासु दिक्षु विदिक्षु च मात्रया स्तोकया स्तोकया प्रदेशपरिहान्या परिहीयमाना सर्वेषु चरमान्तेषु मक्षिकापत्रतोऽप्यतितन्वी अङ्गुला-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [५४] + गाथा: दीप अनुक्रम [२३५--२५६]

संख्येयभागं बाहल्येन प्रज्ञप्ता, स्थापना–। 'ईसि इ वा' इति, पदैकदेशे पदसमुदायोपचारात् १ ईषत्प्राग्भारा इति वा २ 'तणु इत्ति वा' तन्वी वा शेषपृथिव्यपेक्षयाऽतितनुत्वात् ३ 'तणुतणूइत्ति वा' इति तनुभ्योऽपि जगत्प्रसिद्धेभ्यस्तन्वी मक्षिकापत्रतोऽपि पर्यन्तदेशेऽतितनुत्वात् तनुतन्वी ४ 'सिद्धिरिति वा' सिद्धक्षेत्रस्य प्रत्यासन्नत्वात् ५ 'सिद्धालय इति वा' सिद्धक्षेत्रस्य प्रत्यासन्नतयोपचारतः सिद्धानामालयः सिद्धालयः ६ एवं मुक्तिरिति वा मुक्तालय इति वेत्यपि परिभावनीयं तथा लोकाग्रे वर्तमानत्वात् लोकाग्रमिति ९ लोकाग्रस्य स्तूपिकेव लोकाग्रस्तूपिका १० तथा लोकाग्रेण प्रत्यूह्यते इति लोकाग्रप्रतिवाहिनी ११ 'सव्वपाणभूयजीवसत्तसुहावहा' इति प्राणा–द्वित्रिचतुरिन्द्रिया इति भूताः–तरवः जीवाः–पञ्चेन्द्रियाः शेषाः प्राणिनः सत्त्वाः, उक्तं च–"प्राणा द्वित्रिचतुः प्रोक्ताः, भूताश्च तरवः स्मृताः। जीवाः पञ्चेन्द्रिया ज्ञेयाः, शेषाः सत्त्वा उदीरिताः॥१॥" सर्वेषां प्राणभूतजीवसत्त्वानां सुखावहा उपद्रवकारित्वाभावात् सर्वप्राणभूतजीवसत्त्वसु खावहा १२। सा च ईषत्प्राग्भारा पृथ्वी श्वेता, श्वेतत्वमेवोपमया प्रकटयति–'संखदलविमल' इत्यादि, शङ्खदलस्य—शङ्खदलचूर्णस्य विमलो–निर्मलः स्वस्तिकः शङ्खदलविमलस्वस्तिकः स च मृणालं च दकरजश्च तुषारं च हिमं च गोक्षीरं च हारश्च तेषामिव वर्णो यस्याः सा तथा, उत्तानकं–उत्तानीकृतं यत् छत्रं तस्य यत्संस्थानं तेन संस्थिता उत्तानकच्छत्रसंस्थानसंस्थितत्वं च प्रागुपदर्शितस्थापनातो भावनीयं। 'सव्वज्जुणसुवन्नमयी' सर्वात्मना श्वेतसुवर्णमयी 'ईसीपब्भाराए णं' इत्यादि ईषत्प्राग्भारायाः पृथिव्या ऊर्ध्वं 'सीयाए' इति निःश्रेणिगत्या योजने लोका-

२ स्थान-पदे सिद्ध-स्थानादि-सू. ५४

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [५४] + गाथा: दीप अनुक्रम [२३५--२५६]

न्तो भवति, तस्य च योजनस्य यदुपरितनं गव्यूतं चतुर्थं तस्य च गव्यूतस्य यः सर्वोपरितनो षड्भागो अत्र 'णं' इति वाक्यालङ्कारे सिद्धा भगवन्तः सादिकाः कर्मक्षयानन्तरं सिद्धत्वभावात्, एतेन अनादिशुद्धपुरुषप्रवादप्रतिक्षेप आवेदितो द्रष्टव्यः, अपर्यवसिता रागाद्यभावेन प्रतिपातासंभवात्, रागादयो हि सिद्धत्वाच्यावयितुं प्रभविष्णवः, न च ते भगवतां सन्ति, तेषां निर्मूलकाषंकषितत्वात्, न च निर्मूलकाषंकषिता अपि भूयः प्रादुर्भवन्ति, बीजाभावादिति, तथा अनेकैर्जातिजरामरणैः—जन्मजरामृत्युभिर्यश्च तासु तासु योनिषु संसारः–संसरणं तेन च यः कलंकलीभावः–कदर्थ्यमानता यश्च दिव्यसुखमनुप्राप्तानामपि पुनर्भवे—संसारे गर्भवसतिप्रपञ्चः तौ समतिक्रान्ता अत एव शाश्वतमनागतं कालं तिष्ठन्ति, 'तत्थवि य ते अवेया' इत्यादि, तत्रापि च—सिद्धक्षेत्रे गताः सन्तस्ते—भगवन्तः 'अवेदाः' पुरुषवेदादिवेदरहिताः 'अवेदनाः' सातासातवेदनाभावात् 'निर्मा' ममत्वरहिताः 'असंगा' बाह्याभ्यन्तरसङ्गरहिताः, कस्मादेवम् ? अत आह–'संसारविप्रमुक्ताः' हेतौ प्रथमा, यतः संसाराद् विप्रमुक्तास्तस्मादवेदा अवेदना निर्मा असङ्गाश्च, पुनः कथंभूताः ? इत्याह 'पएसनिवत्तसंठाणा' प्रदेशैः—आत्मप्रदेशैर्न तु बाह्यपुद्गलैः शरीरपञ्चकस्यापि सर्वात्मना त्यक्तत्वात् निर्वृत्तं–निष्पन्नं संस्थानं येषां ते प्रदेशनिर्वृत्तसंस्थानाः, अत्र शिष्यः पृच्छन्नाह– 'कहिं पडिहया सिद्धा' इत्यादि 'कहिं' इत्यत्र सप्तमी तृतीयार्थे प्राकृतत्वात्, यथा 'तिसु तेसु अलंकिया पुढवी' इत्यादि, ततोऽयमर्थः–केन प्रतिहताः ?–केन स्खलिताः ? सिद्धाः–मुक्ताः, तथा क्व–कस्मिन् स्थाने सिद्धाः प्रतिष्ठिताः–

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अवस्थिताः, तथा क—कस्मिन् क्षेत्रे बोन्दिस्तनुः शरीरमित्यनर्थान्तरम् तां त्यक्त्वा क गत्वा सिद्ध्यन्ति ?—निष्ठितार्था भवन्ति ?, 'सिज्झइ' इत्यत्रानुस्वारलोपो द्रष्टव्यः, अथवा एकवचनोपन्यासोऽपि सूत्रशैल्या न विरोधभाक्, तथा चान्यत्राऽप्येवं प्रयोगः—"वत्थगन्धमलंकारं, इत्थीओ सयणाणि य । अच्छंदा जे न भुंजंति, न से चाइत्ति वुचइ ॥ १ ॥" इति, एवं शिष्येण प्रश्ने कृते सूरिराह—'अलोए पडिहया सिद्धा' इत्यादि, अत्रापि सप्तमी तृतीयार्थे, अलोकेन–केवलाकाशास्तिकायरूपेण प्रतिहताः—स्खलिताः सिद्धाः, इह तत्र धर्मास्तिकायाद्यभावात् तदानन्तर्यवृत्तिरेव प्रतिस्खलनम्, न तु संबन्धे सति विघातः, अप्रतिघत्वात्, सप्रतिघानां हि संबन्धे सति विघातः, नान्येषामिति, तथा लोकस्य–पञ्चास्तिकायात्मकस्याग्रे–मूर्धनि प्रतिष्ठिताः–अपुनरागत्या व्यवस्थिताः, तथा इह मनुष्यलोके बोन्दीं–तनुं त्यक्त्वा तत्र–लोकाग्रे समयान्तरप्रदेशान्तरास्पर्शनेन गत्वा सिध्यन्ति—निष्ठितार्था भवन्ति ॥ सम्प्रति तत्रगतानां यत्संस्थानं तदभिधित्सुराह—'दीहं वा हस्सं वा' इत्यादि, दीर्घं वा—पञ्चधनुःशतप्रमाणं ह्रस्वं वा–हस्तद्वयप्रमाणं वाशब्दाद् मध्यमं वा विचित्रं यच्चरमभवे—पश्चिमभवे भवेत् संस्थानं ततः–तस्मात् संस्थानात् त्रिभागहीना–वदनोदरादिरन्ध्रपूरणेन तृतीयभागेन हीना सिद्धानामवगाहना, अवगाहन्तेऽस्यामित्यवगाहना–स्वावस्थैव भणिता तीर्थकरगणधरैरिति, अत्रगतसंस्थानप्रमाणापेक्षया त्रिभागहीनं तत्र संस्थानमिति भावः ॥ एतदेव स्पष्टतरमुपदर्शयति—'जं संठाणं तु इहं' इत्यादि, यत्संस्थानं–यावत्प्रमाणं संस्थानं इह–मनुष्यभवे आसीत् तदेव

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भवन्ति प्राणिनः कर्मवशवर्तिनोऽस्मिन्निति भवं–शरीरं त्यजतः–परित्यजतः, काययोगं परिजिहानस्येति भावः, चरमसमये सूक्ष्मक्रियाऽप्रतिपातिध्यानबलेन वदनोदरादिरन्ध्रपूरणात् त्रिभागेन हीनं प्रदेशघनमासीत्, 'तं संठाणं तहिं तस्स' इति तदेव च प्रदेशघनं मूलप्रमाणापेक्षया त्रिभागहीनप्रमाणं संस्थानं तत्र—लोकाग्रे तस्य—सिद्धस्य, नान्यदिति ॥ साम्प्रतमुत्कृष्टावगाहनादिभेदभिन्नामवगाहनामभिधित्सुराह—'तिन्नि सया तेत्तीसा' इत्यादि, त्रीणि शतानि त्रयस्त्रिंशानि—त्रयस्त्रिंशदधिकानि धनुस्त्रिभागश्च भवति बोद्धव्या, एषा खलु सिद्धानामुत्कृष्टावगाहना भणिता तीर्थंकरगणधरैः, सा च पञ्चधनुःशततनुकानामवसेया, ननु मरुदेवी नाभिकुलकरपत्नी, नाभेश्च पञ्चविंशत्यधिकानि पञ्चधनुःशतानि शरीरप्रमाणं, यदेव च तस्य शरीरमानं तदेव मरुदेवाया अपि, 'संघयणं संठाणं उच्चत्तं चेव कुलगरेहिं समं' इति वचनात्, मरुदेवी भगवती च सिद्धा, ततस्तस्या देहमानस्य त्रिभागे पातिते सिद्धावस्थायाः सार्धानि त्रीणि धनुःशतान्येवावगाहना प्राप्नोति, कथमुक्तप्रमाणा उत्कृष्टावगाहना घटते ? इति, नैष दोषः, मरुदेवाया नाभेः किञ्चिदूनप्रमाणत्वात्, स्त्रियो ह्युत्तमसंस्थाना उत्तमसंस्थानेभ्यः पुरुषेभ्यः स्वस्वकालापेक्षया किञ्चिदूनप्रमाणा भवन्ति, ततो मरुदेवाऽपि पञ्चधनुःशतप्रमाणेति न कश्चिद्दोषः, अपिच—हस्तिस्कन्धाधिरूढा संकुचिताङ्गी सिद्धा ततः शरीरसंकोचभावाद् नाधिकावगाहनासंभव इत्यविरोधः, आह च भाष्यकृत्–

"कह मरुदेवामाणं ? नाभीतो जेण किञ्चिदूणा सा। तो किर पंचसयचिय अहवा संकोचओ सिद्धा ॥ १ ॥"

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [५४] + गाथा: दीप अनुक्रम [२३५--२५६]

'चत्तारि रयणीओ' इत्यादि, चतस्रो रत्नयो रत्निश्च त्रिभागोना च सा बोद्धव्या एषा खलु सिद्धानामवगाहना भणिता मध्यमा। आह—जघन्यपदे सप्तहस्तोच्छ्रितानामागमे सिद्धिरुक्ता, तत एषा जघन्या प्राप्नोति, कथं मध्यमा ?, तदयुक्तं, वस्तुतत्त्वापरिज्ञानात्, जघन्यपदे हि सप्तहस्तानां सिद्धिरुक्ता तीर्थकरापेक्षया, सामान्यकेवलिनां तु हीनप्रमाणानामपि भवति, इदमपि चावगाहनामानं चिन्त्यते सामान्यसिद्धापेक्षया, ततो न कश्चिद्दोषः। 'एगा य होइ' इत्यादि, एका रत्निः परिपूर्णा अष्टौ चाङ्गुलान्यधिकानि एषा भवति सिद्धानामवगाहना जघन्या, सा च कूर्मापुत्रादीनां द्विहस्तानामवसेया, यदिवा सप्तहस्तोच्छ्रितानामपि यत्नपीलनादिना संवर्तितशरीराणां, आह च भाष्यकृत्–"जेट्ठा उ पंचधणुसयतणुस्स मज्झा य सत्तहत्थस्स। देहत्तिभागहीणा जहन्निया जा विहत्थस्स ॥१॥ सत्तूसियएसु सिद्धी जहन्नओ कहमिहं विहत्थेसु ?। सा किर तित्थयरेसुं सेसाणं सिज्झमाणाणं ॥ २ ॥ ते पुण होज्ज विहत्था कुम्मापुत्तादयो जहन्नेणं। अन्ने संवट्टियसत्तहत्थसिद्धस्स हीणत्ति ॥ ३ ॥" साम्प्रतमुक्तानुवादेनैव संस्थानलक्षणं सिद्धानामभिधित्सुराह—'ओगाहणाओ' इत्यादि, सुगमं, नवरं 'अनित्थंथं' इति इदंप्रकारमापन्नमित्थं इत्थं तिष्ठतीति इत्थंस्थं न इत्थंस्थं अनित्थंस्थं—वदनादिशुषिरप्रतिपूरणेन पूर्वाकारान्यथाभावतोऽनियताकारमिति भावः, योऽपि च सिद्धादिगुणेषु 'सिद्धे न दीहे न हस्से' इत्यादिना दीर्घत्वादीनां प्रतिषेधः कृतः सोऽपि पूर्वाकारापेक्षया संस्थानस्यानित्थंस्थत्वात् प्रतिपत्तव्यो, न पुनः सर्वथा संस्थानस्याभावतः, आह च भाष्यकृत्—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [५४] + गाथा: दीप अनुक्रम [२३५--२५६]

सुंसिरपरिपूरणाओ पुव्वागारन्नहावत्थाओ । संठाणमणित्थंत्थं जं भणियमणिययागारं ॥ १ ॥ एत्तोच्चिय पडिसेहो सिद्धाइगुणेसु दीहयाईणं । जमणित्थंथं पुव्वागाराविक्खाए नाभावो ॥ २ ॥" नन्वेते सिद्धाः परस्परं देशभेदेन व्यवस्थिता उत नेति ?, नेति तद् ब्रूमः, कस्मादिति चेत्, 'जत्थ य' इत्यादि, यत्रैव देशे चशब्दस्य एवकारार्थत्वात् एकः सिद्धो—निर्वृतस्तत्रानन्ता भवक्षयविमुक्ताः, अत्र भवक्षयग्रहणेन स्वेच्छया भवावतरणशक्तिमत्सिद्धव्यवच्छेदमाह, अन्योऽन्यसमवगाढाः, तथाविधाचिन्त्यपरिणामत्वात्, धर्मास्तिकायादिवत्, तथा स्पृष्टा—लग्नाः सर्वेऽपि लोकान्ते । 'फुसइ' इत्यादि, स्पृशत्यनन्तान् सिद्धान् सर्वप्रदेशैरात्मसंबन्धिभिर्नियमशः सिद्धः, तथा तेऽपि सिद्धाः सर्वप्रदेशस्पृष्टेभ्योऽसंख्येयगुणा वर्तन्ते ये देशप्रदेशैः स्पृष्टाः, कथमिति चेत्, उच्यते, इहैकस्य सिद्धस्य यदवगाहनक्षेत्रं तत्रैकस्मिन्नपि परिपूर्णेऽवगाढा अन्येऽप्यनन्ताः सिद्धाः प्राप्यन्ते, अपरे तु ये तस्य क्षेत्रस्यैकैकं प्रदेशमाक्रम्यावगाढास्तेऽपि प्रत्येकमनन्ताः, एवं द्वित्रिचतुःपञ्चादिप्रदेशवृद्ध्या येऽवगाढास्तेऽपि प्रत्येकमनन्ताः, तथा तस्य मूलक्षेत्रस्यैकैकं प्रदेशं परित्यज्य येऽवगाढास्तेऽपि प्रत्येकमनन्ताः, एवं द्वित्रिचतुःपञ्चादिप्रदेशहान्या येऽवगाढास्तेऽपि प्रत्येकमनन्ताः, एवं सति प्रदेशपरिवृद्धिहानिभ्यां ये समवगाढास्ते परिपूर्णैकक्षेत्रावगाढेभ्योऽसंख्येयगुणा

१ शुषिरपरिपूरणात् पूर्वाकारान्यथाव्यवस्थातः । संस्थानमनित्थंस्थं यद्गुणितमनियताकारात् ॥ १ ॥ इत एव प्रतिषेधः सिद्धादिगुणेषु दीर्घत्वादीनाम् । यदनित्थंस्थं पूर्वाकारापेक्षया नाभावः ॥ २ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भवन्ति, अवगाढप्रदेशानामसंख्यातत्वात्, आह च—"एगक्खेत्तेऽणंता पएसपरिवुड्ढिहाणिओ तत्तो। हुंति असंखेज्जगुणाऽसंखपएसो जमवगाढो ॥ १ ॥" सम्प्रति सिद्धानेव लक्षणतः प्रतिपादयति—'असरीरा' इत्यादि, अविद्यमानशरीरा अशरीरा औदारिकादिपञ्चविधशरीररहिता इत्यर्थः, जीवाश्च ते घनाश्च वदनोदरादिशुषिरपूरणात् जीवघना उपयुक्ता दर्शने—केवलदर्शने ज्ञाने च—केवलज्ञाने यद्यपि सिद्धत्वप्रादुर्भावसमये केवलज्ञानमिति ज्ञानं प्रधानं तथाऽपि सामान्यसिद्धलक्षणमेतदिति ज्ञापनार्थमादौ सामान्यावलम्बनं दर्शनमुक्तं, तथा च सामान्यविषयं दर्शनं विशेषविषयं ज्ञानमिति, ततः साकारानाकारं सामान्यविशेषोपयोगरूपमित्यर्थः, सूत्रे मकारोऽलाक्षणिको, लक्षणं—तदन्यव्यावृत्तिस्वरूपमेतत्—अनन्तरोक्तं, तुशब्दो वक्ष्यमाणनिरुपमसुखविशेषणार्थं, सिद्धानां—निष्ठितार्थानामिति। सम्प्रति केवलज्ञानकेवलदर्शनयोरशेषविषयतामुपदर्शयति—'केवलनाणुवउत्ता' इत्यादि, केवलज्ञानेनोपयुक्ता न त्वन्तःकरणेन तदभावादिति केवलज्ञानोपयुक्ता जानन्ति—अवगच्छन्ति सर्वभावगुणभावान्—सर्वपदार्थगुणपर्यायान्, प्रथमो भावशब्दः पदार्थवचनः द्वितीयः पर्यायवचनः, गुणपर्याययोस्त्वयं विशेषः—सहवर्तिनो गुणाः क्रमवर्तिनः पर्याया इति, तथा पश्यन्ति सर्वतः खलु—खलुशब्दस्यावधारणार्थत्वात् सर्वत एव, केवलदृष्टिभिरनन्ताभिः, अनन्तैः केवलदर्शनैरित्यर्थः, केवलदर्शनानां चानन्तता सिद्धानामनन्तत्वात्, इहादौ ज्ञानग्रहणं प्रथम-

१ एकक्षेत्रेऽनन्ताः प्रदेशपरिवृद्धिहानितस्तस्मात्। भवन्त्यसंख्येयगुणाः असंख्यप्रदेशो यदवगाढः ॥ १ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [५४] + गाथा:

दीप अनुक्रम [२३५--२५६]

तया तदुपयोगस्थाः सिध्यन्तीति ज्ञापनार्थं ॥ सम्प्रति निरुपमसुखभाजस्ते इति दर्शयति—'नवि अत्थि' इत्यादि, नैवास्ति मनुष्याणां चक्रवर्त्यादीनामपि तत्सौख्यं, नैवास्ति सर्वदेवानामनुत्तरपर्यन्तानामपि यत् सिद्धानां सौख्यमव्याबाधामुपगतानां—न विविधाऽऽबाधा अव्याबाधा तां उप—सामीप्येन गतानां—प्राप्तानां ॥ यथा नास्ति तथा भङ्ग्योपदर्शयति—'सुरगणसुहं' इत्यादि, 'सुरगणसुखं' देवसंघातसुखं 'समत्तं' संपूर्णमतीतानागतवर्तमानकालोद्भवमित्यर्थः, पुनः 'सर्वाद्धापिण्डितं' सर्वकालसमयगुणितं तथाऽनन्तगुणमिति, तदेवंप्रमाणं किलासत्कल्पनया एकैकाकाशप्रदेशे स्थाप्यते इत्येवं सकलाकाशप्रदेशपूरणेन यद्यप्यनन्तं भवति तदनन्तमप्यनन्तैर्वर्गैर्वर्गितं तथाऽप्येवं प्रकर्षगतमपि मुक्तिसुखं—सिद्धिसुखं न प्राप्नोति ॥ एतदेव स्पष्टतरं भङ्ग्यन्तरेण प्रतिपादयति—'सिद्धस्स सुहो रासी' इत्यादि, सुखानां राशिः सुखराशिः—सुखसंघातः सिद्धस्य सुखराशिः सिद्धसुखराशिः 'सर्वाद्धापिण्डितः' सर्वयासाद्यपर्यवसितया अद्धया, यत्सुखं सिद्धः प्रतिसमयमनुभवति तदेकत्र पिण्डीकृतमिति भावः, सोऽनन्तवर्गभक्तः—अनन्तैर्वर्गमूलैरपवर्तितः, अनन्तैर्वर्गमूलैः तावदपवर्तितो यावत् सर्वाद्धालक्षणेन गुणकारेण गुणने यदधिकं जातं तस्य सर्वस्याप्यपवर्तनैः सिद्धत्वाद्यसमयभाविसुखमात्रतां प्राप्त इति भावः, सर्वाकाशे न माति—एतावन्मात्रोऽपि सर्वाकाशे न माति सर्वस्तु दूरापास्तप्रसर एवेति ज्ञापनार्थं पिण्डयित्वा पुनरपवर्तनं सुखराशेः, इयमत्र भावना—इह किल विशिष्टाह्लादरूपं सुखं परिगृह्यते, ततश्च यत आरभ्य शिष्टानां सुखशब्दप्रवृत्तिस्तमाह्लादमवधिकृत्य एकैकगुण-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [५४] + गाथा: दीप अनुक्रम [२३५--२५६]

वृद्धितारतम्येन तावदसावाह्लादो विशिष्यते यावदनन्तगुणवृद्ध्या निरतिशयनिष्ठामुपगतः, सोऽयमत्यन्तोपमातीतैकान्तौत्सुक्यविनिवृत्तिरूपस्तिमिततमकल्पः चरमाह्लादः सदा सिद्धानां, तस्माच्चारतः प्रथमाच्चोर्ध्वमपान्तरालवर्तिनो ये गुणास्तारतम्येनाह्लादविशेषरूपास्ते सर्वाकाशप्रदेशेभ्योऽप्यतिभूयांसः, ततः किलोक्तं—'सव्वागासे न माइज्जा' इति, अन्यथा यत् सर्वाकाशे न माति तत् कथमेकस्मिन् सिद्धे मायाद्? इति पूर्वसूरिसंप्रदायः ॥ साम्प्रतमस्य निरुपमतां प्रतिपादयति–'जह नाम' इत्यादि, यथा नाम कश्चिद् म्लेच्छो नगरगुणान्–गृहनिवासादीन् बहुविधान्–अनेकप्रकारान् विजानन् अरण्यगतः सन् अन्यम्लेच्छेभ्यो न शक्नोति परिकथयितुं, कस्मान्न शक्नोति? इत्यत आह–उपमायां तत्रासत्यां "निमित्तकारणहेतुषु सर्वासां विभक्तीनां प्रायो दर्शनम्" इति न्यायाद् हेतौ सप्तमी, तत उपमाया अभावादिति द्रष्टव्यं, एष गाथाऽक्षरार्थः, भावार्थः कथानकादवसेयः, तच्चेदं—[1]एगो महारन्नवासी मिच्छो रन्ने चिट्ठति, इत्तो य एगो राया आसेण अवहरितो तं अडविं पवेसिओ तेण दिट्ठो, सक्कारिऊण जणवयं नीतो, रन्नावि सो नगरं नीओ, पच्छा उवगारित्ति गाढमुपचरितो, जहा राया तहा चिट्ठइ, धवलघराइभोगेण विभासा, कालेण रन्नं

१ एको महारण्यवासी म्लेच्छोऽरण्ये तिष्ठति, इतश्च एको राजा अश्वेनापहृतस्तामटवीं प्रवेशितः तेन दृष्टः, सत्कार्य जनपदं नीतः, राज्ञाऽपि स नगरं नीतः, पश्चादुपकारीति गाढमुपचरितो, यथा राजा तथा तिष्ठति, धवलगृहादिभोगेन विभाषा, कालेन अरण्यं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संरिउमारद्धो, रन्ना विसज्जिओ, तत्तो रन्निगा पुच्छंति—'केरिसं नयरंति' ?, सो वियाणंतोऽवि तत्थोवमाभावा न सक्कइ नयरगुणे परिकहेउं । एस दिट्ठंतो, अयमर्थोपनयः—'इय सिद्धाणं' इत्यादि, इत्येवं सिद्धानां सौख्यमनुपमं वर्तते, किमिति ?, तत आह—यतो नास्ति तस्यौपम्यं, तथाऽपि बालजनप्रतिपत्तये किञ्चिद् विशेषेण 'इतो' इति आर्षत्वाद् अस्येत्यर्थः, सादृश्यमिदं—वक्ष्यमाणं शृणुत—'जह सव्व' इत्यादि, यथेत्युदाहरणोपदर्शनार्थः, भुज्यते इति भोजनं 'सर्वकामगुणितं' सकलसौन्दर्यसंस्कृतं कोऽपि पुरुषो भुक्त्वा क्षुत्तृड्विप्रमुक्तः सन् यथा अमृततृप्तस्तथा तिष्ठति, 'इय' इत्यादि, एवं निर्वाणं–मोक्षमुपगताः सिद्धाः सर्वकालं–साद्यपर्यवसितं कालं तृप्ताः–सर्वथौत्सुक्यविनिवृत्तिभावतः परमसंतोषमधिगता अतुलम्–अनन्यसदृशमुपमाऽतीतत्वात् शाश्वतं प्रतिपाताभावात् अव्याबाधं लेशतोऽपि व्याबाधाया असंभवात् सुखं प्राप्ता अत एव सुखिनः तिष्ठन्तीति ॥ एतदेव सविशेषतरं भावयति–'सिद्धत्ति य' इत्यादि, सितं—बद्धमष्टप्रकारं कर्म ध्मातं–भस्मीकृतं यैस्ते सिद्धाः "पृषोदरादयः" इति रूपनिष्पत्तिः, निर्दग्धानेकभवकर्मेन्धना इत्यर्थः, ते च सामान्यतः कर्मादिसिद्धा अपि भवन्ति, यत उक्तम्—'कम्मे सिप्पे य विज्जाए, मंते जोगे य आगमे । अत्थजत्ताअभिप्पाए, तवे कम्मक्खए इय ॥ १ ॥ " ततः कर्मादिसिद्धव्यपोहाय

१ स्मर्तुमारब्धः, राज्ञा विसृष्टः, तत आरण्यकाः पृच्छन्ति–कीदृशं नगरमिति ?, स विजानन्नपि तत्रोपमाभावाद् न शक्नोति नगरगुणान् परिकथयितुं एष दृष्टान्तः ॥ २ कर्मणि शिल्पे च विद्यायां मन्त्रे योगे चागमे । अर्थे यात्रायामभिप्राये तपसि कर्मक्षये इति ॥ १ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [५४] + गाथा: दीप अनुक्रम [२३५--२५६]

आह—'बुद्धा' इति, अज्ञाननिद्राप्रसुप्ते जगत्यपरोपदेशेन जीवादिरूपं तत्त्वं बुद्धवन्तो बुद्धाः, सर्वज्ञसर्वदर्शिस्वभावबोधरूपा इति भावः, एतेऽपि च संसारनिर्वाणोभयपरित्यागेन स्थितवन्तः कैश्चिदिष्यन्ते—"संसारे न च निर्वाणे, स्थितो भुवनभूतये। अचिन्त्यः सर्वलोकानां, चिन्तारत्नाधिको महान् ॥ १ ॥" इति वचनात्, ततस्तन्निरासार्थमाह—'पारगता' इति, पारं—पर्यन्तं संसारस्य प्रयोजनव्रातस्य वा गताः पारगताः, तथाभव्यत्वाक्षिप्तसकलप्रयोजनसमास्था निरवशेषकर्तव्यशक्तिविप्रमुक्ता इति भावः, इत्थंभूता अपि कैश्चिद् यदृच्छावादिभिरक्रमसिद्धत्वेनापि गीयन्ते, तथोक्तम्—"नैकादिसंख्याक्रमतो, वित्तप्राप्तिर्नियोगतः। दरिद्रराज्यासिसमा, तद्वन्मुक्तिः क्वचिन्न किम् ? ॥१॥" ततस्तन्मतव्यपोहाय 'परम्परागता' इति परम्परया—ज्ञानदर्शनचारित्ररूपया मिथ्यादृष्टिसासादनसम्यग्मिथ्यादृष्ट्यविरतसम्यग्दृष्टिदेशविरतिप्रमत्ताप्रमत्तनिवृत्त्यनिवृत्तिबादरसंपरायसूक्ष्मसंपरायोपशान्तमोहक्षीणमोहसयोगिकेवल्ययोगिकेवलिगुणस्थानभेदभिन्नया गताः परम्परागताः, एते च कैश्चित् तत्त्वतोऽनुन्मुक्तकर्मकवचा अभ्युपगम्यन्ते 'तीर्थनिकारदर्शनादिहागच्छन्ति' इति वचनतः पुनः संसारावतरणाभ्युपगमात्, अतस्तन्मतापाकरणार्थमाह—'उन्मुक्तकर्मकवचाः' उत्—प्राबल्येनापुनर्भवरूपतया मुक्तं—परित्यक्तं कर्म कवचमिव कर्मकवचं यैस्ते उन्मुक्तकर्मकवचाः, अत एवाजराः शरीराभावतो जरसोऽभावात् अमरा अशरीरत्वादेव प्राणत्यागासंभवात्,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [५४] + गाथा:

दीप अनुक्रम [२३५--२५६]

उक्तं च—"वयसो हाणीह जरा, पाणचाओ य मरणमादिट्ठं । सइ देहंमि तदुभयं तदभावे तं न कस्सेव ॥१॥" असङ्गा बाह्याभ्यन्तरसङ्गरहितत्वात् 'निच्छिन्न' इत्यादि, निस्तीर्णं—लङ्घितं सर्वदुःखं यैस्ते निस्तीर्णसर्वदुःखाः, कुतः ? इत्याह—'जातिजरामरणबंधणविमुक्का' जातिः—जन्म जरा—वयोहानिलक्षणा मरणं—प्राणत्यागरूपं बन्धनानि—तन्निबन्धनरूपाणि कर्माणि तैर्विशेषतो—निःशेषापगमनेन मुक्ता जातिजरामरणबन्धनविमुक्ताः, हेताविय प्रथमा, यतो जातिजरामरणबन्धनविप्रमुक्तास्ततो निस्तीर्णसर्वदुःखाः, कारणाभावात्, ततोऽव्याबाधं सौख्यं शाश्वतं सिद्धा अनुभवन्ति ॥

इति श्रीमलयगिरिविरचितायां प्रज्ञापनाटीकायां द्वितीयं स्थानपदं समाप्तम् ॥

---

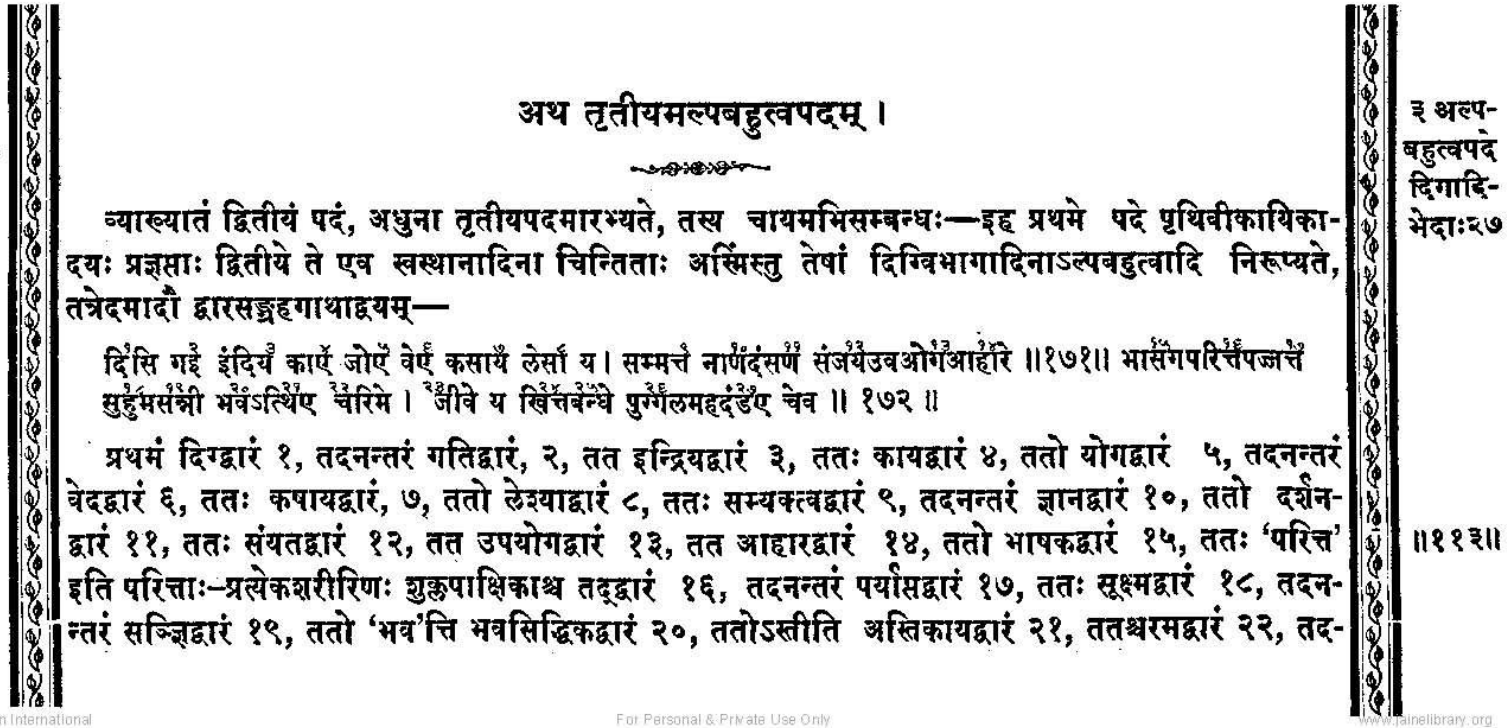
१ वयसो हानिरिह जरा प्राणत्यागश्च मरणमादिष्टम् । सति देहे तदुभयं तदभावे तन्न कस्यैव ॥ १ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र पद (०२) "स्थानं" परिसमाप्तम्

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [५५..] + गाथा: दीप अनुक्रम [२५७--२५८]



प्रज्ञापनायाः मल-य० वृत्तौ. ॥११३॥

अथ तृतीयमल्पबहुत्वपदम् ।

व्याख्यातं द्वितीयं पदं, अधुना तृतीयपदमारभ्यते, तस्य चायमभिसम्बन्धः—इह प्रथमे पदे पृथिवीकायिकादयः प्रज्ञप्ताः द्वितीये ते एव स्वस्थानादिना चिन्तिताः अस्मिंस्तु तेषां दिग्विभागादिनाऽल्पबहुत्वादि निरूप्यते, तत्रेदमादौ द्वारसङ्ग्रहगाथाद्वयम्—

दिसि गइ इंदिय काए जोए वेए कसाय लेसा य। सम्मत्ते नाणदंसण संजयउवओगआहारे ॥१७१॥ भासगपरित्तपज्जत्ते सुहुमसन्नी भवऽत्थिए चरिमे। जीवे य खित्तबन्धे पुग्गलमहदंडए चेव ॥ १७२ ॥

प्रथमं दिग्द्वारं १, तदनन्तरं गतिद्वारं, २, तत इन्द्रियद्वारं ३, ततः कायद्वारं ४, ततो योगद्वारं ५, तदनन्तरं वेदद्वारं ६, ततः कषायद्वारं, ७, ततो लेश्याद्वारं ८, ततः सम्यक्त्वद्वारं ९, तदनन्तरं ज्ञानद्वारं १०, ततो दर्शनद्वारं ११, ततः संयतद्वारं १२, तत उपयोगद्वारं १३, तत आहारद्वारं १४, ततो भाषकद्वारं १५, ततः 'परित्त' इति परित्ताः–प्रत्येकशरीरिणः शुक्लपाक्षिकाश्च तद्द्वारं १६, तदनन्तरं पर्याप्तद्वारं १७, ततः सूक्ष्मद्वारं १८, तदनन्तरं सञ्ज्ञिद्वारं १९, ततो 'भव'त्ति भवसिद्धिकद्वारं २०, ततोऽस्तीति अस्तिकायद्वारं २१, ततश्चरमद्वारं २२, तद-

३ अल्प-बहुत्वपदे दिगादि-भेदाः२७ ॥११३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ पद (०३) "बहुवक्तव्यता / (अल्पबहुत्वं)" आरभ्यते

अत्र अल्पबहुत्व-पदे सप्तविंशति: द्वाराणि नामानि प्ररुप्यते

प्रत सूत्रांक [५५] + गाथा: दीप अनुक्रम [२५९]

नन्तरं जीवद्वारं, २३, ततः क्षेत्रद्वारं २४, ततो बन्धद्वारं २५, ततः पुद्गलद्वारं २६, ततो महादण्डकः २७, इति सर्वसङ्ख्यया सप्तविंशतिः द्वाराणि । तत्र प्रथमं द्वारमभिधित्सुराह–

दिसाणुवाएणं सव्वत्थोवा जीवा पच्छिमेणं, पुरच्छिमेणं विसेसाहिया, दाहिणेणं विसेसाहिया, उत्तरेणं विसेसाहिया। (सू०५५)

इह दिशः प्रथमे आचाराख्ये अङ्गे अनेकप्रकारा व्यावर्णिताः, तत्रेह क्षेत्रदिशः प्रतिपत्तव्याः, तासां नियतत्वात्, इतरासां च प्रायोऽनवस्थितत्वात् अनुपयोगित्वाच्च, क्षेत्रदिशां च प्रभवस्तिर्यग्लोकमध्यगतादष्टप्रदेशकाद्रुचकात्, यत उक्तम्—"अट्ठपएसो रुयगो तिरियलोयस्स मज्झयारम्मि । एस पभवो दिसाणं एसेव भवे अणुदिसाणं ॥ १ ॥" इति, दिशामनुपातो दिगनुपातो–दिगनुसरणं तेन दिशोऽधिकृत्येति तात्पर्यार्थः, सर्वस्तोका जीवाः पश्चिमेन–पश्चिमायां दिशि, कथमिति चेत्?, उच्यते, इदं ह्यल्पबहुत्वं बादरानधिकृत्य द्रष्टव्यं, न सूक्ष्मान्, सूक्ष्माणां सर्वलोकापन्नानां प्रायः सर्वत्रापि समत्वात्, बादरेष्वपि मध्ये सर्वबहवो वनस्पतिकायिकाः, अनन्तसङ्ख्याकतया तेषां प्राप्यमाणत्वात्, ततो यत्र ते बहवस्तत्र बहुत्वं जीवानां, यत्र त्वल्पे तत्राल्पत्वं, वनस्पतयश्च तत्र बहवो यत्र प्रभूता आपः, 'जत्थ जलं तत्थ वणं' इति वचनात् तत्रावश्यं पनकसेवालादीनां भावात्, ते च पनकसेवालादयो बादरनामकर्मोदये वर्त्तमाना अपि अत्यन्तसूक्ष्मावगाहनत्वात् अतिप्रभूतपिण्डीभावाच्च सर्वत्र सन्तोऽपि

१ अष्टप्रदेशो रुचकस्तिर्यग्लोकस्य मध्ये । एष प्रभवो दिशामेष एव भवेद्विदिशाम् ॥ १ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तृतीय-पदे (०१) "दिशा" द्वारम् आरब्धः

न चक्षुषा ग्राह्याः, तथा चोक्तमनुयोगद्वारेषु–"ते णं बालग्गा सुहुमपणगजीवस्स सरीरोगाहणाहिंतो असंखेज्जगुणा" इति, ततो यत्रापि नैते दृश्यन्ते तत्रापि ते सन्तीति प्रतिपत्तव्याः, आह च मूलटीकाकारः–"इह सर्वबहवो वनस्पतय इतिकृत्वा यत्र ते सन्ति तत्र बहुत्वं जीवानां, तेषां च बहुत्वं "जत्थ आउकाओ तत्थ नियमा वणस्सइकाइया इति पणगसेवालहढाई बायरावि होंति सुहुमा आणागेज्झा न चक्खुणा" इति, उदकं च प्रभूतं समुद्रादिषु, द्वीपात् द्विगुणविष्कम्भत्वात्, तेष्वपि च समुद्रेषु प्रत्येकं प्राचीप्रतीच्योर्दिशोर्यथाक्रमं चन्द्रसूर्यद्वीपाः, यावति च प्रदेशे चन्द्रसूर्यद्वीपा अवगाढास्तावत्युदकाभावः, उदकाभावाच्च वनस्पतिकायिकाभावः, केवलं प्रतीच्यां दिशि लवणसमुद्राधिपसुस्थितनामदेवावासभूतो गौतमद्वीपो लवणसमुद्रेऽभ्यधिको वर्त्तते, तत्र चोदकाभावाद्वनस्पतिकायिकानामभावात् सर्वस्तोका जीवाः पश्चिमायां दिशि, तेभ्यो विशेषाधिकाः पूर्वस्यां दिशि, तत्र हि गौतमद्वीपो न विद्यते, ततस्तावता विशेषेणातिरिच्यते इति, तेभ्योऽपि दक्षिणस्यां दिशि विशेषाधिकाः, यतस्तत्र चन्द्रसूर्यद्वीपा न विद्यन्ते, तदभावात्तत्रोदकं प्रभूतं, तत्प्राभूत्याच्च वनस्पतिकायिका अपि प्रभूता इति विशेषाधिकाः, तेभ्योऽप्युदीच्यां दिशि विशेषाधिकाः, किं कारणमिति चेत्?, उच्यते, उदीच्यां हि दिशि सङ्ख्येययोजनेषु द्वीपेषु मध्ये कस्मि-

१ ते बालाग्राः सूक्ष्मपनकजीवस्य शरीरावगाहनाभ्योऽसङ्ख्येयगुणाः। २ यत्राप्कायस्तत्र नियमाद्वनस्पतिकायिका इति पनकशैवालहठादयो बादरा अपि भवन्ति सूक्ष्मा आज्ञाग्राह्याः। न चक्षुषा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [५६]

दीप अनुक्रम [२६०]

श्चित् द्वीपे आयामविष्कम्भाभ्यां सङ्ख्येययोजनकोटीप्रमाणं मानसं नाम सरः समस्ति, ततो दक्षिणदिगपेक्षया अस्यां प्रभूतमुदकम्, उदकबाहुल्याच्च प्रभूता वनस्पतयः, प्रभूता द्वीन्द्रियाः शङ्खादयः प्रभूतास्तटलग्नशङ्खादिकलेवराश्रिता-स्त्रीन्द्रियाः पिपीलिकादयः प्रभूताः पद्मादिषु चतुरिन्द्रियाः भ्रमरादयः प्रभूताः पञ्चेन्द्रिया मत्स्यादय इति विशेषा-धिकाः ॥ तदेवं सामान्यतो दिगनुपातेन जीवानामल्पबहुत्वमुक्तम् ॥ इदानीं विशेषेण तदाह—

दिसाणुवाएणं सव्वत्थोवा पुढविकाइया दाहिणेणं उत्तरेणं विसेसाहिया पुरच्छिमेणं विसेसाहिया पच्छिमेणं विसेसा-हिया । दिसाणुवाएणं सव्वत्थोवा आउकाइया पच्छिमेणं, पुरच्छिमेणं विसेसाहिया, दाहिणेणं विसेसाहिया, उत्तरेणं विसेसाहिया ॥ दिसाणुवाएणं सव्वत्थोवा तेउकाइया दाहिणुत्तरेणं, पुरच्छिमेणं संखेज्जगुणा, पच्छिमेणं विसेसाहिया ॥ दिसाणुवाएणं सव्वत्थोवा वाउकाइया पुरच्छिमेणं, पच्छिमेणं विसेसाहिया, उत्तरेणं विसेसाहिया, दाहिणेणं विसेसा-हिया ॥ दिसाणुवाएणं सव्वत्थोवा वणस्सइकाइया पच्छिमेणं पुरच्छिमेणं विसेसाहिया दाहिणेणं विसेसाहिया उत्तरेणं विसेसाहिया ॥ दिसाणुवाएणं सव्वत्थोवा बेइंदिया पच्छिमेणं पुरच्छिमेणं विसेसाहिया दक्खिणेणं विसेसाहिया उत्तरेणं विसेसाहिया । दिसाणुवाएणं सव्वत्थोवा तेइंदिया पच्चत्थिमेणं, पुरच्छिमेणं विसेसाहिया, दाहिणेणं विसेसाहिया, उत्तरेणं विसेसाहिया । दिसाणुवाएणं सव्वत्थोवा चउरिंदिया पच्चत्थिमेणं, पुरच्छिमेणं विसेसाहिया, दाहिणेणं विसेसाहिया, उत्त-रेणं विसेसाहिया । दिसाणुवाएणं सव्वत्थोवा नेरइया पुरच्छिमपच्चत्थिमउत्तरेणं, दाहिणेणं असंखेज्जगुणा । दिसाणुवाएणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सव्वत्थोवा रयणप्पभापुढवीनेरइया पुरच्छिमपच्चत्थिमउत्तरेणं, दाहिणेण असंखेज्जगुणा। दिसाणुवाएणं सव्वत्थोवा सक्करप्पभापुढवीनेरइया पुरच्छिमपच्चत्थिमउत्तरेणं, दाहिणेणं असंखेज्जगुणा। दिसाणुवाएणं सव्वत्थोवा वालुयप्पभापुढवीनेरइया पुरच्छिमपच्चत्थिमउत्तरेणं, दाहिणेणं असंखेज्जगुणा। दिसाणुवाएणं सव्वत्थोवा पंकप्पभापुढवीनेरइया पुरच्छिमपच्चत्थिमउत्तरेणं, दाहिणेणं असंखेज्जगुणा। दिसाणुवाएणं सव्वत्थोवा धूमप्पभापुढवीनेरइया पुरच्छिमपच्चत्थिमउत्तरेणं, दाहिणेणं असंखेज्जगुणा। दिसाणुवाएणं सव्वत्थोवा तमप्पहापुढवीनेरइया पुरच्छिमपच्चत्थिमउत्तरेणं, दाहिणेणं असंखेज्जगुणा। दिसाणुवाएणं सव्वत्थोवा अहे सत्तमापुढवीनेरइया पुरच्छिमपच्चत्थिमउत्तरेणं, दाहिणेणं असंखेज्जगुणा। दाहिणेहिंतो अहेसत्तमापुढवीनेरइएहिंतो छट्ठाए तमाए पुढवीए नेरइया पुरच्छिमपच्चत्थिमउत्तरेणं असंखेज्जगुणा, दाहिणेणं असंखेज्जगुणा, दाहिणिल्लेहिंतो तमाए पुढवीनेरइएहिंतो पंचमाए धूमप्पभाए पुढवीए नेरइया पुरच्छिमपच्चत्थिमउत्तरेणं असंखेज्जगुणा, दाहिणेणं असंखेज्जगुणा, दाहिणिल्लेहिंतो धूमप्पभापुढवीनेरइएहिंतो चउत्थीए पंकप्पभाए पुढवीए नेरइया पुरच्छिमपच्चत्थिमउत्तरेणं असंखेज्जगुणा, दाहिणेणं असंखेज्जगुणा, दाहिणिल्लेहिंतो पंकप्पभापुढवीनेरइएहिंतो तइयाए वालुयप्पभाए पुढवीए नेरइया पुरच्छिमपच्चत्थिमउत्तरेणं असंखेज्जगुणा, दाहिणेणं असंखेज्जगुणा, दाहिणिल्लेहिंतो वालुयप्पभापुढवीनेरइएहिंतो दुइयाए सक्करप्पभाए पुढवीए नेरइया पुरच्छिमपच्चच्छिमउत्तरेणं असंखेज्जगुणा, दाहिणेणं असंखेज्जगुणा, दाहिणिल्लेहिंतो सक्करप्पभापुढवीनेरइएहिंतो इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए नेरइया पुरच्छिमपच्चत्थिमउत्तरेणं असंखेज्जगुणा, दाहिणेणं असंखेज्जगुणा। दिसाणुवाएणं सव्वत्थोवा पंचिंदिया तिरिक्खजोणिया पच्छिमेणं, पुरच्छिमेणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [५६]

दीप अनुक्रम [२६०]

विसेसाहिया, दाहिणेणं विसेसाहिया, उत्तरेणं विसेसाहिया। दिसाणुवाएणं सव्वत्थोवा मणुस्सा दाहिणउत्तरेणं, पुरच्छिमेणं संखेज्जगुणा पच्चत्थिमेणं विसेसाहिया। दिसाणुवाएणं सव्वत्थोवा भवणवासी देवा पुरच्छिमेणं पच्चत्थिमेणं, उत्तरेणं असंखेज्जगुणा, दाहिणेणं असंखेज्जगुणा। दिसाणुवाएणं सव्वत्थोवा वाणमंतरा देवा पुरच्छिमेणं, पच्चत्थिमेणं विसेसाहिया, उत्तरेणं विसेसाहिया, दाहिणेणं विसेसाहिया। दिसाणुवाएणं सव्वत्थोवा जोइसिया देवा पुरच्छिमपच्चत्थिमेणं, दाहिणेणं विसेसाहिया, उत्तरेणं विसेसाहिया। दिसाणुवाएणं सव्वत्थोवा देवा सोहम्मे कप्पे पुरच्छिमपच्चत्थिमेणं, उत्तरेणं असंखेज्जगुणा, दाहिणेणं विसेसाहिया। दिसाणुवाएणं सव्वत्थोवा देवा ईसाणे कप्पे पुरच्छिमपच्चत्थिमेणं, उत्तरेणं असंखेज्जगुणा, दाहिणेणं विसेसाहिया। दिसाणुवाएणं सव्वत्थोवा देवा सणंकुमारे कप्पे पुरच्छिमपच्चत्थिमेणं, उत्तरेणं असंखेज्जगुणा, दाहिणेणं विसेसाहिया। दिसाणुवाएणं सव्वत्थोवा देवा माहिंदे कप्पे पुरच्छिमपच्चत्थिमेणं, उत्तरेणं असंखेज्जगुणा, दाहिणेणं विसेसाहिया। दिसाणुवाएणं सव्वत्थोवा देवा बंभलोए कप्पे पुरच्छिमपच्चत्थिमउत्तरेणं, दाहिणेणं असंखेज्जगुणा। दिसाणुवाएणं सव्वत्थोवा देवा लंतए कप्पे पुरच्छिमपच्चत्थिमउत्तरेणं, दाहिणेणं असंखेज्जगुणा। दिसाणुवाएणं सव्वत्थोवा देवा महासुक्के कप्पे पुरच्छिमपच्चत्थिमउत्तरेणं, दाहिणेणं असंखेज्जगुणा। दिसाणुवाएणं सव्वत्थोवा देवा सहस्सारे कप्पे पुरच्छिमपच्चत्थिमउत्तरेणं, दाहिणेणं असंखेज्जगुणा। तेण परं बहुसमोववन्नगा समणाउसो! ॥ दिसाणुवाएणं सव्वत्थोवा सिद्धा दाहिणेणं उत्तरेणं, पुरच्छिमेणं संखेज्जगुणा, पच्चत्थिमेणं विसेसाहिया ॥ दारं ॥ (सू० ५६)

दिगनुपातेन—दिगनुसारेण दिशोऽधिकृत्येतिभावः, पृथिवीकायिकाश्चिन्त्यमानाः सर्वस्तोका दक्षिणस्यां दिशि,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्तिः

कथमिति चेद् ?, उच्यते, इह यत्र घनं तत्र बहवः पृथिवीकायिकाः यत्र सुषिरं तत्र स्तोकाः, दक्षिणस्यां दिशि बहूनि भवनपतीनां भवनानि बहवो नरकावासास्ततः सुषिरप्राभूत्यसंभवात् सर्वस्तोका दक्षिणस्यां दिशि पृथिवीकायिकाः, तेभ्य उत्तरस्यां दिशि विशेषाधिकाः, यत उत्तरस्यां दिशि दक्षिणदिगपेक्षया स्तोकानि भवनानि स्तोका नरकावासाः, ततो घनप्राभूत्यसंभवात् बहवः पृथिवीकायिका इति विशेषाधिकाः, तेभ्योऽपि पूर्वस्यां दिशि विशेषाधिकाः, रविशशिद्वीपानां तत्र भावात्, तेभ्योऽपि पश्चिमायां दिशि विशेषाधिकाः, किं कारणमिति चेत् ?, उच्यते, यावन्तो रविशशिद्वीपाः पूर्वस्यां दिशि तावन्तः पश्चिमायामपि, न तु एतावता साम्यं, परं लवणसमुद्रे गौतमनामा द्वीपः पश्चिमायामधिकोऽस्ति, तेन विशेषाधिकाः, अत्र पर आह—ननु यथा पश्चिमायां दिशि गौतमद्वीपोऽभ्यधिकः समस्ति, तथा तस्यां पश्चिमायां दिशि अधोलौकिकग्रामा अपि योजनसहस्रावगाहाः सन्ति, ततः स्नातपूरितन्यायेन तत्र तुल्या एव पृथिवीकायिकाः प्राप्नुवन्ति न विशेषाधिकाः, नैतदेवं, यतोऽधोलौकिकग्रामावगाहो योजनसहस्रं, गौतमद्वीपस्य पुनः षट्सप्तत्यधिकं योजनसहस्रमुच्चैस्त्वं, विष्कम्भस्तस्य द्वादश योजनसहस्राणि, यच्च मेरोरारभ्याधोलौकिकग्रामेभ्योऽर्वाक् हीनत्वं हीनतरत्वं तत् पूर्वस्यामपि दिशि प्रभूतगर्त्तादिसंभवात् समानं, ततो यद्यधोलौकिकग्रामच्छिद्रेषु बुद्ध्या गौतमद्वीपः प्रक्षिप्यते तथापि स समधिक एव प्राप्यते न तुल्य इति तेन समधिकेन विशेषाधिकाः पश्चिमायां दिशि पृथिवीकायिकाः ॥ उक्तं दिगनुपातेन पृथिवीकायि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [५६]

दीप अनुक्रम [२६०]

कानामल्पबहुत्वं, इदानीमप्कायिकानामल्पबहुत्वमाह—सर्वस्तोका अप्कायिकाः पश्चिमायां दिशि, गौतमद्वीपस्थाने तेषामभावात्, तेभ्योऽपि विशेषाधिकाः पूर्वस्यां दिशि, गौतमद्वीपाभावात्, तेभ्योऽपि विशेषाधिका दक्षिणस्यां दिशि, चन्द्रसूर्यद्वीपाभावात्, तेभ्योऽप्युत्तरस्यां दिशि विशेषाधिकाः, मानससरःसद्भावात् ॥ तथा दक्षिणस्यामुत्तरस्यां च दिशि सर्वस्तोकास्तेजःकायिकाः, यतो मनुष्यक्षेत्रे एव बादरास्तेजःकायिका नान्यत्र, तत्रापि यत्र बहवो मनुष्यास्तत्रैते बहवः, बाहुल्येन पाकारम्भसम्भवात्, यत्र त्वल्पे तत्र स्तोकाः, तत्र दक्षिणस्यां दिशि पञ्चसु भरतेषु उत्तरस्यां दिशि पञ्चस्वैरावतेषु क्षेत्रस्याल्पत्वात् स्तोका मनुष्याः, तेषां स्तोकत्वेन तेजःकायिका अपि स्तोकाः, अल्पपाकारम्भसम्भवात्, ततः सर्वस्तोका दक्षिणोत्तरयोर्दिशोस्तेजःकायिकाः, स्वस्थाने तु प्रायः समानाः, तेभ्यः पूर्वस्यां दिशि सङ्ख्येयगुणाः, क्षेत्रस्य सङ्ख्येयगुणत्वात्, ततोऽपि पश्चिमायां दिशि विशेषाधिकाः, अधोलौकिकग्रामेषु मनुष्यबाहुल्यात् ॥ इह यत्र सुषिरं तत्र वायुः यत्र घनं तत्र वाय्वभावः, तत्र पूर्वस्यां दिशि प्रभूतं घनमित्यल्पा वायवः, पश्चिमायां दिशि विशेषाधिकाः, अधोलौकिकग्रामसम्भवात्, उत्तरस्यां दिशि विशेषाधिकाः, भवननरकावासबाहुल्येन सुषिरबाहुल्यात्, ततोऽपि दक्षिणस्यां दिशि विशेषाधिकाः, उत्तरदिगपेक्षया दक्षिणस्यां दिशि भवनानां नरकावासानां चातिप्रभूतत्वात् ॥ तथा यत्र प्रभूता आपस्तत्र प्रभूताः पनकादयोऽनन्तकायिका वनस्पतयः प्रभूताः शङ्खादयो द्वीन्द्रियाः प्रभूताः पिण्डीभूतसेवालाद्याश्रिताः कुन्थ्वादयस्त्रीन्द्रियाः प्रभूताः पद्माद्याश्रिता

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [५६]

दीप अनुक्रम [२६०]

भ्रमरादयश्चतुरिन्द्रिया इति हेतोर्वनस्पत्यादिसूत्राणि चतुरिन्द्रियसूत्रपर्यन्तानि अप्कायिकसूत्रवद् भावनीयानि। नैरयिकसूत्रे सर्वस्तोकाः पूर्वोत्तरपश्चिमदिग्विभागभाविनो नैरयिकाः, पुष्पावकीर्णनरकावासानां तत्राल्पत्वात्, बहूनां प्रायः सङ्ख्येययोजनविस्तृतत्वाच्च, तेभ्यो दक्षिणदिग्विभागभाविनोऽसङ्ख्येयगुणाः, पुष्पावकीर्णनरकावासानां तत्र बाहुल्यात्, तेषां च प्रायोऽसङ्ख्येययोजनविस्तृतत्वात्, कृष्णपाक्षिकाणां तस्यां दिशि प्राचुर्येणोत्पादाच्च, तथाहि—द्विविधा जन्तवः, शुक्लपाक्षिकाः कृष्णपाक्षिकाश्च, तेषां लक्षणमिदं—येषां किञ्चिदूनपुद्गलपरावर्त्तार्धमात्रसंसारस्ते शुक्लपाक्षिकाः, अधिकतरसंसारभाजिनस्तु कृष्णपाक्षिकाः, उक्तं च—"[1]जेसिमवड्ढो पुग्गलपरियट्टो सेसओ य संसारो। ते सुकपक्खिया खलु अहिए पुण कण्हपक्खी उ ॥ १ ॥" अत एव च स्तोकाः शुक्लपाक्षिकाः, अल्पसंसारिणां स्तोकत्वात्, बहवः कृष्णपाक्षिकाः, प्रभूतसंसारिणामतिप्रचुरत्वात्, कृष्णपाक्षिकाश्च प्राचुर्येण दक्षिणस्यां दिशि समुत्पद्यन्ते, न शेषासु दिक्षु, तथास्वाभाव्यात्, तच्च तथास्वाभाव्यं पूर्वाचार्यैरेवं युक्तिभिरुपबृंह्यते, तद्यथा—कृष्णपाक्षिका दीर्घतरसंसारभाजिन उच्यन्ते, दीर्घतरसंसारभाजिनश्च बहुपापोदयाद् भवन्ति, बहुपापोदयाश्च क्रूरकर्म्माणः, क्रूरकर्म्माणश्च प्रायस्तथास्वाभाव्यात् तद्भवसिद्धिका अपि दक्षिणस्यां दिशि समुत्पद्यन्ते, न

१ येषामपार्धः पुद्गलपरावर्त्तः शेषकश्च संसारः। ते शुक्लपाक्षिकाः खलु अधिके पुनः कृष्णपक्षास्तु ॥ १ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

v

प्रत सूत्रांक [५६]

दीप अनुक्रम [२६०]

शेषासु दिक्षु, यत उक्तं–"पायमिह क्रूरकम्मा भवसिद्धियावि दाहिणिल्लेसुं । नेरइयतिरियमणुयासुराइट्ठाणेसु गच्छन्ति ॥ १ ॥" ततो दक्षिणस्यां दिशि बहूनां कृष्णपाक्षिकाणामुत्पादसम्भवात् पूर्वोक्तकारणद्वयाच्च सम्भवन्ति पूर्वोत्तरपश्चिमदिग्विभागभाविभ्यो दाक्षिणात्या असङ्ख्येयगुणाः । यथा च सामान्यतो नैरयिकाणां दिग्विभागेनाल्पबहुत्वमुक्तं, एवं प्रतिपृथिव्यपि वक्तव्यं, युक्तेः सर्वत्रापि समानत्वात् । तदेवं प्रतिपृथिव्यपि दिग्विभागेनाल्पबहुत्वमभिहितं, इदानीं सप्तापि पृथिवीरधिकृत्य दिग्विभागेनाल्पबहुत्वमाह—सप्तमपृथिव्यां पूर्वोत्तरपश्चिमदिग्भाविभ्यो नैरयिकेभ्यो ये सप्तमपृथिव्यामेव दाक्षिणात्यास्तेऽसङ्ख्येयगुणाः, तेभ्यः षष्ठपृथिव्यां तमःप्रभाभिधानायां पूर्वोत्तरपश्चिमदिग्भाविनोऽसङ्ख्येयगुणाः, कथमिति चेद् ?, उच्यते, इह सर्वोत्कृष्टपापकारिणः सञ्ज्ञिपञ्चेन्द्रियतिर्यग्मनुष्याः सप्तमनरकपृथिव्यामुत्पद्यन्ते, किञ्चिद्हीनहीनतरपापकर्मकारिणश्च षष्ठयादिषु पृथिवीषु, सर्वोत्कृष्टपापकर्मकारिणश्च सर्वस्तोकाः बहवश्च यथोत्तरं किञ्चिद्धीनहीनतरादिपापकर्मकारिणः ततो युक्तमसङ्ख्येयगुणत्वं सप्तमपृथिवीदाक्षिणात्यनारकापेक्षया षष्ठपृथिव्यां पूर्वोत्तरपश्चिमनारकाणां, एवमुत्तरोत्तरपृथिवीरप्यधिकृत्य भावयितव्यम्, तेभ्योऽपि तस्यामेव षष्ठपृथिव्यां दक्षिणस्यां दिशि नारका असङ्ख्येयगुणाः, युक्तिरत्र प्रागेवोक्ता, तेभ्योऽपि पञ्चमपृथिव्यां धूमप्रभाभिधानायां पूर्वोत्तरपश्चिमदिग्भाविनोऽसङ्ख्येयगुणाः, तेभ्योऽपि तस्यामेव पञ्चमपृथिव्यां दाक्षिणात्या असङ्ख्ये-

१ प्राय इह क्रूरकर्माणो भवसिद्धिका अपि दाक्षिणात्येषु । नैरयिकतिर्यग्मनुष्यासुरादिस्थानेषु गच्छन्ति ॥ १ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

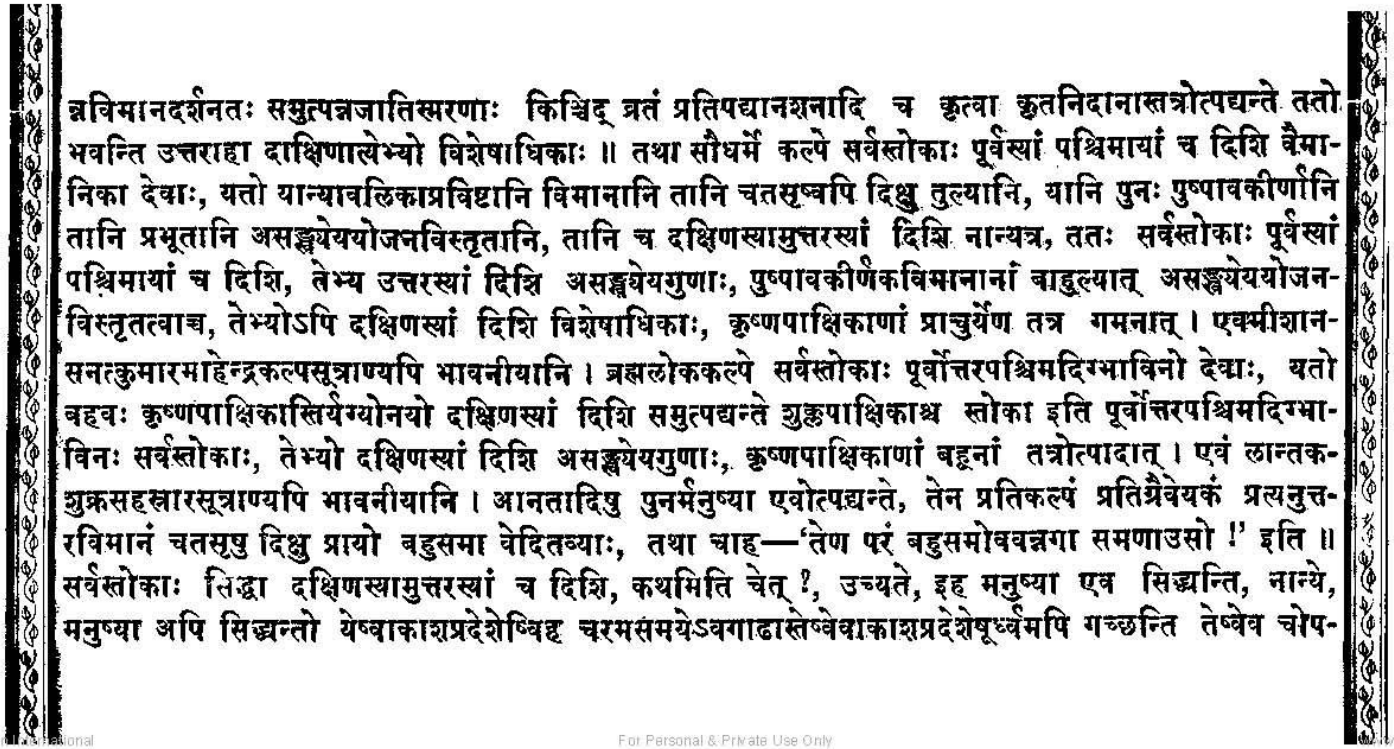
यगुणाः, एवं सर्वास्वपि क्रमेण वाच्यम् ॥ तिर्यक्पञ्चेन्द्रियसूत्रं त्वप्कायसूत्रवद् भावनीयम् ॥ सर्वस्तोका मनुष्या दक्षिणस्यामुत्तरस्यां च, पञ्चानां भरतक्षेत्राणां पञ्चानामैरावतक्षेत्राणामल्पत्वात्, तेभ्यः पूर्वस्यां दिशि सङ्ख्येयगुणाः, क्षेत्रस्य सङ्ख्येयगुणत्वात्, तेभ्योऽपि पश्चिमायां दिशि विशेषाधिकाः, स्वभावत एवाधोलौकिकग्रामेषु मनुष्यबाहुल्यभावात् ॥ 'दिसाणुवाएणं सवत्थोवा भवणवासी' इत्यादि, सर्वस्तोका भवनवासिनो देवाः पूर्वस्यां पश्चिमायां च दिशि, तत्र भवनानामल्पत्वात्, तेभ्य उत्तरदिग्भाविनोऽसङ्ख्येयगुणाः, स्वस्थानतया तत्र भवनानां बाहुल्यात्, तेभ्योऽपि दक्षिणदिग्भाविनोऽसङ्ख्येयगुणाः, तत्र भवनानामतीव बाहुल्यात्, तथाहि–निकाये निकाये चत्वारि चत्वारि भवनशतसहस्राण्यतिरिच्यन्ते, कृष्णपाक्षिकाश्च बहवस्तत्रोत्पद्यन्ते, ततो भवन्त्यसङ्ख्येयगुणाः । व्यन्तरसूत्रे भावना–यत्र सुषिरं तत्र व्यन्तराः प्रचलन्ति, यत्र घनं तत्र न, ततः पूर्वस्यां दिशि घनत्वात् स्तोका व्यन्तराः, तेभ्योऽपरस्यां दिशि विशेषाधिकाः, अधोलौकिकग्रामेषु सुषिरसंभवात्, तेभ्योऽप्युत्तरस्यां दिशि विशेषाधिकाः, स्वस्थानतया नगरावासबाहुल्यात्, तेभ्योऽपि दक्षिणस्यां दिशि विशेषाधिकाः, अतिप्रभूतनगरावासबाहुल्यात् । तथा सर्वस्तोका ज्योतिष्काः पूर्वस्यां पश्चिमायां च दिशि, चन्द्रादित्यद्वीपेषूद्यानकल्पेषु कतिपयानामेव तेषां भावात्, तेभ्योऽपि दक्षिणस्यां दिशि विशेषाधिकाः, विमानबाहुल्यात् कृष्णपाक्षिकाणां दक्षिणदिग्भावित्वाच्च, तेभ्योऽप्युत्तरस्यां दिशि विशेषाधिकाः, यतो मानसे सरसि बहवो ज्योतिष्काः क्रीडास्थानमिति क्रीडनव्यापृता नित्यमासते, मानससरसि च ये मत्स्यादयो जलचरास्ते आस-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [५६]

दीप अनुक्रम [२६०]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्तिः



न्नविमानदर्शनतः समुत्पन्नजातिस्मरणाः किञ्चिद् व्रतं प्रतिपद्यानशनादि च कृत्वा कृतनिदानास्तत्रोत्पद्यन्ते ततो भवन्ति उत्तराहा दाक्षिणात्येभ्यो विशेषाधिकाः ॥ तथा सौधर्मे कल्पे सर्वस्तोकाः पूर्वस्यां पश्चिमायां च दिशि वैमानिका देवाः, यतो यान्यावलिकाप्रविष्टानि विमानानि तानि चतसृष्वपि दिक्षु तुल्यानि, यानि पुनः पुष्पावकीर्णानि तानि प्रभूतानि असङ्ख्येययोजनविस्तृतानि, तानि च दक्षिणस्यामुत्तरस्यां दिशि नान्यत्र, ततः सर्वस्तोकाः पूर्वस्यां पश्चिमायां च दिशि, तेभ्य उत्तरस्यां दिशि असङ्ख्येयगुणाः, पुष्पावकीर्णकविमानानां बाहुल्यात् असङ्ख्येययोजनविस्तृतत्वाच्च, तेभ्योऽपि दक्षिणस्यां दिशि विशेषाधिकाः, कृष्णपाक्षिकाणां प्राचुर्येण तत्र गमनात् । एवमीशानसनत्कुमारमाहेन्द्रकल्पसूत्राण्यपि भावनीयानि । ब्रह्मलोककल्पे सर्वस्तोकाः पूर्वोत्तरपश्चिमदिग्भाविनो देवाः, यतो बहवः कृष्णपाक्षिकास्तिर्यग्योनयो दक्षिणस्यां दिशि समुत्पद्यन्ते शुक्लपाक्षिकाश्च स्तोका इति पूर्वोत्तरपश्चिमदिग्भाविनः सर्वस्तोकाः, तेभ्यो दक्षिणस्यां दिशि असङ्ख्येयगुणाः, कृष्णपाक्षिकाणां बहूनां तत्रोत्पादात् । एवं लान्तकशुक्रसहस्रारसूत्राण्यपि भावनीयानि । आनतादिषु पुनर्मनुष्या एवोत्पद्यन्ते, तेन प्रतिकल्पं प्रतिग्रैवेयकं प्रत्यनुत्तरविमानं चतसृषु दिक्षु प्रायो बहुसमा वेदितव्याः, तथा चाह—'तेण परं बहुसमोववन्नगा समणाउसो !' इति ॥ सर्वस्तोकाः सिद्धा दक्षिणस्यामुत्तरस्यां च दिशि, कथमिति चेत् ?, उच्यते, इह मनुष्या एव सिद्ध्यन्ति, नान्ये, मनुष्या अपि सिद्ध्यन्तो येष्वाकाशप्रदेशेष्विह चरमसमयेऽवगाढास्तेष्वेवाकाशप्रदेशेषूर्ध्वमपि गच्छन्ति तेष्वेव चोप-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

र्यवतिष्ठन्ते न मनागपि वक्रं गच्छन्ति, सिद्धयन्ति च तत्र दक्षिणस्यां दिशि पञ्चसु भरतेषु उत्तरस्यां दिशि पञ्चस्वैरावतेषु मनुष्या अल्पाः, क्षेत्रस्याल्पत्वात् सुषमसुषमादौ च सिद्धभावादिति तत्क्षेत्रसिद्धाः सर्वस्तोकाः, तेभ्यः पूर्वस्यां दिशि सङ्ख्येयगुणाः, पूर्वविदेहाना भरतैरावतक्षेत्रेभ्यः सङ्ख्येयगुणतया तद्गतमनुष्याणामपि सङ्ख्येयगुणत्वात् तेषां च सर्वकालं सिद्धिभावात्, तेभ्यः पश्चिमायां दिशि विशेषाधिकाः, अधोलौकिकग्रामेषु मनुष्यबाहुल्यात्। गतं दिग्द्वारं ॥ इदानीं गतिद्वारम्, तत्रेदमादिसूत्रम्—

एएसि णं भंते! नेरइयाणं तिरिक्खजोणियाणं मणुस्साणं देवाणं सिद्धाण य पंचगति०समासेणं कतरे कतरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा?, गोयमा सव्वत्थोवा मणुस्सा नेरइया असंखेज्जगुणा देवा असंखेज्जगुणा सिद्धा अणंतगुणा तिरिक्खजोणिया अणंतगुणा ॥ एएसि णं भंते! नेरइयाणं तिरिक्खजोणियाणं तिरिक्खजोणीणीणं मणुस्साणं मणुस्सीणं देवाणं देवीणं सिद्धाण य अट्ठगति०समासेणं कतरे कतरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा?, गोयमा! सव्वत्थोवाओ मणुस्सीओ, मणुस्सा असंखेज्जगुणा, नेरइया असंखेज्जगुणा, तिरिक्खजोणिणीओ असंखेज्जगुणाओ, देवा असंखेज्जगुणा, देवीओ संखेज्जगुणाओ, सिद्धा अणंतगुणा, तिरिक्खजोणिया अणंतगुणा ॥ दारं २ ॥ (सू० ५७)

सर्वस्तोका मनुष्याः, षण्णवतिच्छेदनकच्छेद्यराशिप्रमाणत्वात्, स च षण्णवतिच्छेदनकदायी राशिरग्रे दर्शयिष्यते, तेभ्यो नैरयिका असङ्ख्येयगुणाः, अङ्गुलमात्रक्षेत्रप्रदेशराशेः सम्बन्धिनि प्रथमवर्गमूले द्वितीयवर्गमूलेन गुणिते यावान्

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तृतीय-पदे (०२) "गति" द्वारम् आरब्ध:

प्रत सूत्रांक [५७]

दीप अनुक्रम [२६१]

प्रदेशराशिर्भवति तावत्प्रमाणासु घनीकृतस्य लोकस्यैकप्रादेशिकीषु श्रेणिषु यावन्तो नभःप्रदेशास्तावत्प्रमाणत्वात्, तेभ्यो देवा असङ्ख्येयगुणाः, व्यन्तराणां ज्योतिष्काणां च प्रत्येकं प्रतरासङ्ख्येयभागवर्तिश्रेणिगताकाशप्रदेशराशिप्रमाणत्वात्, तेभ्यः सिद्धा अनन्तगुणाः, अभव्येभ्योऽनन्तगुणत्वात्, तेभ्यस्तिर्यग्योनिका अनन्तगुणाः, वनस्पतिकायिकानां सिद्धेभ्योऽप्यनन्तगुणत्वात्। तदेवं नैरयिकतिर्यग्योनिकमनुष्यदेवसिद्धरूपाणां पञ्चानामल्पबहुत्वमुक्तम्, इदानीं नैरयिकतिर्यग्योनिकतैर्यग्योनिकीमनुष्यमानुषीदेवदेवीसिद्धलक्षणानामष्टानामल्पबहुत्वमभिधित्सुरिदमाह–सर्वस्तोका मानुष्यो–मनुष्यस्त्रियः, सङ्ख्येयकोटीकोटीप्रमाणत्वात्, ताभ्यो मनुष्या असङ्ख्येयगुणाः, इह मनुष्या इति संमूर्च्छनजा अपि गृह्यन्ते, वेदस्याविवक्षणात्, ते च संमूर्च्छनजा वान्तादिषु नगरनिर्द्धमनान्तेषु जायमाना असङ्ख्येयाः प्राप्यन्ते, तेभ्यो नैरयिका असङ्ख्येयगुणाः, मनुष्या हि उत्कृष्टपदेऽपि श्रेण्यसङ्ख्येयभागगतप्रदेशराशिप्रमाणा लभ्यन्ते नैरयिकास्त्वङ्गुलमात्रक्षेत्रप्रदेशराशिसत्कतृतीयवर्गमूलगुणितप्रथमवर्गमूलप्रमाणश्रेणिगताकाशप्रदेशराशिप्रमाणाः ततो भवन्त्यसङ्ख्येयगुणाः, तेभ्यस्तिर्यग्योनिकाः स्त्रियोऽसङ्ख्येयगुणाः, प्रतरासङ्ख्येयभागवर्त्यसङ्ख्येयश्रेणिनभःप्रदेशराशिप्रमाणत्वात्, ताभ्योऽपि देवा असङ्ख्येयगुणाः, असङ्ख्येयगुणप्रतरासङ्ख्येयभागवर्त्यसङ्ख्येयश्रेणिगतप्रदेशराशिमानत्वात्, तेभ्योऽपि देव्यः सङ्ख्येयगुणाः, द्वात्रिंशद्गुणत्वात्, ताभ्योऽपि सिद्धा अनन्तगुणाः, तेभ्योऽपि तिर्यग्योनिका अनन्तगुणाः, अत्र युक्तिः प्रागेवोक्ता ॥ गतं गतिद्वारम् ॥ इदानीं इन्द्रियद्वारमधिकृत्याह—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [५८]

दीप अनुक्रम [२६२]

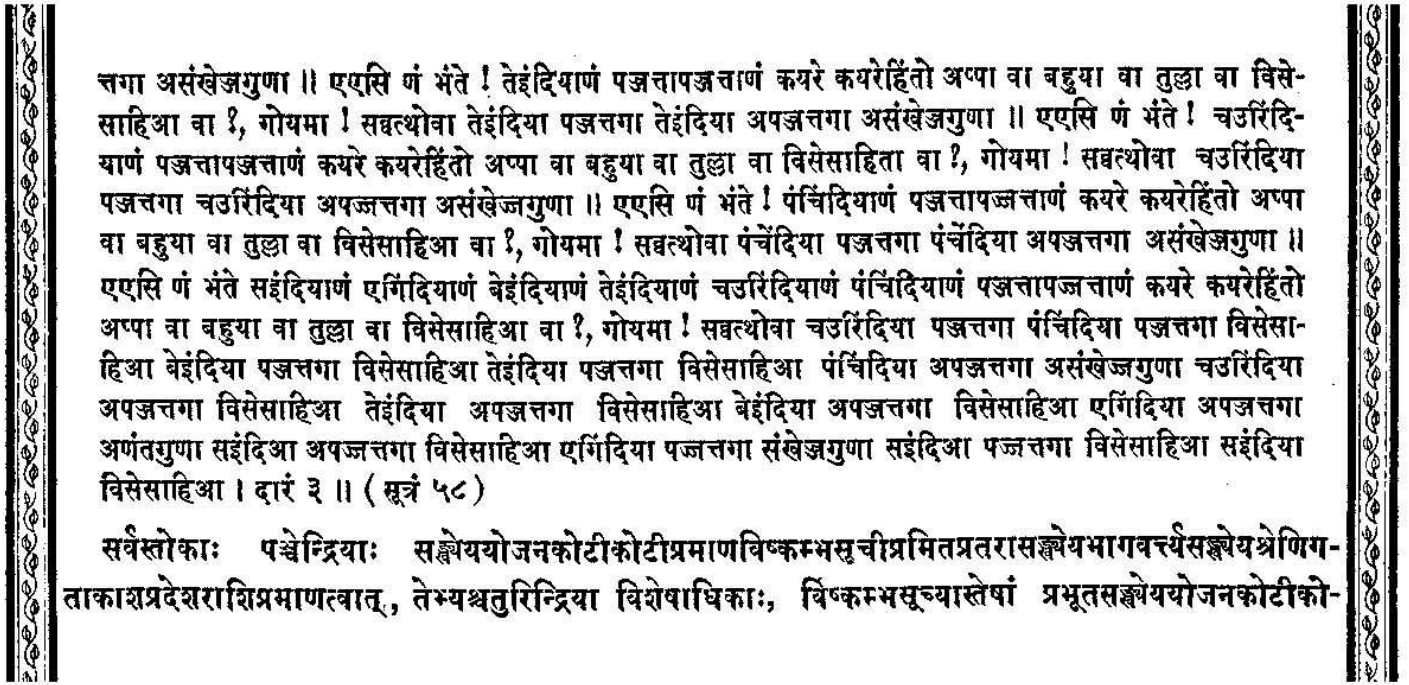
एएसि णं भंते ! सइंदियाणं एगिंदियाणं बेइंदियाणं तेइंदियाणं चउरिंदियाणं पंचिंदियाणं अणिंदियाणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा पंचिंदिया चउरिंदिया विसेसाहिया तेइंदिया विसेसाहिया बेइंदिया विसेसाहिया अणिंदिया अणंतगुणा एगिंदिया अणंतगुणा सइंदिया विसेसाहिया ॥ एएसि णं भंते ! सइंदियाणं एगिंदियाणं बेइंदियाणं तेइंदियाणं चउरिंदियाणं पंचिंदियाणं अपज्जत्तगाणं कतरे कतरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा पंचिंदिया अपज्जत्तगा चउरिंदिया अपज्जत्तगा विसेसाहिया तेइंदिया अपज्जत्तगा विसेसाहिया बेइंदिया अपज्जत्तगा विसेसाहिया एगिंदिया अपज्जत्तगा अणंतगुणा सइंदिया अपज्जत्तगा विसेसाहिया ॥ एएसि णं भंते ! सइंदियाणं एगिंदियाणं बेइंदियाणं तेइंदियाणं चउरिंदियाणं पंचिंदियाणं पज्जत्ताणं कतरे कतरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा चउरिंदिया पज्जत्तगा पंचिंदिया पज्जत्तगा विसेसाहिया बेइंदिया पज्जत्तया विसेसाहिया तेइंदिया पज्जत्तगा विसेसाहिया एगिंदिया पज्जत्तगा अनंतगुणा सइंदिया पज्जत्तगा विसेसाहिया ॥ एएसि णं भंते ! सइंदियाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा सइंदिया अपज्जत्तगा सइंदिया पज्जत्तगा संखेज्जगुणा ॥ एएसिणं भंते ! एगिंदियाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिआ वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा एगिंदिया अपज्जत्तगा एगिंदिया पज्जत्तगा संखेज्जगुणा ॥ एएसि णं भंते ! बेइंदियाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिआ वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा बेइंदिया पज्जत्तगा बेइंदिया अपज्ज-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तृतीय-पदे (०३) "इन्द्रिय" द्वारम् आरब्ध:

प्रत सूत्रांक [५८]

दीप अनुक्रम [२६२]



त्तगा असंखेज्जगुणा ॥ एएसि णं भंते ! तेइंदियाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिआ वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा तेइंदिया पज्जत्तगा तेइंदिया अपज्जत्तगा असंखेज्जगुणा ॥ एएसि णं भंते ! चउरिंदियाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिता वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा चउरिंदिया पज्जत्तगा चउरिंदिया अपज्जत्तगा असंखेज्जगुणा ॥ एएसि णं भंते ! पंचिंदियाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिआ वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा पंचेंदिया पज्जत्तगा पंचेंदिया अपज्जत्तगा असंखेज्जगुणा ॥ एएसि णं भंते सइंदियाणं एगिंदियाणं बेइंदियाणं तेइंदियाणं चउरिंदियाणं पंचिंदियाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिआ वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा चउरिंदिया पज्जत्तगा पंचिंदिया पज्जत्तगा विसेसाहिआ बेइंदिया पज्जत्तगा विसेसाहिआ तेइंदिया पज्जत्तगा विसेसाहिआ पंचिंदिया अपज्जत्तगा असंखेज्जगुणा चउरिंदिया अपज्जत्तगा विसेसाहिआ तेइंदिया अपज्जत्तगा विसेसाहिआ बेइंदिया अपज्जत्तगा विसेसाहिआ एगिंदिया अपज्जत्तगा अणंतगुणा सइंदिआ अपज्जत्तगा विसेसाहिआ एगिंदिया पज्जत्तगा संखेज्जगुणा सइंदिआ पज्जत्तगा विसेसाहिआ सइंदिया विसेसाहिआ । दारं ३ ॥ (सूत्रं ५८)

सर्वस्तोकाः पञ्चेन्द्रियाः सङ्ख्येययोजनकोटीकोटीप्रमाणविष्कम्भसूचीप्रमितप्रतरासङ्ख्येयभागवर्त्यसङ्ख्येयश्रेणिगताकाशप्रदेशराशिप्रमाणत्वात्, तेभ्यश्चतुरिन्द्रिया विशेषाधिकाः, विष्कम्भसूच्यास्तेषां प्रभूतसङ्ख्येययोजनकोटीको-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

टीप्रमाणत्वात्, तेभ्योऽपि त्रीन्द्रिया विशेषाधिकाः, तेषा विष्कम्भसूच्या प्रभूततरसङ्ख्येययोजनकोटीकोटीप्रमाणत्वात्, तेभ्योऽपि द्वीन्द्रिया विशेषाधिकाः, तेषां विष्कम्भसूच्या प्रभूततमसङ्ख्येययोजनकोटीकोटीप्रमाणत्वात्, तेभ्योऽपि अनिन्द्रिया अनन्तगुणाः, सिद्धानामनन्तत्वात्, तेभ्योऽपि एकेन्द्रिया अनन्तगुणाः, वनस्पतिकायिकानां सिद्धेभ्योऽप्यनन्तगुणत्वात्, तेभ्योऽपि सेन्द्रिया विशेषाधिकाः, द्वीन्द्रियादीनामपि तत्र प्रक्षेपात्। तदेवमुक्तमेकमौधिकानामल्पबहुत्वम्, इदानीं तेषामेवापर्याप्तानां द्वितीयमल्पबहुत्वमाह—सर्वस्तोकाः पञ्चेन्द्रिया अपर्याप्ताः, एकस्मिन् प्रतरे यावन्त्यङ्गुलासङ्ख्येयभागमात्राणि खण्डानि तावत्प्रमाणत्वात् तेषां, तेभ्यश्चतुरिन्द्रिया अपर्याप्ता विशेषाधिकाः, प्रभूताङ्गुलासङ्ख्येयभागखण्डप्रमाणत्वात्, तेभ्यस्त्रीन्द्रिया अपर्याप्ता विशेषाधिकाः, प्रभूततरप्रतराङ्गुलासङ्ख्येयभागखण्डमानत्वात्, तेभ्योऽपि द्वीन्द्रिया अपर्याप्ता विशेषाधिकाः, प्रभूततमप्रतराङ्गुलासङ्ख्येयभागखण्डप्रमाणत्वात्, तेभ्य एकेन्द्रिया अपर्याप्ता अनन्तगुणाः, वनस्पतिकायिकानामपर्याप्तानामनन्ततया सदा प्राप्यमाणत्वात्, तेभ्योऽपि सेन्द्रिया अपर्याप्ता विशेषाधिकाः, द्वीन्द्रियाद्यपर्याप्तानामपि तत्र प्रक्षेपात्। गतं द्वितीयमल्पबहुत्वम्, अधुना एतेषामेव पर्याप्तानामल्पबहुत्वमाह—सर्वस्तोकाश्चतुरिन्द्रियाः पर्याप्ताः, यतोऽल्पायुषश्चतुरिन्द्रियास्ततः प्रभूतकालमवस्थानाभावात् पृच्छासमये स्तोका अवाप्यन्ते, ते च स्तोका अपि प्रतरे यावन्त्यङ्गुलसङ्ख्येयभागमात्राणि खण्डानि तावत्प्रमाणा वेदितव्याः, तेभ्यः पञ्चेन्द्रियाः पर्याप्ता विशेषाधिकाः, प्रभूतप्रतराङ्गुलसङ्ख्येयभा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गखण्डमानत्वात्, तेभ्योऽपि द्वीन्द्रियाः पर्याप्ता विशेषाधिकाः, प्रभूततरप्रतराङ्गुलसङ्ख्येयभागखण्डमानत्वात्, तेभ्योऽपि त्रीन्द्रियाः पर्याप्ता विशेषाधिकाः, स्वभावत एव तेषां प्रभूततमप्रतराङ्गुलसङ्ख्येयभागखण्डप्रमाणत्वात्, तेभ्य एकेन्द्रियाः पर्याप्ता अनन्तगुणाः, वनस्पतिकायिकानां पर्याप्तानामनन्तमानत्वात्, तेभ्यः सेन्द्रियाः पर्याप्ता विशेषाधिकाः, द्वीन्द्रियादीनामपि पर्याप्तानां तत्र प्रक्षेपात्। (गतं) तृतीयमल्पबहुत्वं, सम्प्रत्येतेषामेव सेन्द्रियादीनां प्रत्येकं पर्याप्तापर्याप्तगतान्यल्पबहुत्वान्याह—सर्वस्तोकाः सेन्द्रिया अपर्याप्तकाः, इह सेन्द्रियेषु मध्ये एकेन्द्रिया एव बहवः तत्रापि च सूक्ष्माः तेषां सर्वलोकापन्नत्वात् सूक्ष्माश्चापर्याप्ताः सर्वस्तोकाः पर्याप्ताः सङ्ख्येयगुणा इति सेन्द्रिया अपर्याप्ताः सर्वस्तोकाः, पर्याप्ताः सङ्ख्येयगुणाः, एवमेकेन्द्रिया अपि अपर्याप्ताः सर्वस्तोकाः, पर्याप्ताः सङ्ख्येयगुणा भावनीयाः। तथा सर्वस्तोका द्वीन्द्रियाः पर्याप्तकाः, यावन्ति प्रतरेऽङ्गुलस्य सङ्ख्येयभागमात्राणि खण्डानि तावत्प्रमाणत्वात् तेषां, तेभ्योऽपर्याप्ताः असङ्ख्येयगुणाः, प्रतरगताङ्गुलासङ्ख्येयभागखण्डप्रमाणत्वात्, एवं त्रिचतुरिन्द्रियपञ्चेन्द्रियाल्पबहुत्वान्यपि वक्तव्यानि। गतं षडल्पबहुत्वात्मकं चतुर्थमल्पबहुत्वम्। सम्प्रत्येतेषां सेन्द्रियादीनां समुदितानां पर्याप्तापर्याप्तानामल्पबहुत्वमाह—'एएसि णं भंते' इत्यादि। इदं प्रागुक्तद्वितीयतृतीयाल्पबहुत्वभावनानुसारेण स्वयं भावनीयं, तत्त्वतो भावितत्वात्। गतमिन्द्रियद्वारम्, इदानीं कायद्वारमधिकृत्याह—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति:

एएसि णं भंते ! सकाइयाणं पुढविकाइयाणं आउकाइयाणं तेउकाइयाणं वाउकाइयाणं वणस्सइकाइयाणं तसकाइयाणं अकाइयाणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिआ वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा तसकाइया तेउकाइया असंखेज्जगुणा पुढविकाइया विसेसाहिया आउकाइया विसेसाहिया वाउकाइया विसेसाहिया अकाइया अणंतगुणा वणस्सइकाइया अणंतगुणा सकाइया विसेसाहिया ॥ एएसि णं भंते ! सकाइयाणं पुढविकाइयाणं आउकाइयाणं तेउकाइयाणं वाउकाइयाणं वणस्सइकाइयाणं तसकाइयाणं अपज्जत्तगाणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा तसकाइया अपज्जत्तगा तेउकाइया अपज्जत्तगा असंखेज्जगुणा पुढविकाइया अपज्जत्तगा विसेसाहिया आउकाइया अपज्जत्तगा विसेसाहिया वाउकाइया अपज्जत्तगा विसेसाहिया वणस्सइकाइया अपज्जत्तगा अणंतगुणा सकाइया अपज्जत्तगा विसेसाहिया ॥ एएसि णं भंते ! सकाइयाणं पुढविकाइयाणं आउकाइयाणं तेउकाइयाणं वाउकाइयाणं वणस्सइकाइयाणं तसकाइयाणं पज्जत्तगाणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा तसकाइया पज्जत्तगा तेउकाइया पज्जत्तगा असंखेज्जगुणा पुढविकाइया पज्जत्तगा विसेसाहिया आउकाइया पज्जत्तगा विसेसाहिया वाउकाइया पज्जत्तगा विसेसाहिया वणस्सइकाइया पज्जत्तगा अणंतगुणा सकाइया पज्जत्तगा विसेसाहिया ॥ एएसि णं भंते ! सकाइयाणं पज्जत्तापज्जत्तगाणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा सकाइया अपज्जत्तगा सकाइया पज्जत्तगा संखेज्जगुणा ॥ एएसि णं भंते ! पुढविकाइयाणं पज्जत्तापज्जत्तगाणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा पुढविका-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तृतीय-पदे (०४) "काय" द्वारम् आरब्ध:

प्रत सूत्रांक [५९]

दीप अनुक्रम [२६३]

इया अपज्जत्तगा पुढवीकाइया पज्जत्तगा संखेज्जगुणा ॥ एएसि णं भंते ! आउकाइयाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा आउकाइया अपज्जत्तगा आउकाइया पज्जत्तगा संखेज्जगुणा ॥ एएसिणं भंते ! तेउकाइयाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा तेउकाइया अपज्जत्तगा तेउकाइया पज्जत्तगा संखेज्जगुणा । एएसि णं भंते ! वाउकाइयाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा वाउकाइया अपज्जत्तगा वाउकाइया पज्जत्तगा संखेज्जगुणा ॥ एएसि णं भंते ! वणस्सइकाइयाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा वणस्सइकाइया अपज्जत्तगा वणस्सइकाइया पज्जत्तगा संखेज्जगुणा ॥ एएसि णं भंते ! तसकाइयाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, सव्वत्थोवा तसकाइया पज्जत्तगा अपज्जत्तगा असंखेज्जगुणा ॥ एएसि णं भंते ! सकाइयाणं पुढविकाइआणं आउकाइआणं तेउकाइआणं वाउकाइआणं वणस्सइकाइआणं तसकाइयाण य पज्जत्तापज्जत्ताणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिआ वा ?, गोयमा! सव्वत्थोवा तसकाइआ पज्जत्तगा तसकाइआ अपज्जत्तगा संखेज्जगुणा तेउकाइआ अपज्जत्तगा असंखेज्जगुणा पुढविकाइआ अपज्जत्ता विसेसाहिया आउकाइआ अपज्जत्तगा विसेसाहिआ वाउकाइआ अपज्जत्तगा विसेसाहिआ तेउकाइआ पज्जत्तगा संखेज्जगुणा पुढविकाइआ पज्जत्ता विसेसाहिआ आउकाइआ पज्जत्ता विसेसाहिया वाउकाइआ पज्जत्ता विसेसाहिआ वणस्सइकाइआ अपज्जत्ता अणंतगुणा सका-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इआ अपज्जत्तगा विसेसाहिया वणस्सइकाइआ पज्जत्तगा संखेज्जगुणा सकाइया पज्जत्तगा विसेसाहिआ सकाइया विसेसाहिया ॥ (सू० ५९)

सर्वस्तोकास्त्रसकायिकाः, द्वीन्द्रियादीनामेव त्रसकायिकत्वात्, तेषा च शेषकायापेक्षया अल्पत्वात्, तेभ्यस्तेजःकायिका असङ्ख्येयगुणाः, असङ्ख्येयलोकाकाशप्रदेशप्रमाणत्वात्, तेभ्यः पृथिवीकायिका विशेषाधिकाः, प्रभूतासङ्ख्येयलोकाकाशप्रदेशप्रमाणत्वात्, तेभ्योऽप्कायिका विशेषाधिकाः, प्रभूततरासङ्ख्येयलोकाकाशप्रदेशप्रमाणत्वात्, तेभ्यो वायुकायिका विशेषाधिकाः, प्रभूततमासङ्ख्येयलोकाकाशप्रदेशमानत्वात्, तेभ्योऽकायिका अनन्तगुणाः, सिद्धानामनन्तत्वात्, तेभ्यो वनस्पतिकायिका अनन्तगुणाः, अनन्तलोकाकाशप्रदेशराशिप्रमाणत्वात्, तेभ्यः सकायिका विशेषाधिकाः, पृथिवीकायिकादीनामपि तत्र प्रक्षेपात्। उक्तमौधिकानामल्पबहुत्वम्, इदानीमेतेषामेवापर्याप्तानां द्वितीयमल्पबहुत्वमाह—'एएसि णं भंते ! सकाइयाणं' इत्यादि सुगमं ॥ सम्प्रत्येतेषामेव पर्याप्तानां तृतीयमल्पबहुत्वमाह—'एएसि णं भंते ! सकाइयाणं' इत्यादि सुगमं, साम्प्रतमेतेषामेव सकायिकादीनां प्रत्येकं पर्याप्तापर्याप्तगतमल्पबहुत्वमाह—'एएसि णं भंते ! सकाइयाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं' इत्यादि सुगमम् ॥ सम्प्रत्येतेषामेव सकायिकादीनां समुदितानां पर्याप्तापर्याप्तानामल्पबहुत्वमाह—'एएसि णं भंते ! सकाइयाणं' इत्यादि, सर्वस्तोकास्त्रसकायिकाः पर्याप्तकाः, तेभ्यस्त्रसकायिका एवापर्याप्तका असङ्ख्येयगुणाः, द्वीन्द्रियादीनामपर्याप्तानां पर्याप्तद्वीन्द्रिया-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [५९]

दीप अनुक्रम [२६३]

दिभ्योऽसङ्ख्येयगुणत्वात्, ततः तेजःकायिका अपर्याप्ता असङ्ख्येयगुणाः, असङ्ख्येयलोकाकाशप्रदेशप्रमाणत्वात्, ततः पृथिव्यम्बुवायवोऽपर्याप्तकाः क्रमेण विशेषाधिकाः, ततः तेजःकायिकाः पर्याप्ताः सङ्ख्येयगुणाः, सूक्ष्मेष्वपर्याप्तेभ्यः पर्याप्तानां सङ्ख्येयगुणत्वात्, ततः पृथिव्यब्वायवः पर्याप्ताः क्रमेण विशेषाधिकाः, ततो वनस्पतयोऽपर्याप्ता अनन्तगुणाः, पर्याप्ताः सङ्ख्येयगुणाः ॥ तदेवं कायद्वारे सामान्येन पञ्च सूत्राणि प्रतिपादितानि, सम्प्रत्यस्मिन्नेव द्वारे सूक्ष्मबादरादिभेदेन पञ्चदश सूत्राण्याह—

एएसि णं भंते ! सुहुमाणं सुहुमपुढविकाइयाणं सुहुमआउकाइआणं सुहुमतेउकाइआणं सुहुमवाउकाइआणं सुहुमवणस्सइकाइयाणं सुहुमनिओयाणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिआ वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा सुहुमतेउकाइया सुहुमपुढविकाइआ विसेसाहिया सुहुमआउकाइआ विसेसाहिया सुहुमवाउकाइआ विसेसाहिआ सुहुमनिगोदा असंखेज्जगुणा सुहुमवणस्सइकाइया अणंतगुणा सुहुमा विसेसाहिया ॥ एएसि णं भंते ! सुहुमअपज्जत्तगाणं सुहुमपुढविअपज्जत्तगाणं सुहुमआउअपज्जत्तयाणं सुहुमतेउअपज्जत्तयाणं सुहुमवाउअपज्जत्तयाणं सुहुमवण०अपज्जत्तयाणं सुहुमनिगोदाअपज्जत्ताण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा ४ ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा सुहुमतेउअपज्जत्तया सुहुमपुढवि० अप० विसे० सुहुमआउ० अप० विसे० सुहुमवाउ०अप० विसे० सुहुमनिगोदा अप० असंखे० सुहुमवण० अपज्जत्तया अणंतगुणा सुहुमा अपज्जत्तया विसेसा० । एएसि णं भंते ! सुहुमपज्जत्त० सुहुमपुढविका० पज्जत्त० सुहुमआउका० पज्जत्त०

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सुहुमतेउका० पज्जत्त० सुहुमवाउका० पज्जत्तगाणं सुहुमवणस्सइका० पज्जत्त० सुहुमनिगोदपज्जत्तगाण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा ४ ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा सुहुमतेउका० पज्जत्तगा सुहुमपुढविका० पज्जत्तगा विसेसा० सुहुमआउका० पज्जत्तगा विसेसा० सुहुमवाउका० पज्जत्त० विसेसा० सुहुमनिगोया पज्जत्तगा असंखेज्जगुणा सुहुमवण० पज्जत्त० अणंत० सुहुमपज्जत्त० विसेसा० । एएसि णं भंते ! सुहुमाणं पज्जत्तापज्जत्तगाणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा ४ ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा सुहुमअपज्जत्तगा सुहुमपज्जत्तगा संखे० । एएसि णं भंते ! सुहुमपुढवि० पज्जत्तापज्जत्ताणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा ४ ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा सुहुमपुढविकाइया अपज्जत्तया सुहुमपुढविकाइया पज्जत्तया संखेज्जगुणा। एएसि णं भंते ! सुहुमआउ० पज्जत्तापज्जत्तगाणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा ४ ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा सुहुमआउका० अपज्जत्त० सुहुमाआउका० पज्जत्तगा संखेज्जगुणा । एएसि णं भंते ! सुहुमतेउ० पज्जत्तापज्जत्ताणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा ४ ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा सुहुमतेउका० अपज्जत्त० सुहुमतेउका० पज्जत्ता संखे० । एएसि णं भंते ! सुहुमवाउका० पज्जत्तापज्जत्ताणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा ४ ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा सुहुमवाउका० अपज्जत्त० वाउका० पज्जत्त० संखेज्ज० । एएसि णं भंते ! सुहुमवण० पज्जत्तापज्जत्ताणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा ४ ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा सुहुमवण० अपज्ज० सुहुमवणस्सइपज्जत्त० संखे० । एएसि णं भंते ! सुहुमनिगोयाणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा ४ ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा सुहुमनिगोया अपज्जत्त० सुहुमनिगोया पज्जत्त० संखेज्जगुणा । एएसि णं भंते ! सुहुमाणं सुहुमपुढ० सुहुमआउ० सुहुमतेउ० सुहुमवाउ० सुहुमवण० सुहुमनिगोदाण य पज्जत्तापज्जत्ताणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा ४ ?, गोयमा !

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [६०]

दीप अनुक्रम [२६४]

सव्वत्थोवा सुहुमतेउकाइया अपज्जत्तया सुहुमपुढवीअपज्ज० विसेसा० सुहुमआउ० अपज्ज० विसेसा० सुहुमवाउ० अपज्ज० विसेसा० सुहुमतेउ० अपज्ज० संखेज्जगुणा सुहुमपुढवीपज्जत्त० विसेसा० सुहुमआउ० पज्जत्त० विसेसा० सुहुमवाउ० पज्जत्त० विसेसा० सुहुमनिगोदा अपज्ज० असंखे० सुहुमनिगोदा पज्जत्त० संखे० सुहुमवण० अपज्ज० अणंतगुणा सुहुम-अपज्ज० विसेसा० सुहुमवण० पज्जत्त० संखेज्ज० सुहुमपज्जत्त० विसेसा० सुहुमा विसेसाहिया । (सूत्रम् ६०)

सर्वस्तोकाः सूक्ष्माः तेजःकायिकाः, असङ्ख्येयलोकाकाशप्रदेशप्रमाणत्वात्, तेभ्यः सूक्ष्मपृथिवीकायिका विशेषाधिकाः, प्रभूतासङ्ख्येयलोकाकाशप्रदेशप्रमाणत्वात्, तेभ्यः सूक्ष्माप्कायिका विशेषाधिकाः, प्रभूततरासङ्ख्येयलोकाकाशप्रदेशमानत्वात्, तेभ्यः सूक्ष्मवायुकायिका विशेषाधिकाः, प्रभूततमासङ्ख्येयलोकाकाशप्रदेशराशिमानत्वात्, तेभ्यः सूक्ष्मनिगोदा असङ्ख्येयगुणाः, [ग्रन्थाग्रं० ३०००] सूक्ष्मग्रहणं बादरव्यवच्छेदार्थं, द्विविधा हि निगोदाः–सूक्ष्मा बादराश्च, तत्र बादराः सूरणकन्दादिषु, सूक्ष्माः सर्वलोकापन्नाः, ते च प्रतिगोलकमसङ्ख्येया इति सूक्ष्मवायुकायिकेभ्योऽसङ्ख्येयगुणाः, तेभ्यः सूक्ष्मवनस्पतिकायिका अनन्तगुणाः, प्रतिनिगोदमनन्तानां जीवानां भावात्, तेभ्यः सामानिकाः सूक्ष्मजीवा विशेषाधिकाः, सूक्ष्मपृथिवीकायिकादीनामपि तत्र प्रक्षेपात् । गतमौधिकानामिदमल्पबहुत्वम्, इदानीमेतेषामेवापर्याप्तानामाह—'एएसि णं भंते ! सुहुमअपज्जत्तगाणं' इत्यादि, सर्वं प्राग्वद्भावनीयम् । सम्प्रत्येतेषामेव पर्याप्तानां तृतीयमल्पबहुत्वमाह–'एएसि णं भंते! सुहुमपज्जत्तगाणं' इत्यादि, इदमपि प्राग्युक्तक-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [६०]

दीप अनुक्रम [२६४]

मेणैव भावनीयं। अधुना अमीषामेव सूक्ष्मादीनां प्रत्येकं पर्याप्तापर्याप्तगतान्यल्पबहुत्वान्याह—'एएसि णं भंते! सुहुमाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं' इत्यादि, इह बादरेषु पर्याप्तेभ्योऽपर्याप्ता असङ्ख्येयगुणाः, एकैकपर्याप्तनिश्रयाऽसङ्ख्येयानामपर्याप्तानामुत्पादात्, तथा चोक्तं प्राक् प्रथमे प्रज्ञापनाख्ये पदे—"पज्जत्तगनिस्साए अपज्जत्तगा वक्कमंति, जत्थ एगो तत्थ नियमा असंखेज्जा" इति, सूक्ष्मेषु पुनर्नायं क्रमः, पर्याप्ताश्चापर्याप्तापेक्षया चिरकालावस्थायिन इति सदैव ते बहवो लभ्यन्ते, तत उक्तं सर्वस्तोकाः सूक्ष्मा अपर्याप्ताः, तेभ्यः सूक्ष्माः पर्याप्तकाः सङ्ख्येयगुणाः, एवं पृथिवीकायिकादिष्वपि प्रत्येकं भावनीयम्। गतं चतुर्थमल्पबहुत्वम्, इदानीं सर्वेषा समुदितानां पर्याप्तापर्याप्तगतं पञ्चममल्पबहुत्वमाह—'एएसि णं भंते! सुहुमाणं सुहुमपुढविकाइयाणं' इत्यादि, सर्वस्तोकाः सूक्ष्मतेजःकायिका अपर्याप्ताः, कारणं प्रागेवोक्तं, तेभ्यः सूक्ष्मपृथिवीकायिका अपर्याप्ता विशेषाधिकाः तेभ्यः सूक्ष्माप्कायिका अपर्याप्ता विशेषाधिकाः तेभ्यः सूक्ष्मवायुकायिका अपर्याप्ता विशेषाधिकाः, अत्रापि कारणं प्रागेवोक्तं, तेभ्यः सूक्ष्मतेजःकायिकाः पर्याप्ताः सङ्ख्येयगुणाः, अपर्याप्तेभ्यो हि पर्याप्ताः सङ्ख्येयगुणा इत्यनन्तरं भावितं, तत्र सर्वस्तोकाः सूक्ष्मतेजःकायिका अपर्याप्ता उक्ताः इतरे च सूक्ष्मापर्याप्तपृथिवीकायिकादयो विशेषाधिकाः, विशेषाधिकत्वं च मनागधिकत्वं न द्विगुणत्वं न त्रिगुणत्वं वा, ततः सूक्ष्मतेजःकायिकेभ्योऽपर्याप्तेभ्यः पर्याप्ताः सूक्ष्मतेजःकायिकाः सङ्ख्येयगुणाः सन्तः सूक्ष्मवायुकायिकापर्याप्तेभ्योऽपि सङ्ख्येयगुणा भवन्ति, तेभ्यः सूक्ष्मपृथिवीकायिकाः पर्याप्ताः विशेषाधिकाः तेभ्यः

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सूक्ष्माप्कायिकाः पर्याप्ता विशेषाधिकाः तेभ्योऽपि सूक्ष्मवायुकायिकाः पर्याप्ता विशेषाधिकाः तेभ्यः सूक्ष्मनिगोदाः अपर्याप्ता असङ्ख्येयगुणाः, तेषामतिप्राचुर्यात्, तेभ्यः सूक्ष्मनिगोदाः पर्याप्ताः सङ्ख्येयगुणाः, सूक्ष्मेष्वपर्याप्तेभ्यः पर्याप्तानामोघतः सङ्ख्येयगुणत्वात्, तेभ्यः सूक्ष्मवनस्पतिकायिका अपर्याप्तका अनन्तगुणाः, प्रतिनिगोदमनन्तानां तेषां भावात्, तेभ्यः सामान्यतः सूक्ष्मा अपर्याप्तका विशेषाधिकाः, सूक्ष्मपृथिवीकायिकादीनामपि तत्र प्रक्षेपात्, तेभ्यः सूक्ष्मवनस्पतिकायिकाः पर्याप्तकाः सङ्ख्येयगुणाः, सूक्ष्मेषु ह्यपर्याप्तेभ्यः पर्याप्तकाः सङ्ख्येयगुणाः, यच्चापान्तराले विशेषाधिकत्वं तदल्पमिति न सङ्ख्येयगुणत्वव्याघातः, तेभ्यः सूक्ष्माः पर्याप्तका विशेषाधिकाः, सूक्ष्मपृथिव्यादीनामपि पर्याप्तानां तत्र प्रक्षेपात्, तेभ्यः सूक्ष्मा विशेषाधिकाः, अपर्याप्तानामपि तत्र प्रक्षेपात्। तदेवमुक्तानि सूक्ष्माश्रितानि पञ्च सूत्राणि, सम्प्रति बादराश्रितानि पञ्चोक्तक्रमेणाभिधित्सुराह—

एएसि णं भंते ! बादराणं बादरपुढविकाइयाणं बादरआउकाइयाणं बादरतेउकाइयाणं बादरवाउकाइयाणं बादरवणस्सइकाइयाणं पत्तेयसरीरबादरवणस्सइकाइयाणं बादरनिगोदाणं बादरतसकाइयाणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा ४ ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा बादरतसकाइया बादरतेउकाइया असंखेज्जगुणा पत्तेयसरीरबादरवणस्सइकाइया असंखेज्जगुणा बादरनिगोदा असंखेज्जगुणा बादरा पुढवी० असंखे० बादरा आउकाइया असं० बादरा वाउकाइया असंखे० बादरा वणस्स० अणंतगुणा बादरा विसेसाहिया। एएसि णं भंते ! बादरपुढविकाइयअपज्जत्तगाणं बादरआउअपज्जत्तगाणं बादरतेउअपज्ज-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

त्तगाणं बादरवाउअपज्जत्तगाणं बादरवणस्सइअपज्जत्तगाणं पत्तेयसरीरबादरवणस्सइअपज्जत्तगाणं बादरनिगोदअपज्जत्तगाणं बादरतसकाइयअपज्जत्तगाण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा बादरतसकाइया अपज्जत्तगा बादरतेउकाइया अपज्जत्तगा असंखेज्जगुणा पत्तेयसरीरबादरवणस्सइकाइया अपज्जत्तगा असंखेज्जगुणा बादरनिगोदा अपज्जत्तगा असंखेज्जगुणा बायरपुढवीकाइया अपज्जत्तगा असंखेज्जगुणा बादरआउकाइया अपज्जत्तगा असंखेज्जगुणा बादरवाउकाइया अपज्जत्तगा असंखेज्जगुणा बादरवणस्सइकाइया अपज्जत्तगा अणंतगुणा बादरअपज्जत्तगा विसेसाहिया । एएसि णं भंते ! बायरपज्जत्तयाणं बादरपुढवीकाइयाणं पज्जत्तयाणं बायरआउकाइयाणं पज्जत्तयाणं बायरतेउकाइयाणं पज्जत्तयाणं बायरवाउकाइयाणं पज्जत्तयाणं पत्तेयसरीरबायरवणस्सइकाइयाणं पज्जत्तयाणं बायरनिगोदपज्जत्तयाणं बायरतसकाइयपज्जत्तगाण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा बायरतेउकाइया पज्जत्तया बायरतसकाइया पज्जत्तया असंखेज्जगुणा पत्तेयसरीरबायरवणस्सइकाइया पज्जत्तया असंखेज्जगुणा बायरनिगोदा पज्जत्तया असंखेज्जगुणा बादरपुढवीकाइया पज्जत्तया असंखेज्जगुणा बायरआउकाइया पज्जत्तया असंखेज्जगुणा बायरवाउकाइया पज्जत्तया असंखेज्जगुणा बायरवणस्सइकाइया पज्जत्तया अणंतगुणा बायरपज्जत्तया विसेसाहिया । एएसि णं भंते ! बायराणं पज्जत्तापज्जत्ताणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा बायरपज्जत्तया बायरअपज्जत्तया असंखेज्जगुणा । एएसि णं भंते ! बायरपुढवीकाइयाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा बायरपुढवीकाइया पज्जत्तया बायर-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [६१]

दीप अनुक्रम [२६५]

पुढविकाइया अपज्जत्तया असंखेज्जगुणा। एएसि णं भंते! बायरआउकाइयाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा?, गोयमा! सव्वत्थोवा बायरआउकाइया पज्जत्तया बायरआउकाइया अपज्जत्तया असंखेज्जगुणा। एएसि णं भंते! बायरतेउकाइयाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा?, गो० सव्वत्थोवा बायरतेउकाइया पज्जत्तया अपज्जत्तया असंखेज्जगुणा। एएसि णं भंते! बायरवाउकाइयाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा?, गोयमा! सव्वत्थोवा बादरवाउकाइया पज्जत्तया बायरवाउकाइया अपज्जत्तया असंखेज्जगुणा। एएसि णं भंते! बायरवणस्सइकाइयाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिआ वा?, गोयमा! सव्वत्थोवा बायरवणस्सइकाइया पज्जत्तया बायरवणस्सइकाइया अपज्जत्तया असंखेज्जगुणा। एएसि णं भंते! पत्तेयसरीरबायरवणस्सइकाइयाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा?, गोयमा! सव्वत्थोवा पत्तेयसरीरबायरवणस्सइकाइया पज्जत्तया पत्तेयसरीरबायरवणस्सइकाइया अपज्जत्तया असंखेज्जगुणा। एएसि णं भंते! बायरनिगोयाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा?, गोयमा! सव्वत्थोवा बायरनिगोया पज्जत्ता बायरनिगोया अपज्जत्ता असंखेज्जगुणा। एएसि णं भंते! बायरतसकाइयाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा?, गोयमा! सव्वत्थोवा बायरतसकाइया पज्जत्ता बायरतसकाइया अपज्जत्ता असंखेज्जगुणा। एएसि णं भंते! बायराणं बायरपुढवीकाइयाणं बायरआउकाइयाणं बायरतेउकाइयाणं बायरवाउकाइयाणं बायरवणस्सइकाइयाणं पत्तेयसरीरबायरवणस्सइकाइयाणं बायरनिगोयाणं बायरतसकाइयाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रज्ञापनायाः मल-य० वृत्तौ. ॥१२७॥

कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा बायरतेउकाइया पज्जत्तया बायरतसकाइया पज्जत्तया असंखेज्जगुणा बायरतसकाइया अपज्जत्तया असंखेज्जगुणा पत्तेयसरीरबायरवणस्सइकाइया पज्जत्तया असंखेज्जगुणा बायरनिगोया पज्जत्तया असंखेज्जगुणा बादरपुढवीकाइया पज्जत्तया असंखेज्जगुणा बायरआउकाइया पज्जत्तया असंखेज्जगुणा बायरवाउकाइया पज्जत्तया असंखेज्जगुणा बायरतेउकाइया अपज्जत्तया असंखेज्जगुणा पत्तेयसरीरबायरवणस्सइकाइया अपज्जत्तया असंखेज्जगुणा बायरनिगोया अपज्जत्तया असंखेज्जगुणा बायरपुढवीकाइया अपज्जत्तया असंखेज्जगुणा बायरआउकाइया अपज्जत्तया असंखेज्जगुणा बायरवाउकाइया अपज्जत्तया असंखेज्जगुणा बायरवणस्सइकाइया पज्जत्तया अणंतगुणा बायरवणस्सइकाइया अपज्जत्तया असंखेज्जगुणा बायरअपज्जत्तया विसेसा० बायरा विसेसा० । (सू०६१)

'एएसि णं भंते ! बायराणं बायरपुढवीकाइयाणं' इत्यादि, सर्वस्तोका बादरत्रसकायिकाः, द्वीन्द्रियादीनामेव बादरत्रसत्वात्, तेषां च शेषकायेभ्योऽल्पत्वात्, तेभ्यो बादरतेजःकायिका असङ्ख्येयगुणाः, असङ्ख्येयलोकाकाशप्रदेशप्रमाणत्वात्, तेभ्योऽपि प्रत्येकशरीरबादरवनस्पतिकायिका असङ्ख्येयगुणाः, स्थानस्यासङ्ख्येयगुणत्वात्, बादरतेजःकायिका हि मनुष्यक्षेत्रे एव भवन्ति, तथा चोक्तं द्वितीये स्थानाख्ये पदे—"कहि णं भंते ! बादरतेउकाइयाणं पज्जत्तगाणं ठाणा पन्नत्ता ?, गोयमा ! सट्ठाणेणं अंतो मणुस्सखित्ते अड्ढाइज्जेसु दीवसमुद्देसु निव्वाघाएणं पन्नरससु कम्मभूमीसु वाघाएणं पंचसु महाविदेहेसु, एत्थ णं बायरतेउकाइयाणं पज्जत्तगाणं ठाणा पन्नत्ता" तथा "जत्थेव बायर-

३ अल्प-बहुत्वपदे बादराणा मल्पब० सू. ६१

॥१२७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तेउकाइयाणं पज्जत्तगाणं ठाणा तत्थेव बायरतेउकाइयाणं अपज्जत्तगाणं ठाणा पन्नत्ता" इति, बादरवनस्पतिकायिकास्तु त्रिष्वपि लोकेषु भवनादिषु, तथा चोक्तं तस्मिन्नेव द्वितीये स्थानाख्ये पदे—"कहि णं भंते ! बायरवणस्सइकाइयाणं पज्जत्तगाणं ठाणा पन्नत्ता ?, गोयमा ! सट्ठाणेणं सत्तसु घणोदहिसु सत्तसु घणोदहिवलयेसु अहोलोए पायालेसु भवणेसु भवणपत्थडेसु उड्ढलोए कप्पेसु विमाणेसु विमाणावलियासु विमाणपत्थडेसु तिरियलोए अगडेसु तलाएसु नदीसु दहेसु वावीसु पुक्खरिणीसु दीहियासु गुंजालियासु सरेसु सरपंतियासु सरसरपंतियासु बिलेसु बिलपंतियासु उज्झरेसु निज्झरेसु चिल्ललेसु पल्ललेसु वप्पिणेसु दीवेसु समुद्देसु सव्वेसु चेव जलासएसु जलठाणेसु, एत्थ णं बायरवणस्सइकाइयाणं पज्जत्तगाणं ठाणा पन्नत्ता" तथा "जत्थेव बायरवणस्सइकाइयाणं पज्जत्तगाणं ठाणा तत्थेव बायरवणस्सइकाइयाणं अपज्जत्तगाणं ठाणा पन्नत्ता" इति, ततः क्षेत्रस्यासङ्ख्येयगुणत्वादुपपद्यन्ते बादरतेजःकायिकेभ्योऽसङ्ख्येयगुणाः प्रत्येकशरीरबादरवनस्पतिकायिकाः, तेभ्यो बादरनिगोदा असङ्ख्येयगुणाः, तेषामत्यन्तसूक्ष्मावगाहनत्वात्, जलेषु सर्वत्रापि च भावात्, पनकसेवालादयो हि जलेऽवश्यंभाविनः ते च बादरानन्तकायिका इति, तेभ्योऽपि बादरपृथिवीकायिका असङ्ख्येयगुणाः, अष्टासु पृथिवीषु सर्वेषु विमानभवनपर्वतादिषु भावात्, तेभ्योऽसङ्ख्येयगुणा बादराप्कायिकाः, समुद्रेषु जलप्राभूत्यात्, तेभ्यो बादरवायुकायिका असङ्ख्येयगुणाः, सुषिरे सर्वत्र वायुसंभवात्, तेभ्यो बादरवनस्पतिकायिका अनन्तगुणाः, प्रतिबादरनिगोदमनन्तानां जीवानां भावात्, तेभ्यः सामा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

न्यतो बादरा जीवा विशेषाधिकाः, बादरत्रसकायिकादीनामपि तत्र प्रक्षेपात्। गतमेकमौधिकानां बादराणामल्पबहुत्वम्, इदानीमेतेषामेवापर्याप्तानां द्वितीयमाह—'एएसि णं भंते ! बायरापज्जत्तगाणं' इत्यादि, सर्वस्तोका बादरत्रसकायिका अपर्याप्तकाः, युक्तिरत्र प्रागुक्तैव, तेभ्यो बादरतेजःकायिका अपर्याप्ता असङ्ख्येयगुणाः, असङ्ख्येयलोकाकाशप्रदेशप्रमाणत्वात्, इत्येवं प्रागुक्तक्रमेणेदमध्यल्पबहुत्वं भावनीयं। गतं द्वितीयमल्पबहुत्वम्, इदानीमेतेषामेव पर्याप्तानां तृतीयमल्पबहुत्वमाह–'एएसि णं भंते! बायरपज्जत्तगाणं' इत्यादि, सर्वस्तोका बादरतेजःकायिकाः पर्याप्ताः, आवलिकासमयवर्गस्य कतिपयसमयन्यूनैरावलिकासमयैर्गुणितस्य यावान्समयराशिर्भवति तावत्प्रमाणत्वात्तेषा, उक्तं च–"आवलियवग्गो ऊणावलिए गुणिओ हु बायरा ते उ" इति तेभ्यो बादरत्रसकायिकाः पर्याप्ता असङ्ख्येयगुणाः, प्रतरे यावन्त्यङ्गुलसङ्ख्येयभागमात्राणि खण्डानि तावत्प्रमाणत्वात्तेषां, तेभ्यः प्रत्येकशरीरबादरवनस्पतिकायिकाः पर्याप्ताः असङ्ख्येयगुणाः, प्रतरे यावन्त्यङ्गुलासङ्ख्येयभागमात्राणि खण्डानि तावत्प्रमाणत्वात्तेषां, उक्तं च–"पत्तेयपज्जवणकाइयाओ पयरं हरंति लोगस्स। अङ्गुलअसंखभागेण भाइय"मिति तेभ्यो बादरनिगोदाः पर्याप्तका असङ्ख्येयगुणाः, तेषामत्यन्तसूक्ष्मावगाहनत्वाज्जलाशयेषु च सर्वत्र भावात्, तेभ्यो बादरपृथिवीकायिकाः पर्याप्ताः असङ्ख्येयगुणाः, अतिप्रभूतसङ्ख्यप्रतराङ्गुलासङ्ख्येयभागखण्डमानत्वात्, तेभ्योऽपि बादराप्कायिकाः पर्याप्ता असङ्ख्येयगुणाः, अतिप्रभूततरसङ्ख्यप्रतराङ्गुलासङ्ख्येयभागखण्डमानत्वात्, तेभ्यो बादरवायुकायिकाः पर्याप्ता असङ्ख्येयगुणाः, घनीकृतस्य लोकस्यासङ्खे-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [६१]

दीप अनुक्रम [२६५]

येषु सङ्ख्याततमभागवर्त्तिषु यावन्त आकाशप्रदेशास्तावत्प्रमाणत्वात्तेषां, तेभ्यो बादरवनस्पतिकायिकाः पर्याप्ता अनन्तगुणाः, प्रतिबादरैकैकनिगोदमनन्तानां जीवानां भावात्, तेभ्यः सामान्यतो बादरपर्याप्तका विशेषाधिकाः, बादरतेजःकायिकादीनामपि पर्याप्तानां तत्र प्रक्षेपात्। गतं तृतीयमल्पबहुत्वम्, इदानीमेतेषामेव पर्याप्तापर्याप्तगतान्यल्पबहुत्वान्याह—'एएसि णं भंते ! बायराणं पज्जत्तापज्जत्ताणं' इत्यादि, इह बादरैकैकपर्याप्तनिश्रया असङ्ख्येया बादरा अपर्याप्ता उत्पद्यन्ते, 'पज्जत्तगनिस्साए अपज्जत्तगा वक्कमंति, जत्थ एगो तत्थ नियमा असंखेज्जा' इति वचनात्, ततः सर्वत्र पर्याप्तेभ्योऽपर्याप्ता असङ्ख्येयगुणा वक्तव्याः, त्रसकायिकसूत्रं प्रागुक्तयुक्त्या भावनीयं। गतं चतुर्थमल्पबहुत्वम्, सम्प्रत्येतेषामेव समुदितानां पर्याप्तापर्याप्तानां पञ्चममल्पबहुत्वमाह—'एएसि णं भंते ! बायराणं बायरपुढवीकाइयाणं' इत्यादि, सर्वस्तोकाः बादरतेजःकायिकाः पर्याप्तकाः तेभ्यो बादरत्रसकायिकाः पर्याप्ता असङ्ख्येयगुणाः तेभ्यो बादरत्रसकायिका अपर्याप्ता असङ्ख्येयगुणाः तेभ्यो बादरप्रत्येकवनस्पतिकायिकाः पर्याप्ता असङ्ख्येयगुणाः तेभ्यो बादरनिगोदाः पर्याप्तका असङ्ख्येयगुणाः तेभ्यो बादरपृथिवीकायिकाः पर्याप्तका असङ्ख्येयगुणाः तेभ्यो बादराप्कायिकाः पर्याप्तका असङ्ख्येयगुणाः तेभ्यो बादरवायुकायिकाः पर्याप्ता असङ्ख्येयगुणाः, एतेषु पदेषु युक्तिः प्रागुक्ताऽनुसरणीया, तेभ्यो बादरतेजःकायिका अपर्याप्तका असङ्ख्येयगुणाः, यतो बादरवायुकायिकाः पर्याप्ताः असङ्ख्येयेषु प्रतरेषु यावन्त आकाशप्रदेशास्तावत्प्रमाणाः, बादरतेजःकायिकाश्चापर्याप्ता असङ्ख्येयलोकाकाशप्रदेशप्रमाणाः, ततो भवन्त्यस-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ज्ञेयगुणाः, ततः प्रत्येकबादरवनस्पतिकायिका अपर्याप्तका असङ्ख्येयगुणाः ततो बादरनिगोदा अपर्याप्तका असङ्ख्येयगुणाः ततो बादरपृथिवीकायिका अपर्याप्तका असङ्ख्येयगुणाः ततो बादराप्कायिका अपर्याप्तका असङ्ख्येयगुणाः बादरवायुकायिका अपर्याप्ता यथोत्तरमसङ्ख्येयगुणाः वक्तव्याः, यद्यपि चैते प्रत्येकमसङ्ख्येयलोकाकाशप्रदेशप्रमाणास्तथाप्यसङ्ख्यातस्यासङ्ख्यातभेदभिन्नत्वात् इत्थं यथोत्तरमसङ्ख्येयगुणत्वं न विरुध्यते, तेभ्यो बादरवायुकायिकापर्याप्तेभ्यो बादरवनस्पतिकायिका जीवाः पर्याप्ता अनन्तगुणाः, प्रतिबादरैकैकनिगोदमनन्तानां जीवानां भावात्, तेभ्यः सामान्यतो बादराः पर्याप्तका विशेषाधिकाः, बादरतेजःकायिकादीनां पर्याप्तानां तत्र प्रक्षेपात्, तेभ्यो बादरवनस्पतिकायिका अपर्याप्तका असङ्ख्येयगुणाः, एकैकपर्याप्तबादरवनस्पतिकायिकनिगोदनिश्रयाऽसङ्ख्येयानामपर्याप्तबादरवनस्पतिकायिकनिगोदानामुत्पादात्, तेभ्यः सामान्यतो बादरा अपर्याप्ता विशेषाधिकाः, बादरतेजःकायिकादीनामप्यपर्याप्तानां तत्र प्रक्षेपात्, तेभ्यः पर्याप्तापर्याप्तविशेषणरहिताः सामान्यतो बादरा विशेषाधिकाः, बादरपर्याप्ततेजःकायिकादीनामपि तत्र प्रक्षेपात् ॥ गतानि बादराश्रितान्यपि पञ्च सूत्राणि, सम्प्रति सूक्ष्मबादरसमुदायगतां पञ्चसूत्रीमभिधित्सुः प्रथमत औधिकं सूक्ष्मबादरसूत्रमाह—

एएसि णं भंते ! सुहुमाणं सुहुमपुढवीकाइयाणं सुहुमआउकाइयाणं सुहुमतेउकाइयाणं सुहुमवाउकाइयाणं सुहुमवणस्सइकाइयाणं सुहुमनिगोयाणं बायराणं बायरपुढवीकाइयाणं बायरआउकाइयाणं बायरतेउकाइयाणं बायरवाउकाइयाणं बाय-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [६२]

दीप अनुक्रम [२६६]

रवणस्सइकाइयाणं पत्तेयसरीरबायरवणस्सइकाइयाणं बायरनिगोयाणं तसकाइयाण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा बायरतसकाइया बायरतेउकाइया असंखेज्जगुणा पत्तेयसरीरबायरवणस्सइकाइया असंखेज्जगुणा बायरनिगोया असंखेज्जगुणा बायरपुढवीकाइया असंखेज्जगुणा बायरआउकाइया असंखेज्जगुणा बायरवाउकाइया असंखेज्जगुणा सुहुमतेउकाइया असंखेज्जगुणा सुहुमपुढवीकाइया विसेसाहिया सुहुमआउकाइया विसेसाहिया सुहुमवाउकाइया विसेसाहिया सुहुमनिगोया असंखेज्जगुणा बायरवणस्सइकाइया अणंतगुणा बायरा विसेसाहिया सुहुमवणस्सइकाइया अणंतगुणा सुहुमा विसेसाहिया ॥ एएसि णं भंते ! सुहुमअपज्जत्तयाणं सुहुमपुढवीकाइयाणं अपज्जत्तयाणं सुहुमआउकाइयाणं अपज्जत्तयाणं सुहुमतेउकाइयाणं अपज्जत्तयाणं सुहुमवाउकाइयाणं अपज्जत्तयाणं सुहुमवणस्सइकाइयाणं अपज्जत्तयाणं सुहुमनिगोयाणं अपज्जत्तयाणं बायरअपज्जत्तयाणं बायरपुढवीकाइयाणं अपज्जत्तयाणं बायरआउकाइयाणं अपज्जत्तयाणं बायरतेउकाइयाणं अपज्जत्तयाणं बायरवाउकाइयाणं अपज्जत्तयाणं बायरवणस्सइकाइयाणं अपज्जत्तयाणं पत्तेयसरीरबायरवणस्सइकाइयाणं अपज्जत्तयाणं बायरनिगोयाणं अपज्जत्तयाणं बायरतसकाइयाणं अपज्जत्तयाणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा बायरतसकाइया अपज्जत्तया बायरतेउकाइया अपज्जत्तया असंखेज्जगुणा पत्तेयसरीरबायरवणस्सइकाइया अपज्जत्तया असंखेज्जगुणा बायरनिगोया अपज्जत्तया असंखेज्जगुणा बायरपुढवीकाइया अपज्जत्तया असंखेज्जगुणा बादरआउकाइया अपज्जत्तया असंखेज्जगुणा बायरवाउकाइया अपज्जत्तया असंखेज्जगुणा सुहुमतेउकाइया अपज्जत्तया असंखेज्जगुणा सुहुमपुढवीकाइया अपज्ज-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

त्तया विसेसाहिया सुहुमआउकाइया अपज्जत्तया विसेसाहिया सुहुमवाउकाइया अपज्जत्तया विसेसाहिया सुहुमनिगोया अपज्जत्तया असंखेज्जगुणा बायरवणस्सइकाइया अपज्जत्तया अणंतगुणा बायरा अपज्जत्तया विसेसाहिया सुहुमवणस्सइकाइया अपत्तज्जया असंखेज्जगुणा सुहुमा अपज्जत्तया विसेसाहिया ॥ एएसि णं भंते ! सुहुमपज्जत्तयाणं सुहुमपुढविकाइया पज्जत्तयाणं सुहुमआउकाइया पज्जत्तयाणं सुहुमतेउकाइया पज्जत्तयाणं सुहुमवाउकाइया पज्जत्तयाणं सुहुमवणस्सइकाइया पज्जत्तयाणं सुहुमनिगोया पज्जत्तयाणं बायरपज्जत्तयाणं बायरपुढवीकाइया पज्जत्तयाणं बायरआउकाइया पज्जत्तयाणं बायरतेउकाइया पज्जत्तयाणं बायरवाउकाइया पज्जत्तयाणं बायरवणस्सइकाइया पज्जत्तयाणं पत्तेयसरीरबायरवणस्सइकाइया पज्जत्तयाणं बायरनिगोया पज्जत्तयाणं बायरतसकाइयपज्जत्तयाण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा बायरतेउकाइया पज्जत्तया बायरतसकाइया पज्जत्तया असंखेज्जगुणा पत्तेयसरीरबायरवणस्सइकाइया पज्जत्तया असंखेज्जगुणा बायरनिगोया पज्जत्तया असंखेज्जगुणा बायरपुढविकाइया पज्जत्तया असंखेज्जगुणा बायरआउकाइया पज्जत्तया असंखेज्जगुणा बायरवाउकाइया पज्जत्तया असंखेज्जगुणा सुहुमतेउकाइया पज्जत्तया असंखेज्जगुणा सुहुमपुढवीकाइया पज्जत्तया विसेसाहिया सुहुमआउकाइया पज्जत्तया विसेसाहिया सुहुमवाउकाइया पज्जत्तया विसेसाहिया सुहुमनिगोया पज्जत्तया असंखेज्जगुणा बायरवणस्सइकाइया पज्जत्तया अणंतगुणा बायरपज्जत्तया विसेसाहिया सुहुमवणस्सइकाइया पज्जत्तया असंखेज्जगुणा सुहुमपज्जत्तया विसेसाहिया ॥ एएसि णं भंते ! सुहुमाणं बायराण य पज्जत्तापज्जत्ताणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा बायरा पज्जत्तया बायरअपज्जत्तया असंखेज्जगुणा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [६२]

दीप अनुक्रम [२६६]

सुहुमअपज्जत्तया असंखेज्जगुणा सुहुमपज्जत्तया संखेज्जगुणा ॥ एएसि णं भंते ! सुहुमपुढविकाइयाणं बायरपुढविकाइयाण य पज्जत्तापज्जत्ताणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा बायरपुढविकाइया पज्जत्तया बायरपुढविकाइया अपज्जत्तया असंखेज्जगुणा सुहुमपुढवीकाइया अप्प० असं० सुहुमपुढविकाइया पज्जत्तया संखेज्जगुणा ॥ एएसि णं भंते ! सुहुमआउकाइयाणं बायरआउकाइयाण य पज्जत्तापज्जत्ताणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा बायरआउकाइया पज्जत्तया बायरआउकाइया अपज्जत्तया असंखेज्जगुणा सुहुमआउकाइया अपज्जत्तया असंखेज्जगुणा सुहुमआउकाइया पज्जत्तया संखेज्जगुणा ॥ एएसि णं भंते ! सुहुमतेउकाइयाणं बायरतेउकाइयाण य पज्जत्ताज्जपज्जत्ताणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा बायरतेउकाइया पज्जत्तया बायरतेउकाइया अपज्जत्तया असंखेज्जगुणा सुहुमतेउकाइया अपज्जत्तया असंखेज्जगुणा सुहुमतेउकाइया पज्जत्तया संखेज्जगुणा ॥ एएसि णं भंते सुहुमवाउकाइयाणं बायरवाउकाइयाण य पज्जत्तापज्जत्ताणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा बायरवाउकाइया पज्जत्तया बायरवाउकाइया अपज्जत्तया असंखेज्जगुणा सुहुमवाउकाइया अपज्जत्तया असंखेज्जगुणा सुहुमवाउकाइया पज्जत्तया संखेज्जगुणा ॥ एएसि णं भंते ! सुहुमवणस्सइकाइयाणं बायरवणस्सइकाइयाण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा बायरवणस्सइकाइया पज्जत्तया बायरवणस्सइकाइया अपज्जत्तया असंखेज्जगुणा सुहुमवणस्सइकाइया अपज्जत्तया असंखेज्जगुणा सुहुमवणस्सइकाइया पज्जत्तया संखेज्जगुणा ॥ एएसि णं भंते ! सुहुमनिगोयाणं बायरनिगो-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

याण य पज्जत्तापज्जत्ताणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा बायरनिगोयया पज्जत्तया बायरनिगोयया अपज्जत्तया असंखेज्जगुणा सुहुमनिगोयया अपज्जत्तया असंखेज्जगुणा सुहुमनिगोयया पज्जत्तया संखेज्जगुणा ॥ एएसि णं भंते ! सुहुमाणं सुहुमपुढवीकाइयाणं सुहुमआउकाइयाणं सुहुमतेउकाइयाणं सुहुमवाउकाइयाणं सुहुमवणस्सइकाइयाणं सुहुमनिगोयाणं बायराणं बायरपुढविकाइयाणं बायरआउकाइयाणं बायरतेउकाइयाणं बायरवाउकाइयाणं बायरवणस्सइकाइयाणं पत्तेयसरीरबायरवणस्सइकाइयाणं बायरनिगोयाणं बायरतसकाइयाण य पज्जत्तापज्जत्ताणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा बादरतेउकाइया पज्जत्तया बायरतसकाइया पज्जत्तया असंखेज्जगुणा बायरतसकाइया अपज्जत्तया असंखेज्जगुणा पत्तेयसरीरबायरवणस्सइकाइया पज्जत्तया असंखेज्जगुणा बायरनिगोया पज्जत्तया असंखेज्जगुणा बायरपुढवीकाइया पज्जत्तया असंखेज्जगुणा बायरआउकाइया पज्जत्तया असंखेज्जगुणा बायरवाउकाइया पज्जत्तया असंखेज्जगुणा बायरतेउकाइया अपज्जत्तया असंखेज्जगुणा पत्तेयसरीरबायरवणस्सइकाइया अपज्जत्तया असंखेज्जगुणा बायरनिगोया अपज्जत्तया असंखेज्जगुणा बायरपुढवीकाइया अपज्जत्तया असंखेज्जगुणा बायरआउकाइया अपज्जत्तया असंखेज्जगुणा बायरवाउकाइया अपज्जत्तया असंखेज्जगुणा सुहुमतेउकाइया अपज्जत्तया असंखेज्जगुणा सुहुमपुढवीकाइया अपज्जत्तया विसेसाहिया सुहुमआउकाइया अपज्जत्तया विसेसाहिया सुहुमवाउकाइया अपज्जत्तया विसेसाहिया सुहुमतेउकाइया पज्जत्तया असंखेज्जगुणा सुहुमपुढवीकाइया पज्जत्तया विसेसाहिया सुहुमआउकाइया पज्जत्तया विसेसाहिया सुहुमवाउकाइया पज्जत्तया विसेसाहिया सुहुमनिगोया अपज्जत्तया असंखेज्जगुणा सुहुमनिगोया पज्जत्तया संखेज्जगुणा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [६२]

दीप अनुक्रम [२६६]

बायरवणस्सइकाइया पज्जत्तया अणंतगुणा बायरपज्जत्तया विसेसाहिया बायरवणस्सइकाइया अपज्जत्तया असंखेज्जगुणा बायरअपज्जत्तया विसेसाहिया बायरा विसेसाहिया सुहुमवणस्सइकाइया अपज्जत्तया असंखेज्जगुणा सुहुमअपज्जत्तया विसेसाहिया सुहुमवणस्सइकाइया पज्जत्तया संखेज्जगुणा सुहुमपज्जत्तया विसेसाहिया सुहुमा विसेसाहिया । दारं । (सू० ६२)

'एएसि णं भंते !' इत्यादि, इह प्रथमं बादरगतमल्पबहुत्वं बादरपञ्चसूत्र्यां यत्प्रथमं सूत्रं तद्भावनीयं यावद्बादरवायुकायपदं, तदनन्तरं यत्सूक्ष्मगतमल्पबहुत्वं तत्सूक्ष्मपञ्चसूत्र्यां यत्प्रथमं सूत्रं तद्वत्तावद् यावत्सूक्ष्मनिगोदचिन्ता, तदनन्तरं बादरवनस्पतिकायिका अनन्तगुणाः, प्रतिबादरनिगोदमनन्तानां जीवानां भावात्, तेभ्यो बादरा विशेषाधिकाः, बादरतेजःकायिकादीनामपि तत्र प्रक्षेपात्, तेभ्यः सूक्ष्मवनस्पतिकायिका असङ्ख्येयगुणाः, बादरनिगोदेभ्यः सूक्ष्मनिगोदानामसङ्ख्येयगुणत्वात्, तेभ्यः सामान्यतः सूक्ष्मा विशेषाधिकाः, सूक्ष्मतेजःकायिकादीनामपि तत्र प्रक्षेपात् । गतमेकमल्पबहुत्वम्, इदानीमेतेषामेवापर्याप्तानां द्वितीयमाह—'एएसि णं भंते !' इत्यादि, सर्वस्तोका बादरत्रसकायिका अपर्याप्ताः ततो बादरतेजःकायिकबादरप्रत्येकवनस्पतिकायिकबादरनिगोदबादरपृथिवीकायिकबादराप्कायिकबादरवायुकायिका अपर्याप्ताः क्रमेण यथोत्तरमसङ्ख्येयगुणाः, अत्र भावना बादरपञ्चसूत्र्यां यद्वितीयमपर्याप्तकसूत्रं तद्वत्कर्तव्या, ततो बादरवायुकायिकेभ्योऽपर्याप्तेभ्योऽसङ्ख्येयगुणाः सूक्ष्मतेजःकायिका अपर्याप्ताः, अतिप्रभूतासङ्ख्येयलोकाकाशप्रदेशप्रमाणत्वात्, तेभ्यः सूक्ष्मपृथिवीकायिकसूक्ष्माप्कायिकसूक्ष्मवायुकायिकसूक्ष्मनिगोदा

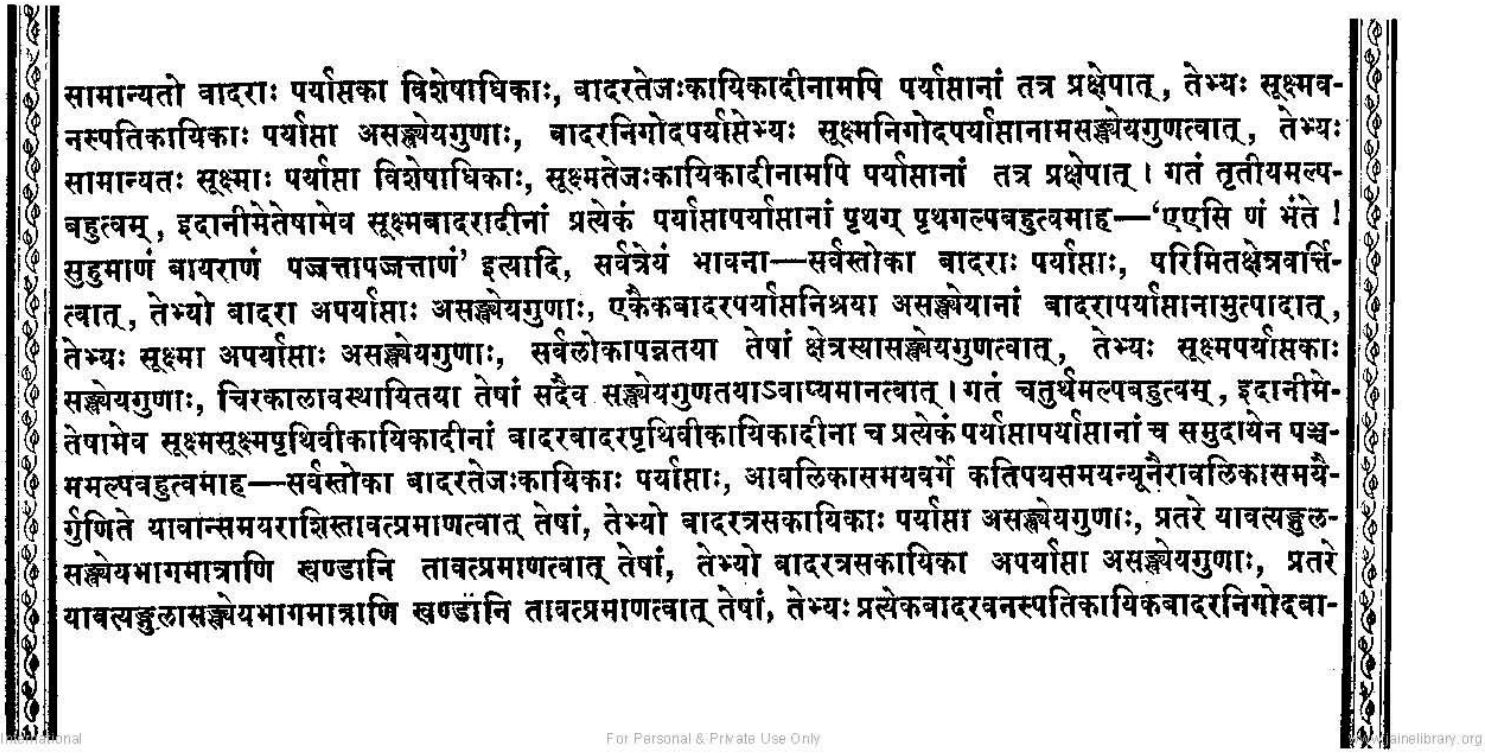
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [६२]

दीप अनुक्रम [२६६]

अपर्याप्ता यथोत्तरमसङ्ख्येयगुणाः, अत्र भावना सूक्ष्मपञ्चसूत्र्यां यद् द्वितीयं सूत्रं तद्वत्, तेभ्यः सूक्ष्मनिगोदापर्याप्तेभ्यो बादरवनस्पतिकायिका जीवा अपर्याप्ताः अनन्तगुणाः, प्रतिबादरैकैकनिगोदमनन्तानां जीवानां सद्भावात्, तेभ्यः सामान्यतो बादरापर्याप्तका विशेषाधिकाः, बादरत्रसकायिकापर्याप्तादीनामपि तत्र प्रक्षेपात्, तेभ्यः सूक्ष्मवनस्पतिकायिका अपर्याप्ता असङ्ख्येयगुणाः, बादरनिगोदापर्याप्तेभ्यः सूक्ष्मनिगोदापर्याप्तानामसङ्ख्येयगुणत्वात्, तेभ्यः सामान्यतः सूक्ष्माः पर्याप्ता विशेषाधिकाः, सूक्ष्मतेजःकायिकापर्याप्तादीनामपि तत्र प्रक्षेपात्। गतं द्वितीयमल्पबहुत्वम्, अधुना एतेषामेव पर्याप्तानां तृतीयमल्पबहुत्वमाह—'एएसि णं भंते ! सुहुमपज्जत्तयाणं' इत्यादि, सर्वस्तोका बादरतेजःकायिकाः पर्याप्ताः तेभ्यो बादरत्रसकायिकबादरप्रत्येकवनस्पतिकायिकबादरनिगोदबादरपृथिवीकायिकबादराप्कायिकबादरवायुकायिकाः पर्याप्ता यथोत्तरमसङ्ख्येयगुणाः, अत्र भावना बादरपञ्चसूत्र्यां यत्तृतीयं पर्याप्तसूत्रं तद्वत् कर्त्तव्या, बादरपर्याप्तवायुकायिकेभ्यः सूक्ष्मतेजःकायिकाः पर्याप्ता असङ्ख्येयगुणाः, बादरवायुकायिका हि असङ्ख्येयप्रतरप्रदेशराशिप्रमाणाः सूक्ष्मतेजःकायिकास्तु पर्याप्ता असङ्ख्येयलोकाकाशप्रदेशराशिप्रमाणास्ततोऽसङ्ख्येयगुणाः, ततः सूक्ष्मपृथिवीकायिकसूक्ष्माप्कायिकसूक्ष्मवायुकायिकाः पर्याप्ताः क्रमेण यथोत्तरं विशेषाधिकाः ततः सूक्ष्मवायुकायिकेभ्यः पर्याप्तेभ्यः सूक्ष्मनिगोदाः पर्याप्तका असङ्ख्येयगुणाः, तेषामतिप्रभूततया प्रतिगोलकं भावात्, तेभ्यो बादरवनस्पतिकायिका जीवाः पर्याप्तका अनन्तगुणाः, प्रतिबादरैकैकनिगोदमनन्तानां भावात्, तेभ्यः

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



सामान्यतो बादराः पर्याप्तका विशेषाधिकाः, बादरतेजःकायिकादीनामपि पर्याप्तानां तत्र प्रक्षेपात्, तेभ्यः सूक्ष्मवनस्पतिकायिकाः पर्याप्ता असङ्ख्येयगुणाः, बादरनिगोदपर्याप्तेभ्यः सूक्ष्मनिगोदपर्याप्तानामसङ्ख्येयगुणत्वात्, तेभ्यः सामान्यतः सूक्ष्माः पर्याप्ता विशेषाधिकाः, सूक्ष्मतेजःकायिकादीनामपि पर्याप्तानां तत्र प्रक्षेपात्। गतं तृतीयमल्पबहुत्वम्, इदानीमेतेषामेव सूक्ष्मबादरादीनां प्रत्येकं पर्याप्तापर्याप्तानां पृथग् पृथगल्पबहुत्वमाह—'एएसि णं भंते ! सुहुमाणं बायराणं पज्जत्तापज्जत्ताणं' इत्यादि, सर्वत्रेयं भावना—सर्वस्तोका बादराः पर्याप्ताः, परिमितक्षेत्रवर्त्तित्वात्, तेभ्यो बादरा अपर्याप्ताः असङ्ख्येयगुणाः, एकैकबादरपर्याप्तनिश्रया असङ्ख्येयानां बादरापर्याप्तानामुत्पादात्, तेभ्यः सूक्ष्मा अपर्याप्ताः असङ्ख्येयगुणाः, सर्वलोकापन्नतया तेषां क्षेत्रस्यासङ्ख्येयगुणत्वात्, तेभ्यः सूक्ष्मपर्याप्तकाः सङ्ख्येयगुणाः, चिरकालावस्थायितया तेषां सदैव सङ्ख्येयगुणतयाऽवाप्यमानत्वात्। गतं चतुर्थमल्पबहुत्वम्, इदानीमेतेषामेव सूक्ष्मसूक्ष्मपृथिवीकायिकादीनां बादरबादरपृथिवीकायिकादीना च प्रत्येकं पर्याप्तापर्याप्तानां च समुदायेन पञ्चममल्पबहुत्वमाह—सर्वस्तोका बादरतेजःकायिकाः पर्याप्ताः, आवलिकासमयवर्गे कतिपयसमयन्यूनैरावलिकासमयैर्गुणिते यावान्समयराशिस्तावत्प्रमाणत्वात् तेषां, तेभ्यो बादरत्रसकायिकाः पर्याप्ता असङ्ख्येयगुणाः, प्रतरे यावत्सङ्गुलसङ्ख्येयभागमात्राणि खण्डानि तावत्प्रमाणत्वात् तेषां, तेभ्यो बादरत्रसकायिका अपर्याप्ता असङ्ख्येयगुणाः, प्रतरे यावत्सङ्गुलासङ्ख्येयभागमात्राणि खण्डानि तावत्प्रमाणत्वात् तेषां, तेभ्यः प्रत्येकबादरवनस्पतिकायिकबादरनिगोदबा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [६२]

दीप अनुक्रम [२६६]

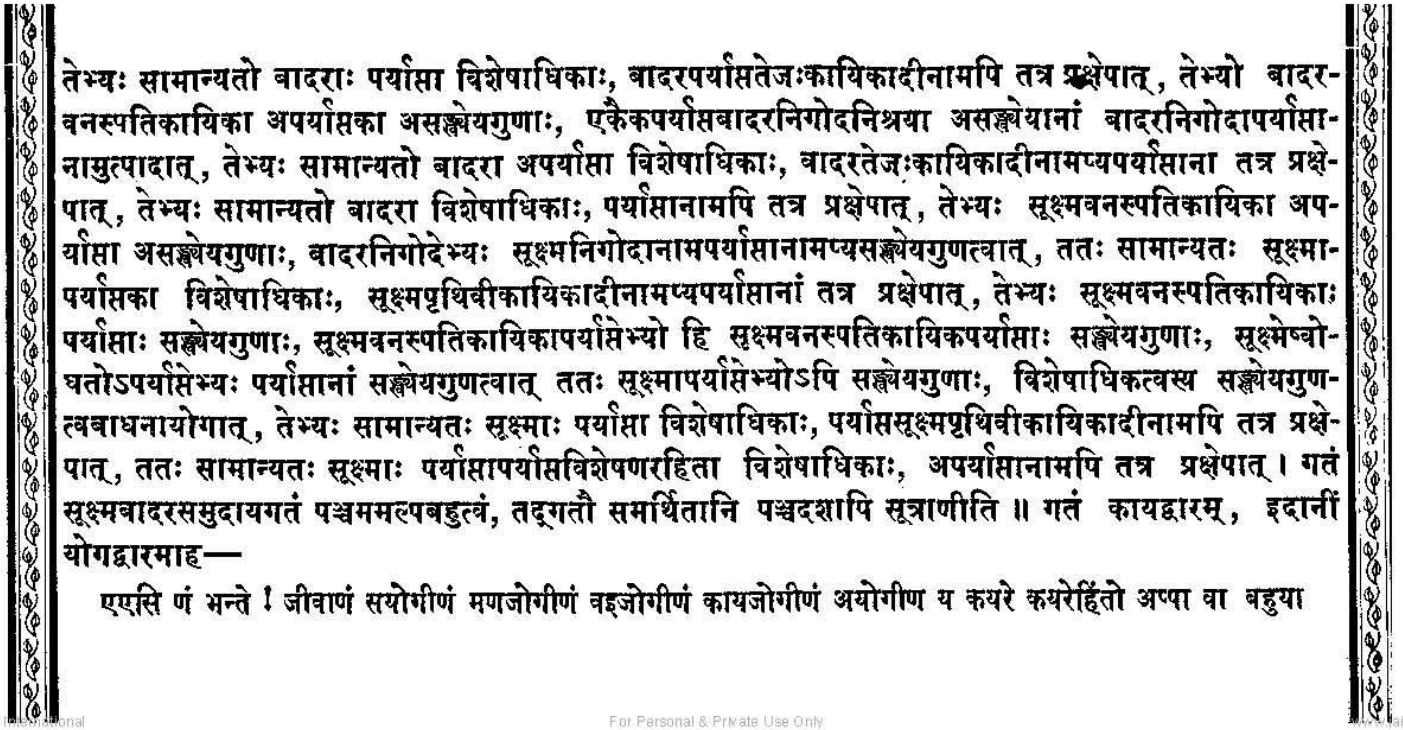
दरपृथिवीकायिकबादराप्कायिकबादरवायुकायिकाः पर्याप्ता यथोत्तरमसङ्ख्येयगुणाः, यद्यप्येते प्रत्येकं प्रतरे यावत्यङ्गुलासङ्ख्येयभागमात्राणि खण्डानि तावत्प्रमाणास्तथाप्यङ्गुलासङ्ख्येयभागस्यासङ्ख्येयभेदभिन्नत्वात् इत्थं यथोत्तरमसङ्ख्येयगुणत्वमभिधीयमानं न विरुध्यते, तेभ्यो बादरतेजःकायिका अपर्याप्ता असङ्ख्येयगुणाः, असङ्ख्येयलोकाकाशप्रदेशप्रमाणत्वात्, ततः प्रत्येकशरीरबादरवनस्पतिकायिकबादरनिगोदबादरपृथिवीकायिकबादराप्कायिकबादरवायुकायिका अपर्याप्ता यथोत्तरमसङ्ख्येयगुणाः, ततो बादरवायुकायिकेभ्योऽपर्याप्तेभ्यः सूक्ष्मतेजःकायिका अपर्याप्ता असङ्ख्येयगुणाः ततः सूक्ष्मपृथिवीकायिकसूक्ष्माप्कायिकसूक्ष्मवायुकायिका अपर्याप्ता यथोत्तरं विशेषाधिकाः ततः सूक्ष्मपर्याप्तास्तेजःकायिकाः सङ्ख्यातगुणाः, सूक्ष्मेष्वपर्याप्तेभ्यः पर्याप्तानां ओघत एव सङ्ख्येयगुणत्वात्, ततः सूक्ष्मपृथिवीकायिकसूक्ष्माप्कायिकसूक्ष्मवायुकायिकाः पर्याप्ताः यथोत्तरं विशेषाधिकाः तेभ्यः सूक्ष्मनिगोदा अपर्याप्तका असङ्ख्येयगुणाः, तेषामतिप्राभूत्येन सर्वलोकेषु भावात्, तेभ्यः सूक्ष्मनिगोदाः पर्याप्तकाः सङ्ख्येयगुणाः, सूक्ष्मेष्वपर्याप्तेभ्यः पर्याप्तानामोघत एव सदा सङ्ख्येयगुणत्वात्, एते च बादरापर्याप्ततेजःकायिकादयः पर्याप्तसूक्ष्मनिगोदपर्यवसानाः षोडश पदार्था यद्यप्यन्यत्राविशेषेणासङ्ख्येयलोकाकाशप्रदेशप्रमाणतया संगीयन्ते तथाप्यसङ्ख्येयत्वस्यासंख्येयभेदभिन्नत्वाद् इत्थमसङ्ख्येयगुणत्वं विशेषाधिकत्वं सङ्ख्येयगुणत्वं च प्रतिपाद्यमानं न विरोधभागिति, तेभ्यः पर्याप्तसूक्ष्मनिगोदेभ्यो बादरवनस्पतिकायिकाः पर्याप्ता अनन्तगुणाः, प्रतिबादरैकैकनिगोदमनन्तानां जीवानां भावात्,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [६२]

दीप अनुक्रम [२६६]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति:



तेभ्यः सामान्यतो बादराः पर्याप्ता विशेषाधिकाः, बादरपर्याप्ततेजःकायिकादीनामपि तत्र प्रक्षेपात्, तेभ्यो बादरवनस्पतिकायिका अपर्याप्तका असङ्ख्येयगुणाः, एकैकपर्याप्तबादरनिगोदनिश्रया असङ्ख्येयानां बादरनिगोदापर्याप्तानामुत्पादात्, तेभ्यः सामान्यतो बादरा अपर्याप्ता विशेषाधिकाः, बादरतेजःकायिकादीनामप्यपर्याप्तानां तत्र प्रक्षेपात्, तेभ्यः सामान्यतो बादरा विशेषाधिकाः, पर्याप्तानामपि तत्र प्रक्षेपात्, तेभ्यः सूक्ष्मवनस्पतिकायिका अपर्याप्ता असङ्ख्येयगुणाः, बादरनिगोदेभ्यः सूक्ष्मनिगोदानामपर्याप्तानामप्यसङ्ख्येयगुणत्वात्, ततः सामान्यतः सूक्ष्मापर्याप्तका विशेषाधिकाः, सूक्ष्मपृथिवीकायिकादीनामप्यपर्याप्तानां तत्र प्रक्षेपात्, तेभ्यः सूक्ष्मवनस्पतिकायिकाः पर्याप्ताः सङ्ख्येयगुणाः, सूक्ष्मवनस्पतिकायिकापर्याप्तेभ्यो हि सूक्ष्मवनस्पतिकायिकपर्याप्ताः सङ्ख्येयगुणाः, सूक्ष्मेभ्योघतोऽपर्याप्तेभ्यः पर्याप्तानां सङ्ख्येयगुणत्वात् ततः सूक्ष्मापर्याप्तेभ्योऽपि सङ्ख्येयगुणाः, विशेषाधिकत्वस्य सङ्ख्येयगुणत्वबाधनायोगात्, तेभ्यः सामान्यतः सूक्ष्माः पर्याप्ता विशेषाधिकाः, पर्याप्तसूक्ष्मपृथिवीकायिकादीनामपि तत्र प्रक्षेपात्, ततः सामान्यतः सूक्ष्माः पर्याप्तापर्याप्तविशेषणरहिता विशेषाधिकाः, अपर्याप्तानामपि तत्र प्रक्षेपात्। गतं सूक्ष्मबादरसमुदायगतं पञ्चममल्पबहुत्वं, तद्गतौ समर्थितानि पञ्चदशापि सूत्राणीति ॥ गतं कायद्वारम्, इदानीं योगद्वारमाह—

एएसि णं भन्ते ! जीवाणं सयोगीणं मणजोगीणं वइजोगीणं कायजोगीणं अयोगीण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तृतीय-पदे (०५) "योग" द्वारम् आरब्धः

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [६३-६४]

दीप अनुक्रम [२६७--२६८]

वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा जीवा मणयोगी वयोगी असंखेज्जगुणा अयोगी अणंतगुणा कायजोगी अणंतगुणा सयोगी विसेसाहिया । दारं ॥ (सू.६३) एएसिणं भन्ते ! जीवाणं सवेयगाणं इत्थीवेयगाणं पुरिसवेयगाणं नपुंसकवेयगाणं अवेयगाण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा जीवा पुरिसवेयगा इत्थीवेयगा संखेज्जगुणा अवेयगा अणंतगुणा नपुंसकवेयगा अणंतगुणा सवेयगा विसेसाहिया । दारं ॥ (सू.६४)

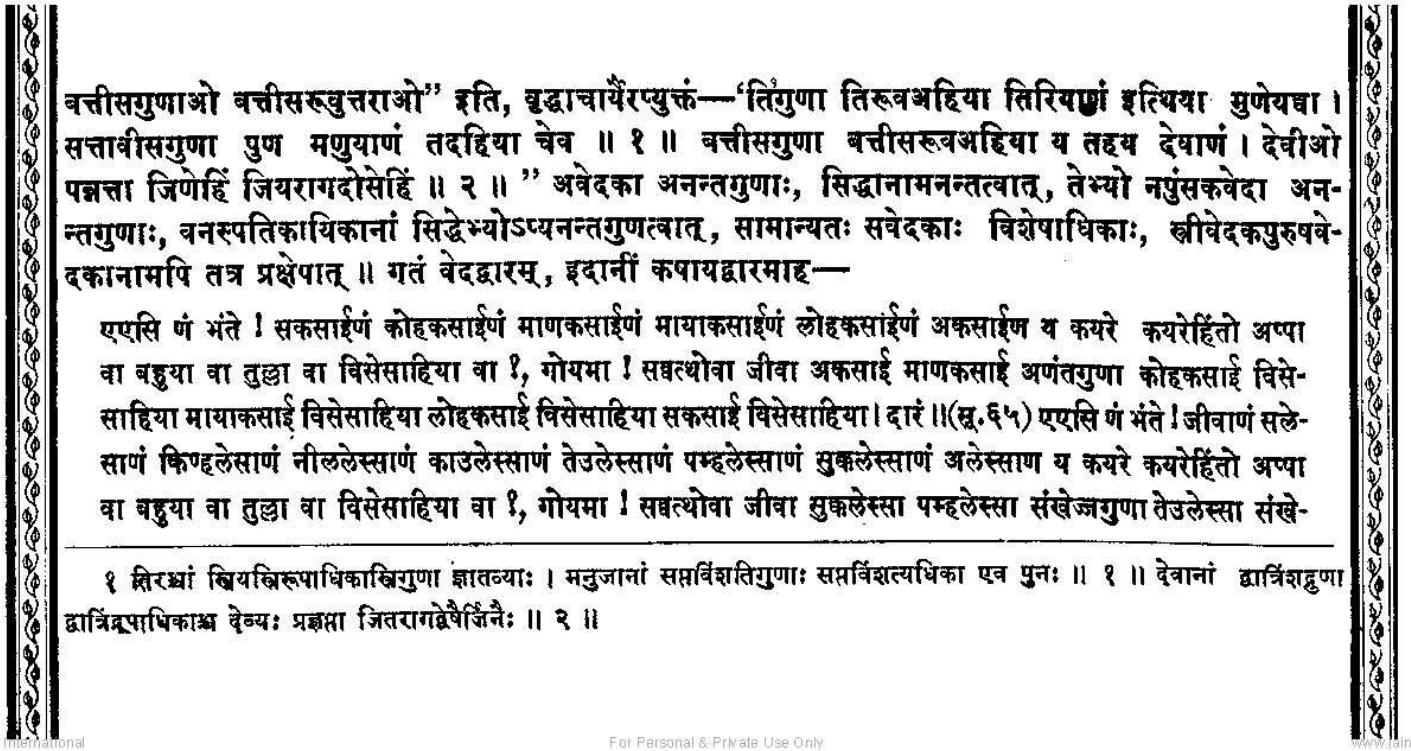
सर्वस्तोका मनोयोगिनः, सञ्ज्ञिनः पर्याप्ता एव हि मनोयोगिनः ते च स्तोका इति, तेभ्यो वाग्योगिनोऽसङ्ख्येयगुणाः, द्वीन्द्रियादीनां वाग्योगिनां सञ्ज्ञिभ्योऽसङ्ख्यातगुणत्वात्, तेभ्योऽयोगिनोऽनन्तगुणाः, सिद्धानामनन्तत्वात्, तेभ्यः काययोगिनोऽनन्तगुणाः, वनस्पतीनामनन्तत्वात्, यद्यपि निगोदजीवानामनन्तानामेकं शरीरं तथापि तेनैकेन[1] शरीरेण सर्वेऽप्याहारादिग्रहणं कुर्वन्तीति सर्वेषामपि काययोगित्वान्नानन्तगुणत्वव्याघातः, तेभ्यः सामान्यतः सयोगिनो विशेषाधिकाः, द्वीन्द्रियादीनामपि वाग्योगादीनां तत्र प्रक्षेपात् ॥ गतं योगद्वारम्, इदानीं वेदद्वारमाह-सर्वस्तोकाः पुरुषवेदाः, सञ्ज्ञिनामेव तिर्यग्मनुष्याणां देवानां च पुरुषवेदभावात्, तेभ्यः स्त्रीवेदाः सङ्ख्येयगुणाः, यत उक्तं जीवाभिगमे—"तिरिक्खजोणियपुरिसेहिंतो तिरिक्खजोणियइत्थीओ तिगुणीओ तिरूवाहियाओ य, तहा मणुस्सपुरिसेहिंतो मणुस्सइत्थीओ सत्तावीसगुणाओ सत्तावीसरूवुत्तराओ य, तथा देवपुरिसेहिंतो देवित्थीओ

१ ग्रहणयोगापेक्षया तेनैकेनेति, तैजसकार्मणयोगरूपकाययोगापेक्षया तेनैकेनेति ।

॥१३४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तृतीय-पदे (०६) "वेद" द्वारम् आरब्ध:



वत्तीसगुणाओ बत्तीसरूवुत्तराओ" इति, वृद्धाचार्यैरप्युक्तं—'तिगुणा तिरूवअहिया तिरियाणं इत्थिया मुणेयव्वा। सत्तावीसगुणा पुण मणुयाणं तदहिया चेव ॥ १ ॥ बत्तीसगुणा बत्तीसरूवअहिया य तहय देवाणं। देवीओ पन्नत्ता जिणेहिं जियरागदोसेहिं ॥ २ ॥" अवेदका अनन्तगुणाः, सिद्धानामनन्तत्वात्, तेभ्यो नपुंसकवेदा अनन्तगुणाः, वनस्पतिकायिकानां सिद्धेभ्योऽप्यनन्तगुणत्वात्, सामान्यतः सवेदकाः विशेषाधिकाः, स्त्रीवेदकपुरुषवेदकानामपि तत्र प्रक्षेपात् ॥ गतं वेदद्वारम्, इदानीं कषायद्वारमाह—

एएसि णं भंते ! सकसाईणं कोहकसाईणं माणकसाईणं मायाकसाईणं लोहकसाईणं अकसाईण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा जीवा अकसाई माणकसाई अणंतगुणा कोहकसाई विसेसाहिया मायाकसाई विसेसाहिया लोहकसाई विसेसाहिया सकसाई विसेसाहिया। दारं ॥(सू.६५) एएसि णं भंते ! जीवाणं सलेसाणं किण्हलेसाणं नीललेस्साणं काउलेस्साणं तेउलेस्साणं पम्हलेस्साणं सुक्कलेस्साणं अलेस्साण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा जीवा सुक्कलेस्सा पम्हलेस्सा संखेज्जगुणा तेउलेस्सा संखे-

१ स्त्रीरत्नां स्त्रियस्त्रिरूपाधिकास्त्रिगुणा ज्ञातव्याः। मनुजानां सप्तविंशतिगुणाः सप्तविंशत्यधिका एव पुनः ॥ १ ॥ देवानां द्वात्रिंशद्गुणा द्वात्रिंशद्रूपाधिकाश्च देव्यः प्रज्ञप्ता जितरागद्वेषैर्जिनैः ॥ २ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	तृतीय-पदे (०७) "कषाय" एवं (०८) "लेश्या" द्वारम् आरब्धः

प्रत सूत्रांक [६५-६६]

दीप अनुक्रम [२६९--२७०]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्तिः

जगुणा अलेस्सा अणंतगुणा काउलेस्सा अणंतगुणा नीललेस्सा विसेसाहिया कण्हलेस्सा विसेसाहिया सलेस्सा विसेसाहिया ॥ दारं ॥ (सू. ६६)

सर्वस्तोका अकषायिणः, सिद्धानां कतिपयानां च मनुष्याणामकषायित्वात्, तेभ्यो मानकषायिणो–मानकषायपरिणामवन्तोऽनन्तगुणाः, षट्स्वपि जीवनिकायेषु मानकषायपरिणामस्यावाप्यमानत्वात्, तेभ्यः क्रोधकषायिणो विशेषाधिकाः तेभ्योऽपि मायाकषायिणो विशेषाधिकाः तेभ्योऽपि लोभकषायिणो विशेषाधिकाः, मानकषायपरिणामकालापेक्षया क्रोधादिकषायपरिणामकालस्य यथोत्तरं विशेषाधिकतया क्रोधादिकषायाणामपि यथोत्तरं विशेषाधिकत्वभावात्, लोभकषायिभ्यः सामान्यतः सकषायिणो विशेषाधिकाः, मानादिकषायिणामपि तत्र प्रक्षेपात्, सकषायिण इत्यत्रैवं व्युत्पत्तिः—कषायशब्देन कषायोदयः परिगृह्यते, तथा च लोके व्यवहारः—सकषायोऽयं कषायोदयवानित्यर्थः, सह कषायेण—कषायोदयेन ये वर्त्तन्ते ते सकषायोदयाः—विपाकावस्थां प्राप्ताः स्वोदयमुपदर्शयन्तः कषायकर्मपरमाणवस्तेषु सत्सु जीवस्यावश्यं कषायोदयसम्भवात्, सकषाया विद्यन्ते येषां ते सकषायिणः कषायोदयसहिता इति तात्पर्यार्थः ॥ गतं कषायद्वारम्, इदानीं लेश्याद्वारम्—सर्वस्तोकाः शुक्ललेश्याः, लान्तकादिष्वेवानुत्तरपर्यवसानेषु वैमानिकेषु देवेषु कतिपयेषु च गर्भव्युत्क्रान्तिकेषु कर्मभूमिकेषु सङ्ख्येयवर्षायुष्केषु मनुष्येषु तिर्यक्स्त्रीपुंसेषु च कतिपयेषु सङ्ख्येयवर्षायुष्केषु तस्याः संभवात्, तेभ्यः पद्मलेश्याकाः सङ्ख्येयगुणाः, सा हि पद्म-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [६५-६६]

दीप अनुक्रम [२६९--२७०]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति:

लेश्या सनत्कुमारमाहेन्द्रब्रह्मलोककल्पवासिषु देवेषु तथा प्रभूतेषु गर्भव्युत्क्रान्तिकेषु कर्मभूमिजेषु सङ्ख्येयवर्षायुष्केषु मनुष्यस्त्रीपुंसेषु तथा गर्भव्युत्क्रान्तिकतिर्यग्योनिकस्त्रीपुंसेषु सङ्ख्येयवर्षायुष्केष्ववाप्यते, सनत्कुमारादिदेवादयश्च समुदिता लान्तकादिदेवादिभ्यः सङ्ख्येयगुणा इति भवन्ति शुक्ललेश्याकेभ्यः पद्मलेश्याकाः सङ्ख्येयगुणाः, तेभ्यस्तेजोलेश्याकाः सङ्ख्येयगुणाः, सर्वेषां सौधर्मेशानज्योतिष्कदेवानां कतिपयानां च भवनपतिव्यन्तरगर्भव्युत्क्रान्तिकतिर्यक्पञ्चेन्द्रियमनुष्याणां बादरपर्याप्तैकेन्द्रियाणां च तेजोलेश्याभावात्, नन्वसङ्ख्येयगुणाः कस्मान्न भवन्ति ?, कथं भवन्तीति चेत्, उच्यते, इह ज्योतिष्काः भवनवासिभ्योऽप्यसङ्ख्येयगुणाः किं पुनः सनत्कुमारादिदेवेभ्यः, ते च ज्योतिष्कास्तेजोलेश्याकाः तथा सौधर्मेशानकल्पदेवाश्च, ततः प्राप्नुवन्त्यसङ्ख्येयगुणाः, तदयुक्तं, वस्तुतत्त्वापरिज्ञानात्, लेश्यापदे हि गर्भव्युत्क्रान्तिकतिर्यग्योनिकानां संमूर्च्छिमपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकानां च कृष्णलेश्याद्यल्पबहुत्वे सूत्रं वक्ष्यति—'सव्वत्थोवा गब्भवक्कंतियतिरिक्खजोणिया सुक्कलेसा तिरिक्खजोणिणीओ संखेज्जगुणाओ, पम्हलेसा गब्भवक्कंतियतिरिक्खजोणिया संखेज्जगुणा तिरिक्खजोणिणीओ संखेज्जगुणाओ, तेउलेसागब्भवक्कंतियतिरिक्खजोणिया संखेज्जगुणा तेउलेसाओ तिरिक्खजोणिणीओ संखेज्जगुणाओ" इति, महादण्डके च तिर्यग्योनिकस्त्रीभ्यो व्यन्तरा ज्योतिष्काश्च सङ्ख्येयगुणा वक्ष्यन्ते, ततो यद्यपि भवनवासिभ्योऽप्यसङ्ख्येयगुणा ज्योतिष्काः तथापि पद्मलेश्याकेभ्यस्तेजोलेश्याकाः सङ्ख्येयगुणा एव, इदमत्र तात्पर्यं—यदि केवलान् देवानेव पद्मलेश्यानधिकृत्य देवा एव

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [६५-६६]

दीप अनुक्रम [२६९--२७०]

तेजोलेश्याकाश्चिन्त्यन्ते ततो भवन्त्यसङ्ख्येयगुणाः यावता तिर्यक्सम्मिश्रतया पद्मलेश्याकेभ्यस्तिर्यक्सम्मिश्रा एव तेजोलेश्याकाश्चिन्त्यन्ते तिर्यञ्चश्च पद्मलेश्या अपि अतिबहवस्ततः सङ्ख्येयगुणा एव लभ्यन्ते नासङ्ख्येयगुणा इति, तेभ्योऽलेश्याका अनन्तगुणाः, सिद्धानामनन्तत्वात्, तेभ्यः कापोतलेश्या अनन्तगुणाः, वनस्पतिकायिकानामपि कापोतलेश्यायाः संभवात्, वनस्पतिकायिकानां च सिद्धेभ्योऽप्यनन्तगुणत्वात्, तेभ्योऽपि नीललेश्या विशेषाधिकाः, प्रभूततराणां नीललेश्यासंभवात्, तेभ्योऽपि कृष्णलेश्याका विशेषाधिकाः, प्रभूततमानां कृष्णलेश्याकत्वात्, तेभ्यः सामान्यतः सलेश्या विशेषाधिकाः, नीललेश्याकादीनामपि तत्र प्रक्षेपात्॥ गतं लेश्याद्वारम्, इदानीं सम्यक्त्वद्वारमाह—

एएसि णं भंते! जीवाणं सम्मद्दिट्ठीणं मिच्छादिट्ठीणं सम्मामिच्छादिट्ठीणं च कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा?, गोयमा! सव्वत्थोवा जीवा सम्मामिच्छदिट्ठी सम्मदिट्ठी अणंतगुणा मिच्छादिट्ठी अणंतगुणा। दारं।(सू.६७)

एएसि णं भंते! जीवाणं आभिणिबोहियणाणीणं सुयणाणीणं ओहिणाणीणं मणपज्जवणाणीणं केवलणाणीण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा?, गोयमा! सव्वत्थोवा जीवा मणपज्जवणाणी ओहिनाणी असंखेज्जगुणा आभिणिबोहियनाणी सुयनाणी दोवि तुल्ला विसेसाहिया केवलनाणी अणंतगुणा। एएसि णं भंते! जीवाणं मइअन्नाणीणं सुयअन्नाणीणं विभंगणाणीण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा?, गोयमा!

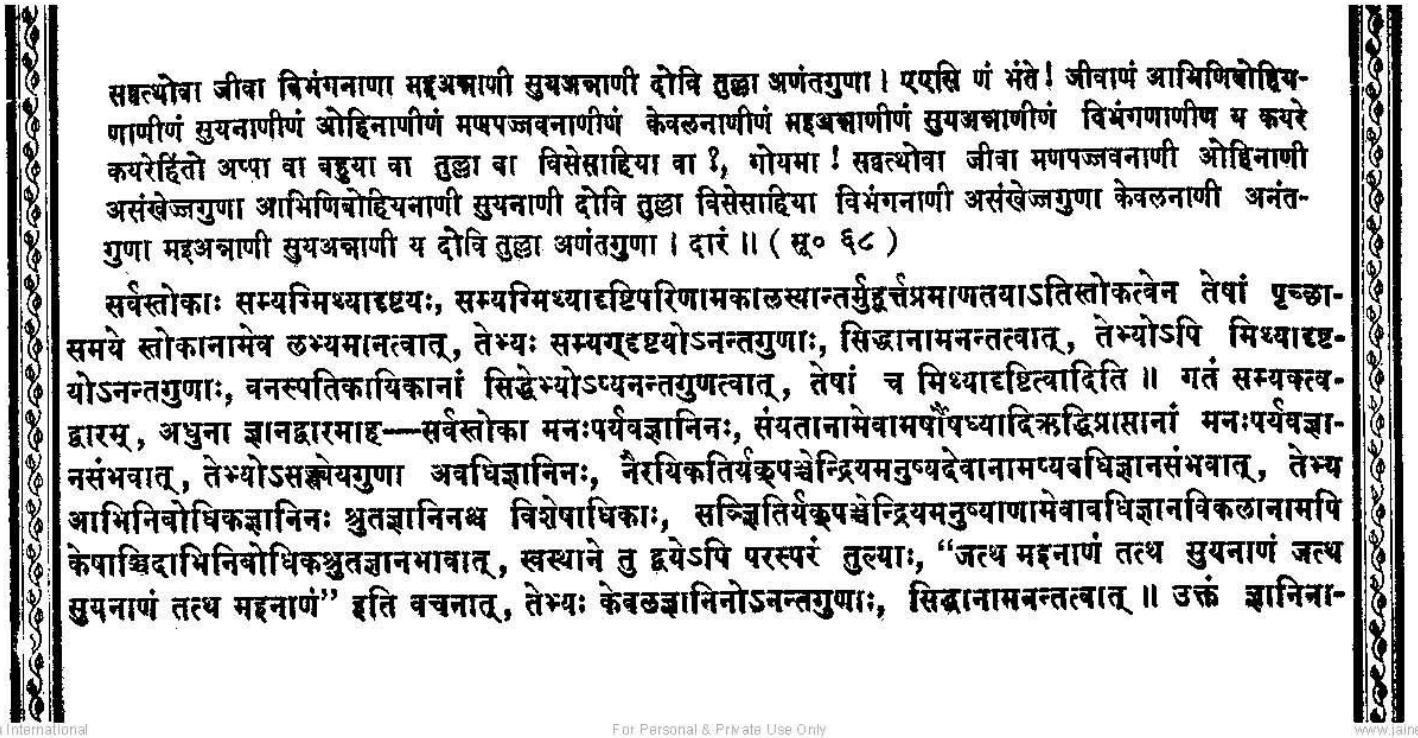
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तृतीय-पदे (०९) "द्रष्टि / सम्यक्त्व" द्वारम् आरब्ध:

प्रत सूत्रांक [६७-६८]

दीप अनुक्रम [२७१--२७२]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति:



सव्वत्थोवा जीवा विभंगनाणा मइअन्नाणी सुयअन्नाणी दोवि तुल्ला अणंतगुणा। एएसि णं भंते! जीवाणं आभिणिबोहियणाणीणं सुयनाणीणं ओहिनाणीणं मणपज्जवनाणीणं केवलनाणीणं मइअन्नाणीणं सुयअन्नाणीणं विभंगणाणीण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा?, गोयमा! सव्वत्थोवा जीवा मणपज्जवनाणी ओहिनाणी असंखेज्जगुणा आभिणिबोहियनाणी सुयनाणी दोवि तुल्ला विसेसाहिया विभंगनाणी असंखेज्जगुणा केवलनाणी अनंतगुणा मइअन्नाणी सुयअन्नाणी य दोवि तुल्ला अणंतगुणा। दारं ॥ (सू० ६८)

सर्वस्तोकाः सम्यग्मिथ्यादृष्टयः, सम्यग्मिथ्यादृष्टिपरिणामकालस्यान्तर्मुहूर्त्तप्रमाणतयाऽतिस्तोकत्वेन तेषां पृच्छासमये स्तोकानामेव लभ्यमानत्वात्, तेभ्यः सम्यग्दृष्टयोऽनन्तगुणाः, सिद्धानामनन्तत्वात्, तेभ्योऽपि मिथ्यादृष्टयोऽनन्तगुणाः, वनस्पतिकायिकानां सिद्धेभ्योऽप्यनन्तगुणत्वात्, तेषां च मिथ्यादृष्टित्वादिति ॥ गतं सम्यक्त्वद्वारम्, अधुना ज्ञानद्वारमाह—सर्वस्तोका मनःपर्यवज्ञानिनः, संयतानामेवामर्षौषध्यादिऋद्धिप्राप्तानां मनःपर्यवज्ञानसंभवात्, तेभ्योऽसङ्ख्येयगुणा अवधिज्ञानिनः, नैरयिकतिर्यक्पञ्चेन्द्रियमनुष्यदेवानामप्यवधिज्ञानसंभवात्, तेभ्य आभिनिबोधिकज्ञानिनः श्रुतज्ञानिनश्च विशेषाधिकाः, सञ्ज्ञितिर्यक्पञ्चेन्द्रियमनुष्याणामेवावधिज्ञानविकलानामपि केषाञ्चिदाभिनिबोधिकश्रुतज्ञानभावात्, स्वस्थाने तु द्वयेऽपि परस्परं तुल्याः, "जत्थ मइनाणं तत्थ सुयनाणं जत्थ सुयनाणं तत्थ मइनाणं" इति वचनात्, तेभ्यः केवलज्ञानिनोऽनन्तगुणाः, सिद्धानामनन्तत्वात् ॥ उक्तं ज्ञानिना-

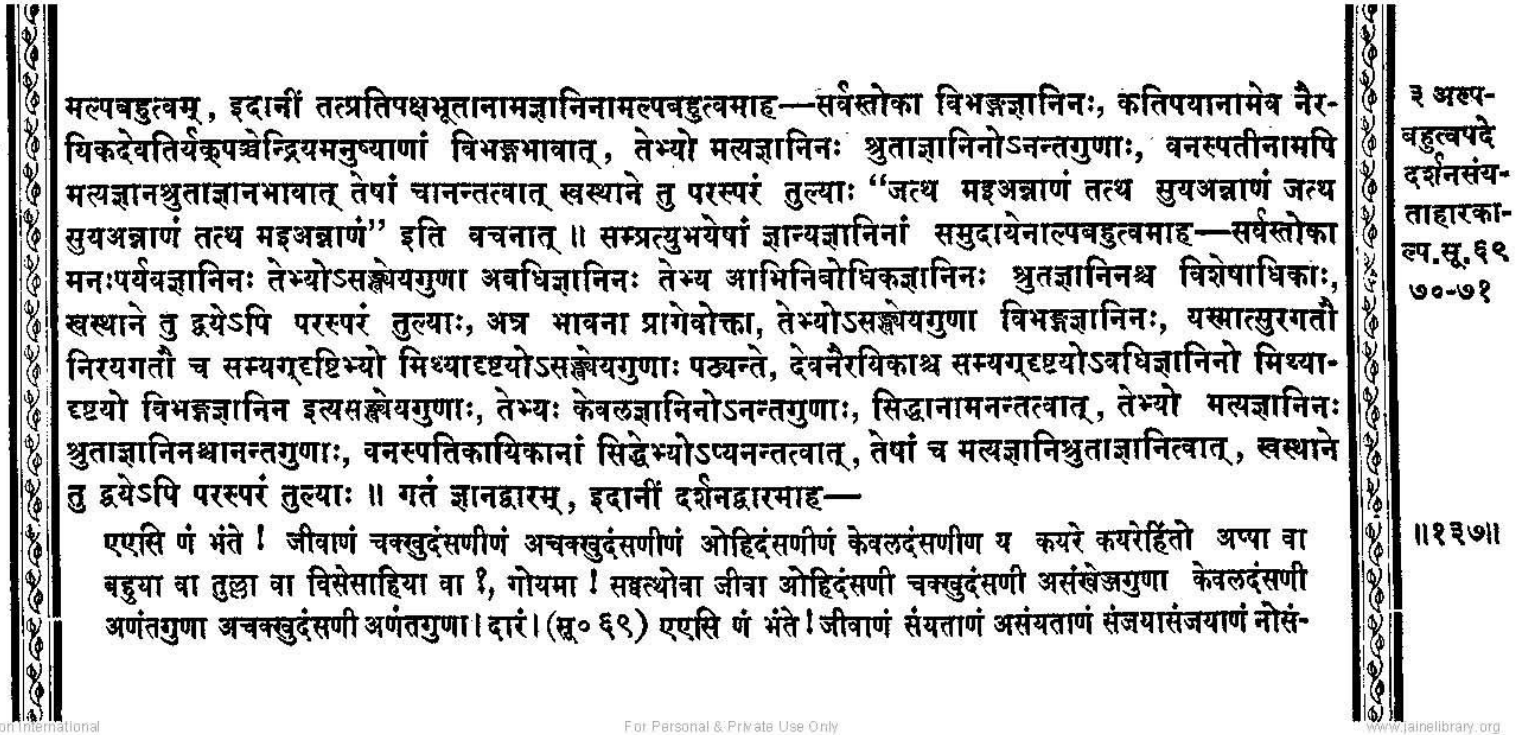
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तृतीय-पदे (१०) "ज्ञान", (११) "अज्ञान" द्वारम् आरब्ध:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [६७-६८]

दीप अनुक्रम [२७१--२७२]



प्रज्ञापना-याः मल-य० वृत्तौ. ॥१३७॥

मल्पबहुत्वम्, इदानीं तत्प्रतिपक्षभूतानामज्ञानिनामल्पबहुत्वमाह—सर्वस्तोका विभङ्गज्ञानिनः, कतिपयानामेव नैरयिकदेवतिर्यक्पञ्चेन्द्रियमनुष्याणां विभङ्गभावात्, तेभ्यो मत्यज्ञानिनः श्रुताज्ञानिनोऽनन्तगुणाः, वनस्पतीनामपि मत्यज्ञानश्रुताज्ञानभावात् तेषां चानन्तत्वात् स्वस्थाने तु परस्परं तुल्याः "जत्थ मइअन्नाणं तत्थ सुयअन्नाणं जत्थ सुयअन्नाणं तत्थ मइअन्नाणं" इति वचनात् ॥ सम्प्रत्युभयेषां ज्ञान्यज्ञानिनां समुदायेनाल्पबहुत्वमाह—सर्वस्तोका मनःपर्यवज्ञानिनः तेभ्योऽसङ्ख्येयगुणा अवधिज्ञानिनः तेभ्य आभिनिबोधिकज्ञानिनः श्रुतज्ञानिनश्च विशेषाधिकाः, स्वस्थाने तु द्वयेऽपि परस्परं तुल्याः, अत्र भावना प्रागेवोक्ता, तेभ्योऽसङ्ख्येयगुणा विभङ्गज्ञानिनः, यस्मात्सुरगतौ निरयगतौ च सम्यग्दृष्टिभ्यो मिथ्यादृष्टयोऽसङ्ख्येयगुणाः पठ्यन्ते, देवनैरयिकाश्च सम्यग्दृष्टयोऽवधिज्ञानिनो मिथ्यादृष्टयो विभङ्गज्ञानिन इत्यसङ्ख्येयगुणाः, तेभ्यः केवलज्ञानिनोऽनन्तगुणाः, सिद्धानामनन्तत्वात्, तेभ्यो मत्यज्ञानिनः श्रुताज्ञानिनश्चानन्तगुणाः, वनस्पतिकायिकानां सिद्धेभ्योऽप्यनन्तत्वात्, तेषां च मत्यज्ञानिश्रुताज्ञानित्वात्, स्वस्थाने तु द्वयेऽपि परस्परं तुल्याः ॥ गतं ज्ञानद्वारम्, इदानीं दर्शनद्वारमाह—

एएसि णं भंते ! जीवाणं चक्खुदंसणीणं अचक्खुदंसणीणं ओहिदंसणीणं केवलदंसणीण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा जीवा ओहिदंसणी चक्खुदंसणी असंखेज्जगुणा केवलदंसणी अणंतगुणा अचक्खुदंसणी अणंतगुणा। दारं। (सू० ६९) एएसि णं भंते ! जीवाणं संयताणं असंयताणं संजयासंजयाणं नोसं-

३ अल्प-बहुत्वपदे दर्शनसंय-ताहारका-ल्प.सू.६९ ७०-७१

॥१३७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तृतीय-पदे (१२) "दर्शन", (१३) "संयत", (१४) "उपयोग", (१५) "आहारक" द्वारम् आरब्ध:

प्रत सूत्रांक [६९-७२]

दीप अनुक्रम [२७३--२७६]

अयनोअसंजयनोसंजयासंजयाण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा?, गोयमा! सव्वत्थोवा जीवा संजया संजया संयता असंखेज्जगुणा नोसंयतानोअसंजयानोसंयतासंयता अणंतगुणा असंजया अणंतगुणा ॥ दारं। (सू० ७०)। एएसि णं भंते! जीवाणं सागारोवउत्ताणं अणागारोवउत्ताण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसा हिया वा?, गोयमा! सव्वत्थोवा जीवा अणागारोवउत्ता सागारोवउत्ता संखेज्जगुणा। दारं। (सू० ७१)। एएसि णं भंते! जीवाणं आहारगाणं अणाहारगाण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा?, गोयमा! सव्वत्थोवा जीवा अणाहारगा आहारगा असंखेज्जगुणा दारं ॥ (सू० ७२)।

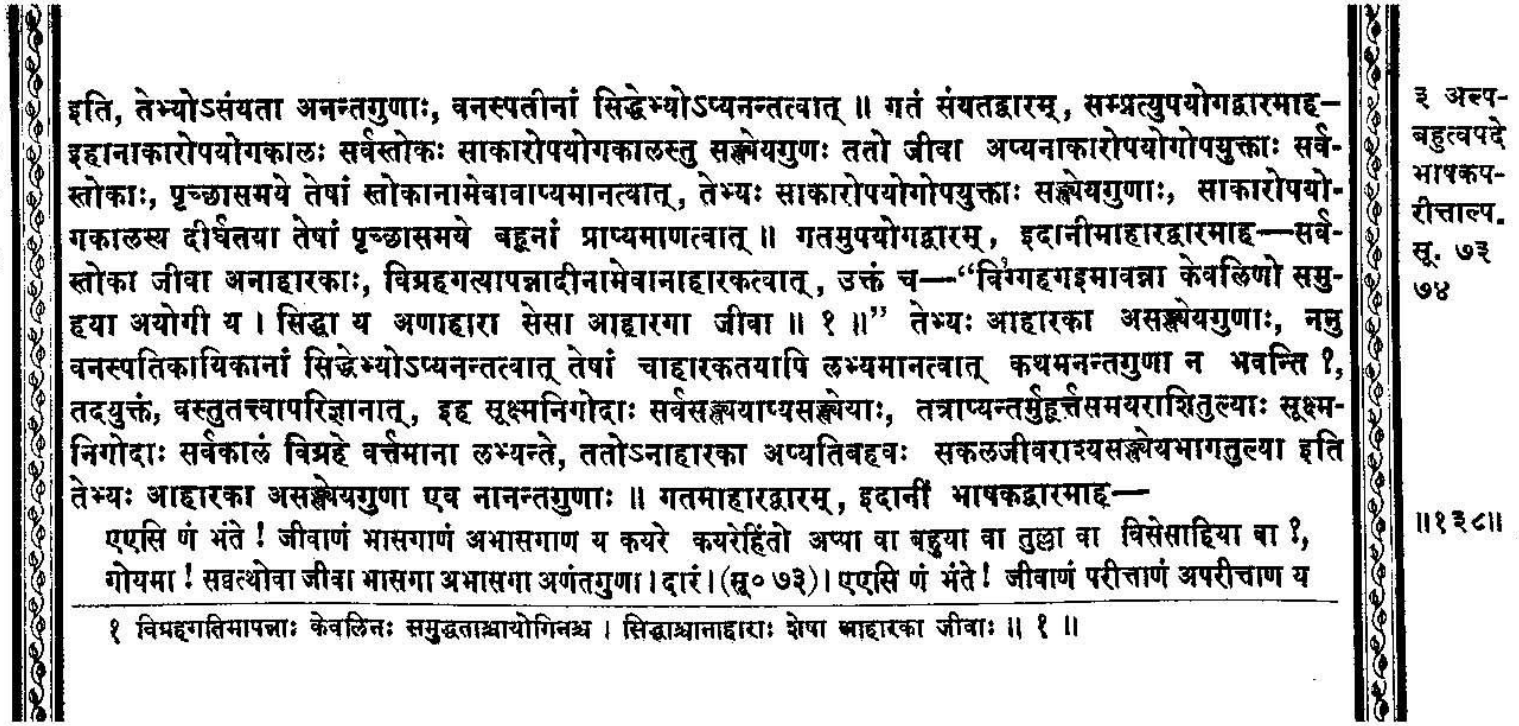
सर्वस्तोका अवधिदर्शनिनः, देवनैरयिकाणां कतिपयानां च सञ्ज्ञिपञ्चेन्द्रियतिर्यग्मनुष्याणामवधिदर्शनभावात्, तेभ्यश्चक्षुर्दर्शिनोऽसङ्ख्येयगुणाः, सर्वेषां देवनैरयिकगर्भजमनुष्याणां सञ्ज्ञितिर्यक्पञ्चेन्द्रियाणां असञ्ज्ञितिर्यक्पञ्चेन्द्रियाणां चतुरिन्द्रियाणां च चक्षुर्दर्शनभावात्, तेभ्यः केवलदर्शनिनोऽनन्तगुणाः, सिद्धानामनन्तत्वात्, तेभ्योऽचक्षुर्दर्शनिनोऽनन्तगुणाः, वनस्पतिकायिकानां सिद्धेभ्योऽप्यनन्तत्वात् ॥ गतं दर्शनद्वारम्, अधुना संयतद्वारमाह— सर्वस्तोकाः संयताः, उत्कृष्टपदेऽपि तेषां कोटीसहस्रपृथक्त्वप्रमाणतया लभ्यमानत्वात्, "कोडिसहस्सपुहुत्तं मणुयलोए संजयाणं" इति वचनात्, तेभ्यः संयतासंयताः—देशविरता असङ्ख्येयगुणाः, तिर्यक्पञ्चेन्द्रियाणामसङ्ख्यातानां देशविरतिसद्भावात्, तेभ्यो नोसंयतनोऽसंयतनोसंयतासंयता अनन्तगुणाः, प्रतिषेधत्रयवृत्ता हि सिद्धास्ते चानन्ता

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [६९-७२]

दीप अनुक्रम [२७३--२७६]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति:



प्रज्ञापनायाः मल० वृत्तौ. ॥१३८॥

इति, तेभ्योऽसंयता अनन्तगुणाः, वनस्पतीनां सिद्धेभ्योऽप्यनन्तत्वात् ॥ गतं संयतद्वारम्, सम्प्रत्युपयोगद्वारमाह— इहानाकारोपयोगकालः सर्वस्तोकः साकारोपयोगकालस्तु सङ्ख्येयगुणः ततो जीवा अप्यनाकारोपयोगोपयुक्ताः सर्वस्तोकाः, पृच्छासमये तेषां स्तोकानामेवावाप्यमानत्वात्, तेभ्यः साकारोपयोगोपयुक्ताः सङ्ख्येयगुणाः, साकारोपयोगकालस्य दीर्घतया तेषां पृच्छासमये बहूनां प्राप्यमाणत्वात् ॥ गतमुपयोगद्वारम्, इदानीमाहारद्वारमाह—सर्वस्तोका जीवा अनाहारकाः, विग्रहगत्यापन्नादीनामेवानाहारकत्वात्, उक्तं च—"विग्गहगइमावन्ना केवलिणो समुहया अयोगी य । सिद्धा य अणाहारा सेसा आहारगा जीवा ॥ १ ॥" तेभ्यः आहारका असङ्ख्येयगुणाः, नन्वनस्पतिकायिकानां सिद्धेभ्योऽप्यनन्तत्वात् तेषां चाहारकतयापि लभ्यमानत्वात् कथमनन्तगुणा न भवन्ति ?, तदयुक्तं, वस्तुतत्त्वापरिज्ञानात्, इह सूक्ष्मनिगोदाः सर्वसङ्ख्ययाप्यसङ्ख्येयाः, तत्राप्यन्तर्मुहूर्त्तसमयराशितुल्याः सूक्ष्मनिगोदाः सर्वकालं विग्रहे वर्त्तमाना लभ्यन्ते, ततोऽनाहारका अप्यतिबहवः सकलजीवराश्यसङ्ख्येयभागतुल्या इति तेभ्यः आहारका असङ्ख्येयगुणा एव नानन्तगुणाः ॥ गतमाहारद्वारम्, इदानीं भाषकद्वारमाह—

एएसि णं भंते ! जीवाणं भासगाणं अभासगाण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा जीवा भासगा अभासगा अणंतगुणा । दारं । (सू० ७३) । एएसि णं भंते ! जीवाणं परीत्ताणं अपरीत्ताण य

१ विग्रहगतिमापन्नाः केवलिनः समुद्घताश्चायोगिनश्च । सिद्धाश्चानाहाराः शेषा आहारका जीवाः ॥ १ ॥

३ अल्पबहुत्वपदे भाषकपरीत्ताल्प. सू. ७३ ७४

॥१३८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तृतीय-पदे (१६) "भाषक",(१७) "परित्त", (१८) "पर्याप्त", (१९) "सूक्ष्मं", (२०) "संज्ञी", (२१) "भवसिद्धिक" द्वारम् आरब्धः

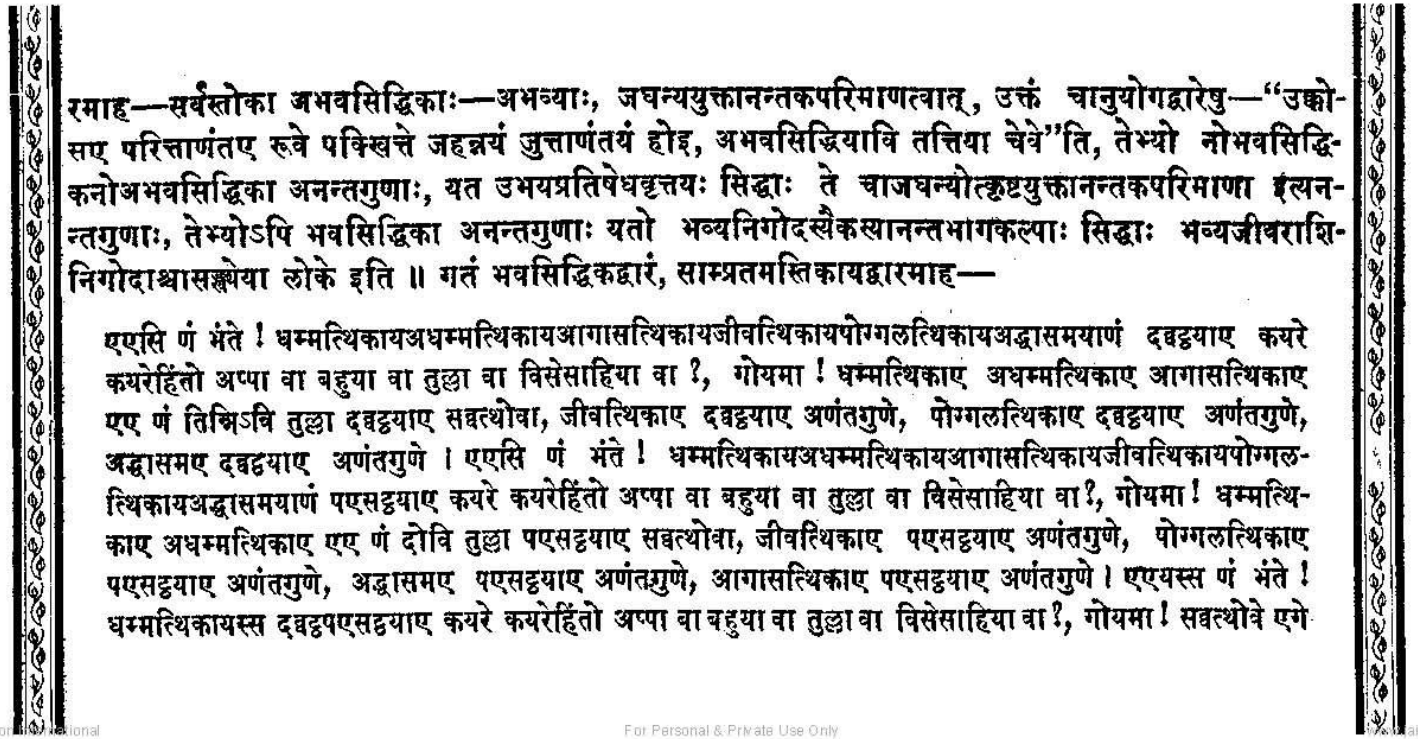
रीत्तनोअपरीत्ताण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा जीवा परीत्ता नोपरीत्तानोअपरीत्ता अणंतगुणा, अपरीत्ता अणंतगुणा । दारं (सू० ७४) । एएसि णं भंते ! जीवाणं पज्जत्ताणं अपज्जत्ताणं नोपज्जत्तानोअपज्जत्ताण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा जीवा नोपज्जत्तानोअपज्जत्तगा अपज्जत्तगा अणंतगुणा पज्जत्तगा संखिज्जगुणा । दारं । (सू० ७५) । एएसि णं भंते ! जीवाणं सुहुमाणं बायराणं नोसुहुमनोबायराण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा जीवा नोसुहुमानोबायरा बायरा अणंतगुणा सुहुमा असंखेज्जगुणा । दारं । (सू० ७६) । एएसि णं भंते ! जीवाणं सन्नीणं असन्नीणं नोसन्नीनोअसन्नीणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा जीवा सन्नी नोसन्नीनोअसन्नी अणंतगुणा असन्नी अणंतगुणा । दारं । (सू० ७७) । एएसि णं भंते ! जीवाणं भवसिद्धियाणं अभवसिद्धियाणं नोभवसिद्धियानोअभवसिद्धियाण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा जीवा अभवसिद्धिया णोभवसिद्धियाणोअभवसिद्धिया अणंतगुणा भवसिद्धिया अणंतगुणा । दारं । (सू० ७८) ।

सर्वस्तोका भाषकाः—भाषालब्धिसम्पन्नाः, द्वीन्द्रियादीनामेव भाषकत्वात्, अभाषका—भाषालब्धिहीना अनन्तगुणाः, वनस्पतिकायिकानामनन्तत्वात् ॥ गतं भाषकद्वारं, सम्प्रति परीत्तद्वारमाह—इह परीत्ता द्विविधाः—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भवपरीत्ताः कायपरीत्ताश्च, तत्र भवपरीत्ता येषां किञ्चिदूनोऽपार्धपुद्गलपरावर्त्तमात्रसंसारः, कायपरीत्ताः—प्रत्येकशरीरिणः, तत्रोभयेऽपि परीत्ताः सर्वस्तोकाः, शुक्लपाक्षिकाणां प्रत्येकशरीरिणां चाशेषजीवापेक्षयाऽतिस्तोकत्वात्, ततो नोपरीत्तानोअपरीत्ता अनन्तगुणाः, उभयप्रतिषेधवृत्ता हि सिद्धाः ते चानन्ता इति, तेभ्योऽपरीत्ता अनन्तगुणाः, कृष्णपाक्षिकाणां साधारणवनस्पतीनां वा सिद्धेभ्योऽप्यनन्तगुणत्वात् ॥ गतं परीत्तद्वारं, सम्प्रति पर्याप्तद्वारमाह—सर्वस्तोका नोपर्याप्तकनोअपर्याप्तकाः, उभयप्रतिषेधवर्त्तिनो हि सिद्धाः ते चापर्याप्तकादिभ्यः सर्वस्तोका इति, तेभ्योऽपर्याप्तका अनन्तगुणाः, साधारणवनस्पतिकायिकानां सिद्धेभ्योऽप्यनन्तगुणानां सर्वकालमपर्याप्तत्वेन लभ्यमानत्वात्, तेभ्यः पर्याप्ताः सङ्ख्येयगुणाः, इह सर्वबहवो जीवाः सूक्ष्माः, सूक्ष्माश्च सर्वकालमपर्याप्तेभ्यः पर्याप्ताः सङ्ख्येयगुणा इति सङ्ख्येयगुणा उक्ताः ॥ गतं पर्याप्तद्वारं, सम्प्रति सूक्ष्मद्वारमाह—सर्वस्तोका जीवा नोसूक्ष्मनोबादराः सिद्धा इत्यर्थः, तेषां सूक्ष्मजीवराशेर्बादरजीवराशेश्चानन्तभागकल्पत्वात्, तेभ्यो बादरा अनन्तगुणाः, बादरनिगोदजीवानां सिद्धेभ्योऽप्यनन्तगुणत्वात्, तेभ्यः सूक्ष्मा असङ्ख्येयगुणाः, बादरनिगोदेभ्यः सूक्ष्मनिगोदानामसङ्ख्येयगुणत्वात् ॥ गतं सूक्ष्मद्वारम्, इदानीं सञ्ज्ञिद्वारम्—सर्वस्तोकाः सञ्ज्ञिनः, समनस्कानामेव सञ्ज्ञित्वात्, तेभ्यो नोसञ्ज्ञि[नो]नोअसञ्ज्ञिनः अनन्तगुणाः, उभयप्रतिषेधवृत्ता हि सिद्धाः ते च सञ्ज्ञिभ्योऽनन्तगुणा एवेति, तेभ्योऽसञ्ज्ञिनोऽनन्तगुणाः, वनस्पतीनां सिद्धेभ्योऽप्यनन्तगुणत्वात् ॥ गतं सञ्ज्ञिद्वारम्, इदानीं भवसिद्धिकद्वा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७३-७८] दीप अनुक्रम [२७७--२८२]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति: 
	तृतीय-पदे (२२) "अस्तिकाय" द्वारम् आरब्ध:

रमाह—सर्वस्तोका अभवसिद्धिकाः—अभव्याः, जघन्ययुक्तानन्तकपरिमाणत्वात्, उक्तं चानुयोगद्वारेषु—"उक्कोसए परित्ताणंतए रूवे पक्खित्ते जहन्नयं जुत्ताणंतयं होइ, अभवसिद्धियावि तत्तिया चेवे"ति, तेभ्यो नोभवसिद्धिकनोअभवसिद्धिका अनन्तगुणाः, यत उभयप्रतिषेधवृत्तयः सिद्धाः ते चाजघन्योत्कृष्टयुक्तानन्तकपरिमाणा इत्यनन्तगुणाः, तेभ्योऽपि भवसिद्धिका अनन्तगुणाः यतो भव्यनिगोदस्यैकस्यानन्तभागकल्पाः सिद्धाः भव्यजीवराशिनिगोदाश्चासङ्ख्येया लोके इति ॥ गतं भवसिद्धिकद्वारं, साम्प्रतमस्तिकायद्वारमाह—

एएसि णं भंते ! धम्मत्थिकायअधम्मत्थिकायआगासत्थिकायजीवत्थिकायपोग्गलत्थिकायअद्धासमयाणं दव्वट्ठयाए कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! धम्मत्थिकाए अधम्मत्थिकाए आगासत्थिकाए एए णं तिन्निऽवि तुल्ला दव्वट्ठयाए सव्वत्थोवा, जीवत्थिकाए दव्वट्ठयाए अणंतगुणे, पोग्गलत्थिकाए दव्वट्ठयाए अणंतगुणे, अद्धासमए दव्वट्ठयाए अणंतगुणे । एएसि णं भंते ! धम्मत्थिकायअधम्मत्थिकायआगासत्थिकायजीवत्थिकायपोग्गलत्थिकायअद्धासमयाणं पएसट्ठयाए कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा?, गोयमा! धम्मत्थिकाए अधम्मत्थिकाए एए णं दोवि तुल्ला पएसट्ठयाए सव्वत्थोवा, जीवत्थिकाए पएसट्ठयाए अणंतगुणे, पोग्गलत्थिकाए पएसट्ठयाए अणंतगुणे, अद्धासमए पएसट्ठयाए अणंतगुणे, आगासत्थिकाए पएसट्ठयाए अणंतगुणे । एएयस्स णं भंते ! धम्मत्थिकायस्स दव्वट्ठपएसट्ठयाए कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा?, गोयमा! सव्वत्थोवे एगे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७९]

दीप अनुक्रम [२८३]

प्रज्ञापनायाः मलय०वृत्तौ. ॥१४०॥

धम्मत्थिकाए दव्वट्ठयाए से चेव पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणे। एयस्स णं भंते! अधम्मत्थिकायस्स दव्वट्ठपएसट्ठयाए कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा! सव्वत्थोवे एगे अधम्मत्थिकाए दव्वट्ठयाए से चेव पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणे। एयस्स णं भंते! आगासत्थिकायस्स दव्वट्ठपएसट्ठयाए कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा! सव्वत्थोवे एगे आगासत्थिकाए दव्वट्ठयाए से चेव पएसट्ठयाए अणंतगुणे। एयस्स णं भंते! जीवत्थिकायस्स दव्वट्ठपएसट्ठयाए कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा! सव्वत्थोवे जीवत्थिकाए दव्वट्ठयाए से चेव पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणे, एयस्स णं भंते? पोग्गलत्थिकायस्स दव्वट्ठपएसट्ठयाए कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा! सव्वत्थोवे पोग्गलत्थिकाए दव्वट्ठयाए से चेव पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणे। अद्धासमये न पुच्छिज्जइ पएसाभावा। एएसि णं भंते! धम्मत्थिकायअधम्मत्थिकायआगासत्थिकायजीवत्थिकायपोग्गलत्थिकायअद्धासमयाणं दव्वट्ठपएसट्ठयाए य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा! धम्मत्थिकाए अधम्मत्थिकाए आगासत्थिकाए एए तिन्निवि तुल्ला दव्वट्ठयाए सव्वत्थोवा, धम्मत्थिकाए अधम्मत्थिकाए य एएसि णं दोन्निवि तुल्ला पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा, जीवत्थिकाए दव्वट्ठयाए अणंतगुणे से चेव पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणे, पोग्गलत्थिकाए दव्वट्ठयाए अणंतगुणे से चेव पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणे, अद्धासमए दव्वट्ठपएसट्ठयाए अणंतगुणे, आगासत्थिकाए पएसट्ठयाए अणंतगुणे। दारं। (सू० ७९)

३ अल्पबहुत्वपदे अस्तिकायद्वारं सूत्रं. ७९ ॥१४०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७९]

दीप अनुक्रम [२८३]

धर्म्मास्तिकायोऽधर्म्मास्तिकाय आकाशास्तिकाय एते त्रयोऽपि द्रव्यार्थतया–द्रव्यमेवार्थो द्रव्यार्थः तस्य भावो द्रव्यार्थता तया द्रव्यरूपतया इत्यर्थः तुल्याः—समानाः, प्रत्येकमेकसङ्ख्याकत्वात्, अत एव सर्वस्तोकाः, तेभ्यो जीवास्तिकायो द्रव्यार्थतया अनन्तगुणः, जीवानां प्रत्येकं द्रव्यत्वात् तेषां च जीवास्तिकाये अनन्तत्वात्, तस्मादपि पुद्गलास्तिकायो द्रव्यार्थतयाऽनन्तगुणः, कथमिति चेत्, उच्यते, इह परमाणुद्विप्रदेशकादीनि पृथक् पृथक् द्रव्याणि, तानि च सामान्यतस्त्रिधा, तद्यथा—प्रयोगपरिणतानि मिश्रपरिणतानि विश्रसापरिणतानि च, तत्र प्रयोगपरिणतान्यपि तावज्जीवेभ्योऽनन्तगुणानि, एकैकस्य जीवस्यानन्तैः प्रत्येकं ज्ञानावरणीयदर्शनावरणीयादिकर्मपुद्गलस्कन्धैरावेष्टित(परिवेष्टित)त्वात्, किं पुनः शेषाणि?, ततः प्रयोगपरिणतेभ्यो मिश्रपरिणतान्यनन्तगुणानि, तेभ्यो विश्रसापरिणतान्यनन्तगुणानि, तथा चोक्तं प्रज्ञप्तौ—"सव्वत्थोवा पुग्गला पयोगपरिणया मीसपरिणया अनंतगुणा वीससापरिणया अनंतगुणा" इति, ततो भवति जीवास्तिकायात् पुद्गलास्तिकायो द्रव्यार्थतयाऽनन्तगुणः, तस्मादप्यद्धासमयो द्रव्यार्थतयाऽनन्तगुणः, कथमिति चेत्, उच्यते, इहैकस्यैव परमाणोरनागते काले तत्र द्विप्रदेशिकत्रिप्रदेशकयावत्दशप्रदेशिकसङ्ख्यातप्रदेशिकासङ्ख्यातप्रदेशिकानन्तप्रदेशिकस्कन्धान्तःपरिणामितया अनन्ता भाविनः संयोगा पृथक्पृथक्कालाः केवलवेदसोपलब्धाः, यथा चैकस्य परमाणोस्तथा सर्वेषां प्रत्येकं द्विप्रदेशादिस्कन्धानां चानन्ताः संयोगाः पुरस्कृताः पृथक्पृथक्काला उपलब्धाः, सर्वेषामपि मनुष्य[लोक]क्षेत्रान्तर्वर्त्तितया परिणाम-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संभवात्, तथा क्षेत्रतोऽप्ययं परमाणुरमुष्मिन्नाकाशप्रदेशे अमुष्मिन् कालेऽवगाहिष्यते इत्येवमनन्ता एकस्य परमाणोर्भाविनः संयोगाः, यथैकस्य परमाणोस्तथा सर्वेषां परमाणूनां, तथा द्विप्रदेशकादीनामपि स्कन्धानामनन्तप्रदेशस्कन्धपर्यन्तानां प्रत्येकं तत्तदेकप्रदेशाद्यवगाहभेदतो भिन्नभिन्नकाला अनन्ता भाविनः संयोगाः, तथा कालतोऽप्ययं परमाणुरमुष्मिन्नाकाशप्रदेशे एकसमयस्थितिको द्विसमयस्थितिक इत्येवमेकस्यापि परमाणोरेकस्मिन्नाकाशप्रदेशेऽसङ्ख्येया भाविनः संयोगाः एवं सर्वेष्वपि आकाशप्रदेशेषु प्रत्येकमसङ्ख्येया भाविनः संयोगाः ततो भूयो भूयस्तेष्वाकाशप्रदेशेषु परावृत्तौ कालस्यानन्तत्वादनन्ताः कालतो भाविनः संयोगाः, यथा चैकस्य परमाणोस्तथा सर्वेषां परमाणूनां सर्वेषां च प्रत्येकं द्विप्रदेशिकादीनां स्कन्धानां, तथा भावतोऽप्ययं परमाणुरमुष्मिन् काले एकगुणकालको भवतीत्येवमेकस्यापि परमाणोर्भिन्नभिन्नकाला अनन्ताः संयोगाः, यथा चैकस्य परमाणोस्तथा सर्वेषां परमाणूनां सर्वेषां च द्विप्रदेशिकादीनां स्कन्धानां पृथक् पृथक् अनन्ता भावतः पुरस्कृतसंयोगाः, तदेवमेकस्यापि परमाणोर्द्रव्यक्षेत्रकालभावविशेषसम्बन्धवशादनन्ता भाविनः समया उपलब्धाः, यथैकस्य परमाणोस्तथा सर्वेषां परमाणूनां सर्वेषां च प्रत्येकं द्विप्रदेशिका(दी)नां स्कन्धानां, न चैतत् परिणामिकालवस्तुव्यतिरेके परिणामिपुद्गलास्तिकायादिव्यतिरेके चोपपद्यते, ततः सर्वमिदं तात्त्विकमवसेयं, उक्तं च—"संयोगपुरस्कारश्च नाम भाविनि हि युज्यते काले। न हि संयोगपुरस्कारो ह्यसतां केषांचिदुपपन्नः॥१॥" इति, यथा च सर्वेषां परमाणूनां सर्वेषां च द्विप्रदेशिकादीनां स्कन्धानां

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७९]

दीप अनुक्रम [२८३]

प्रत्येकं द्रव्यक्षेत्रकालभावविशेषसम्बन्धवशादनन्ता भाविनोऽद्धासमयाः तथा अतीता अपीति सिद्धः पुद्गलास्तिकायादनन्तगुणोऽद्धासमयो द्रव्यार्थतयेति । उक्तं द्रव्यार्थतया परस्परमल्पबहुत्वम्, इदानीमेतेषामेव प्रदेशार्थतया तदाह—धर्म्मास्तिकायोऽधर्म्मास्तिकाय एतौ द्वावपि परस्परं प्रदेशार्थतया तुल्यौ, उभयोरपि लोकाकाशप्रदेशपरिमाणप्रदेशत्वात्, शेषास्तिकायाद्धासमयापेक्षया च सर्वस्तोकौ, ततो जीवास्तिकायः प्रदेशार्थतया अनन्तगुणः, जीवास्तिकाये जीवानामनन्तत्वात् एकैकस्य च जीवस्य लोकाकाशप्रदेशपरिमाणप्रदेशत्वात्, तस्मादपि पुद्गलास्तिकायः प्रदेशार्थतयाऽनन्तगुणः, कथमिति चेत्, उच्यते, इह कर्मस्कन्धप्रदेशा अपि तावत् सर्वजीवप्रदेशेभ्योऽनन्तगुणाः, एकैकस्य जीवप्रदेशस्यानन्तानन्तैः कर्मपरमाणुभिरावेष्टितपरिवेष्टितत्वात्, किं पुनः सकलपुद्गलास्तिकायप्रदेशाः ?, ततो भवति जीवास्तिकायात् पुद्गलास्तिकायः प्रदेशार्थतयाऽनन्तगुणः, तस्मादप्यद्धासमयः प्रदेशार्थतयाऽनन्तगुणः, एकैकस्य पुद्गलास्तिकायप्रदेशस्य प्रागुक्तक्रमेण तत्तद्द्रव्यक्षेत्रकालभावविशेषसम्बन्धभावतोऽनन्तानामतीताद्धासमयानामनन्तानामनागतसमयानां भावात्, तस्मादाकाशास्तिकायः प्रदेशार्थतयाऽनन्तगुणः, अलोकस्य सर्वतोऽप्यनन्तताभावात् ॥ गतं प्रदेशार्थतयाऽल्पबहुत्वम्, इदानीं प्रत्येकं द्रव्यार्थप्रदेशार्थतयाऽल्पबहुत्वमाह—सर्वस्तोको धर्म्मास्तिकायो द्रव्यार्थतया, एकत्वात्, प्रदेशार्थतयाऽसङ्ख्येयगुणः, लोकाकाशप्रदेशपरिमाणप्रदेशात्मकत्वात्, एवमधर्म्मास्तिकायसूत्रमपि भावनीयम्, आकाशास्तिकायो द्रव्यार्थतया सर्वस्तोकः, एकत्वात्, प्रदेशार्थतयाऽनन्तगुणः, अपरिमि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तत्वात्, जीवास्तिकायो द्रव्यार्थतया सर्वस्तोकः, प्रदेशार्थतयाऽसङ्ख्येयगुणः, प्रतिजीवं लोकाकाशप्रदेशपरिमाणप्रदेशभावात्, तथा सर्वस्तोकः पुद्गलास्तिकायो द्रव्यार्थतया, द्रव्याणां सर्वत्रापि स्तोकत्वात्, स एव पुद्गलास्तिकायस्तत्तद्द्रव्यापेक्षया प्रदेशार्थतया चिन्त्यमानोऽसङ्ख्येयगुणः, ननु बहवः खलु जगत्यनन्तप्रदेशका अपि स्कन्धा विद्यन्ते ततोऽनन्तगुणाः कस्मान्न संभवन्ति ?, तदयुक्तं, वस्तुतत्त्वापरिज्ञानात्, इह हि स्वल्पा अनन्तप्रदेशकाः स्कन्धाः परमाण्वादयस्त्वतिबहवः, तथा च वक्ष्यति सूत्रम्—"सव्वत्थोवा अणंतपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए, परमाणुपोग्गला दव्वट्ठयाए अणंतगुणा, संखेज्जपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए संखेज्जगुणा, असंखेज्जपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा" इति, ततो यदा सर्व एव पुद्गलास्तिकायः प्रदेशार्थतया चिन्त्यते तदाऽनन्तप्रदेशकानां स्कन्धानामतिस्तोकत्वात् परमाणूनां चातिबहुत्वात् तेषां च पृथक् पृथक् द्रव्यत्वात् असङ्ख्येयप्रदेशकानां च स्कन्धानां परमाण्वपेक्षयाऽसङ्ख्येयगुणत्वादसङ्ख्येयगुण एवोपपद्यते नानन्तगुण इत्यर्थः, 'अद्धासमए न पुच्छिज्जइ' इति, अद्धासमयो द्रव्यार्थप्रदेशार्थतया न पृच्छ्यते, कुतः ? इत्याह—प्रदेशाभावात्, आह–कोऽयमद्धासमयानां द्रव्यार्थतानियमो ?, यावता प्रदेशार्थताऽपि तेषां विद्यते एव, तथाहि—यथाऽनन्तानां परमाणूनां समुदायः स्कन्धो भण्यते स च द्रव्यं तदवयवाश्च प्रदेशाः तथेहापि सकलः कालो द्रव्यं तदवयवाश्च समयाः प्रदेशा इति, तदयुक्तं, दृष्टान्तदार्ष्टान्तिकवैषम्यात्, परमाणूनां समुदायः तदा स्कन्धो भवति यदा ते परस्परसापेक्षतया परिणमन्ते, परस्परनिरपेक्षाणां केव-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [७९]

दीप अनुक्रम [२८३]

लपरमाणूनामिव स्कन्धत्वायोगात्, अद्धासमयास्तु परस्परनिरपेक्षा एव, वर्त्तमानसमयभावे पूर्वापरसमययोरभावात्, ततो न स्कन्धत्वपरिणामः, तद्भावाच्च नाद्धासमयाः प्रदेशाः, किं तु पृथग् द्रव्याण्येवेति ॥ सम्प्रत्यमीषां धर्म्मास्तिकायादीनां सर्वेषां युगपत् द्रव्यार्थप्रदेशार्थतयाऽल्पबहुत्वमाह—धर्म्मास्तिकायोऽधर्म्मास्तिकाय आकाशास्तिकाय एते त्रयोऽपि द्रव्यार्थतया तुल्याः सर्वस्तोकाश्च, प्रत्येकमेकसङ्ख्याकत्वात्, तेभ्यो धर्मास्तिकायोऽधर्म्मास्तिकाय एतौ द्वावपि प्रदेशार्थतयाऽसङ्ख्येयगुणौ, स्वस्थाने तु परस्परं तुल्यौ, ताभ्यां जीवास्तिकायो द्रव्यार्थतयाऽनन्तगुणः, अनन्तानां जीवद्रव्याणां भावात्, स एव जीवास्तिकायः प्रदेशार्थतयाऽसङ्ख्येयगुणः, प्रतिजीवमसङ्ख्येयानां प्रदेशानां भावात्, तस्मादपि प्रदेशार्थतया जीवास्तिकायात् पुद्गलास्तिकायो द्रव्यार्थतयाऽनन्तगुणः, प्रतिजीवप्रदेशं ज्ञानावरणीयादिकर्म्मपुद्गलस्कन्धानामप्यनन्तानां भावात्, स एव पुद्गलास्तिकायः प्रदेशार्थतयाऽसङ्ख्येयगुणः, अत्र भावना प्रागिव, तस्मादपि प्रदेशार्थतया पुद्गलास्तिकायात् अद्धासमयो द्रव्यार्थप्रदेशार्थतयाऽनन्तगुणः, अत्रापि भावना प्रागिव, तस्मादप्याकाशास्तिकायः प्रदेशार्थतया अनन्तगुणः, सर्वासवपि दिक्षु तस्यान्ताभावात्, अद्धासमयस्य च मनुष्यक्षेत्रमात्रभावात् ॥ गतमस्तिकायद्वारम्, इदानीं चरमद्वारमाह—

एएसि णं भंते ! जीवाणं चरिमाणं अचरिमाण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा जीवा अचरिमा चरिमा अणंतगुणा । दारं । (सू० ८०)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तृतीय-पदे (२३) "चरम" द्वारम् आरब्धः

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [८०]

दीप अनुक्रम [२८४]

इह येषा चरमो भवः संभवी योग्यतयाऽपि ते चरमा उच्यन्ते, ते चार्थात् भव्याः, इतरे अचरमा—अभव्याः सिद्धाश्च, उभयेषामपि चरमभवाभावात्, तत्र स्तोका अचरमाः, अभव्यानां सिद्धाना च समुदितानामप्यजघन्योत्कृष्टयुक्तानन्तकपरिमाणत्वात्, तेभ्योऽनन्तगुणाश्चरमाः, अजघन्योत्कृष्टानन्तानन्तकपरिमाणत्वात्॥ गतं चरमद्वारम्, अधुना जीवद्वारमाह—

एएसि णं भंते ! जीवाणं पोग्गलाणं अद्धासमयाणं सव्वदव्वाणं सव्वपएसाणं सव्वपज्जवाण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा जीवा पोग्गला अणंतगुणा अद्धासमया अणंतगुणा सव्वदव्वा विसेसाहिया सव्वपएसा अणंतगुणा सव्वपज्जवा अणंतगुणा । दारं । (सू० ८१)

सर्वस्तोका जीवाः, तेभ्यः पुद्गला अनन्तगुणाः, तेभ्योऽद्धासमया अनन्तगुणाः, अत्र भावना प्रागेव कृता, तेभ्योऽद्धासमयेभ्यः सर्वद्रव्याणि विशेषाधिकानि, कथमिति चेत्, उच्यते, इह येऽनन्तरमद्धासमयाः पुद्गलेभ्योऽनन्तगुणा उक्तास्ते प्रत्येकं द्रव्याणि ततो द्रव्यचिन्तायां तेऽपि परिगृह्यन्ते तेषु च मध्ये सर्वजीवद्रव्याणि सर्वपुद्गलद्रव्याणि धर्म्माधर्म्माकाशास्तिकायद्रव्याणि च प्रक्षिप्यन्ते तानि च समुदितान्यप्यद्धासमयानामनन्तभागकल्पानीति तेषु प्रक्षिप्तेष्वपि मनागधिकत्वं जातं इत्यद्धासमयेभ्यः सर्वद्रव्याणि विशेषाधिकानि, तेभ्यः सर्वप्रदेशा अनन्तगुणाः,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तृतीय-पदे (२४) "जीव" द्वारम् आरब्ध:

प्रत सूत्रांक [८१]

दीप अनुक्रम [२८५]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्तिः

आकाशानन्तत्वात्, तेभ्यः सर्वपर्यवा अनन्तगुणाः, एकैकस्मिन्नाकाशप्रदेशेऽनन्तानामगुरुलघुपर्यायाणां भावात् ॥ गतं जीवद्वारम्, अधुना क्षेत्रद्वारमाह—

खेत्ताणुवाएणं सव्वत्थोवा जीवा उड्ढलोयतिरियलोए अहोलोयतिरियलोए विसेसाहिया तिरियलोए असंखेज्जगुणा तेलुक्के असंखेज्जगुणा उड्ढलोए असंखेज्जगुणा अहोलोए विसेसाहिया (सू० ८२)

क्षेत्रस्यानुपातः—अनुसारः क्षेत्रानुपातः तेन चिन्त्यमाना जीवाः सर्वस्तोका ऊर्द्धलोकतिर्यग्लोके, इह ऊर्द्धलोकस्य यदधस्तनमाकाशप्रदेशप्रतरं यच्च तिर्यग्लोकस्य सर्वोपरितनमाकाशप्रदेशप्रतरमेष ऊर्द्धलोकतिर्यग्लोकः, तथाप्रवचनप्रसिद्धेः, इयमत्र भावना—इह सामस्त्येन चतुर्दशरज्ज्वात्मको लोकः, स च त्रिधा भिद्यते, तद्यथा–ऊर्द्धलोकः तिर्यग्लोकोऽधोलोकश्च, रुचकाच्चैतेषां विभागः, तथाहि—रुचकस्याधस्तान्नव योजनशतानि रुचकस्योपरिष्टान्नवयोजनशतानि तिर्यग्लोकः, तस्य च तिर्यग्लोकस्याधस्तादधोलोकः उपरिष्टादूर्द्धलोकः, देशोनसप्तरज्जुप्रमाण ऊर्द्धलोकः समधिकसप्तरज्जुप्रमाणोऽधोलोकः मध्येऽष्टादशयोजनशतोच्छ्रयस्तिर्यग्लोकः, तत्र रुचकसमाद्भूतलभागान्नवयोजनशतानि गत्वा यज्ज्योतिश्चक्रस्योपरितनं तिर्यग्लोकसम्बन्धि एकप्रादेशिकमाकाशप्रतरं तत्तिर्यग्लोकप्रतरं तस्य चोपरि यदेकप्रादेशिकमाकाशप्रतरं तदूर्द्धलोकप्रतरं ते द्वे अप्यूर्द्धलोकतिर्यग्लोक इति व्यवह्रियते, तथाअनादिप्रवचनपरिभाषाप्रसिद्धेः, तत्र वर्त्तमानाः जीवाः सर्वस्तोकाः, कथमिति चेत्, उच्यते, इह ये ऊर्द्धलोकात्तिर्यग्लो-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तृतीय-पदे (२५) "क्षेत्र" द्वारम् आरब्धः

प्रत सूत्रांक [८२]

दीप अनुक्रम [२८६]

के तिर्यग्लोकादूर्द्धलोके (च) समुत्पद्यमाना विवक्षितं प्रतरद्वयं स्पृशन्ति ये च तत्रस्था एव केचन तत्प्रतरद्वयाध्यासिनो वर्त्तन्ते ते किल विवक्षिते प्रतरद्वये वर्त्तन्ते, नान्ये, ये पुनरूर्द्धलोकादधोलोके समुत्पद्यमानास्तत्प्रतरद्वयं स्पृशन्ति ते न गण्यन्ते, तेषां सूत्रान्तरविषयत्वात्, ततः स्तोका एवाधिकृतप्रतरद्वयवर्त्तिनो जीवाः, ननूर्द्धलोकगतानामपि सर्वजीवानामसङ्ख्येयो भागोऽनवरतं म्रियमाणोऽवाप्यते, ते च तिर्यग्लोके समुत्पद्यमाना विवक्षितं प्रतरद्वयं स्पृशन्तीति कथमधिकृतप्रतरद्वयसंस्पर्शिनः स्तोकाः ?, तदयुक्तं, वस्तुतत्त्वापरिज्ञानात्, तथाहि—यद्यपि नामोर्द्धलोकगतानां सर्वजीवानामसङ्ख्येयो भागोऽनवरतं म्रियमाणोऽवाप्यते तथापि न ते सर्वे एव तिर्यग्लोके समुत्पद्यन्ते, प्रभूततराणामधोलोके ऊर्द्धलोके च समुत्पादात्, ततोऽधिकृतप्रतरद्वयवर्त्तिनः सर्वस्तोका एव, तेभ्योऽधोलोकतिर्यग्लोके विशेषाधिकाः, इह यदधोलोकस्योपरितनमेकप्रादेशिकमाकाशप्रदेशप्रतरं यच्च तिर्यग्लोकस्य सर्वाधस्तनमेकप्रादेशिकमाकाशप्रदेशप्रतरमेतद्द्वयमप्यधोलोकतिर्यग्लोक इत्युच्यते, तथाप्रवचनप्रसिद्धेः, तत्र ये विग्रहगत्या तत्रस्थतया वा वर्त्तन्ते ते विशेषाधिकाः, कथमिति चेत्, उच्यते, इह येऽधोलोकात्तिर्यग्लोके तिर्यग्लोकाद्वाऽधोलोके ईलिकागत्या समुत्पद्यमाना अधिकृतप्रतरद्वयं स्पृशन्ति ये च तत्रस्था एव केचन तत्प्रतरद्वयमध्यासीना वर्त्तन्ते ते विवक्षितप्रतरद्वयवर्तिनो, ये पुनरधोलोकादूर्द्धलोके समुत्पद्यमानास्तत्प्रतरद्वयं स्पृशन्ति ते न परिगृह्यन्ते, तेषां सूत्रान्तरविषयत्वात्, केवलमूर्द्धलोकादधोलोके विशेषाधिका इत्यधोलोकात्तिर्यग्लोके समुत्पद्यमाना ऊर्द्धलोकापेक्षया

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [८२]

दीप अनुक्रम [२८६]

विशेषाधिका अवाप्यन्ते ततो विशेषाधिकाः, तेभ्यस्तिर्यग्लोकवर्त्तिनोऽसङ्ख्येयगुणाः, उक्तक्षेत्रद्विकात्तिर्यग्लोकक्षेत्रस्यासङ्ख्येयगुणत्वात्, तेभ्यस्त्रैलोक्ये—त्रिलोकसंस्पर्शिनोऽसङ्ख्येयगुणाः, इह ये केवले ऊर्द्धलोकेऽधोलोके तिर्यग्लोके वा वर्त्तन्ते ये च विग्रहगत्या ऊर्द्धलोकतिर्यग्लोकौ स्पृशन्ति ते न गण्यन्ते, किं तु ये विग्रहगत्यापन्नास्त्रीनपि लोकान् स्पृशन्ति ते परिग्राह्याः, सूत्रस्य विशेषविषयत्वात्, ते च तिर्यग्लोकवर्त्तिभ्योऽसङ्ख्येयगुणा एव, कथमिति चेत्, उच्यते, इह बहवः प्रतिसमयमूर्द्धलोकेऽधोलोके च सूक्ष्मनिगोदा उद्वर्त्तन्ते, ये तु तिर्यग्लोकवर्त्तिनः सूक्ष्मनिगोदा उद्वर्त्तन्ते अर्वाग्धोलोके ऊर्द्धलोके वा केचित्तस्मिन्नेव वा तिर्यग्लोके समुत्पद्यन्ते ततो न ते लोकत्रयसंस्पर्शिन इति नाधिकृतसूत्रविषयाः, तत्रोर्द्धलोकाधोलोकगतानां सूक्ष्मनिगोदानामुद्वर्त्तमानानां मध्ये केचित् स्वस्थाने एवोर्द्धलोकेऽधोलोके वा समुत्पद्यन्ते केचित्तिर्यग्लोके, तेभ्योऽसङ्ख्येयगुणा अधोलोकगता ऊर्द्धलोके ऊर्द्धलोकगता अधोलोके समुत्पद्यन्ते, ते च तथोत्पद्यमानास्त्रीनपि लोकान् स्पृशन्तीत्यसङ्ख्येयगुणाः, कथं पुनरेतदवसीयते यदुत एवंप्रमाणा बहवो जीवाः सदा विग्रहगत्यापन्नाः लभ्यन्ते इति चेत् ?, उच्यते, युक्तिवशात्, तथाहि—प्रागुक्तमिदमत्रैव सूत्रं पर्याप्तद्वारे—"सव्वत्थोवा जीवा नोपज्जत्तानोअपज्जत्ता अपज्जत्ता अनंतगुणा पज्जत्ता संखेज्जगुणा" इति, त एवं नामापर्याप्ता बहवः येनैतेभ्यः पर्याप्ताः सङ्ख्येयगुणा एव नासङ्ख्येयगुणा नाप्यनन्तगुणाः, ते चापर्याप्ता बहवोऽन्तरगतौ वर्त्तमाना लभ्यन्ते इति, तेभ्य ऊर्द्धलोके—ऊर्द्धलोकावस्थिता असङ्ख्येयगुणाः, उपपातक्षेत्रस्यातिबहुत्वात्, असङ्ख्ये-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

यानां च भागानामुद्वर्त्तनायाश्च संभवात्, तेभ्योऽधोलोके—अधोलोकवर्त्तिनो विशेषाधिकाः, ऊर्द्धलोकक्षेत्रादधोलोकक्षेत्रस्य विशेषाधिकत्वात्। तदेवं सामान्यतो जीवानां क्षेत्रानुपातेनाल्पबहुत्वमुक्तम्, इदानीं चतुर्गतिदण्डकक्रमेण तदभिधित्सुः प्रथमतो नैरयिकाणामाह—

खेत्ताणुवाएणं सव्वत्थोवा नेरइया तेलोके अहोलोयतिरियलोए असंखेज्जगुणा, अहोलोए असंखेज्जगुणा ॥ खेत्ताणुवाएणं सव्वत्थोवा तिरिक्खजोणिया उड्ढलोयतिरियलोए अहोलोयतिरियलोए विसेसाहिया तिरियलोए असंखेज्जगुणा तेलोके असंखेज्जगुणा उड्ढलोए असंखेज्जगुणा अहोलोए विसेसाहिया॥ खेत्ताणुवाएणं सव्वत्थोवाओ तिरिक्खजोणिणीओ उड्ढलोए उड्ढलोयतिरियलोए असंखेज्जगुणाओ तेलोके संखेज्जगुणाओ अहोलोयतिरियलोए संखेज्जगुणाओ अहोलोए संखेज्जगुणाओ तिरियलोए संखेज्जगुणाओ ॥ खेत्ताणुवाएणं सव्वत्थोवा मणुस्सा तेलोके उड्ढलोयतिरियलोए असंखेज्जगुणा अहोलोयतिरियलोए संखेज्जगुणा उड्ढलोए संखेज्जगुणा अहोलोए संखेज्जगुणा तिरियलोए संखेज्जगुणा। खेत्ताणुवाएणं सव्वत्थोवा मणुस्सीओ तेलोके उड्ढलोयतिरियलोए संखेज्जगुणाओ अहोलोयतिरियलोए संखेज्जगुणाओ उड्ढलोए संखेज्जगुणाओ अहोलोए संखेज्जगुणाओ तिरियलोए संखेज्जगुणाओ ॥ खेत्ताणुवाएणं सव्वत्थोवा देवा उड्ढलोए उड्ढलोयतिरियलोए असंखेज्जगुणा तेलोके संखेज्जगुणा अहोलोयतिरियलोए संखेज्जगुणा अहोलोए संखेज्जगुणा तिरियलोए संखेज्जगुणा। खेत्ताणुवा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [८३]

दीप अनुक्रम [२८७]

एणं सवत्थोवाओ देवीओ उड्ढलोए उड्ढलोयतिरियलोए असंखेज्जगुणाओ तेलोके संखेज्जगुणाओ अहोलोयतिरियलोए संखेज्जगुणाओ अहोलोए संखेज्जगुणाओ तिरियलोए संखेज्जगुणाओ (सू० ८३)

'क्षेत्रानुपातेन' क्षेत्रानुसारेण नैरयिकाश्चिन्त्यमानाः सर्वस्तोकास्त्रैलोक्ये—लोकत्रयसंस्पर्शिनः, कथं लोकत्रयसंस्पर्शिनो नैरयिकाः कथं वा ते सर्वस्तोकाः इति चेत् ?, उच्यते, इह ये मेरुशिखरे अञ्जनदधिमुखपर्वतशिखरादिषु वा वापीषु वर्त्तमाना मत्स्यादयो नरकेषूत्पित्सव ईलिकागत्या प्रदेशान् विक्षिपन्ति ते किल त्रैलोक्यमपि स्पृशन्ति नारकव्यपदेशं च लभन्ते तत्कालमेव नरकेषूत्पत्तेर्नारकायुष्कप्रतिसंवेदनात्, ते चेत्थंभूताः कतिपये इति सर्वस्तोकाः, अन्ये तु व्याचक्षते—नारका एव यथोक्तवापीषु तिर्यक्पञ्चेन्द्रियतयोत्पद्यमानाः समुद्घातवशतो विक्षिप्तनिजात्मप्रदेशदण्डाः परिगृह्यन्ते, ते हि किल तदा नारका एव निर्विवादं, तदायुष्कप्रतिसंवेदनात्, त्रैलोक्यसंस्पर्शिनश्च, यथोक्तवापीर्यावदात्मप्रदेशदण्डस्य विक्षिप्तत्वादिति, तेभ्योऽधोलोकतिर्यग्लोके—अधोलोकतिर्यग्लोकसञ्ज्ञप्रागुक्तप्रतरद्वयस्य संस्पर्शिनोऽसङ्ख्येयगुणाः, यतो बहवोऽसङ्ख्येयेषु द्वीपसमुद्रेषु पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिका नरकेषूत्पद्यमाना यथोक्तं प्रतरद्वयं स्पृशन्ति ततो भवन्ति पूर्वोक्तेभ्योऽसङ्ख्येयगुणाः, क्षेत्रस्यासङ्ख्यातगुणत्वात्, मन्दरादिक्षेत्रादसङ्ख्येयद्वीपसमुद्रात्मकं क्षेत्रमसङ्ख्येयगुणमित्यतो भवन्त्यसङ्ख्येयगुणाः, अन्ये त्वभिदधति—नारका एवासङ्ख्येयेषु द्वीपसमुद्रेषु तिर्यक्पञ्चेन्द्रियतयोत्पद्यमाना मारणान्तिकसमुद्घातेन विक्षिप्तनिजात्मप्रदेशदण्डा द्रष्टव्याः, ते हि नार-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [८३]

दीप अनुक्रम [२८७]

कायुःप्रतिसंवेदनान्नारका उद्वर्त्तमाना अपि असङ्ख्येयाः प्राप्यन्ते इति प्रागुक्तेभ्योऽसङ्ख्येयगुणाः, तेभ्योऽधोलोकेऽसङ्ख्येयगुणाः, तस्य तेषां स्वस्थानत्वात्। उक्तं नारकगतिमधिकृत्य क्षेत्रानुपातेनाल्पबहुत्वम्, इदानीं तिर्यग्गतिमधिकृत्याह—इदं सर्वमपि सामान्यतो जीवसूत्रमिव भावनीयं, तदपि तिरश्च एव सूक्ष्मनिगोदानधिकृत्य भावितम्, अधुना तिर्यग्योनिकस्त्रीविषयमल्पबहुत्वमाह—क्षेत्रानुपातेन तिर्यग्योनिकस्त्रियश्चिन्त्यमानाः सर्वस्तोकाः ऊर्द्धलोके, इह मन्दराद्रिवापीप्रभृतिष्वपि हि पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकाः स्त्रियो भवन्ति, ताश्च क्षेत्रस्याल्पत्वात् सर्वस्तोकाः, ताभ्य ऊर्द्धलोकतिर्यग्लोके—ऊर्द्धलोकतिर्यग्लोकसञ्ज्ञे प्रतरद्वये वर्त्तमानाः असङ्ख्येयगुणाः, कथमिति चेत्?, उच्यते, यावत्सहस्रारदेवलोकस्तावद्देवा अपि गर्भव्युत्क्रान्तिकतिर्यक्पञ्चेन्द्रिययोनिषूत्पद्यन्ते किं पुनः शेषकायाः?, ते हि यथासंभवमुपरिवर्त्तिनोऽपि तत्रोत्पद्यन्ते, ततो ये सहस्रारान्ता देवा अन्येऽपि च शेषकाया ऊर्द्धलोकतिर्यग्लोके तिर्यक्पञ्चेन्द्रियस्त्रीत्वेन तदायुः प्रतिसंवेदयमाना उत्पद्यन्ते यास्तिर्यग्लोकवर्त्तिन्यस्तिर्यक्पञ्चेन्द्रियस्त्रिय ऊर्द्धलोके देवत्वेन शेषकायत्वेन चोत्पद्यमाना मारणान्तिकसमुद्घातेनोत्पत्तिदेशे निजनिजात्मप्रदेशदण्डान् विक्षिपन्ति ता यथोक्तं प्रतरद्वयं स्पृशन्ति तिर्यग्योनिकस्त्रियश्च तास्ततोऽसङ्ख्येयगुणाः, क्षेत्रस्यासङ्ख्येयगुणत्वात्, ताभ्यस्त्रैलोक्ये सङ्ख्येयगुणाः, यस्मादधोलोकात् भवनपतिव्यन्तरनारकाः शेषकाया अपि चोर्द्धलोकेऽपि तिर्यक्पञ्चेन्द्रियस्त्रीत्वेनोत्पद्यन्ते ऊर्द्धलोकाद् देवादयोऽप्यधोलोके च ते समवहता निजनिजात्मप्रदेशदण्डैस्त्रीनपि लोकान् स्पृशन्ति प्रभूताश्च

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [८३]

दीप अनुक्रम [२८७]

ते तथा तिर्यग्योनिकरुयायुःप्रतिसंवेदनात् तिर्यग्योनिकस्त्रियश्च ततः सङ्ख्येयगुणाः, ताभ्योऽधोलोकतिर्यग्लोके— अधोलोकतिर्यग्लोकसञ्ज्ञे प्रतरद्वये वर्त्तमानाः सङ्ख्येयगुणाः, बहवो हि नारकादयः समुद्घातमन्तरेणापि तिर्यग्लोके तिर्यक्पञ्चेन्द्रियस्त्रीत्वेनोत्पद्यन्ते तिर्यग्लोकवर्त्तिनश्च जीवास्तिर्यग्योनिकस्त्रीत्वेनाधोलौकिकग्रामेष्वपि च ते च तथोत्पद्यमाना यथोक्तं प्रतरद्वयं स्पृशन्ति तिर्यग्योनिकरुयायुःप्रतिसंवेदनाच्च तिर्यग्योनिकस्त्रियोऽपि, तथाऽधोलौकिकग्रामा योजनसहस्रावगाहाः पर्यन्तेऽर्वाक् क्वचित्प्रदेशे नवयोजनशतावगाहा अपि तत्र काश्चित्तिर्यग्योनिकस्त्रियोऽवस्थानेनापि यथोक्तप्रतरद्वयाध्यासिन्यो वर्त्तन्ते ततो भवन्ति पूर्वोक्तभ्यः सङ्ख्येयगुणाः, ताभ्योऽधोलोके सङ्ख्येयगुणाः, यतोऽधोलौकिकग्रामाः सर्वेऽपि च समुद्रा योजनसहस्रावगाहाः ततो नवयोजनशतानामधस्तात् या वर्त्तन्ते मत्सीप्रभृतिकास्तिर्यग्योनिकस्त्रियस्ताः स्वस्थानत्वात् प्रभूता इति सङ्ख्येयगुणाः, क्षेत्रस्य सङ्ख्येयगुणत्वात्, ताभ्यस्तिर्यग्लोके सङ्ख्येयगुणाः । उक्तं तिर्यग्गतिमप्यधिकृत्याल्पबहुत्वम्, इदानीं मनुष्यगतिविषयमाह—क्षेत्रानुपातेन मनुष्याश्चिन्त्यमानास्त्रैलोक्ये—त्रैलोक्यसंस्पर्शिनः सर्वस्तोकाः, यतो ये ऊर्द्धलोकादधोलौकिकग्रामेषु समुत्पित्सवो मारणान्तिकसमुद्घातेन समवहता भवन्ति ते केचित् समुद्घातवशाद् बहिर्निर्गतैः स्वात्मप्रदेशैस्त्रीनपि लोकान् स्पृशन्ति येऽपि चान्ये वैक्रियसमुद्घातमाहारकसमुद्घातं च गताः [प्राप्ताः] तथाविधप्रयत्नविशेषात् दूरतरमूर्द्धाधोविक्षिप्तात्मप्रदेशाः ये च केवलिसमुद्घातगतास्तेऽपि त्रीनपि लोकान् स्पृशन्ति स्तोकाश्चेति सर्वस्तोकाः,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [८३]

दीप अनुक्रम [२८७]

तेभ्य ऊर्द्धलोकतिर्यग्लोके—ऊर्द्धलोकतिर्यग्लोकसञ्ज्ञकप्रतरद्वयसंस्पर्शिनोऽसङ्ख्येयगुणाः, यत इह वैमानिकदेवाः शेषकायाश्च यथासंभवमूर्द्धलोकात्तिर्यग्लोके मनुष्यत्वेन समुत्पद्यमाना यथोक्तप्रतरद्वयसंस्पर्शिनो भवन्ति विद्याधराणामपि च मन्दरादिषु गमनं तेषां च शुक्ररुधिरादिपुद्गलेषु संमूर्च्छिममनुष्याणामुत्पाद इति ते विद्याधरा रुधिरादिपुद्गलसम्मिश्रा यदा गच्छन्ति तदा संमूर्च्छिममनुष्या अपि यथोक्तप्रतरद्वयसंस्पर्शवन्त उपजायन्ते ते चातिबहव इत्यसङ्ख्येयगुणाः, तेभ्योऽधोलोकतिर्यग्लोके–अधोलोकतिर्यग्लोकसञ्ज्ञे प्रतरद्वये सङ्ख्येयगुणाः, यतोऽधोलौकिकग्रामेषु स्वभावत एव बहवो मनुष्याः, ततो ये तिर्यग्लोकात् मनुष्येभ्यः शेषकायेभ्यो वाऽधोलौकिकग्रामेषु गर्भव्युत्क्रान्तिकमनुष्यत्वेन संमूर्च्छिममनुष्यत्वेन वा समुत्पित्सवो ये चाधोलोकादधोलौकिकग्रामरूपात् शेषाद्वा मनुष्येभ्यः शेषकायेभ्यो वा तिर्यग्लोके गर्भव्युत्क्रान्तिकमनुष्यत्वेन वा संमूर्च्छिममनुष्यत्वेन वा समुत्पत्तुकामास्ते यथोक्तं किल प्रतरद्वयं स्पृशन्ति बहुतराश्च ते तथा स्वस्थानतोऽपि केचिदधोलौकिकग्रामेषु यथोक्तप्रतरद्वयसंस्पर्शिन इति ते प्रागुक्तेभ्यः सङ्ख्येयगुणाः, तेभ्यः ऊर्द्धलोके सङ्ख्येयगुणाः, सौमनसादिक्रीडार्थं चैत्यवन्दननिमित्तं वा प्रभूततराणां विद्याधरचारणमुनीनां (गमनागमन) भावात् तेषां च यथायोगं रुधिरादिपुद्गलयोगतः संमूर्च्छिममनुष्यसंभवात्, तेभ्योऽधोलोके सङ्ख्येयगुणाः, स्वस्थानत्वेन बहुत्वभावात्, तेभ्यस्तिर्यग्लोके सङ्ख्येयगुणाः, क्षेत्रस्य सङ्ख्येयगुणत्वात् स्वस्थानत्वाच्च । सम्प्रति क्षेत्रानुपातेन मानुषीविषयमल्पबहुत्वमाह—क्षेत्रानुपातेन मानुष्यश्चिन्त्यमानाः सर्वस्तोकाः

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [८३]

दीप अनुक्रम [२८७]

त्रैलोक्यस्पर्शिन्यः, ऊर्द्धलोकादधोलोके समुत्पित्सूना मारणान्तिकसमुद्घातवशविनिर्गतदूरतरात्मप्रदेशानामथवा वैक्रियसमुद्घातगतानां केवलिसमुद्घातगतानां वा त्रैलोक्यसंस्पर्शनात् तासां चातिस्तोकत्वमिति सर्वस्तोकाः, ताभ्य ऊर्द्धलोकतिर्यग्लोके—ऊर्द्धलोकतिर्यग्लोकसञ्ज्ञे प्रतरद्वये सङ्ख्येयगुणाः वैमानिकदेवानां शेषकायाणां चोर्द्धलोकात् तिर्यग्लोके मनुष्यस्त्रीत्वेनोत्पद्यमानानां तथा तिर्यग्लोकगतमनुष्यस्त्रीणामूर्द्धलोके समुत्पित्सूनां मारणान्तिकसमुद्घातवशात् दूरतरमूर्द्धविक्षिप्तात्मप्रदेशानामद्यापि कालमकुर्वन्तीनां यथोक्तप्रतरद्वयसंस्पर्शनभावात् तासां चोभयासामपि बहुतरत्वात्, ताभ्योऽधोलोकतिर्यग्लोके—प्रागुक्तस्वरूपे प्रतरद्वयरूपे सङ्ख्येयगुणाः, तिर्यग्लोकाद् मनुष्यस्त्रीभ्यः शेषेभ्यो वाऽधोलौकिकग्रामेषु यदिवाऽधोलौकिकग्रामरूपात् शेषाद्वा तिर्यग्लोके मनुष्यस्त्रीत्वेनोत्पित्सूनां कासाञ्चिदधोलौकिकग्रामेष्ववस्थानतोऽपि यथोक्तप्रतरद्वयसंस्पर्शसंभवात् तासां च प्रागुक्ताभ्योऽतिबहुत्वात्, ताभ्योऽपि ऊर्द्धलोके सङ्ख्येयगुणाः, क्रीडार्थं चैत्यवन्दननिमित्तं वा सौमनसादिषु प्रभूततराणां विद्याधरीणां (गमन)संभवात्, ताभ्योऽप्यधोलोके सङ्ख्येयगुणाः, स्वस्थानत्वेन तत्रापि बहुतराणां भावात्, ताभ्यस्तिर्यग्लोके सङ्ख्येयगुणाः, क्षेत्रस्य सङ्ख्येयगुणत्वात् स्वस्थानत्वाच्च । गतं मनुष्यगतिमधिकृत्याल्पबहुत्वम्, इदानीं देवगतिमधिकृत्याह—क्षेत्रानुपातेन चिन्त्यमाना देवाः सर्वस्तोकाः ऊर्द्धलोके, वैमानिकानामेव तत्र भावात् तेषां चाल्पत्वात्, येऽपि भवनपतिप्रभृतयो जिनेन्द्रजन्ममहोत्सवादौ मन्दरादिषु गच्छन्ति तेऽपि स्वल्पा एवेति सर्वस्तोकाः, तेभ्य ऊर्द्धलोकति-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

र्यग्लोके—ऊर्द्धलोकतिर्यग्लोकसञ्ज्ञे प्रतरद्वयेऽसङ्ख्येयगुणाः, तद्धि ज्योतिष्काणा प्रत्यासन्नमिति स्वस्थानं, तथा भवनपतिव्यन्तरज्योतिष्का मन्दरादौ सौधर्मादिकल्पगताः स्वस्थाने गमागमेन तथा ये सौधर्म्मादिषु देवत्वेनोत्पित्सवो देवायुः प्रतिसंवेदयमानाः स्वोत्पत्तिदेशमभिगच्छन्ति ते यथोक्तं प्रतरद्वयं स्पृशन्ति ततः सामस्त्येन यथोक्तप्रतरद्वयसंस्पर्शिनः परिभाव्यमाना अतिबहव इति पूर्वोक्तेभ्योऽसङ्ख्येयगुणाः, तेभ्यस्त्रैलोक्यसंस्पर्शिनः सङ्ख्येयगुणाः, यतो भवनपतिव्यन्तरज्योतिष्कवैमानिका देवाः तथाविधप्रयत्नविशेषवशतो वैक्रियसमुद्घातेन समवहताः सन्तः त्रीनपि लोकान् स्पृशन्ति ते चेत्थं समवहताः प्रागुक्तप्रतरद्वयस्पर्शिभ्यः सङ्ख्येयगुणाः केवलवेदसोपलभ्यन्ते इति सङ्ख्येयगुणाः, तेभ्योऽधोलोकतिर्यग्लोके—अधोलोकतिर्यग्लोकसञ्ज्ञे प्रतरद्वये वर्त्तमानाः सङ्ख्येयगुणाः, तद्धि प्रतरद्विकं भवनपतिव्यन्तरदेवानां प्रत्यासन्नतया स्वस्थानं तथा बहवो भवनपतयः स्वभवनस्थाः तिर्यग्लोकगमागमेन तथोर्द्धवर्त्तमानाः तथा वैक्रियसमुद्घातेन समवहतास्तथा तिर्यग्लोकवर्त्तिनस्तिर्यक्पञ्चेन्द्रियमनुष्या वा भवनपतित्वेनोत्पद्यमाना भवनपत्यायुरनुभवन्तो यथोक्तप्रतरद्वयसंस्पर्शिनोऽतिबहव इति सङ्ख्येयगुणाः, तेभ्योऽधोलोके सङ्ख्येयगुणाः, भवनपतीनां स्वस्थानमितिकृत्वा, तेभ्यस्तिर्यग्लोके सङ्ख्येयगुणाः, ज्योतिष्कव्यन्तराणां स्वस्थानत्वात् । अधुना देवीरधिकृत्याल्पबहुत्वमाह—'सेत्ताणुवाएणं' इत्यादि, सर्वं देवसूत्रमिवाविशेषेण भावनीयं । तदेवमुक्तं देवविषयमौधिकमल्पबहुत्वम्, इदानीं भवनपत्यादिविशेषविषयं प्रतिपिपादयिषुः प्रथमतो भवनपतिविषयमाह—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [८४]

दीप अनुक्रम [२८८]

खेत्ताणुवाएणं सव्वत्थोवा भवणवासी देवा उड्ढलोए उड्ढलोयतिरियलोए असंखेज्जगुणा तेलोके संखेज्जगुणा अहोलोयतिरियलोए असंखेज्जगुणा तिरियलोए असंखेज्जगुणा अहोलोए असंखेज्जगुणा। खेत्ताणुवाएणं सव्वत्थोवाओ भवणवासिणीओ देवीओ उड्ढलोए उड्ढलोयतिरियलोए असंखेज्जगुणाओ तेलोके संखेज्जगुणाओ अहोलोयतिरियलोए असंखेज्जगुणाओ तिरियलोए असंखेज्जगुणाओ अहोलोए असंखेज्जगुणाओ॥ खेत्ताणुवाएणं सव्वत्थोवा वाणमंतरा देवा उड्ढलोए उड्ढलोयतिरियलोए असंखेज्जगुणा तेलोके संखेज्जगुणा अहोलोयतिरियलोए असंखेज्जगुणा अहोलोए संखेज्जगुणा तिरियलोए संखेज्जगुणा। खेत्ताणुवाएणं सव्वत्थोवाओ वाणमंतरीओ देवीओ उड्ढलोए उड्ढलोयतिरियलोए असंखेज्जगुणाओ तेलोके संखेज्जगुणाओ अहोलोयतिरियलोए असंखेज्जगुणाओ अहोलोए संखेज्जगुणाओ तिरियलोए संखेज्जगुणाओ॥ खेत्ताणुवाएणं सव्वत्थोवा जोइसिया देवा उड्ढलोए उड्ढलोयतिरियलोए असंखेज्जगुणा तेलोके संखेज्जगुणा अहोलोयतिरियलोए असंखेज्जगुणा अहोलोए संखेज्जगुणा तिरियलोए असंखेज्जगुणा। खेत्ताणुवाएणं सव्वत्थोवाओ जोइसिणीओ देवीओ उड्ढलोए उड्ढलोयतिरियलोए असंखेज्जगुणाओ तेलोके संखेज्जगुणाओ अहोलोयतिरियलोए असंखेज्जगुणाओ अहोलोए संखेज्जगुणाओ तिरियलोए असंखेज्जगुणाओ॥ खेत्ताणुवाएणं सव्वत्थोवा वेमाणिया देवा [ग्रन्थाग्रं० २०००] उड्ढलोयतिरियलोए तेलोके संखेज्जगुणा अहोलोयतिरियलोए संखिज्जगुणा अहोलोए संखिज्जगुणा तिरियलोए संखेज्जगुणा उड्ढलोए असंखिज्जगुणा। खित्ताणुवाएणं सव्वत्थोवाओ वेमाणिणीओ देवीओ उड्ढलोयतिरियलोए तेलोके संखेज्जगुणाओ अहोलोयतिरियलोए संखेज्जगुणाओ अहोलोए संखेज्जगुणाओ तिरियलोए संखेज्जगुणाओ उड्ढलोए असंखेज्जगुणाओ (सू० ८४)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [८४]

दीप अनुक्रम [२८८]

क्षेत्रानुपातेन भवनवासिनो देवाश्चिन्त्यमानाः सर्वस्तोका ऊर्द्धलोके, तथाहि–केषाञ्चित्सौधर्म्मादिष्वपि कल्पेषु पूर्वसंगतिकनिश्रया गमनं भवति, केषाञ्चिन्मन्दरे तीर्थकरजन्ममहिमानिमित्तमञ्जनदधिमुखेष्वष्टाह्निकानिमित्तमपरेषां मन्दरादिषु क्रीडानिमित्तं गमनमेते च सर्वेऽपि स्वल्पा इति सर्वस्तोका ऊर्द्धलोके, तेभ्य ऊर्द्धलोकतिर्यग्लोकसञ्ज्ञे प्रतरद्वये असङ्ख्येयगुणाः, कथमिति चेत् ?, उच्यते, इह तिर्यग्लोकस्था वैक्रियसमुद्घातेन समवहता ऊर्द्धलोकं तिर्यग्लोकं च स्पृशन्ति तथा ये तिर्यग्लोकस्था एव मारणान्तिकसमुद्घातेन समवहता ऊर्द्धलोके सौधर्म्मादिषु देवलोकेषु बादरपर्याप्तपृथिवीकायिकतया बादरपर्याप्ताप्कायिकतया बादरपर्याप्तप्रत्येकवनस्पतिकायिकतया च शुभेषु मणिविधानादिषु स्थानेषूत्पत्तुकामा अद्यापि स्वभवायुः प्रतिसंवेदयमानाः, न पारभविकं पृथिवीकायिकाद्यायुः, द्विविधा हि मारणान्तिकसमुद्घातसमवहताः—केचित्पारभविकमायुः प्रतिसंवेदयन्ते केचिन्नेति, तथा चोक्तं प्रज्ञप्तौ—"जीवे णं भंते ! मारणंतियसमुग्घाएणं समोहए समोहणित्ता जे भविए मंदरस्स पव्वयस्स पुरच्छिमे णं बायरपुढविकाइयत्ताए उववज्जित्तए से णं भंते ! किं तत्थगए उववज्जेज्जा उयाहु पडिनियत्तित्ता उववज्जइ ?, गोयमा ! अत्थेगइए तत्थगए चेव उववज्जइ अत्थेगइए ततो पडिनियत्तित्ता दोच्चंपि मारणंतियसमुग्घाएणं समोहणति, समोहणित्ता तओ पच्छा उववज्जइ" इति, स्वभवायुःप्रतिसंवेदनाच्च ते भवनवासिन एव लभ्यन्ते, ते इत्थंभूता उत्पत्तिदेशे विक्षिप्तात्मप्रदेशदण्डाः तथोर्द्धलोके गमनागमनतस्तत्प्रतरद्वयप्रत्यासन्नक्रीडास्थानतश्च यथोक्तं

३ अल्पबहुत्वपदे विशेषेण देवानामल्प.सू.८४

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [८४]

दीप अनुक्रम [२८८]

प्रतरद्वयं स्पृशन्ति ततः प्रागुक्तेभ्योऽसङ्ख्येयगुणाः, तेभ्यस्त्रैलोक्ये—त्रैलोक्यसंस्पर्शिनः सङ्ख्येयगुणाः, यतो ये ऊर्द्ध-लोके तिर्यक्पञ्चेन्द्रिया भवनपतित्वेनोत्पत्तुकामा ये च स्वस्थाने वैक्रियसमुद्घातेन मारणान्तिकप्रथमसमुद्घातेन वा तथाविधतीव्रप्रयत्नविशेषेण समवहतास्ते त्रैलोक्यसंस्पर्शिन इति सङ्ख्येयगुणाः, परस्थानसमवहतेभ्यः स्वस्थानसमव-हतानां सङ्ख्येयगुणत्वात्, तेभ्योऽधोलोकतिर्यग्लोके—अधोलोकतिर्यग्लोकसञ्ज्ञे प्रतरद्वयेऽसङ्ख्येयगुणाः, स्वस्थानप्र-त्यासन्नतया तिर्यग्लोके गमनागमनभावतः स्वस्थानस्थितक्रोधादिसमुद्घातगमनतश्च बहूनां यथोक्तप्रतरद्वयसंस्पर्श-भावात्, तेभ्यस्तिर्यग्लोकेऽसङ्ख्येयगुणाः, समवसरणादौ वन्दननिमित्तं द्वीपेषु च रमणीयेषु क्रीडानिमित्तमागमनसं-भवात् आगतानां च चिरकालमप्यवस्थानात्, तेभ्योऽधोलोकेऽसङ्ख्येयगुणाः, भवनवासिनामधोलोकस्य स्वस्थान-त्वात्। एवं भवनवासिदेवीगतमप्यल्पबहुत्वं भावनीयं। सम्प्रति व्यन्तरगतमल्पबहुत्वमाह—क्षेत्रानुपातेन चिन्त्य-माना व्यन्तराः सर्वस्तोका ऊर्द्धलोके, कतिपयानामेव पण्डकवनादौ तेषां भावात्, तेभ्य ऊर्द्धलोकतिर्यग्लोके प्रत-रद्वयरूपेऽसङ्ख्येयगुणाः, केषांचित् स्वस्थानान्तर्वर्त्तितया अपरेषां स्वस्थानप्रत्यासन्नतया अन्येषां बहूनां मन्दरादिषु गमनागमनभावतो यथोक्तप्रतरद्वयसंस्पर्शात्, तेषां समुदायेन चिन्त्यमानानामतिबहुत्वभावात्, तेभ्यस्त्रैलोक्ये सङ्ख्येयगुणाः, यतो लोकत्रयवर्त्तिनोऽपि व्यन्तरास्तथाविधप्रयत्नविशेषवशतो वैक्रियसमुद्घातेन समवहताः सन्तस्त्री-नपि लोकानात्मप्रदेशैः स्पृशन्ति, ते च प्रागुक्तेभ्योऽतिबहव इति सङ्ख्येयगुणाः, तेभ्योऽधोलोकतिर्यग्लोके प्रतर-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

द्वयरूपे असङ्ख्येयगुणाः, तद्धि बहूनां व्यन्तराणां स्वस्थानं ततस्तत्संस्पर्शिनो बहव इत्यसङ्ख्येयगुणाः, अधोलोके सङ्ख्येयगुणाः, अधोलौकिकग्रामेषु तेषां स्वस्थानभावात् बहूनामधोलोके क्रीडार्थं गमनभावात्, तेभ्यस्तिर्यग्लोके सङ्ख्येयगुणाः, तिर्यग्लोकस्य तेषां स्वस्थानत्वात्। एवं व्यन्तरदेवीविषयमप्यल्पबहुत्वं वक्तव्यं। सम्प्रति ज्योतिष्कविषयमल्पबहुत्वमाह—क्षेत्रानुपातेन चिन्त्यमाना ज्योतिष्काः सर्वस्तोका ऊर्द्धलोके, केषाञ्चिदेव मन्दरे तीर्थकरजन्ममहोत्सवनिमित्तमञ्जनदधिमुखेष्वष्टाह्निकानिमित्तं च परेषां केषाञ्चिन्मन्दरादिषु क्रीडानिमित्तं गमनसंभवात्, तेभ्य ऊर्द्धलोकतिर्यग्लोके प्रतरद्वयरूपे असङ्ख्येयगुणाः, तद्धि प्रतरद्वयं केचित् स्वस्थानस्थिता अपि स्पृशन्ति, प्रत्यासन्नत्वात्, अपरे वैक्रियसमुद्घातसमवहताः, अन्ये ऊर्द्धलोकगमनागमनभावतः, ततोऽधिकृतप्रतरद्वयस्पर्शिनः पूर्वोक्तेभ्योऽसङ्ख्येयगुणाः, तेभ्यस्त्रैलोक्ये—त्रैलोक्यसंस्पर्शिनः सङ्ख्येयगुणाः, ये हि ज्योतिष्कास्तथाविधतीव्रप्रयत्नवैक्रियसमुद्घातेन समवहतास्त्रीनपि लोकान् स्वप्रदेशैः स्पृशन्ति ते स्वभावतोऽप्यतिबहव इति पूर्वोक्तेभ्यः सङ्ख्येयगुणाः, तेभ्योऽधोलोकतिर्यग्लोके प्रतरद्वये वर्त्तमाना असङ्ख्येयगुणाः, यतो बहवोऽधोलौकिकग्रामेषु समवसरणादिनिमित्तमधोलोके क्रीडानिमित्तं गमनागमनभावतो बहवश्चाधोलोकात् ज्योतिष्केषु समुत्पद्यमाना यथोक्तं प्रतरद्वयं स्पृशन्ति, ततो घटन्ते पूर्वोक्तेभ्योऽसङ्ख्येयगुणाः, तेभ्यः सङ्ख्येयगुणा अधोलोके, बहूनामधोलोके क्रीडानिमित्तमधोलौकिकग्रामेषु समवसरणादिषु चिरकालावस्थानात्, तेभ्योऽसङ्ख्येयगुणास्तिर्यग्लोके, तिर्यग्लोकस्य तेषां स्वस्थानत्वात्। एवं

॥१५०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [८४]

दीप अनुक्रम [२८८]

ज्योतिष्कदेवीसूत्रमपि भावनीयं । सम्प्रति वैमानिकदेवविषयमल्पबहुत्वमाह—'क्षेत्रानुपातेन' क्षेत्रानुसारेण चिन्त्यमाना वैमानिका देवाः सर्वस्तोकाः ऊर्द्धलोकतिर्यग्लोके—ऊर्द्धलोकतिर्यग्लोकसञ्ज्ञे प्रतरद्वये, यतो येऽधोलोके तिर्यग्लोके वा वर्त्तमाना जीवा वैमानिकेषूत्पद्यन्ते ये च तिर्यग्लोके वैमानिका गमनागमनं कुर्वन्ति ये च विवक्षितप्रतरद्वयाध्यासितं क्रीडास्थानं संश्रिता ये च तिर्यग्लोकस्थिता एव वैक्रियसमुद्घातं मारणान्तिकसमुद्घातं वा कुर्वाणास्तथाविधप्रयत्नविशेषादूर्द्धमात्मप्रदेशान् निसृजन्ति ते विवक्षितं प्रतरद्वयं स्पृशन्ति ते चाल्पे इति सर्वस्तोकाः, तेभ्यस्त्रैलोक्ये सङ्ख्येयगुणाः, कथमिति चेत् ?, उच्यते, इह येऽधोलौकिकग्रामेषु समवसरणादिनिमित्तमधोलोके वा क्रीडानिमित्तं गताः सन्तो वैक्रियसमुद्घातं मारणान्तिकसमुद्घातं वा कुर्वाणास्तथाविधप्रयत्नविशेषाद् दूरतरमूर्द्धं विक्षिप्तात्मप्रदेशदण्डा ये च वैमानिकभवादौलिकागत्या च्यवमाना अधोलौकिकग्रामेषु समुत्पद्यन्ते ते किल त्रीनपि लोकान् स्पृशन्ति बहवश्च पूर्वोक्तेभ्य इति सङ्ख्येयगुणाः, तेभ्योऽप्यधोलोकतिर्यग्लोके—अधोलोकतिर्यग्लोकसञ्ज्ञे प्रतरद्वये सङ्ख्येयगुणाः, अधोलौकिकग्रामेषु समवसरणादौ गमनागमनभावतो विवक्षितप्रतरद्वयाध्यासितसमवसरणादौ चावस्थानतो बहूनां यथोक्तप्रतरद्वयसंस्पर्शभावात्, तेभ्योऽधोलोके सङ्ख्येयगुणाः, अधोलौकिकग्रामेषु बहूनां समवसरणादाववस्थानभावात्, तेभ्यस्तिर्यग्लोके सङ्ख्येयगुणाः, बहुषु समवसरणेषु बहुषु च क्रीडास्था-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [८४]

दीप अनुक्रम [२८८]

नेषु बहूनामवस्थानभावात्, तेभ्य ऊर्द्धलोकेऽसङ्ख्येयगुणाः, ऊर्द्धलोकस्य स्वस्थानत्वात्, तत्र च सदैव बहुतरभावात्। एवं वैमानिकदेवीविषयं सूत्रमपि भावनीयं ॥ सम्प्रत्येकेन्द्रियादिगतमल्पबहुत्वमाह—

खेत्ताणुवाएणं सव्वत्थोवा एगिंदिया जीवा उड्ढलोयतिरियलोए अहोलोयतिरियलोए विसेसाहिया तिरियलोए असंखिज्जगुणा तेलोके असंखिज्जगुणा उड्ढलोए असंखिज्जगुणा अहोलोए विसेसाहिया। खेत्ताणुवाएणं सव्वत्थोवा एगिंदिया जीवा अपज्जत्तगा उड्ढलोयतिरियलोए अहोलोयतिरियलोए विसेसाहिया तिरियलोए असंखिज्जगुणा तेलोके असंखेज्जगुणा उड्ढलोए असंखेज्जगुणा अहोलोए विसेसाहिया। खित्ताणुवाएणं सव्वत्थोवा एगिंदिया जीवा पज्जत्तगा उड्ढलोयतिरियलोए अहोलोयतिरियलोए विसेसाहिया तिरियलोए असंखिज्जगुणा तेलोके असंखिज्जगुणा उड्ढलोए असंखिज्जगुणा अहोलोए विसेसाहिया (सू० ८५)

क्षेत्रानुपातेन चिन्त्यमाना एकेन्द्रिया जीवाः सर्वस्तोका ऊर्द्धलोकतिर्यग्लोके—ऊर्द्धलोकतिर्यग्लोकसञ्ज्ञे प्रतरद्वये, यतो ये तत्रस्था एव केचन ये चोर्द्धलोकात्तिर्यग्लोके तिर्यग्लोकादूर्द्धलोके समुत्पित्सवः कृतमारणान्तिकसमुद्घातास्ते किल विवक्षितं प्रतरद्वयं स्पृशन्ति खल्पाश्च ते इति सर्वस्तोकाः, तेभ्योऽधोलोकतिर्यग्लोके विशेषाधिकाः, यतो ये अधोलोकात्तिर्यग्लोके तिर्यग्लोकाद्वाऽधोलोके ईलिकागत्या समुत्पद्यमाना विवक्षितं प्रतरद्वयं स्पृशन्ति तत्रस्थाश्च ऊर्द्धलोकाच्चाधोलोके विशेषाधिकास्ततो बहवोऽधोलोकात्तिर्यग्लोके समुत्पद्यमाना अवाप्यन्ते इति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [८५]

दीप अनुक्रम [२८९]

विशेषाधिकाः, तेभ्यस्तिर्यग्लोकेऽसङ्ख्येयगुणाः, उक्तप्रतरद्विकक्षेत्रात्तिर्यग्लोकक्षेत्रस्यासङ्ख्येयगुणत्वात्, तेभ्यस्त्रैलोक्येऽसङ्ख्येयगुणाः, बहवो ह्यूर्द्धलोकादधोलोके अधोलोकादूर्द्धलोके च समुत्पद्यन्ते, तेषां च मध्ये बहवो मारणान्तिकसमुद्घातवशाद्विक्षिप्तात्मप्रदेशदण्डास्त्रीनपि लोकान् स्पृशन्ति ततो भवत्यसङ्ख्येयगुणाः, तेभ्य ऊर्द्धलोकेऽसङ्ख्येयगुणाः, उपपातक्षेत्रस्यातिबहुत्वात्, तेभ्योऽधोलोके विशेषाधिकाः, ऊर्द्धलोकक्षेत्रादधोलोकक्षेत्रस्य विशेषाधिकत्वात्। एवमपर्याप्तविषयं पर्याप्तविषयं च सूत्रं भावयितव्यम् ॥ अधुना द्वीन्द्रियविषयमल्पबहुत्वमाह—

खेत्ताणुवाएणं सव्वत्थोवा बिइंदिया उड्ढलोए उड्ढलोयतिरियलोए असंखिज्जगुणा तेलुक्के असंखिज्जगुणा अहोलोयतिरियलोए असंखिज्जगुणा अहोलोए संखिज्जगुणा तिरियलोए संखिज्जगुणा। खित्ताणुवाएणं सव्वत्थोवा बेइंदिया अपज्जत्तया उड्ढलोए उड्ढलोयतिरियलोए असंखिज्जगुणा तेलोके असंखेज्जगुणा अहोलोयतिरियलोए असंखेज्जगुणा अहोलोए संखिज्जगुणा तिरियलोए संखिज्जगुणा। खित्ताणुवाएणं सव्वत्थोवा बेइंदिया पज्जत्ता उड्ढलोए उड्ढलोयतिरियलोए असंखिज्जगुणा तेलोके असंखिज्जगुणा अहोलोयतिरियलोए असंखिज्जगुणा अहोलोए संखिज्जगुणा तिरियलोए संखिज्जगुणा ॥ खित्ताणुवाएणं सव्वत्थोवा तेइंदिया उड्ढलोए उड्ढलोयतिरियलोए असंखिज्जगुणा तेलोके असंखिज्जगुणा अहोलोयतिरियलोए असंखिज्जगुणा अहोलोए संखिज्जगुणा तिरियलोए संखिज्जगुणा। खित्ताणुवाएणं सव्वत्थोवा तेइंदिया अपज्जत्तया उड्ढलोए उड्ढलोगतिरियलोए असंखिज्जगुणा तेलोके असंखिज्जगुणा अहोलोयतिरियलोए असंखिज्जगुणा अहोलोए संखि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [८६]

दीप अनुक्रम [२९०]

ज्जगुणा तिरियलोए संखिज्जगुणा। खित्ताणुवाएणं सव्वत्थोवा तेइंदिया पज्जत्तया उड्ढलोए उड्ढलोयतिरियलोए असंखिज्जगुणा तेलुक्के असंखिज्जगुणा अहोलोयतिरियलोए असंखिज्जगुणा अहोलोए संखिज्जगुणा तिरियलोए संखिज्जगुणा। खित्ताणुवाएणं सव्वत्थोवा चउरिंदिया जीवा उड्ढलोए उड्ढलोयतिरियलोए असंखिज्जगुणा तेलोक्के असंखिज्जगुणा अहोलोयतिरियलोए असंखिज्जगुणा अहोलोए संखिज्जगुणा तिरियलोए संखिज्जगुणा। खित्ताणुवाएणं सव्वत्थोवा चउरिंदिया जीवा अपज्जत्तया उड्ढलोए उड्ढलोयतिरियलोए असंखिज्जगुणा तेलुक्के असंखिज्जगुणा अहोलोयतिरियलोए असंखिज्जगुणा अहोलोए संखिज्जगुणा तिरियलोए संखिज्जगुणा। खित्ताणुवाएणं सव्वत्थोवा चउरिंदिया जीवा पज्जत्तया उड्ढलोए उड्ढलोयतिरियलोए असंखिज्जगुणा तेलोक्के असंखिज्जगुणा अहोलोयतिरियलोए असंखिज्जगुणा अहोलोए संखिज्जगुणा तिरियलोए संखिज्जगुणा (सू० ८६)

'क्षेत्रानुपातेन' क्षेत्रानुसारेण चिन्त्यमाना द्वीन्द्रियाः सर्वस्तोका ऊर्द्धलोके, ऊर्द्धलोकस्यैकदेशे तेषां संभवात्, तेभ्य ऊर्द्धलोकतिर्यग्लोके प्रतरद्वयरूपेऽसङ्ख्येयगुणाः, यतो ये ऊर्द्धलोकात्तिर्यग्लोके तिर्यग्लोकादूर्द्धलोके द्वीन्द्रियत्वेन समुत्पत्तुकामास्तदायुरनुभवन्त ईलिकागत्या समुत्पद्यंते ये च द्वीन्द्रिया एव तिर्यग्लोकादूर्द्धलोके ऊर्द्धलोकाद्वा तिर्यग्लोके द्वीन्द्रियत्वेनान्यत्वेन वा समुत्पत्तुकामाः कृतप्रथममारणान्तिकसमुद्घाताः अत एव द्वीन्द्रियायुः प्रतिसंवेदयमानाः समुद्घातवशाच्च दूरतरविक्षिप्तनिजात्मप्रदेशदण्डा ये च प्रतरद्वयाध्यासितक्षेत्रसमासीनास्ते यथोक्त-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [८६]

दीप अनुक्रम [२९०]

प्रतरद्वयसंस्पर्शिनः बहवश्चेति पूर्वोक्तेभ्योऽसङ्ख्येयगुणाः, तेभ्यस्त्रैलोक्येऽसङ्ख्येयगुणाः, यतो द्वीन्द्रियाणां प्रायुर्येणोत्पत्तिस्थानान्यधोलोके तस्माच्चातिप्रभूतानि तिर्यग्लोके, तत्र ये द्वीन्द्रिया अधोलोकादूर्द्धलोके द्वीन्द्रियत्वेनान्यत्वेन वा समुत्पत्तुकामाः कृतप्रथममारणान्तिकसमुद्घाताः समुद्घातवशाच्चोत्पत्तिदेशं यावत् विक्षिप्तात्मप्रदेशदण्डास्ते द्वीन्द्रियायुः प्रतिसंवेदयमानाः ये चोर्द्धलोकादधोलोके द्वीन्द्रियाः शेषकाया वा यावद् द्वीन्द्रियत्वेन समुत्पद्यमाना द्वीन्द्रियायुरनुभवन्ति ते त्रैलोक्यसंस्पर्शिनः ते च बहव इति पूर्वोक्तेभ्योऽसङ्ख्येयगुणाः, तेभ्योऽधोलोकतिर्यग्लोकप्रतरद्वयरूपेऽसङ्ख्येयगुणाः, यतो येऽधोलोकात्तिर्यग्लोके तिर्यग्लोकाद्वाऽधोलोके द्वीन्द्रियत्वेन समुत्पत्तुकामास्तदायुरनुभवन्त ईलिकागत्या समुत्पद्यन्ते ये च द्वीन्द्रियास्तिर्यग्लोकादधोलोके द्वीन्द्रियत्वेन शेषकायत्वेन वोत्पित्सवः कृतप्रथममारणान्तिकसमुद्घाता द्वीन्द्रियायुरनुभवन्तः समुद्घातवशेनोत्पत्तिदेशं यावद् विक्षिप्तात्मप्रदेशदण्डास्ते यथोक्तं प्रतरद्वयं स्पृशन्ति प्रभूताश्चेति पूर्वोक्तेभ्योऽसङ्ख्येयगुणाः, तेभ्योऽधोलोके सङ्ख्येयगुणाः, तत्रोत्पत्तिस्थानानामतिप्रचुराणां भावात्, तेभ्योऽपि तिर्यग्लोके सङ्ख्येयगुणाः, अतिप्रचुरतराणां योनिस्थानानां तत्र भावात्, यथेदमौघिकं द्वीन्द्रियसूत्रं तथा पर्याप्तापर्याप्तद्वीन्द्रियसूत्रौघिकत्रीन्द्रियपर्याप्तापर्याप्तौघिकचतुरिन्द्रियपर्याप्तापर्याप्तसूत्राणि भावनीयानि ॥ साम्प्रतमौघिकपञ्चेन्द्रियविषयमल्पबहुत्वमाह—

खित्ताणुवाएणं सव्वत्थोवा पंचिंदिया तेलुक्के उड्ढलोयतिरियलोए संखिज्जगुणा अहोलोयतिरियलोए संखिज्जगुणा उड्ढलोए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संखिज्जगुणा अहोलोए संखिज्जगुणा तिरियलोए असंखिज्जगुणा । खित्ताणुवाएणं सव्वत्थोवा पंचिंदिया अपज्जत्तया तेलोके उड्ढलोयतिरियलोए संखेज्जगुणा अहोलोयतिरियलोए संखिज्जगुणा उड्ढलोए संखिज्जगुणा अहोलोए संखिज्जगुणा तिरियलोए असंखिज्जगुणा । खित्ताणुवाएणं सव्वत्थोवा पंचिंदिया पज्जत्ता उड्ढलोए उड्ढलोयतिरियलोए असंखिज्जगुणा तेलुके संखिज्जगुणा अहोलोयतिरियलोए संखिज्जगुणा अहोलोए संखिज्जगुणा तिरियलोए असंखिज्जगुणा (सू० ८७)

क्षेत्रानुपातेन चिन्त्यमानाः पञ्चेन्द्रियाः सर्वस्तोकास्त्रैलोक्ये—त्रैलोक्यसंस्पर्शिनः, यतो येऽधोलोकादूर्द्धलोके ऊर्द्धलोकाद्वाऽधोलोके शेषकायाः पञ्चेन्द्रियायुरनुभवन्त इलिकागत्या समुत्पद्यन्ते ये च पञ्चेन्द्रिया ऊर्द्धलोकादधोलोके अधोलोकादूर्द्धलोके शेषकायत्वेन पञ्चेन्द्रियत्वेन वोत्पित्सवः कृतमारणान्तिकसमुद्घाताः समुद्घातवशाच्चोत्पत्तिदेशं यावत् विक्षिप्तात्मप्रदेशदण्डाः पञ्चेन्द्रियायुरद्याप्यनुभवन्ति ते त्रैलोक्यसंस्पर्शिनः ते चाल्पे इति सर्वस्तोकाः, तेभ्य ऊर्द्धलोकतिर्यग्लोके प्रतरद्वयरूपे असङ्ख्येयगुणाः, प्रभूततराणामुपपातेन समुद्घातेन वा यथोक्तप्रतरद्वयसंस्पर्शसंभवात्, तेभ्योऽधोलोकतिर्यग्लोके सङ्ख्येयगुणाः, अतिप्रभूततराणामुपपातसमुद्घाताभ्यामधोलोकतिर्यग्लोकसञ्ज्ञप्रतरद्वयसंस्पर्शभावात्, तेभ्य ऊर्द्धलोके सङ्ख्येयगुणाः, वैमानिकानामवस्थानभावात्, तेभ्योऽधोलोके सङ्ख्येयगुणाः, वैमानिकदेवेभ्यः सङ्ख्येयगुणानां नैरयिकाणां तत्र भावात्, तेभ्यस्तिर्यग्लोकेऽसङ्ख्येयगुणाः, संमूर्च्छिमजलचरस्थचरादीनां व्यन्तरज्योतिष्काणां संमूर्च्छिममनुष्याणां तत्र भावात् । एवं पञ्चेन्द्रियापर्याप्तसूत्रमपि भाव-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नीयं । पञ्चेन्द्रियपर्याप्तसूत्रमिदम्—'खेत्ताणुवाएणं' इत्यादि, क्षेत्रानुपातेन चिन्त्यमानाः पञ्चेन्द्रियाः पर्याप्ताः सर्वस्तोका ऊर्द्धलोके, प्रायो वैमानिकानामेव तत्र भावात्, तेभ्य ऊर्द्धलोकतिर्यग्लोके प्रतरद्वयरूपेऽसङ्ख्येयगुणाः, विवक्षितप्रतरद्वयप्रत्यासन्नज्योतिष्काणां तदध्यासितक्षेत्राश्रितव्यन्तरतिर्यक्पञ्चेन्द्रियाणां वैमानिकव्यन्तरज्योतिष्कविद्याधरचारणमुनितिर्यक्पञ्चेन्द्रियाणामूर्द्धलोके तिर्यग्लोके च गमनागमने कुर्वतामधिकृतप्रतरद्वयसंस्पर्शात्, तेभ्यस्त्रैलोक्ये–त्रैलोक्यसंस्पर्शिनः सङ्ख्येयगुणाः, कथमिति चेत्, उच्यते, यतो ये भवनपतिव्यन्तरज्योतिष्कवैमानिकाः विद्याधरा वाऽधोलोकस्थाः कृतवैक्रियसमुद्घातास्तथाविधप्रयत्नविशेषादूर्द्धलोके विक्षिप्तात्मप्रदेशदण्डास्ते त्रीनपि लोकान् स्पृशन्ति इति सङ्ख्येयगुणाः, तेभ्योऽधोलोकतिर्यग्लोके प्रतरद्वयरूपे सङ्ख्येयगुणाः, बहवो हि व्यन्तराः स्वस्थानप्रत्यासन्नतया भवनपतयस्तिर्यग्लोके ऊर्द्धलोके वा व्यन्तरज्योतिष्कवैमानिका देवा अधोलौकिकग्रामेषु समवसरणादौ अधोलोके क्रीडादिनिमित्तं च गमनागमनकरणतः तथा समुद्रेषु केचित्तिर्यक्पञ्चेन्द्रियाः स्वस्थानप्रत्यासन्नतया अपरे तदध्यासितक्षेत्राश्रिततया यथोक्तं प्रतरद्वयं स्पृशन्ति ततः सङ्ख्येयगुणाः, तेभ्योऽधोलोके सङ्ख्येयगुणाः, नैरयिकाणां भवनपतीनां च तत्रावस्थानात्, तेभ्यस्तिर्यग्लोकेऽसङ्ख्येयगुणाः, तिर्यक्पञ्चेन्द्रियमनुष्यव्यन्तरज्योतिष्काणामवस्थानात्। तदेवमुक्तं पञ्चेन्द्रियाणामल्पबहुत्वम्, इदानीमेकेन्द्रियभेदानां पृथिवीकायिकादीनां पञ्चानामौधिकपर्याप्तापर्याप्तभेदेन प्रत्येकं त्रीणि त्रीण्यल्पबहुत्वान्याह—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [८७]

दीप अनुक्रम [२९१]

खित्ताणुवाएणं सव्वत्थोवा पुढविकाइया उड्ढलोयतिरियलोए अहोलोयतिरियलोए विसेसाहिया तिरियलोए असंखिज्जगुणा तेलोके असंखिज्जगुणा उड्ढलोए असंखिज्जगुणा अहोलोए विसेसाहिया। खित्ताणुवाएणं सव्वत्थोवा पुढविकाइया अपज्जत्तया उड्ढलोयतिरियलोए अहोलोयतिरियलोए विसेसाहिया तिरियलोए असंखिज्जगुणा तेलोके असंखिज्जगुणा उड्ढलोए असंखिज्जगुणा अहोलोए विसेसाहिया। खित्ताणुवाएणं सव्वत्थोवा पुढविकाइया पज्जत्तया उड्ढलोयतिरियलोए अहोलोयतिरियलोए विसेसाहिया तिरियलोए असंखिज्जगुणा तेलुके असंखिज्जगुणा उड्ढलोए असंखिज्जगुणा अहोलोए विसेसाहिया ॥ खित्ताणुवाएणं सव्वत्थोवा आउकाइया उड्ढलोयतिरियलोए अहोलोयतिरियलोए विसेसाहिया तिरियलोए असंखिज्जगुणा तेलुके असंखिज्जगुणा उड्ढलोए असंखिज्जगुणा अहोलोए विसेसाहिया। खित्ताणुवाएणं सव्वत्थोवा आउकाइया अपज्जत्तया उड्ढलोयतिरियलोए अहोलोयतिरियलोए विसेसाहिया तिरियलोए असंखिज्जगुणा तेलोके असंखिज्जगुणा उड्ढलोए असंखिज्जगुणा अहोलोए विसेसाहिया। खित्ताणुवाएणं सव्वत्थोवा आउकाइया पज्जत्तया उड्ढलोयतिरियलोए अहोलोयतिरियलोए विसेसाहिया तिरियलोए असंखिज्जगुणा तेलोके असंखिज्जगुणा उड्ढलोए असंखिज्जगुणा अहोलोए विसेसाहिया ॥ खित्ताणुवाएणं सव्वत्थोवा तेउकाइया उड्ढलोयतिरियलोए अहोलोयतिरियलोए विसेसाहिया तिरियलोए असंखिज्जगुणा तेलोके असंखिज्जगुणा उड्ढलोए असंखिज्जगुणा अहोलोए विसेसाहिया। खित्ताणुवाएणं सव्वत्थोवा तेउकाइया अपज्जत्तया उड्ढलोयतिरियलोए अहोलोयतिरियलोए विसेसाहिया तिरियलोए असंखिज्जगुणा तेलोके असंखिज्जगुणा उड्ढलोए असंखिज्जगुणा अहोलोए विसेसाहिया। खित्ताणुवाएणं सव्वत्थोवा तेउकाइया पज्जत्तया उड्ढलो-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

यतिरियलोए अहोलोयतिरियलोए विसेसाहिया तिरियलोए असंखिज्जगुणा तेलोके असंखिज्जगुणा उड्ढलोए असंखेज्जगुणा अहोलोए विसेसाहिया ॥ खित्ताणुवाएणं सव्वत्थोवा वाउकाइया अपज्जत्तया उड्ढलोयतिरियलोए अहोलोयतिरियलोए विसेसाहिया तिरियलोए असंखिज्जगुणा तेलुके असंखिज्जगुणा उड्ढलोए असंखिज्जगुणा अहोलोए विसेसाहिया। खित्ताणुवाएणं सव्वत्थोवा वाउकाइया पज्जत्तया उड्ढलोयतिरियलोए अहोलोयतिरियलोए विसेसाहिया तिरियलोए असंखिज्जगुणा तेलुके असंखिज्जगुणा उड्ढलोए असंखिज्जगुणा अहोलोए विसेसाहिया ॥ खित्ताणुवाएणं सव्वत्थोवा वणस्सइकाइया उड्ढलोयतिरियलोए अहोलोयतिरियलोए विसेसाहिया तिरियलोए असंखिज्जगुणा तेलोके असंखिज्जगुणा उड्ढलोए असंखिज्जगुणा अहोलोए विसेसाहिया। खित्ताणुवाएणं सव्वत्थोवा वणस्सइकाइया अपज्जत्तया उड्ढलोयतिरियलोए अहोलोयतिरियलोए विसेसाहिया तिरियलोए असंखिज्जगुणा तेलुके असंखिज्जगुणा उड्ढलोए असंखिज्जगुणा अहोलोए विसेसाहिया। खित्ताणुवाएणं सव्वत्थोवा वणस्सइकाइया पज्जत्तया उड्ढलोयतिरियलोए अहोलोयतिरियलोए विसेसाहिया तिरियलोए असंखिज्जगुणा तेलोके असंखिज्जगुणा उड्ढलोए असंखिज्जगुणा अहोलोए विसेसाहिया (सू० ८८)

इमानि पञ्चदशापि सूत्राणि प्रागुक्तैकेन्द्रियसूत्रवद्भावनीयानि । साम्प्रतमौधिकत्रसकायपर्याप्तपर्याप्तत्रसकायसूत्राण्याह—

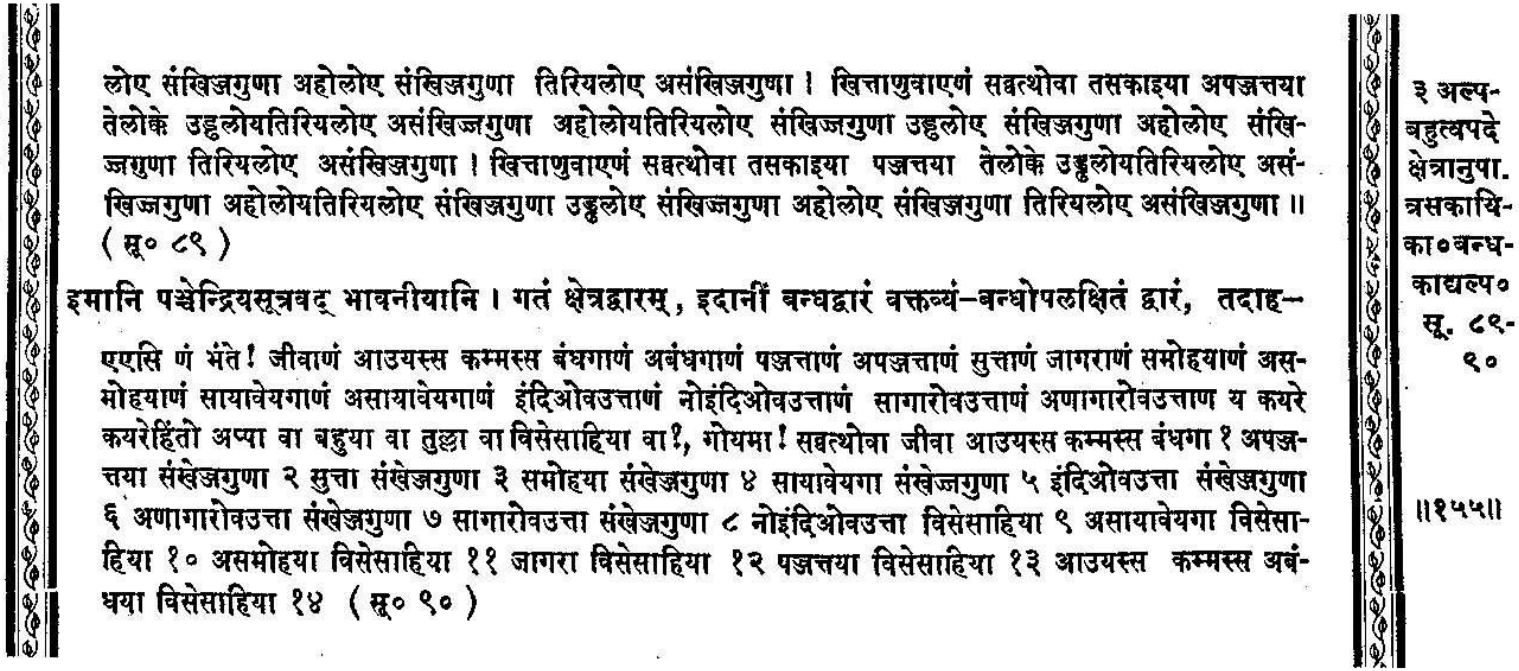
खित्ताणुवाएणं सव्वत्थोवा तसकाइया तेलोके उड्ढलोयतिरियलोए असंखिज्जगुणा अहोलोयतिरियलोए संखिज्जगुणा उड्ढ-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [८९]

दीप अनुक्रम [२९३]



प्रज्ञापनायाः मल-य० वृत्तौ. ॥१५५॥

लोए संखिज्जगुणा अहोलोए संखिज्जगुणा तिरियलोए असंखिज्जगुणा । खित्ताणुवाएणं सव्वत्थोवा तसकाइया अपज्जत्तया तेलोके उड्ढलोयतिरियलोए असंखिज्जगुणा अहोलोयतिरियलोए संखिज्जगुणा उड्ढलोए संखिज्जगुणा अहोलोए संखिज्जगुणा तिरियलोए असंखिज्जगुणा । खित्ताणुवाएणं सव्वत्थोवा तसकाइया पज्जत्तया तेलोके उड्ढलोयतिरियलोए असंखिज्जगुणा अहोलोयतिरियलोए संखिज्जगुणा उड्ढलोए संखिज्जगुणा अहोलोए संखिज्जगुणा तिरियलोए असंखिज्जगुणा ॥ (सू० ८९)

इमानि पञ्चेन्द्रियसूत्रवद् भावनीयानि । गतं क्षेत्रद्वारम्, इदानीं बन्धद्वारं वक्तव्यं–बन्धोपलक्षितं द्वारं, तदाह–

एएसि णं भंते! जीवाणं आउयस्स कम्मस्स बंधगाणं अबंधगाणं पज्जत्ताणं अपज्जत्ताणं सुत्ताणं जागराणं समोहयाणं असमोहयाणं सायावेयगाणं असायावेयगाणं इंदिओवउत्ताणं नोइंदिओवउत्ताणं सागारोवउत्ताणं अणागारोवउत्ताण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा?, गोयमा! सव्वत्थोवा जीवा आउयस्स कम्मस्स बंधगा १ अपज्जत्तया संखेज्जगुणा २ सुत्ता संखेज्जगुणा ३ समोहया संखेज्जगुणा ४ सायावेयगा संखेज्जगुणा ५ इंदिओवउत्ता संखेज्जगुणा ६ अणागारोवउत्ता संखेज्जगुणा ७ सागारोवउत्ता संखेज्जगुणा ८ नोइंदिओवउत्ता विसेसाहिया ९ असायावेयगा विसेसाहिया १० असमोहया विसेसाहिया ११ जागरा विसेसाहिया १२ पज्जत्तया विसेसाहिया १३ आउयस्स कम्मस्स अबंधया विसेसाहिया १४ (सू० ९०)

३ अल्प-बहुत्वपदे क्षेत्रानुपा. त्रसकायिका०बन्धकाद्यल्प० सू. ८९-९० ॥१५५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तृतीय-पदे (२६) "बन्ध" द्वारम् आरब्ध:

इहायुःकर्मबन्धकाबन्धकानां पर्याप्तापर्याप्तानां सुप्तजाग्रतां समवहतासमवहतानां सातवेदकासातवेदकानां इन्द्रियोपयुक्तनोइन्द्रियोपयुक्तानां साकारोपयुक्तानाकारोपयुक्तानां समुदायेनाल्पबहुत्वं वक्तव्यं, तत्र प्रत्येकं तावद् ब्रूमः येन समुदायेन सुखेन तदवगम्यते, तत्र सर्वस्तोकाः आयुषो बन्धका अबन्धकाः सङ्ख्येयगुणाः, यतोऽनुभूयमानभवायुषि त्रिभागावशेषे पारभविकमायुर्जीवा बध्नन्ति त्रिभागत्रिभागाद्यवशेषे वा ततो द्वौ त्रिभागावबन्धकाल एकस्त्रिभागो बन्धकाल इति बन्धकेभ्योऽबन्धकाः सङ्ख्येयगुणाः । तथा सर्वस्तोका अपर्याप्तकाः पर्याप्तकाः सङ्ख्येयगुणाः, एतच्च सूक्ष्मजीवानधिकृत्य वेदितव्यं, सूक्ष्मेषु हि बाह्यो व्याघातो न भवति ततस्तद्भावाद् बहूनां निष्पत्तिः स्तोकानामेव चानिष्पत्तिः । तथा सर्वस्तोकाः सुप्ताः, जागराः सङ्ख्येयगुणाः, एतदपि सूक्ष्मानेकेन्द्रियानधिकृत्य वेदितव्यं, यस्मादपर्याप्ताः सुप्ता एव लभ्यन्ते, पर्याप्ता जागरा अपि, [उक्तं च मूलटीकायाम्—"जम्हा अपज्जत्ता सुत्ता लब्भंति, केइ अपज्जत्तगा जेसिं संखिज्जा समया अतीता ते य थोवा इयरेऽवि थोवगा चेव सेसा, जागरा पज्जत्ता ते संखिज्जगुणा" इति] जागराः पर्याप्तास्तेन सङ्ख्येयगुणा इति । तथा समवहताः सर्वस्तोकाः, यत इह समवहता मारणान्तिकसमुद्घातेन परिगृह्यन्ते, मारणान्तिकश्च समुद्घातो मरणकाले न शेषकालं, तत्रापि न सर्वेषामिति सर्वस्तोकाः, तेभ्योऽसमवहता असङ्ख्येयगुणाः, जीवनकालस्यातिबहुत्वात् । तथा सर्वस्तोकाः सातवेदकाः, यत इह बहवः साधारणशरीरा अल्पे च प्रत्येकशरीरिणः, साधारणशरीराश्च बहवोऽसातवेदकाः स्वल्पाः सातवेदिनः

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [९०]

दीप अनुक्रम [२९४]

प्रज्ञापना-याः मल-य० वृत्तौ.

॥१५६॥

प्रत्येकशरीरिणस्तु भूयांसः सातवेदकाः स्तोका असातवेदिनः, ततः स्तोकाः सातवेदकाः तेभ्योऽसातवेदकाः सङ्ख्येयगुणाः। तथा सर्वस्तोका इन्द्रियोपयुक्ताः तेभ्यो नोइन्द्रियोपयुक्ताः सङ्ख्येयगुणाः, इन्द्रियोपयोगो हि प्रत्युत्पन्नकालविषयः ततस्तदुपयोगकालस्य स्तोकत्वात् पृच्छासमये स्तोका अवाप्यन्ते, यदा तु तमेवार्थमिन्द्रियेण दृष्ट्वा विचारयत्योघसञ्ज्ञयाऽपि तदा नोइन्द्रियोपयुक्तः स व्यपदिश्यते ततो नोइन्द्रियोपयोगस्यातीतानागतकालविषयतया बहुकालत्वात् सङ्ख्येयगुणा नोइन्द्रियोपयुक्ताः। तथा सर्वस्तोका अनाकारोपयुक्ताः, अनाकारोपयोगकालस्य स्तोकत्वात्, साकारोपयुक्ताः सङ्ख्येयगुणाः, अनाकारोपयोगकालात् साकारोपयोगकालस्य सङ्ख्येयगुणत्वात् ॥ इदानीं समुदायगतं सूत्रोक्तमल्पबहुत्वं भाव्यते—सर्वस्तोका जीवा आयुःकर्मणो बन्धकाः, आयुर्बन्धकालस्य प्रतिनियतत्वात्, तेभ्योऽपर्याप्ताः सङ्ख्येयगुणाः, यस्मादपर्याप्ता अनुभूयमानभवत्रिभागाद्यवशेषायुषः पारभविकमायुर्बध्नन्ति ततो द्वौ त्रिभागावबन्धकाल एको बन्धकाल इति बन्धकालादबन्धकालः सङ्ख्येयगुणः तेन सङ्ख्येयगुणा एवापर्याप्ता आयुर्बन्धकेभ्यः, तेभ्योऽपर्याप्तेभ्य सुप्ताः सङ्ख्येयगुणाः, यस्मादपर्याप्तेषु पर्याप्तेषु च सुप्ता लभ्यन्ते, पर्याप्ताश्चापर्याप्तेभ्यः सङ्ख्येयगुणा इत्यपर्याप्तेभ्यः सुप्ताः सङ्ख्येयगुणाः, तेभ्यः समवहताः सङ्ख्येयगुणाः, बहूनां पर्याप्तेष्वपर्याप्तेषु मारणान्तिकसमुद्घातेन समवहतानां सदा लभ्यमानत्वात्, तेभ्यः सातवेदकाः सङ्ख्येयगुणाः, आयुर्बन्धकापर्याप्तसुप्तेष्वपि सातवेदकानां लभ्यमानत्वात्, तेभ्य इन्द्रियोपयुक्ताः सङ्ख्येयगुणाः, असातवेदकानामपि

३ अल्प-बहुत्वपदे आयुर्बन्धकाद्य-ल्प.सू.९०

॥१५६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [९०]

दीप अनुक्रम [२९४]

इन्द्रियोपयोगस्य लभ्यमानत्वात्, तेभ्योऽनाकारोपयोगोपयुक्ताः सङ्ख्येयगुणाः, इन्द्रियोपयोगेषु नोइन्द्रियोपयोगेषु चानाकारोपयोगस्य लभ्यमानत्वात्, तेभ्यः साकारोपयुक्ताः सङ्ख्येयगुणाः, इन्द्रियोपयोगेषु नोइन्द्रियोपयोगेषु च साकारोपयोगकालस्य बहुत्वात्, तेभ्यो नोइन्द्रियोपयोगोपयुक्ता विशेषाधिकाः, नोइन्द्रियानाकारोपयुक्तानामपि तत्र प्रक्षेपात्, अत्र विनेयजनानुग्रहार्थमसद्भावस्थापनया निदर्शनमुच्यते—इह सामान्यतः किल साकारोपयुक्ता द्विनवत्यधिकं शतं १९२, ते च किल द्विधा—इन्द्रियसाकारोपयुक्ता नोइन्द्रियसाकारोपयुक्ताश्च, तत्रेन्द्रियसाकारोपयुक्ताः किलातीव स्तोका इति विंशतिसङ्ख्याः कल्प्यन्ते, शेषं द्विसप्तत्युत्तरशतं १७२ नोइन्द्रियसाकारोपयुक्ताः, नोइन्द्रियानाकारोपयुक्ताश्च द्विपञ्चाशत्कल्पाः, ततः सामान्यतः साकारोपयुक्तेभ्यः इन्द्रियसाकारोपयुक्तेषु विंशतिकल्पेष्वपनीतेषु द्विपञ्चाशत्कल्पेषु अनाकारोपयुक्तेषु तेषु मध्ये प्रक्षिप्तेषु द्वे शते चतुर्विंशत्यधिके भवतः, ततः साकारोपयुक्तेभ्यो नोइन्द्रियोपयुक्ता विशेषाधिकाः, तेभ्योऽसातवेदका विशेषाधिकाः, इन्द्रियोपयुक्तानामप्यसातवेदकत्वात्, तेभ्योऽसमवहता विशेषाधिकाः, सातवेदकानामप्यसमवहतत्वभावात्, तेभ्यो जागरा विशेषाधिकाः, समवहतानामपि केषांचिज्जागरत्वात्, तेभ्यः पर्याप्ताः विशेषाधिकाः, सुप्तानामपि केषाञ्चित्पर्याप्तत्वात्, सुप्ता हि पर्याप्ता अपि भवन्ति जागरास्तु पर्याप्ता एवेति नियमः, तेभ्योऽपि पर्याप्तेभ्यः आयुःकर्मबन्धकाः विशेषाधिकाः, अपर्याप्तानामप्यायुःकर्मबन्धकत्वभावात्, इदमेवाल्पबहुत्वं विनेयजनानुग्रहाय स्थापनाराशिभिरुपदर्श्यते—इह द्वे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [९०]

दीप अनुक्रम [२९४]

पङ्क्ती उपर्यधोभावेन न्यस्येते, तत्रोपरितन्या पङ्क्तावायुःकर्मबन्धका अपर्याप्ताः सुप्ताः समवहताः सातवेदका इन्द्रियोपयुक्ताः अनाकारोपयुक्ताः क्रमेण स्थाप्यन्ते, तस्या अधस्तन्यां पङ्क्तौ तेषामेव पदानामधस्तात् यथासङ्ख्यमायुरबन्धकाः पर्याप्ता जागरा असमवहता असातवेदका नोइन्द्रियोपयुक्ताः साकारोपयुक्ताः । स्थापना चेयं

आयुर्बन्धकाः	१	अपर्याप्ताः	२	सुप्ताः	४	समवहताः	८
आयुरबन्धकाः	२५५	पर्याप्ताः	२५४	जागराः	२५२	असमवहताः	२४८

सातवेदकाः	१६	इन्द्रियोपयुक्ताः	३२	अनाकारोपयुक्ताः	६४		
असातवेदकाः	२४०	नोइन्द्रियोपयुक्ताः	२२४	साकारोपयुक्ताः	१९२		

अत्रोपरितन्यां पङ्क्तौ सर्वाण्यपि पदानि सङ्ख्येयगुणानि, आयुःपदं सर्वेषामाद्यमिति तत्परिमाणसङ्ख्यायामेकः स्थाप्यते, ततः शेषपदानि किल जघन्येन सङ्ख्येयेन सङ्ख्येयगुणानीति द्विगुणद्विगुणाङ्कः तेषु स्थाप्यते, तद्यथा–द्वौ चत्वारः अष्टौ षोडश द्वात्रिंशत् चतुष्षष्टिः, सर्वोऽपि जीवराशिरनन्तानन्तस्वरूपोऽप्यसत्कल्पनया षट्पञ्चाशदधिकशतद्वयपरिमाणः परिकल्प्यते, ततोऽस्माद् राशेरायुर्बन्धकादिगताः सङ्ख्याः शोधयित्वा यद्यत् शेषमवतिष्ठति तत्तदायुरबन्धकादीनां परिमाणं स्थापयितव्यं, तद्यथा—आयुरबन्धकादिपदे द्वे शते पञ्चपञ्चाशदधिके, शेषेषु यथोक्तक्रमं द्वे शते चतुःपञ्चाशदधिके द्वे शते द्विपञ्चाशदधिके द्वे शते अष्टाचत्वारिंशदधिके द्वे शते चत्वारिंशदधिके द्वे शते चतुर्विंशत्यधिके द्विनवत्यधिकं शतं, एवं च सत्युपरितनपङ्क्तिगतान्यनाकारोपयुक्तपर्यन्तानि पदानि सङ्ख्येयगुणानि द्विगुणद्विगुणा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [९०]

दीप अनुक्रम [२९४]

धिकत्वात्, ततः परं साकारोपयुक्तपदमपि सङ्ख्येयगुणं त्रिगुणत्वात्, शेषाणि तु नोइन्द्रियोपयुक्तादीनि प्रतिलोमं विशेषाधिकानि, द्विगुणत्वस्यापि क्वचिदभावात् ॥ तदेवं गतं बन्धद्वारम्, इदानीं पुद्गलद्वारमाह—

खित्ताणुवाएणं सव्वत्थोवा पुग्गला तेलोक्के उड्ढलोयतिरियलोए अणंतगुणा अहोलोयतिरियलोए विसेसाहिया तिरियलोए असंखिज्जगुणा उड्ढलोए असंखिज्जगुणा अहोलोए विसेसाहिया ॥ दिसाणुवाएणं सव्वत्थोवा पुग्गला उड्ढदिसाए अहोलोए विसेसाहिया उत्तरपुरच्छिमेणं दाहिणपच्चत्थिमेण य दोवि तुल्ला असंखिज्जगुणा दाहिणपुरच्छिमेण उत्तरपच्चत्थिमेण य दोवि विसेसाहिया पुरच्छिमेणं असंखिज्जगुणा पच्चत्थिमेणं विसेसाहिया दाहिणेणं विसेसाहिया उत्तरेणं विसेसाहिया ॥ खित्ताणुवाएणं सव्वत्थोवाइं दव्वाइं तेलोक्के उड्ढलोयतिरियलोए अणंतगुणाइं अहोलोयतिरियलोए विसेसाहियाइं उड्ढलोए असंखिज्जगुणाइं अहोलोए अणंतगुणाइं तिरियलोए संखिज्जगुणाइं ॥ दिसाणुवाएणं सव्वत्थोवाइं दव्वाइं अहोदिसाए उड्ढदिसाए अणंतगुणाइं उत्तरपुरच्छिमेणं दाहिणपच्चत्थिमेण य दोवि तुल्लाइं असंखिज्जगुणाइं दाहिणपुरच्छिमेणं उत्तरपच्चत्थिमेण य दोवि तुल्लाइं विसेसाहियाइं पुरच्छिमेणं असंखिज्जगुणाइं पच्चत्थिमेणं विसेसाहियाइं दाहिणेणं विसेसाहियाइं उत्तरेणं विसेसाहियाइं (सू० ९१)

इदमल्पबहुत्वं पुद्गलानां द्रव्यार्थत्वमङ्गीकृत्य व्याख्येयं, तथासम्प्रदायात्, तत्र 'क्षेत्रानुपातेन' क्षेत्रानुसारेण चिन्त्यमानाः पुद्गलास्त्रैलोक्ये—त्रैलोक्यसंस्पर्शिनः सर्वस्तोकाः, सर्वस्तोकानि त्रैलोक्यव्यापीनि पुद्गलद्रव्याणीति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तृतीय-पदे (२७) "पुद्गल, दिशा-आदि" द्वारम् आरब्धः

भावः, यस्मात् महास्कन्धा एव त्रैलोक्यव्यापिनः ते चाल्पा इति, तेभ्य ऊर्द्धलोकतिर्यग्लोकेऽनन्तगुणाः, यतस्तिर्यग्लोकस्य यत्सर्वोपरितनमेकप्रादेशिकं प्रतरं यच्चोर्द्धलोकस्य सर्वाधस्तनमेकप्रादेशिकं प्रतरमेते द्वे अपि प्रतरे ऊर्द्धलोकतिर्यग्लोक उच्यते ते चानन्ताः सङ्ख्येयप्रादेशिकाः अनन्ता असङ्ख्येयप्रादेशिकाः अनन्ता अनन्तप्रादेशिकाः स्कन्धाः स्पृशन्तीति द्रव्यार्थतयाऽनन्तगुणाः, तेभ्योऽधोलोकतिर्यग्लोके प्रागुक्तप्रकारेण प्रतरद्वयरूपे विशेषाधिकाः, क्षेत्रस्याऽऽयामविष्कम्भाभ्यां मनाग् विशेषाधिकत्वात्, तेभ्यस्तिर्यग्लोकेऽसङ्ख्येयगुणाः, क्षेत्रस्यासङ्ख्येयगुणत्वात्, तेभ्यऊर्द्धलोकेऽसङ्ख्येयगुणाः, यतस्तिर्यग्लोकक्षेत्रादूर्द्धलोकक्षेत्रमसङ्ख्येयगुणमिति, तेभ्योऽधोलोके विशेषाधिकाः, ऊर्द्धलोकादधोलोकस्य विशेषाधिकत्वात्, देशोनसप्तरज्जुप्रमाणो ह्यूर्द्धलोकः समधिकसप्तरज्जुप्रमाणस्त्वधोलोकः ॥ सम्प्रति दिगनुपातेनाल्पबहुत्वमाह—'दिगनुपातेन' दिगनुसारेण चिन्त्यमानाः पुद्गलाः सर्वस्तोकाः ऊर्द्धदिशि, इह रत्नप्रभासमभूतलमेरुमध्येऽष्टप्रादेशिको रुचकस्तस्माद्विनिर्गता चतुःप्रदेशा ऊर्द्धदिग् यावल्लोकान्तस्ततस्तत्र सर्वस्तोकाः पुद्गलाः, तेभ्योऽधोदिशि विशेषाधिकाः, अधोदिगपि रुचकादेव प्रभवति चतुष्प्रदेशा यावल्लोकान्तस्ततस्तस्या विशेषाधिकत्वात् तत्र पुद्गला विशेषाधिकाः, तेभ्य उत्तरपूर्वस्यां दक्षिणपश्चिमायां च प्रत्येकमसङ्ख्येयगुणाः, स्वस्थाने तु परस्परं तुल्याः, यतस्ते द्वे अपि दिशौ रुचकाद्विनिर्गते मुक्तावलिसंस्थिते तिर्यग्लोकान्तमधोलोकान्तमूर्द्धलोकान्तं पर्यवसिते, तेन क्षेत्रस्यासङ्ख्येयगुणत्वात्तत्र पुद्गला असङ्ख्येयगुणाः, क्षेत्रं तु स्वस्थाने सममिति पुद्गला अपि स्वस्थाने

३ अल्पबहुत्वपदे क्षेत्रदिग्भ्यां पुद्गलद्रव्याल्प.सू.९१

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [९१]

दीप अनुक्रम [२९५]

तुल्याः, तेभ्योऽपि दक्षिणपूर्वस्यामुत्तरपश्चिमाया च प्रत्येकं विशेषाधिकाः, स्वस्थाने तु परस्परं तुल्याः, कथं विशेषाधिका इति चेत् ?, उच्यते, इह सौमनसगन्धमादनेषु सप्त सप्त कूटानि विद्युत्प्रभमाल्यवतोर्नव नव, तेषु च कूटेषु धूमिका अवश्यायादिसूक्ष्मपुद्गलाः प्रभूताः संभवन्ति ततो विशेषाधिकाः, स्वस्थाने तु क्षेत्रस्य पर्वतादेश्च समानत्वात् तुल्याः, तेभ्यः पूर्वस्यां दिशि असङ्ख्येयगुणाः, क्षेत्रस्यासङ्ख्येयगुणत्वात्, तेभ्यः पश्चिमायां विशेषाधिकाः, अधोलौकिकग्रामेषु शुषिरभावतो बहूनां पुद्गलानामवस्थानभावात्, दक्षिणेन विशेषाधिकाः, बहुभुवनशुषिरभावात्, तेभ्य उत्तरस्यां दिशि विशेषाधिकाः, यत उत्तरस्यामायामविष्कम्भाभ्यां सङ्ख्येययोजनकोटीकोटीप्रमाणं मानसं सरस्तत्र ये जलचराः पनकसेवालादयश्च सच्चास्ते अतिबहव इति तेषां ये तैजसकार्मणपुद्गलास्तेऽधिकाः प्राप्यन्ते इति पूर्वोक्तेभ्यो विशेषाधिकाः ॥ तदेवं पुद्गलविषयमल्पबहुत्वमुक्तम्, इदानीं सामान्यतो द्रव्यविषयं क्षेत्रानुपातेनाह— क्षेत्रानुपातेन चिन्त्यमानानि द्रव्याणि सर्वस्तोकानि त्रैलोक्ये—त्रैलोक्यसंस्पर्शानि, यतो धर्मास्तिकायाधर्मास्तिकायाकाशास्तिकायद्रव्याणि पुद्गलास्तिकायस्य महास्कन्धा जीवास्तिकायस्य मारणान्तिकसमुद्घातेनातीव समवहता जीवाः त्रैलोक्यव्यापिनः ते चाल्पे इति सर्वस्तोकानि, तेभ्य ऊर्द्धलोकतिर्यग्लोके—प्रागुक्तस्वरूपप्रतरद्वयात्मकेऽनन्तगुणानि, अनन्तैः पुद्गलद्रव्यैरनन्तैर्जीवद्रव्यैस्तस्य संस्पर्शात्, तेभ्योऽधोलोकतिर्यग्लोके विशेषाधिकानि, ऊर्द्धलोकतिर्यग्लोकादधोलोकतिर्यग्लोकस्य मनाग् विशेषाधिकत्वात्, तेभ्य ऊर्द्धलोकेऽसङ्ख्येयगुणानि, क्षेत्रस्यासङ्ख्येयगुण-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [९१]

दीप अनुक्रम [२९५]

त्वात्, तेभ्योऽधोलोकेऽनन्तगुणानि, कथमिति चेत् ?, उच्यते, इहाधोलौकिकग्रामेषु कालोऽस्ति, तस्य च कालस्य तत्तत्परमाणुसङ्ख्येयासङ्ख्येयानन्तप्रादेशिकद्रव्यक्षेत्रकालभावपर्यायसम्बन्धवशात् प्रतिपरमाण्वादिद्रव्यमनन्तता ततो भवन्त्यधोलोकेऽनन्तगुणानि, तेभ्यस्तिर्यग्लोके सङ्ख्येयगुणानि, अधोलौकिकग्रामप्रमाणानां खण्डानां मनुष्यलोके कालद्रव्याधारभूते सङ्ख्येयानामवाप्यमानत्वात् ॥ सम्प्रति दिगनुपातेन सामान्यतो द्रव्याणामल्पबहुत्वमाह—'दिगनुपातेन' दिगनुसारेण चिन्त्यमानानि सामान्यतो द्रव्याणि सर्वस्तोकान्यधोदिशि–प्राग्व्यावर्णितस्वरूपायां, तेभ्य ऊर्द्ध्वदिश्यनन्तगुणानि, किं कारणमिति चेत् ?, उच्यते, इहोर्द्ध्वलोके मेरोः पञ्चयोजनशतिकं स्फटिकमयं काण्डं, तत्र चन्द्रादित्यप्रभाऽनुप्रवेशात् द्रव्याणां क्षणादिकालप्रतिभागोऽस्ति, कालस्य च प्रागुक्तनीत्या प्रतिपरमाण्वादिद्रव्यमानन्त्यात् तेभ्योऽनन्तगुणानि, तेभ्य उत्तरपूर्वस्यामीशान्यां दक्षिणपश्चिमायां—नैऋतकोणे इत्यर्थः असङ्ख्येयगुणानि, क्षेत्रस्यासङ्ख्येयगुणत्वात्, स्वस्थाने तु द्वयान्यपि परस्परं तुल्यानि, समानक्षेत्रत्वात्, तेभ्यो दक्षिणपूर्वस्याम्—आग्नेय्यामुत्तरपश्चिमायां—वायव्यकोणे इति भावः विशेषाधिकानि, विद्युत्प्रभमाल्यवत्कूटाश्रितानां धूमिकाऽवश्यायादिश्लक्ष्णपुद्गलद्रव्याणां बहूनां संभवात्, तेभ्यः पूर्वस्यां दिश्यसङ्ख्येयगुणानि, क्षेत्रस्यासङ्ख्येयगुणत्वात्, तेभ्यः पश्चिमायां विशेषाधिकानि, अधोलौकिकग्रामेषु शुषिरभावतो बहूनां पुद्गलद्रव्याणामवस्थानसंभवात्, ततो दक्षिणस्यां दिशि विशेषाधिकानि, बहुभुवनशुषिरभावात्, तत उत्तरस्यां विशेषाधिकानि, तत्र मानससरसि जीवद्रव्याणां तदा-

॥१५९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [९१]

दीप अनुक्रम [२९५]

श्रितानां तैजसकार्मणपुद्गलस्कन्धद्रव्याणां च भूयसां भावात् ॥ सम्प्रति परमाणुपुद्गलानां सङ्ख्येयप्रदेशानामसङ्ख्येयप्रदेशानामनन्तप्रदेशानां परस्परमल्पबहुत्वमाह—

एएसि णं भंते ! परमाणुपोग्गलाणं संखेज्जपएसियाणं असंखेज्जपएसियाणं अणंतपएसियाण य खंधाणं दव्वट्ठयाए पएसट्ठयाए दव्वट्ठपएसट्ठयाए कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा अणंतपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए परमाणुपोग्गला दव्वट्ठयाए अणंतगुणा संखेज्जपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए संखेज्जगुणा असंखपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा पएसट्ठयाए सव्वत्थोवा अणंतपएसिया खंधा पएसट्ठयाए परमाणुपोग्गला अपएसट्ठयाए अणंतगुणा संखेज्जपएसिया खंधा पएसट्ठयाए संखेज्जगुणा असंखपएसिया खंधा पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा दव्वट्ठपएसट्ठयाए सव्वत्थोवा अणंतपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए ते चेव पएसट्ठयाए अणंतगुणा परमाणुपोग्गला दव्वट्ठपएसट्ठयाए अणंतगुणा संखेज्जपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए संखेज्जगुणा ते चेव पएसट्ठयाए संखेज्जगुणा असंखपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा ते चेव पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा ॥ एएसिणं भंते! एगपएसोगाढाणं संखेज्जपएसोगाढाणं असंखेज्जपएसोगाढाण य पोग्गलाणं दव्वट्ठयाए पएसट्ठयाए दव्वट्ठपएसट्ठयाए कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा एगपएसोगाढा पोग्गला दव्वट्ठयाए संखेज्जपएसोगाढा पोग्गला दव्वट्ठयाए संखेज्जगुणा असंखेज्जपएसोगाढा पोग्गला दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा पएसट्ठयाए सव्वत्थोवा एगपएसोगाढा पोग्गला

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [९२]

दीप अनुक्रम [२९६]

पएसट्ठयाए संखिज्जपएसोगाढा पोग्गला पएसट्ठयाए संखिज्जगुणा असंखिज्जपएसोगाढा पुग्गला पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा दव्वट्ठपएसट्ठयाए सव्वत्थोवा एगपएसोगाढा पुग्गला दव्वट्ठपएसट्ठयाए संखिज्जपएसोगाढा पुग्गला दव्वट्ठयाए संखिज्जगुणा ते चेव पएसट्ठयाए संखिज्जगुणा असंखिज्जपएसोगाढा पुग्गला दव्वट्ठयाए असंखिज्जगुणा ते चेव पएसट्ठयाए असंखिज्जगुणा । एएसि णं भन्ते! एगसमयठिइयाणं० असंखिज्जसमयठिइयाणं पुग्गलाणं दव्वट्ठयाए पएसट्ठयाए दव्वट्ठपएसट्ठयाए कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा एगसमयठिइया पुग्गला दव्वट्ठयाए संखिज्जसमयठिइया पुग्गला दव्वट्ठयाए संखिज्जगुणा असंखिज्जसमयठिइया पुग्गला दव्वट्ठयाए असंखिज्जगुणा पएसट्ठयाए सव्वत्थोवा एगसमयठिइया पुग्गला पएसट्ठयाए संखिज्जसमयठिइया पुग्गला पएसट्ठयाए संखेज्जगुणा असंखिज्जसमयठिइया पुग्गला पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा दव्वट्ठपएसट्ठयाए सव्वत्थोवा एगसमयठिइया पुग्गला दव्वट्ठपएसट्ठयाए संखिज्जसमयठिइया पुग्गला दव्वट्ठयाए संखिज्जगुणा ते चेव पएसट्ठयाए संखिज्जगुणा असंखिज्जसमयठिइया पुग्गला दव्वट्ठयाए असंखिज्जगुणा ते चेव पएसट्ठयाए असंखिज्जगुणा । एएसि णं भंते एगगुणकालगाणं संखिज्जगुणकालगाणं असंखिज्जगुणकालगाणं अणंतगुणकालगाण य पुग्गलाणं दव्वट्ठयाए पएसट्ठयाए दव्वट्ठपएसट्ठयाए य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! जहा पुग्गला तहा भाणियव्वा, एवं संखिज्जगुणकालगाणवि, एवं सेसावि वण्णा गंधा रसा फासा भाणियव्वा, फासाणं कक्खडमउयगुरुयलहुयाणं जहा एगपएसोगाढाणं भणियं तहा भाणियव्वं । अवसेसा फासा जहा वन्ना तहा भाणियव्वा ॥ दारं (सू० ९२)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [९२]

दीप अनुक्रम [२९६]

'एएसि णं भंते ! परमाणुपोग्गलाणं संखेज्जपएसियाणं' इत्यादि पाठसिद्धं, नवरमत्राल्पबहुत्वभावनायां सर्वत्र तथास्वाभाव्यं कारणं वाच्यं । सम्प्रत्येतेषामेव क्षेत्रप्राधान्येनाल्पबहुत्वमाह—इह क्षेत्राधिकारतः क्षेत्रस्य प्राधान्यात् परमाणुकाद्यनन्ताणुकस्कन्धा अपि विवक्षितैकप्रदेशावगाढा आधाराधेययोरभेदोपचारादेकद्रव्यत्वेन व्यवहियन्ते, ते इत्थंभूता एकप्रदेशावगाढाः पुद्गलाः–पुद्गलद्रव्याणि सर्वस्तोकानि, लोकाकाशप्रदेशप्रमाणानीत्यर्थः, न हि स कश्चिदेवंभूत आकाशप्रदेशोऽस्ति य एकप्रदेशावगाहनपरिणामपरिणतानां परमाण्वादीनामवकाशदानपरिणामेन परिणतो न वर्त्तते इति, तेभ्यः सङ्ख्येयप्रदेशावगाढाः पुद्गला द्रव्यार्थतया सङ्ख्येयगुणाः, कथमिति चेत् ?, उच्यते, इहापि क्षेत्रस्य प्राधान्यात् द्व्यणुकाद्यनन्ताणुकस्कन्धा द्विप्रदेशावगाढा एकद्रव्यत्वेन विवक्ष्यन्ते, तानि च तथाभूतानि पुद्गलद्रव्याणि पूर्वोक्तेभ्यः सङ्ख्येयगुणानि, तथाहि—सर्वलोकप्रदेशास्तत्त्वतोऽसङ्ख्येया अपि असत्कल्पनया दश परिकल्प्यन्ते, ते च प्रत्येकचिन्तायां दशैवेति दश एकप्रदेशावगाढानि पुद्गलद्रव्याणि लब्धानि, तेष्वेव च दशसु प्रदेशेषु अन्यग्रहणान्यमोक्षणद्वारेण बहवो द्विकसंयोगा लभ्यन्ते इति भवन्त्येकप्रदेशावगाढेभ्यो द्विप्रदेशावगाढानि पुद्गलद्रव्याणि सङ्ख्येयगुणानि एवं तेभ्योऽपि त्रिप्रदेशावगाढानि एवमुत्तरोत्तरं यावदुत्कृष्टसङ्ख्येयप्रदेशावगाढानि, ततः स्थितमेतत्—एकप्रदेशावगाढेभ्यः सङ्ख्येयप्रदेशावगाढाः पुद्गलाः द्रव्यार्थतया सङ्ख्येयगुणा इति, एवं तेभ्योऽसङ्ख्येयप्रदेशावगाढाः पुद्गला द्रव्यार्थतया असङ्ख्येयगुणाः, असङ्ख्यातस्यासङ्ख्यातभेदभिन्नत्वात्, द्रव्यार्थतासूत्रं प्रदेशार्थतासूत्रं द्रव्यपर्याया-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [९२]

दीप अनुक्रम [२९६]

र्थतासूत्रं च सुगमत्वात् स्वयं भावनीयं, कालभावसूत्राण्यपि सुगमत्वात् स्वयं भावयितव्यानि, नवरं 'जहा पोग्गला तहा भाणियव्वा' इति यथा प्राक् सामान्यतः पुद्गला उक्तास्तथा एकगुणकालकादयोऽपि वक्तव्याः, ते चैवम्—यतः 'सव्वत्थोवा अणंतपएसिआ खंधा एगगुणकालगा, परमाणुपुग्गला दव्वट्ठयाए एगगुणकालगा अणंतगुणा, संखिज्जपएसिया खंधा एगगुणकालगा संखिज्जगुणा, असंखिज्जपएसिआ खंधा एगगुणकालगा असंखिज्जगुणा । पएसट्ठयाए सव्वत्थोवा अणंतपएसिआ खंधा एगगुणकालगा, परमाणुपुग्गला एगगुणकालगा अणंतगुणा इत्यादि' एवं सङ्ख्येयगुणकालकानामसङ्ख्येयगुणकालकानामनन्तगुणकालकानामपि वाच्यं, एवं शेषवर्णगन्धरसा अपि वक्तव्याः, कर्कशमृदुगुरुलघवः स्पर्शा यथा एकप्रदेशाद्यवगाढा भणितास्तथा वक्तव्याः, ते चैवम्—'सव्वत्थोवा एगपएसोगाढा एगगुणकक्खडफासा दव्वट्ठयाए, संखिज्जपएसोगाढा एगगुणकक्खडफासा पोग्गला दव्वट्ठयाए संखिज्जगुणा, असंखिज्जपएसोगाढा एगगुणकक्खडफासा दव्वट्ठयाए असंखिज्जगुणा' इत्यादि, एवं सङ्ख्येयगुणकर्कशस्पर्शा असङ्ख्येयगुणकर्कशस्पर्शा अनन्तगुणकर्कशस्पर्शा वाच्याः, एवं मृदुगुरुलघवः, अवशेषाश्चत्वारः शीतादयः स्पर्शा यथा वर्णादय उक्तास्तथा वक्तव्याः, तत्र पाठोऽप्युक्तानुसारेण स्वयं भावनीयः । गतं पुद्गलद्वारम्, इदानीं महादण्डकं विवक्षुर्गुरुमापृच्छति—

अहं भंते ! सव्वजीवप्पबहुं महादण्डयं वत्तइस्सामि–सव्वत्थोवा गब्भवक्कंतिया मणुस्सा १ मणुस्सीओ संखिज्जगुणाओ २

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [९३]

दीप अनुक्रम [२९७]

बायरतेउकाइआ पज्जत्तया असंखिज्जगुणा ३ अणुत्तरोववाइया देवा असंखिज्जगुणा ४ उवरिमगेविज्जगा देवा संखिज्ज-
गुणा ५ मज्झिमगेविज्जगा देवा संखिज्जगुणा ६ हिट्ठिमगेविज्जगा देवा संखिज्जगुणा ७ अच्चुए कप्पे देवा संखिज्जगुणा ८
आरणे कप्पे देवा संखिज्जगुणा ९ पाणए कप्पे देवा संखिज्जगुणा १० आणए कप्पे देवा संखिज्जगुणा ११ अहे सत्तमाए
पुढवीए नेरइया असंखिज्जगुणा १२ छट्ठीए तमाए पुढवीए नेरइया असंखिज्जगुणा १३ सहस्सारे कप्पे देवा असंखिज्ज-
गुणा १४ महासुक्के कप्पे देवा असंखिज्जगुणा १५ पंचमाए धूमप्पभाए पुढवीए नेरइआ असंखिज्जगुणा १६ लंतए कप्पए
देवा असंखिज्जगुणा १७ चउत्थीए पंकप्पभाए पुढवीए नेरइआ असंखिज्जगुणा १८ बंभलोए कप्पे देवा असंखिज्जगुणा
१९ तच्चाए वालुयप्पभाए पुढवीए नेरइआ असंखिज्जगुणा २० माहिंदे कप्पे देवा असंखिज्जगुणा २१ सणंकुमारे कप्पे
देवा असंखिज्जगुणा २२ दोच्चाए सक्करप्पभाए पुढवीए नेरइया असंखिज्जगुणा २३ संमुच्छिमा मणुस्सा असंखिज्जगुणा
२४ ईसाणे कप्पे देवा असंखिज्जगुणा २५ ईसाणे कप्पे देवीओ संखिज्जगुणाओ २६ सोहम्मे कप्पे देवा संखिज्जगुणा २७
सोहम्मे कप्पे देवीओ संखेज्जगुणाओ २८ भवणवासी देवा असंखेज्जगुणा २९ भवणवासिणीओ देवीओ संखेज्जगुणाओ ३०
इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए नेरइआ असंखिज्जगुणा ३१ खहयरपंचिंदियतिरिक्खजोणिया पुरिसा असंखिज्जगुणा ३२
खहयरपंचिंदियतिरिक्खजोणिणीओ संखिज्जगुणाओ ३३ थलयरपंचिंदियतिरिक्खजोणिआ पुरिसा संखिज्जगुणा ३४ थलयर-
पंचिंदियतिरिक्खजोणिणीओ संखिज्जगुणाओ ३५ जलयरपंचिंदियतिरिक्खजोणिआ पुरिसा संखिज्जगुणा ३६ जलयरपंचिंदि-
यतिरिक्खजोणिणीओ संखिज्जगुणाओ ३७ वाणमंतरा देवा संखिज्जगुणा ३८ वाणमंतरीओ देवीओ संखिज्जगुणाओ ३९

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जोइसिया देवा संखिज्जगुणा ४० जोइसिणीओ देवीओ संखिज्जगुणाओ ४१ खहयरपंचिंदियतिरिक्खजोणिआ नपुंसगा संखिज्जगुणा ४२ थलयरपंचिंदियतिरिक्खजोणिआ नपुंसगा संखिज्जगुणा ४३ जलयरपंचिंदियतिरिक्खजोणिआ नपुंसगा संखिज्जगुणा ४४ चउरिंदिया पज्जत्तया संखिज्जगुणा ४५ पंचिंदिया पज्जत्तया विसेसाहिया ४६ बेइंदिया पज्जत्तया विसेसाहिया ४७ तेइंदिया पज्जत्तया विसेसाहिया ४८ पंचिंदिया अपज्जत्तया असंखेज्जगुणा ४९ चउरिंदिया अपज्जत्तया विसेसाहिया ५० तेइंदिया अपज्जत्तया विसेसाहिया ५१ बेइंदिया अपज्जत्तया विसेसाहिया ५२ पत्तेयसरीरबायरवणस्सइकाइया पज्जत्तया असंखिज्जगुणा ५३ बायरनिगोया पज्जत्तया असंखिज्जगुणा ५४ बायरपुढवीकाइया पज्जत्तगा असंखिज्जगुणा ५५ बायरआउकाइया पज्जत्तया असंखिज्जगुणा ५६ बायरवाउकाइया पज्जत्तगा असंखिज्जगुणा ५७ बायरतेउकाइया अपज्जत्तगा असंखिज्जगुणा ५८ पत्तेयसरीरबायरवणस्सइकाइया अपज्जत्तगा असंखिज्जगुणा ५९ बायरनिगोया अपज्जत्तया असंखिज्जगुणा ६० बायरपुढवीकाइया अपज्जत्तया असंखिज्जगुणा ६१ बायरआउकाइया अपज्जत्तया असंखिज्जगुणा ६२ बायरवाउकाइया अपज्जत्तया असंखिज्जगुणा ६३ सुहुमतेउकाइया अपज्जत्तया असंखिज्जगुणा ६४ सुहुमपुढवीकाइया अपज्जत्तया विसेसाहिया ६५ सुहुमआउकाइया अपज्जत्तया विसेसाहिआ ६६ सुहुमवाउकाइया अपज्जत्तया विसेसाहिआ ६७ सुहुमतेउकाइया पज्जत्तया संखिज्जगुणा ६८ सुहुमपुढवीकाइया पज्जत्तया विसेसाहिआ ६९ सुहुमआउकाइया पज्जत्तया विसेसाहिआ ७० सुहुमवाउकाइया पज्जत्तया विसेसाहिआ ७१ सुहुमनिगोया अपज्जत्तया असंखिज्जगुणा ७२ सुहुमनिगोया पज्जत्तया संखिज्जगुणा ७३ अभवसिद्धिआ अणंतगुणा ७४ परिवडियसम्मद्दिट्ठि अणंतगुणा ७५ सिद्धा अणंतगुणा ७६

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बायरवणस्सइकाइया पज्जत्तगा अणंतगुणा ७७ बायरपज्जत्ता विसेसाहिआ ७८ बायरवणस्सइकाइया अपज्जत्तगा असंखिज्जगुणा ७९ बायरअपज्जत्तगा विसेसाहिआ ८० बायरा विसेसाहिआ ८१ सुहुमवणस्सइकाइया अपज्जत्तया असंखिज्जगुणा ८२ सुहुमअपज्जत्तया विसेसाहिया ८३ सुहुमवणस्सइकाइया पज्जत्तया संखिज्जगुणा ८४ सुहुमपज्जत्तया विसेसाहिआ ८५ सुहुमा विसेसाहिया ८६ भवसिद्धिया विसेसाहिया ८७ निगोयजीवा विसेसाहिया ८८ वणस्सइजीवा विसेसाहिआ ८९ एगिंदिया विसेसाहिया ९० तिरिक्खजोणिया विसेसाहिया ९१ मिच्छादिट्ठी विसेसाहिआ ९२ अविरया विसेसाहिया ९३ सकसाई विसेसाहिआ ९४ छउमत्था विसेसाहिआ ९५ सजोगी विसेसाहिआ ९६ संसारत्था विसेसाहिआ ९७ सव्वजीवा विसेसाहिआ ९८ ॥ (सू० ९३) ॥ पन्नवणाए भगवईए बहुवत्तव्वयपयं समत्तं । तइयं पयं समत्तं ।

अथ भदन्त ! सर्वजीवाल्पबहुत्वं—सर्वजीवाल्पबहुत्ववक्तव्यतात्मकं महादण्डकं वर्त्त(र्ण)यिष्यामि—रचयिष्यामीति तात्पर्यार्थः, अनेन एतद् ज्ञापयति—तीर्थकरानुज्ञामात्रसापेक्ष एव भगवान् गणधरः सूत्ररचनां प्रति प्रवर्तते न पुनः श्रुताभ्यासपुरःसरमिति, यद्वा एतद् ज्ञापयति–कुशलेऽपि कर्मणि विनेयेन गुरुमनापृच्छ्य च न प्रवर्तितव्यं, किंतु तदनुज्ञापुरःसरं, अन्यथा विनेयत्वायोगात्, विनेयस्य हि लक्षणमिदम्—'गुरोर्निवेदितात्मा यो, गुरुभावानुवर्तकः । मुक्त्यर्थं चेष्टते नित्यं, स विनेयः प्रकीर्तितः ॥ १ ॥" गुरुरपि यः प्रच्छनीयः स एवंरूपः—"धर्मज्ञो धर्मकर्ता च, सदा धर्मप्रवर्तकः । सत्त्वेभ्यो धर्मशास्त्रार्थदेशको गुरुरुच्यते ॥ १ ॥" इति, महादण्डकं वर्तयिष्यामि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इत्युक्तं ततः प्रतिज्ञातमेव निर्वाहयति—'सव्वत्थोवा गब्भवक्कंतिया मणुस्सा' इत्यादि, सर्वस्तोका गर्भव्युत्क्रान्तिकमनुष्याः, सङ्ख्येयकोटीकोटीप्रमाणत्वात् १, तेभ्यो मानुष्यो—मनुजस्त्रियः सङ्ख्येयगुणाः, सप्तविंशतिगुणत्वात्, उक्तं च—"सत्तावीसगुणा पुण मणुयाणं तदहिआ चेव" २, ताभ्यो बादरतेजःकायिका पर्याप्ता असंख्येयगुणाः, कतिपयवर्गन्यूनावलिकाघनसमयप्रमाणत्वात् ३, तेभ्योऽनुत्तरोपपातिनो देवा असंख्येयगुणाः, क्षेत्रपल्योपमासंख्येयभागवर्तिनभःप्रदेशराशिप्रमाणत्वात् ४, तेभ्य उपरितनग्रैवेयकत्रिकदेवाः संख्येयगुणाः, बृहत्तरपल्योपमासंख्येयभागवर्तिनभःप्रदेशराशिप्रमाणत्वात्, एतदपि कथमवसेयं ? इति चेत्, उच्यते, विमानबाहुल्यात्, तथाहि—अनुत्तरदेवानां पञ्च विमानानि विमानशतं तूपरितनग्रैवेयकत्रिके प्रतिविमानं चासङ्ख्येया देवाः यथा यथा चाधोऽधोवर्तीनि विमानानि तथा तथा देवा अपि प्राचुर्येण लभ्यन्ते ततोऽवसीयते—अनुत्तरोपपातिकदेवेभ्यो बृहत्तरक्षेत्रपल्योपमासङ्ख्येयभागवर्त्याकाशप्रदेशराशिप्रमाणा उपरितनग्रैवेयकत्रिकदेवाः (संख्येयगुणाः) ५, एवमुत्तरत्रापि भावना कार्या यावदानतकल्पः, तेभ्योऽप्युपरितनग्रैवेयकत्रिकदेवेभ्यो मध्यमग्रैवेयकत्रिकदेवाः सङ्ख्येयगुणाः ६ तेभ्योऽप्यधस्तनग्रैवेयकत्रिकदेवाः सङ्ख्येयगुणाः ७ तेभ्योऽप्यच्युतकल्पदेवाः सङ्ख्येयगुणाः ८ तेभ्योऽप्यारणकल्पदेवा सङ्ख्येयगुणाः ९, यद्यप्यारणाच्युतकल्पौ समश्रेणिकौ समविमानसङ्ख्याकौ च तथाऽपि कृष्णपाक्षिकास्तथास्वाभाव्यात् प्राचुर्येण दक्षिणस्यां दिशि समुत्पद्यन्ते नोत्तरस्यां बहवश्च कृष्णपाक्षिकाः स्तोकाः शुक्लपाक्षिकाः ततोऽच्युतकल्पदेवापेक्षया आरणकल्पदेवाः

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [९३]

दीप अनुक्रम [२९७]

सङ्ख्येयगुणाः, तेभ्योऽपि प्राणतकल्पदेवाः सङ्ख्येयगुणाः १० तेभ्योऽप्यानतकल्पदेवाः सङ्ख्येयगुणाः, भावना आरणकल्पवत्कर्तव्या ११, तेभ्योऽधःसप्तमनरकपृथिव्यां नैरयिका असङ्ख्येयगुणाः, श्रेण्यसङ्ख्येयभागगतनभःप्रदेशराशिप्रमाणत्वात् १२, तेभ्यः षष्ठपृथिव्यां नैरयिका असङ्ख्येयगुणाः, एतच्च प्रागेव दिगनुपातेन नैरयिकाल्पबहुत्वचिन्तायां भावितं १३ तेभ्योऽपि सहस्रारकल्पदेवा असङ्ख्येयगुणाः, षष्ठपृथिवीनैरयिकपरिमाणहेतुश्रेण्यसङ्ख्येयभागापेक्षया सहस्रारकल्पदेवपरिमाणहेतोः श्रेण्यसङ्ख्येयभागस्य असङ्ख्येयगुणत्वात् १४ तेभ्यो महाशुक्रे कल्पे देवा असङ्ख्येयगुणाः, विमानबाहुल्यात् षट् सहस्राणि विमानानां सहस्रारे कल्पे चत्वारिंशत्सहस्राणि महाशुक्रे, अन्यच्चाधोऽधोविमानवासिनो देवा बहुबहुतराः स्तोकाः स्तोकतराश्चोपरितनोपरितनविमानवासिनः तत् सहस्रारदेवेभ्यो महाशुक्रकल्पदेवा असङ्ख्येयगुणाः १५ तेभ्योऽपि पञ्चमधूमप्रभाभिधाननरकपृथिव्यां नैरयिका असङ्ख्येयगुणाः, बृहत्तमश्रेण्यसङ्ख्येयभागवर्तिनभःप्रदेशराशिप्रमाणत्वात् १६ तेभ्योऽपि लान्तककल्पे देवा असङ्ख्येयगुणाः, अतिबृहत्तमश्रेण्यसङ्ख्येयभागगतनभःप्रदेशराशिप्रमाणत्वात् १७ तेभ्योऽपि चतुर्थ्यां पङ्कप्रभायां पृथिव्यां नैरयिका असङ्ख्येयगुणाः, युक्तिः प्रागिव भावनीया १८ तेभ्योऽपि ब्रह्मलोककल्पे देवा असङ्ख्येयगुणाः, युक्तिः प्रागुक्तैव १९ तेभ्योऽपि तृतीयस्यां वालुकाप्रभायां पृथिव्यां नैरयिका असङ्ख्येयगुणाः २० तेभ्योऽपि माहेन्द्रे कल्पे देवा असङ्ख्येयगुणाः २१ तेभ्योऽपि सनत्कुमारकल्पे देवा असङ्ख्येयगुणाः युक्तिः सर्वत्रापि प्रागुक्तैव २२ तेभ्यो द्वितीयस्यां शर्कराप्रभायां पृथिव्यां नैर-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

यिका असङ्ख्येयगुणाः २३, एते च सप्तमपृथिवीनारकादयो द्वितीयपृथिवीनारकपर्यन्ताः प्रत्येकं स्वस्थाने चिन्त्यमानाः सर्वेऽपिघनीकृतलोकश्रेण्यसङ्ख्येयभागवर्तिनभःप्रदेशराशिप्रमाणा द्रष्टव्याः, केवलं श्रेण्यसङ्ख्येयभागोऽसङ्ख्येयभेदभिन्नः तत इत्थमसङ्ख्येयगुणतया अल्पबहुत्वमभिधीयमानं न विरुध्यते, तेभ्योऽपि द्वितीयनरकपृथिवीनारकेभ्यः संमूर्च्छिममनुष्या असङ्ख्येयगुणाः २४ ते[1] हि अङ्गुलमात्रक्षेत्रप्रदेशराशेः संबन्धिनि द्वितीयवर्गमूले तृतीयवर्गमूलेन गुणिते यावान् प्रदेशराशिर्भवति तावत्प्रमाणाः, तेभ्योऽपि ईशाने कल्पे देवा असङ्ख्येयगुणाः यतो घनीकृतस्य लोकस्यैकप्रादेशिकीषु श्रेणिषु यावन्तो नभःप्रदेशाः तावत्प्रमाण ईशानकल्पगतो देवदेवीसमुदायः, तद्गतकिंचिदूनद्वात्रिंशद्भागकल्पा ईशानदेवाः, ततो देवाः संमूर्च्छिममनुष्येभ्योऽसङ्ख्येयगुणाः २५, तेभ्य ईशानकल्पे देव्यः सङ्ख्येयगुणाः, द्वात्रिंशद्गुणत्वात् "बत्तीसगुणा बत्तीसरूवअहिआउ होन्ति देवीओ" इति वचनात् २६, ताभ्यः सौधर्मे कल्पे देवाः सङ्ख्येयगुणाः, तत्र विमानबाहुल्यात्, तथाहि—तत्र द्वात्रिंशच्छतसहस्राणि विमानानां अष्टाविंशतिशत-

१ ते हि अङ्गुलमात्रक्षेत्रप्रदेशराशेः संबन्धिनि तृतीये वर्गमूले द्वितीयेन वर्गमूलेन गुणिते यावान्प्रदेशराशिस्तावत्प्रमाणानि खंडानि यावन्त्येकस्यामेव प्रादेशिक्यां श्रेणौ भवंति तावत्प्रमाणस्तेभ्य ईशाने कल्पे देवा असंख्येयगुणाः यतोऽङ्गुलमात्रक्षेत्रप्रदेशराशेः संबन्धिनि द्वितीये वर्गमूले तृतीयेन वर्गमूलेन गुणिते यावान्प्रदेशराशिर्भवति तावत्प्रमाणासु घनीकृतस्य लोकस्यैकप्रादेशिकीषु यावंतो नभःप्रदेशास्तावत्प्रमाण ईशानकल्पगतो देवदेवीसमुदायः प्र०

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सहस्राणि ईशाने कल्पे, अपिच–दक्षिणदिग्वर्ती सौधर्मकल्पः ईशानकल्पस्तूत्तरदिग्वर्ती दक्षिणस्यां च दिशि बहवः कृष्णपाक्षिकाः समुत्पद्यन्ते तत ईशानदेवीभ्यः सौधर्मदेवाः सङ्ख्येयगुणाः, नन्वियं युक्तिर्माहेन्द्रसनत्कुमारकल्पयोरप्युक्ता, परं तत्र माहेन्द्रकल्पापेक्षया सनत्कुमारकल्पे देवा असङ्ख्येयगुणा उक्ताः, इह तु सौधर्मे कल्पे सङ्ख्येयगुणाः तदेतत् कथम् ?, उच्यते, वचनप्रामाण्यात्, न चात्र पाठभ्रमः, यतोऽन्यत्राप्युक्तम्—"ईसाणे सत्तत्थवि बत्तीसगुणाओ होंति देवीओ । संखिज्जा सोहम्मे तओ असंखा भवणवासी ॥ १ ॥" इति २७, तेभ्योऽपि तस्मिन्नेव सौधर्मे कल्पे देव्यः सङ्ख्येयगुणाः, द्वात्रिंशद्गुणत्वात्, "सत्तत्थवि बत्तीसगुणाओ हुंति देवीओ" इति वचनात् २८ ताभ्योऽप्यसङ्ख्येयगुणा भवनवासिनः, कथम् ? इति चेत्, उच्यते, इह अङ्गुलमात्रक्षेत्रप्रदेशराशेः संबन्धिनि प्रथमवर्गमूले तृतीयवर्गमूलेन गुणिते यावान् प्रदेशराशिर्भवति तावत्प्रमाणासु घनीकृतस्य लोकस्य एकप्रादेशिकीषु श्रेणिषु यावन्तो नभःप्रदेशास्तावत्प्रमाणो भवनपतिदेवदेवीसमुदायः, तद्गतकिञ्चिदूनद्वात्रिंशत्तमभागकल्पाश्च भवनपतयो देवाः ततो घटन्ते सौधर्मदेवीभ्यस्तेऽसङ्ख्येयगुणाः २९ तेभ्यो भवनवासिन्यो देव्यः सङ्ख्येयगुणाः द्वात्रिंशद्गुणत्वात् ३० ताभ्योऽप्यस्यां रत्नप्रभायां पृथिव्यां नैरयिका असङ्ख्येयगुणाः अङ्गुलमात्रक्षेत्रप्रदेशराशेः संबन्धिनि प्रथमवर्गमूले द्वितीयेन वर्गमूलेन गुणिते यावान् प्रदेशराशिस्तावत्प्रमाणासु श्रेणिषु यावन्त आकाशप्रदेशास्तावत्प्रमाणत्वात् ३१ तेभ्योऽपि खचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकाः पुरुषा असङ्ख्येयगुणाः प्रतरासङ्ख्येयभागवर्त्यसङ्ख्येयश्रेणिनभःप्रदेशराशिप्र-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [९३]

दीप अनुक्रम [२९७]

माणत्वात् ३२ तेभ्योऽपि खचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकाः स्त्रियः सङ्ख्येयगुणाः, त्रिगुणत्वात्, "तिगुणा तिरूवअहिया तिरिआणं इत्थिओ मुणेयव्वा" इति वचनात् ३३ ताभ्यः स्थलचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकाः पुरुषाः सङ्ख्येयगुणाः, बृहत्तरप्रतरासङ्ख्येयभागवर्त्यसङ्ख्येयश्रेणिगताकाशप्रदेशराशिप्रमाणत्वात् ३४ तेभ्यः स्थलचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकाः स्त्रियः सङ्ख्येयगुणाः त्रिगुणत्वात् ३५ ताभ्यो जलचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकाः पुरुषाः सङ्ख्येयगुणाः बृहत्तमप्रतरासङ्ख्येयभागवर्त्यसङ्ख्येयश्रेणिगताकाशप्रदेशराशिप्रमाणत्वात् ३६ तेभ्यो जलचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकाः स्त्रियः सङ्ख्येयगुणाः त्रिगुणत्वात् ३७ ताभ्योऽपि व्यन्तरा देवा पुंवेदोदयिनः सङ्ख्येयगुणाः, यतः सङ्ख्येययोजनकोटीकोटीप्रमाणानि सूचिरूपाणि खण्डानि यावन्त्येकस्मिन् प्रतरे भवन्ति तावन्तः सामान्येन व्यन्तराः, केवलमिह पुरुषा विवक्षिता इति ते सकलसमुदायापेक्षया किञ्चिदूनद्वात्रिंशत्तमभागकल्पा वेदितव्याः, ततो घटन्ते जलचरयुवतिभ्यः सङ्ख्येयगुणाः ३८ तेभ्यः व्यन्तर्यः सङ्ख्येयगुणाः द्वात्रिंशद्गुणत्वात् ३९ ताभ्यो ज्योतिष्का देवाः सङ्ख्येयगुणाः, ते हि सामान्यतः षट्पञ्चाशदधिकशतद्वयाङ्गुलप्रमाणानि सूचिरूपाणि खण्डानि यावन्त्येकस्मिन् प्रतरे भवन्ति तावत्प्रमाणाः, परमिह पुरुषा विवक्षिता इति ते सकलसमुदायापेक्षया किञ्चिदूनद्वात्रिंशत्तमभागकल्पाः प्रतिपत्तव्याः, तत उपपद्यन्ते व्यन्तरीभ्यः सङ्ख्येयगुणाः ४० तेभ्यो ज्योतिष्कदेव्यः सङ्ख्येयगुणाः द्वात्रिंशद्गुणत्वात् ४१ ताभ्यः खचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिका नपुंसकाः सङ्ख्येयगुणाः, क्वचित् 'असङ्ख्येयगुणाः' इति पाठः, स न समीचीनः, यत

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [९३]

दीप अनुक्रम [२९७]

इत ऊर्द्धं ये पर्याप्तचतुरिन्द्रिया वक्ष्यन्ते तेऽपि ज्योतिष्कदेवापेक्षया सङ्ख्येयगुणा एवोपपद्यन्ते, तथाहि—षट्पञ्चाशदधिकशतद्वयाङ्गुलप्रमाणानि सूचिरूपाणि खण्डानि यावन्त्येकस्मिन् प्रतरे भवन्ति तावत्प्रमाणा ज्योतिष्काः, उक्तं च—"छप्पन्नदोसयंगुलसूइपएसेहिं भाइयं पयरं । जोइसिएहिं हीरइ" इति, अङ्गुलसङ्ख्येयभागमात्राणि च सूचिरूपाणि खण्डानि यावन्त्येकस्मिन् प्रतरे भवन्ति तावत्प्रमाणाश्चतुरिन्द्रियाः, उक्तं च–"पज्जत्तापज्जत्तबितिचउरअसन्निणो अवहरंति । अङ्गुलसंखासंखप्पएसभइयं पुढो पयरं ॥ १ ॥" अङ्गुलसङ्ख्येयभागापेक्षया च षट्पञ्चाशदधिकमङ्गुलशतद्वयं सङ्ख्येयगुणं, ततो ज्योतिष्कदेवापेक्षया परिभाव्यमानाः पर्याप्तचतुरिन्द्रिया अपि सङ्ख्येयगुणा एव घटन्ते किं पुनः पर्याप्तचतुरिन्द्रियापेक्षया सङ्ख्येयभागमात्राः खचरपञ्चेन्द्रियनपुंसका इति ? ४२ तेभ्योऽपि स्थलचरपञ्चेन्द्रियनपुंसकाः सङ्ख्येयगुणाः ४३ तेभ्योऽपि जलचरपञ्चेन्द्रियनपुंसकाः सङ्ख्येयगुणाः ४४ तेभ्योऽपि पर्याप्तचतुरिन्द्रियाः सङ्ख्येयगुणाः ४५ तेभ्योऽपि पर्याप्ताः संज्ञ्यसंज्ञिभेदभिन्नाः पञ्चेन्द्रिया विशेषाधिकाः ४६ तेभ्योऽपि पर्याप्ता द्वीन्द्रिया विशेषाधिकाः ४७ तेभ्योऽपि पर्याप्तास्त्रीन्द्रिया विशेषाधिकाः, यद्यपि च पर्याप्तचतुरिन्द्रियादीनां पर्याप्तत्रीन्द्रियपर्यन्तानां प्रत्येकमङ्गुलसङ्ख्येयभागमात्राणि सूचिरूपाणि खण्डानि यावन्त्येकस्मिन् प्रतरे भवन्ति तावत्प्रमाणत्वमविशेषेणान्यत्र वर्ण्यते तथाऽप्यङ्गुलसङ्ख्येयभागस्य सङ्ख्येयभेदभिन्नत्वाद् इत्थं विशेषाधिकत्वमुच्यमानं न विरुद्धं, उक्तं चेत्थमल्पबहुत्वमन्यत्रापि—'तत्तो नपुंसग खहयरा संखेज्जा थलयरजलयरनपुंसगा चउरिंदिय तओ पणबितिपज्जत्त

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

किंचि अहिआ" इति ४८ तेभ्योऽपि पर्याप्तत्रीन्द्रियेभ्योऽपर्याप्ताः पञ्चेन्द्रिया असङ्ख्येयगुणाः अङ्गुलासङ्ख्येयभागमात्राणि खण्डानि सूचिरूपाणि यावन्त्येकस्मिन् प्रतरे भवन्ति तावत्प्रमाणत्वात् ४९ तेभ्यश्चतुरिन्द्रिया अपर्याप्ता विशेषाधिकाः ५० तेभ्योऽपि त्रीन्द्रिया अपर्याप्ता विशेषाधिकाः ५१ तेभ्योऽपि द्वीन्द्रिया अपर्याप्ता विशेषाधिकाः, यद्यपि चापर्याप्ताः चतुरिन्द्रियादयो अपर्याप्तद्वीन्द्रियपर्यन्ताः प्रत्येकमङ्गुलस्यासङ्ख्येयभागमात्राणि खण्डानि सूचीरूपाणि यावन्त्येकस्मिन् प्रतरे भवन्ति तावत्प्रमाणा अन्यत्राविशेषेणोक्तास्तथाप्यङ्गुलासंख्येयभागस्य विचित्रत्वादित्थं विशेषाधिकत्वमुच्यमानं न विरोधमास्कन्दति ५२, तेभ्योऽपि द्वीन्द्रियापर्याप्तेभ्यः प्रत्येकबादरवनस्पतिकायिकाः पर्याप्ताः असंख्येयगुणाः, यद्यपि चापर्याप्तद्वीन्द्रियादिवत् पर्याप्तबादरवनस्पतिकायिका अपि अङ्गुलासंख्येयभागमात्राणि सूचीरूपाणि खण्डानि यावन्त्येकस्मिन् प्रतरे भवन्ति तावत्प्रमाणा अन्यत्रोक्तास्तथापि अङ्गुलासङ्ख्येयभागस्यासङ्ख्येयभेदभिन्नत्वाद् बादरपर्याप्तप्रत्येकवनस्पतिपरिमाणचिन्तायामङ्गुलासङ्ख्येयभागोऽसङ्ख्येयगुणहीनः परिगृह्यते ततो न कश्चिद् विरोधः ५३ तेभ्योऽपि बादरनिगोदा अनन्तकायिकशरीररूपाः पर्याप्ता असङ्ख्येयगुणाः ५४ तेभ्योऽपि बादरपृथिवीकायिकाः पर्याप्ता असङ्ख्येयगुणाः ५५ तेभ्योऽपि पर्याप्ता बादराप्कायिका असङ्ख्येयगुणाः, यद्यपि च पर्याप्तबादरप्रत्येकवनस्पतिकायिकपृथिवीकायिकाप्कायिकाः प्रत्येकमङ्गुलासङ्ख्येयभागमात्राणि सूचीरूपाणि खण्डानि यावन्त्येकस्मिन् प्रतरे भवन्ति तावत्प्रमाणा अन्यत्राविशेषेणोक्ताः तथाप्यङ्गुलासङ्ख्येयभागस्यासङ्ख्येयभेदभिन्नत्वाद् इत्थम-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [९३]

दीप अनुक्रम [२९७]

सङ्ख्येयगुणत्वाभिधाने न कश्चिद्दोषः ५६ तेभ्यो बादरपर्याप्ताप्कायिकेभ्यो बादरवायुकायिकाः पर्याप्ता असङ्ख्येयगुणाः, घनीकृतलोकासङ्ख्येयभागवर्त्यसङ्ख्येयप्रतरगतनभःप्रदेशराशिप्रमाणत्वात् ५७ तेभ्यो बादरतेजःकायिका अपर्याप्ता असङ्ख्येयगुणाः, असङ्ख्येयलोकाकाशप्रदेशराशिप्रमाणत्वात् ५८ तेभ्यः प्रत्येकशरीरबादरवनस्पतिकायिका अपर्याप्ता असङ्ख्येयगुणाः ५९ तेभ्योऽपि बादरनिगोदा अपर्याप्तका असङ्ख्येयगुणाः ६० तेभ्यो बादरपृथिवीकायिका अपर्याप्तका असङ्ख्येयगुणाः ६१ तेभ्यो बादराप्कायिका अपर्याप्तका असङ्ख्येयगुणाः ६२ तेभ्यो बादरवायुकायिका अपर्याप्ता असङ्ख्येयगुणाः ६३ तेभ्यः सूक्ष्मतेजःकायिका अपर्याप्तका असङ्ख्येयगुणाः ६४ तेभ्यः सूक्ष्मपृथिवीकायिका अपर्याप्ता विशेषाधिकाः ६५ तेभ्यः सूक्ष्माप्कायिका अपर्याप्ता विशेषाधिकाः ६६ तेभ्यः सूक्ष्मवायुकायिका अपर्याप्ता विशेषाधिकाः ६७ तेभ्यः सूक्ष्मतेजःकायिकाः पर्याप्तकाः सङ्ख्येयगुणाः ६८ अपर्याप्तकसूक्ष्मेभ्यः पर्याप्तकसूक्ष्माणां स्वभावत एव प्राचुर्येण भावात्, तथा चाह अस्या एव प्रज्ञापनायाः संग्रहणीकारः—"जीवाणमपज्जत्ता बहुतरगा वायराण विन्नेया। सुहुमाण य पज्जत्ता ओहेण य केवली बिंति ॥ १ ॥" तेभ्योऽपि सूक्ष्मपृथिवीकायिकाः पर्याप्तका विशेषाधिकाः ६९ तेभ्योऽपि सूक्ष्माप्कायिकाः पर्याप्ता विशेषाधिकाः ७० तेभ्योऽपि सूक्ष्मवायुकायिकाः पर्याप्ता विशेषाधिकाः ७१ तेभ्योऽपि सूक्ष्मनिगोदा अपर्याप्तका असङ्ख्येयगुणाः ७२ तेभ्योऽपि पर्याप्ताः सूक्ष्मनिगोदाः सङ्ख्येयगुणाः ७३ यद्यपि चापर्याप्ततेजःकायिकादयः पर्याप्तसूक्ष्मनिगोदपर्यन्ता अविशेषेणान्यत्रास-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [९३]

दीप अनुक्रम [२९७]

ज्ञेयलोकाकाशप्रदेशराशिप्रमाणा उक्तास्तथाऽपि लोकासङ्ख्येयत्वस्यासङ्ख्येयभेदभिन्नत्वाद् इत्थमल्पबहुत्वमभिधीयमानमुपपन्नं द्रष्टव्यं, तेभ्योऽभवसिद्धिका अनन्तगुणाः जघन्ययुक्तानन्तकप्रमाणत्वात् ७४ तेभ्यः प्रतिपतितसम्यग्दृष्टयोऽनन्तगुणाः ७५ तेभ्यः सिद्धा अनन्तगुणाः ७६ तेभ्योऽपि बादरवनस्पतिकायिकाः पर्याप्ता अनन्तगुणाः ७७ तेभ्योऽपि सामान्यतो बादरपर्याप्ता विशेषाधिकाः, बादरपर्याप्तपृथिवीकायिकादीनामपि तत्र प्रक्षेपात् ७८ तेभ्यो बादरापर्याप्तवनस्पतिकायिका असङ्ख्येयगुणाः, एकैकबादरनिगोदपर्याप्तनिश्रया असङ्ख्येयगुणानां बादरापर्याप्तनिगोदानां संभवात् ७९ तेभ्यः सामान्यतो बादरापर्याप्ता विशेषाधिकाः, बादरापर्याप्तपृथिवीकायिकादीनामपि तत्र प्रक्षेपात् ८० तेभ्यः सामान्यतो बादरा विशेषाधिकाः पर्याप्तापर्याप्तानां तत्र प्रक्षेपात् ८१ तेभ्यः सूक्ष्मवनस्पतिकायिका अपर्याप्ता असङ्ख्येयगुणाः ८२ तेभ्यः सामान्यतः सूक्ष्मा अपर्याप्तका विशेषाधिकाः सूक्ष्मापर्याप्तपृथिवीकायिकादीनामपि तत्र प्रक्षेपात् ८३ तेभ्यः सूक्ष्मवनस्पतिकायिकाः पर्याप्ताः सङ्ख्येयगुणाः, पर्याप्तसूक्ष्माणामपर्याप्तेभ्यः सूक्ष्मेभ्यः स्वभावतः सदैव सङ्ख्येयगुणतया प्राप्यमाणत्वात्, तथा केवलवेदसोपलब्धेः ८४ तेभ्योऽपि सामान्यतः सूक्ष्मपर्याप्ता विशेषाधिकाः, पर्याप्तसूक्ष्मपृथिवीकायिकादीनामपि तत्र प्रक्षेपात् ८५ तेभ्यः पर्याप्तापर्याप्तविशेषणरहिताः सूक्ष्मा विशेषाधिकाः, अपर्याप्तसूक्ष्मपृथिव्यप्तेजोवायुवनस्पतिकायिकानामपि तत्र प्रक्षेपात् ८६ तेभ्योऽपि 'भवसिद्धिका' भवे सिद्धिर्येषां ते भवसिद्धिका—भव्या विशेषाधिकाः, जघन्ययुक्तानन्तकमात्राभव्यपरिहारेण सर्वजी-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [९३]

दीप अनुक्रम [२९७]

वानां भव्यत्वात् ८७ तेभ्यः सामान्यतो निगोदजीवा विशेषाधिकाः, इह भव्या अभव्याश्चातिप्राचुर्येण सूक्ष्मवादरनिगोदजीवराशावेव प्राप्यन्ते नान्यत्र अन्येषां सर्वेषामपि मिलितानामसंख्येयलोकाकाशप्रदेशराशिप्रमाणत्वात्, अभव्याश्च युक्तानन्तकसंख्यामात्रपरिमाणास्ततो भव्यापेक्षया ते किञ्चिन्मात्राः भव्याश्च प्रागभव्यपरिहारेण चिन्तिताः इदानीं तु बादरसूक्ष्मनिगोदचिन्तायां तेऽपि प्रक्षिप्यन्ते इति विशेषाधिकाः ८८ तेभ्यः सामान्यतो वनस्पतिजीवा विशेषाधिकाः, प्रत्येकशरीराणामपि वनस्पतिजीवानां तत्र प्रक्षेपात् ८९ तेभ्यः सामान्यत एकेन्द्रिया विशेषाधिकाः, बादरसूक्ष्मपृथिवीकायिकादीनामपि तत्र प्रक्षेपात् ९० तेभ्यः सामान्यतस्तिर्यग्योनिका विशेषाधिकाः, पर्याप्तापर्याप्तद्वित्रिचतुरिन्द्रियतिर्यक्पञ्चेन्द्रियाणामपि तत्र प्रक्षेपात् ९१ तेभ्यश्चतुर्गतिभाविनो मिथ्यादृष्टयो विशेषाधिकाः, इह कतिपयाविरतसम्यग्दृष्ट्यादिसंज्ञिव्यतिरेकेण शेषाः सर्वेऽपि तिर्यञ्चो मिथ्यादृष्टयः, चातुर्गतिकमिथ्यादृष्टिचिन्तायां चासंख्येया नारकादयस्तत्र प्रक्षिप्यन्ते ततस्तिर्यग्जीवराश्यपेक्षया चतुर्गतिकमिथ्यादृष्टयश्चिन्त्यमाना विशेषाधिकाः ९२ तेभ्योऽप्यविरता विशेषाधिकाः, अविरतसम्यग्दृष्टीनां तत्र प्रक्षेपात् ९३ तेभ्यः सकषायिणो विशेषाधिकाः, देशविरतादीनामपि तत्र प्रक्षेपात् ९४ तेभ्यः छद्मस्था विशेषाधिकाः, उपशान्तमोहादीनामपि तत्र प्रक्षेपात् ९५ तेभ्यः सयोगिनो विशेषाधिकाः, सयोगिकेवलिनामपि तत्र प्रक्षेपात् ९६ तेभ्यः संसारस्था विशेषाधिकाः, अयोगिकेवलिनामपि तत्र प्रक्षेपात् ९७ तेभ्यः सर्वजीवा विशेषाधिकाः, सिद्धानामपि तत्र प्रक्षेपात् ९८ ॥

इति श्रीमलयगिरिसूरिविरचितायां प्रज्ञापनावृत्तौ तृतीयं पदं समाप्तम् ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र पद (०३) "अल्पबहुत्वं" परिसमाप्तम्

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [९४]

दीप अनुक्रम [२९८]

श्रीप्रज्ञापनोपाङ्गे चतुर्थं स्थितिपदं ।

नेरइयाणं भंते ! केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं दसवाससहस्साइं, उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं । अपज्जत्तनेरइयाणं भंते ! केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं । पज्जत्तगनेरइयाणं केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं दसवाससहस्साइं अंतोमुहुत्तूणाइं, उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं । रयणप्पभापुढविनेरइयाणं भंते ! केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं दसवाससहस्साइं उक्कोसेणं सागरोवमं, अपज्जत्तरयणप्पभापुढविनेरइयाणं भंते ! केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तरयणप्पभापुढविनेरइयाणं भंते ! केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं दस वाससहस्साइं अंतोमुहुत्तूणाइं उक्कोसेणं सागरोवमं अंतोमुहुत्तूणं ॥ सक्करप्पभापुढविनेरइयाणं भंते ! केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं एगं सागरोवमं उक्कोसेणं तिन्नि सागरोवमाइं, अपज्जत्तयसक्करप्पभापुढविनेरइयाणं भंते ! केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयसक्करप्पभापुढविनेरइयाणं भंते ! केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं सागरोवमं अंतोमुहुत्तूणं उक्कोसेणं तिन्नि सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं ॥ वालुयप्पभापुढविनेरइयाणं भंते ! केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं तिन्नि सागरोवमाइं उक्कोसेणं सत्त सागरोवमाइं, अपज्जत्तयवालुयप्पभापुढविनेरइयाणं भंते ! केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणवि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ पद (०४) "स्थिति" आरभ्यते

नारकाणां स्थिति:/(आयु:)

प्रत सूत्रांक [९४]

दीप अनुक्रम [२९८]

अंतोमुहुत्तं, पञ्जत्तयवालुयप्पभापुढविनेरइयाणं भंते ! केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं तिन्नि सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं उक्कोसेणं सत्त सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं ॥ पंकप्पभापुढविनेरइयाणं भंते ! केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं सत्त सागरोवमाइं उक्कोसेणं दस सागरोवमाइं, अपज्जत्तयपंकप्पभापुढविनेरइयाणं भंते ! केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणवि अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयपंकप्पभापुढविनेरइयाणं भंते ! केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा जहन्नेणं सत्त सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं उक्कोसेणं दस सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं ॥ धूमप्पभापुढविनेरइयाणं भंते ! केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं दस सागरोवमाइं उक्कोसेणं सत्तरससागरोवमाइं, अपज्जत्तयधूमप्पभापुढविनेरइयाणं भंते ! केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणवि अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तगधूमप्पभापुढविनेरइयाणं भंते ! केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं दस सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं उक्कोसेणं सत्तरससागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं ॥ तमप्पभापुढविनेरइयाणं भंते ! केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं सत्तरससागरोवमाइं उक्कोसेणं बावीसं सागरोवमाइं, अपज्जत्तयतमप्पभापुढविनेरइयाणं भंते ! केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणवि अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तगतमप्पभापुढविनेरइयाणं भंते ! केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं सत्तरस सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं उक्कोसेणं बावीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं ॥ अहेसत्तमापुढविनेरइयाणं भंते ! केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं बावीसं सागरोवमाइं उक्कोसेणं तित्तीसं सागरोवमाइं अपज्जत्तगअहेसत्तमपुढविनेरइयाणं भंते ! केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्ने-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

णवि अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तगअहेसत्तमपुढविनेरइयाणं भंते ! केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं बावीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं (सू० ९४)

इदानीं चतुर्थमारभ्यते, तस्य चायमभिसम्बन्धः—इहानन्तरपदे दिगनुपातादिनाऽल्पबहुत्वसङ्ख्या निर्द्धारिता, अस्मिंस्तु तयाऽल्पबहुत्वसङ्ख्यया निर्धारितानां सत्त्वानां जन्मतः प्रभृत्यामरणात् यन्नारकादिपर्यायरूपेणाव्यवच्छिन्नमवस्थानं तच्चिन्त्यते, अनेन सम्बन्धेनायातस्यास्येदमादिसूत्रम्—'नेरइयाणं भंते ! केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता' इति, नैरयिकाणां भदन्त ! कियन्तं कालं स्थितिः प्रज्ञप्ता ?, तत्र स्थीयते–अवस्थीयते अनया आयुःकर्म्मानुभूत्येति स्थितिः, स्थितिरायुःकर्म्मानुभूतिर्जीवनमिति पर्यायाः, यद्यप्यत्र जीवेन मिथ्यात्वादिभिरुपात्तानां कर्मपुद्गलानां ज्ञानावरणीयादिरूपतया परिणतानां यदवस्थानं सा स्थितिरिति प्रसिद्धं तथापि नारकादिव्यपदेशहेतुरायुःकर्म्मानुभूतिः, तथाहि—यद्यपि नरकगतिपञ्चेन्द्रियजात्यादिनामकर्म्मोदयाश्रयो नारकत्वपर्यायस्तथापि नारकायुःप्रथमसमयसंवेदनकाल एव तन्निबन्धनं नारकक्षेत्रमप्राप्तोऽपि नारकस्य (त्व) व्यपदेशं लभते, तथा च मौनीन्द्रं प्रवचनम्—"नेरइए णं भंते ! नेरइएसु उववज्जइ अनेरइए नेरइएसु उववज्जइ ?, गोयमा ! नेरइए नेरइएसु उववज्जइ नो अनेरइए नेर-

१ नैरयिको भदन्त ! नैरयिकेषु उत्पद्यतेऽनैरयिको नैरयिकेषु उत्पद्यते ?, गौतम ! नैरयिको नैरयिकेषु उत्पद्यते नो अनैरयिको नैरयिकेषु उत्पद्यते ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [९४]

दीप अनुक्रम [२९८]

इएसु उववज्जइ" इत्यादि, ततः सैवायुःकर्म्मानुभूतिरिह यथोक्तव्युत्पत्त्या स्थितिरभिधीयते, अत्र निर्वचनमाह—'गोयमे'त्यादि, एतच्च पर्याप्तापर्याप्तविभागाभावेन सामान्यतः उक्तं यदा तु पर्याप्तापर्याप्तविभागेन चिंता, तदेदं सूत्रम्—'अपज्जत्तनेरइयाणं भंते!' इत्यादि, इह अपर्याप्ता द्विविधाः—लब्ध्या करणैश्च, तत्र नैरयिकदेवा असङ्ख्येयवर्षायुषस्तिर्यग्मनुष्याः करणैरेवापर्याप्ताः, न लब्ध्या, लब्ध्यपर्याप्तकानां तेषु मध्ये उत्पादासंभवात्, तत एते उपपातकाल एव करणैः कियन्तं कालमपर्याप्ता द्रष्टव्याः, शेषास्तु तिर्यग्मनुष्या लब्ध्याऽपर्याप्ताः उपपातकाले च, उक्तं च—"नारगदेवा तिरिमणुयगब्भजा जे असंखवासाऊ। एए अप्पज्जत्ता उववाए चेव बोद्धव्वा ॥ १ ॥ सेसा य तिरिमणुया लद्धिं पप्पोववायकाले य। दुहओविय भयइयवा पज्जत्तियरे य जिणवयणं ॥ २ ॥" अपर्याप्तकाश्च जघन्यत उत्कर्षतो वाऽन्तर्मुहूर्त्तं, अत उक्तम्–'गोयमा! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं' अपर्याप्ताद्धाऽपगमे च शेषकालःपर्याप्ताद्धा, तत उक्तं पर्याप्तसूत्रे—गोयमा! जहन्नेणं दस वाससहस्साइं अंतोमुहुत्तूणाइं उक्कोसेणं तेत्तीससागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं" एतच्च पृथिव्यविभागेन चिन्तितं, सम्प्रति पृथिवीविभागेन चिन्तयति–'रयणप्पभापुढविनेरइयाणं भंते!' इत्यादि सुगमं, शेषमपि सुगममापदपरिसमाप्तेः ॥

१ नारकदेवाः तिर्यग्मनुष्या गर्भजा येऽसंख्यवर्षायुषः। एतेऽपर्याप्ता उपपाते चैव बोद्धव्याः ॥ १ ॥ शेषाश्च तिर्यग्मनुष्या लब्धिं प्राप्योपपातकाले च। द्विधातोऽपि च भक्तव्याः पर्याप्ता इतरे च जिनवचनात् ॥ २ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [९५-१०१]

दीप अनुक्रम [२९९--३०५]

देवाणं भंते ! केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं दस वाससहस्साइं उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं, अपज्जत्तयदेवाणं भंते ! केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणवि अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयदेवाणं भंते ! केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं दस वाससहस्साइं अंतोमुहुत्तूणाइं उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं ॥ देवीणं भंते ! केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं दस वाससहस्साइं उक्कोसेणं पणपन्नं पलिओवमाइं, अपज्जत्तयदेवीणं भंते ! केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणवि अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयदेवीणं भंते ! केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं दस वाससहस्साइं अंतोमुहुत्तूणाइं उक्कोसेणं पणपन्नं पलिओवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं ॥ भवणवासीणं देवाणं भंते ! केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं दस वाससहस्साइं उक्कोसेणं साइरेगं सागरोवमं, अपज्जत्तयभवणवासीणं भंते ! देवाणं केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणवि अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयभवणवासीणं देवाणं भंते ! केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं दस वाससहस्साइं अंतोमुहुत्तूणाइं उक्कोसेणं साइरेगं सागरोवमं अंतोमुहुत्तूणं ॥ भवणवासिणीणं भंते ! देवीणं केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं दसवाससहस्साइं उक्कोसेणं अद्धपंचमाइं पलिओवमाइं, अपज्जत्तयभवणवासिणीणं देवीणं भंते ! केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणवि अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तियाणं भंते ! भवणवासिणीणं देवीणं केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं दस वाससहस्साइं अंतोमुहुत्तूणाइं उक्कोसेणं अद्धपंचमाइं पलिओवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं । असुरकुमाराणं भंते ! देवाणं केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा !

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

देवानाम् स्थिति:/(आयु:)

जहन्नेणं दस वाससहस्साइं उक्कोसेणं साइरेगं सागरोवमं, अपज्जत्तयअसुरकुमाराणं भंते ! देवाणं केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणवि अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयअसुरकुमाराणं भंते ! देवाणं केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा जहन्नेणं दस वाससहस्साइं अंतोमुहुत्तूणाइं उक्कोसेणं साइरेगं सागरोवमं अंतोमुहुत्तूणं ॥ असुरकुमारीणं भंते ! देवीणं केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं दस वाससहस्साइं उक्कोसेणं अद्धपंचमाइं पलिओवमाइं, अपज्जत्तियाणं असुरकुमारीणं भंते ! देवीणं केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणवि अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तियाणं असुरकुमारीणं देवीणं भंते ! केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं दस वाससहस्साइं अंतोमुहुत्तूणाइं उक्कोसेणं अद्धपंचमाइं पलिओवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं ॥ नागकुमाराणं देवाणं भंते ! केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं दस वाससहस्साइं उक्कोसेणं दो पलिओवमाइं देसूणाइं, अपज्जत्तयाणं भंते ! नागकुमाराणं केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणवि अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं भंते ! नागकुमाराणं देवाणं केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं दस वाससहस्साइं अंतोमुहुत्तूणाइं उक्कोसेणं दो पलिओवमाइं देसूणाइं अंतोमुहुत्तूणाइं ॥ नागकुमारीणं भंते ! देवीणं केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं दस वाससहस्साइं उक्कोसेणं देसूणं पलिओवमं, अपज्जत्तियाणं भंते ! नागकुमारीणं देवीणं केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणवि अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तियाणं भंते ! नागकुमारीणं देवीणं केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं दस वाससहस्साइं अंतोमुहुत्तूणाइं उक्कोसेणं देसूणं पलिओवमं अंतोमुहुत्तूणं । सुवण्णकुमाराणं भंते ! देवाणं केवइयं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [९५-१०१]

दीप अनुक्रम [२९९--३०५]

कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं दस वाससहस्साइं उक्कोसेणं दो पलिओवमाइं देसूणाइं, अपज्जत्तयाणं पुच्छा, गोयमा ! जहन्नेणवि अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा, गोयमा ! जहन्नेणं दस वाससहस्साइं अंतोमुहुत्तूणाइं उक्कोसेणं दो पलिओवमाइं देसूणाइं अंतोमुहुत्तूणाइं । सुवण्णकुमारीणं देवीणं पुच्छा, गोयमा ! जहन्नेणं दस वाससहस्साइं उक्कोसेणं देसूणं पलिओवमं, अपज्जत्तियाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तियाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं दस वाससहस्साइं अंतोमुहुत्तूणाइं उक्कोसेणं देसूणं पलिओवमं अंतोमुहुत्तूणं । एवं एएणं अभिलावेणं ओहियअपज्जत्तयपज्जत्तयसुत्तत्तयं देवाण य देवीण य नेयवं जाव थणियकुमाराणं जहा नागकुमाराणं (सू०९५) पुढविकाइयाणं भंते! केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं बावीसं वाससहस्साइं, अपज्जत्तयपुढविकाइयाणं भंते ! केवइयं कालं ठिती पण्णत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयपुढविकाइयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं बावीसं वाससहस्साइं अंतोमुहुत्तूणाइं, सुहुमपुढविकाइयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, अपज्जत्तयसुहुमपुढविकाइयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयसुहुमपुढविकाइयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, बायरपुढविकाइयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं बावीसं वाससहस्साइं, अपज्जत्तयबायरपुढविकाइयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयबायरपुढविकाइयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं बावीसं वाससहस्साइं अंतोमुहुत्तूणाइं । आउक्काइयाणं भंते ! केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं सत्त वाससहस्साइं, अपज्जत्तयआउक्का-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पृथ्विकायिकादिनाम् स्थिति:/(आयु:)

प्रत सूत्रांक [९५-१०१]

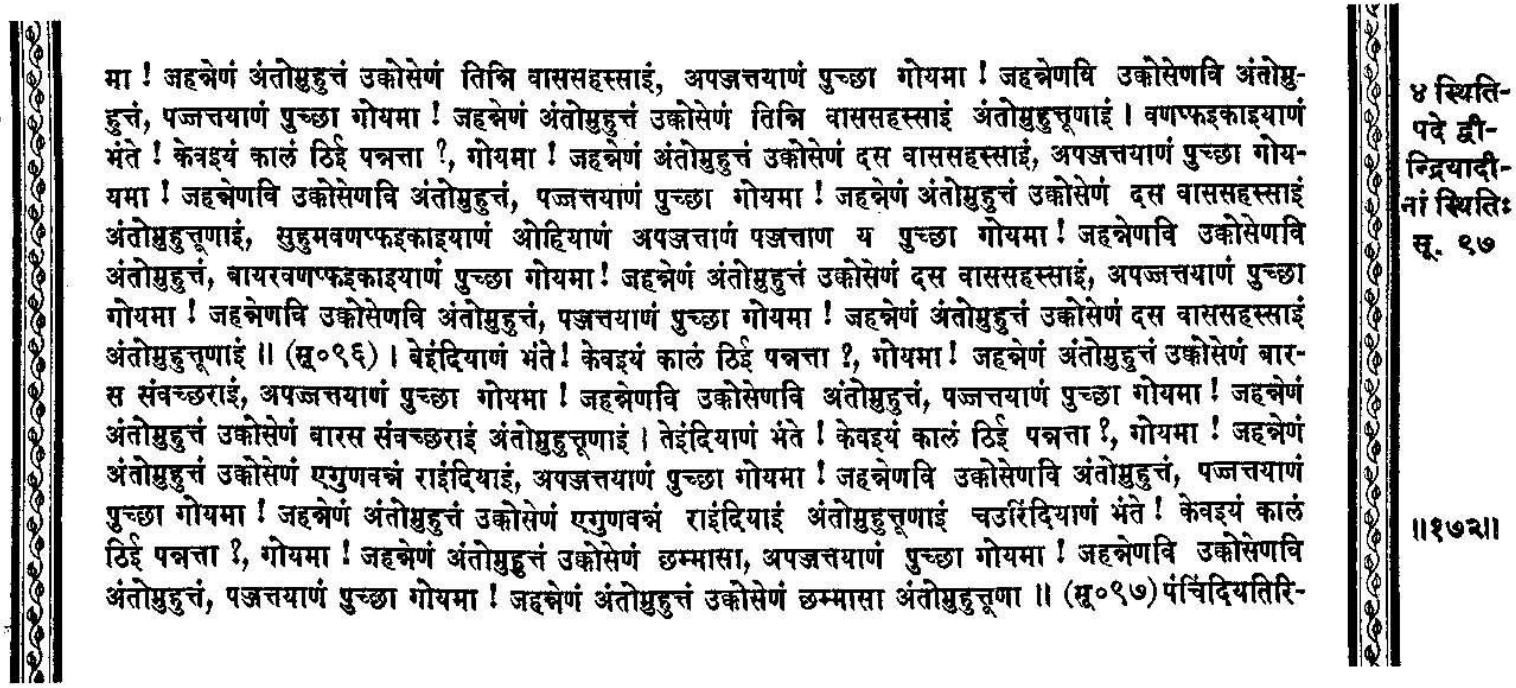
दीप अनुक्रम [२९९--३०५]

इयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयआउकाइयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं सत्त वाससहस्साइं अंतोमुहुत्तूणाइं, सुहुमआउकाइयाणं ओहियाणं अपज्जत्ताणं पज्जत्ताण य जहा सुहुमपुढविकाइयाणं तहा भाणियव्वं, बायरआउकाइयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं सत्त वाससहस्साइं अपज्जत्तयबायरआउकाइयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाण य पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं सत्त वाससहस्साइं अंतोमुहुत्तूणाइं । तेउकाइयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं तिन्नि राइंदियाइं, अपज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाण य पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं तिन्नि राइंदियाइं अंतोमुहुत्तूणाइं, सुहुमतेउकाइयाणं ओहियाणं अपज्जत्ताणं पज्जत्ताण य पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, बायरतेउकाइयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं तिन्नि राइंदियाइं, अपज्जत्तयबायरतेउकाइयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्ताणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं तिन्नि राइंदियाइं अंतोमुहुत्तूणाइं । वाउकाइयाणं भंते ! केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं तिन्नि वाससहस्साइं, अपज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं तिन्नि वाससहस्साइं अंतोमुहुत्तूणाइं, सुहुमवाउकाइयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, अपज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, बायरवाउकाइयाणं पुच्छा गोय-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [९५-१०१]

दीप अनुक्रम [२९९--३०५]



प्रज्ञापना-याः मल-य० वृत्तौ. ॥१७२॥

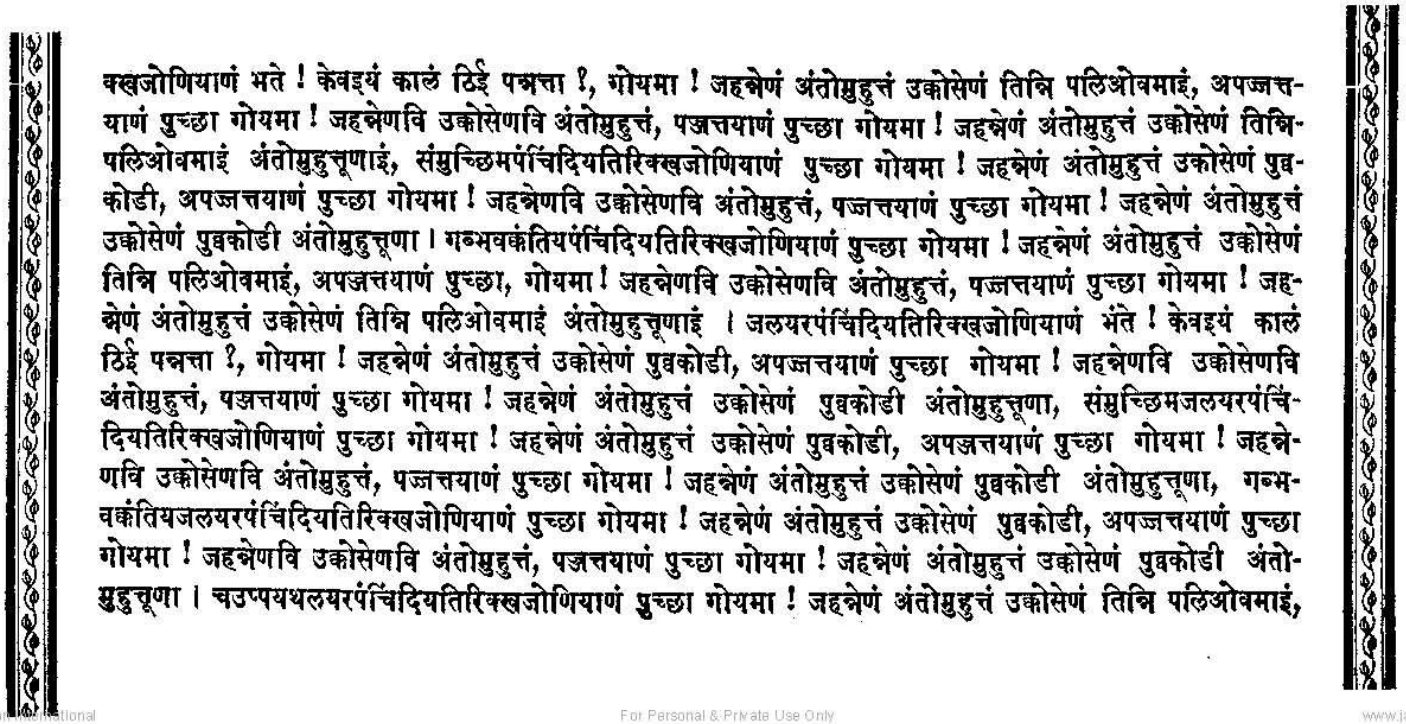
मा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं तिन्नि वाससहस्साइं, अपज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं तिन्नि वाससहस्साइं अंतोमुहुत्तूणाइं । वणप्फइकाइयाणं भंते ! केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं दस वाससहस्साइं, अपज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं दस वाससहस्साइं अंतोमुहुत्तूणाइं, सुहुमवणप्फइकाइयाणं ओहियाणं अपज्जत्ताणं पज्जत्ताण य पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, बायरवणप्फइकाइयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं दस वाससहस्साइं, अपज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं दस वाससहस्साइं अंतोमुहुत्तूणाइं ॥ (सू०९६) । बेइंदियाणं भंते ! केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं बारस संवच्छराइं, अपज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं बारस संवच्छराइं अंतोमुहुत्तूणाइं । तेइंदियाणं भंते ! केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं एगुणवन्नं राइंदियाइं, अपज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं एगुणवन्नं राइंदियाइं अंतोमुहुत्तूणाइं चउरिंदियाणं भंते ! केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं छम्मासा, अपज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं छम्मासा अंतोमुहुत्तूणा ॥ (सू०९७) पंचिंदियतिरि-

४ स्थिति-पदे द्वी-न्द्रियादी-नां स्थितिः सू. ९७

॥१७२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

द्वि-इन्द्रियादिनाम् स्थिति:/(आयु:)



खखजोणियाणं भते ! केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं तिन्नि पलिओवमाइं, अपज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं तिन्नि पलिओवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं, संमुच्छिमपंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं पुवकोडी, अपज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं पुवकोडी अंतोमुहुत्तूणा । गब्भवक्कंतियपंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं तिन्नि पलिओवमाइं, अपज्जत्तयाणं पुच्छा, गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं तिन्नि पलिओवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं । जलयरपंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं भंते ! केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं पुवकोडी, अपज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं पुवकोडी अंतोमुहुत्तूणा, संमुच्छिमजलयरपंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं पुवकोडी, अपज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं पुवकोडी अंतोमुहुत्तूणा, गब्भवक्कंतियजलयरपंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं पुवकोडी, अपज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं पुवकोडी अंतोमुहुत्तूणा । चउप्पयथलयरपंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं तिन्नि पलिओवमाइं,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [९५-१०१]

दीप अनुक्रम [२९९--३०५]

अपज्जत्तयचउप्पयथलयरपंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं तिन्नि पलिओवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं, संमुच्छिमचउप्पयथलयरपंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं चउरासीवाससहस्साइं, अपज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं चउरासीवाससहस्साइं अंतोमुहुत्तूणाइं, गब्भवक्कंतियचउप्पयथलयरपंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं तिन्नि पलिओवमाइं, अपज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं तिन्नि पलिओवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं । उरपरिसप्पथलयरपंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं पुव्वकोडी, अपज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं पुव्वकोडी अंतोमुहुत्तूणा, संमुच्छिमउरपरिसप्पथलयरपंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं तेवन्नं वाससहस्साइं, अपज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं तेवन्नं वाससहस्साइं अंतोमुहुत्तूणाइं, गब्भवक्कंतियउरपरिसप्पथलयरपंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं पुव्वकोडी, अपज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं पुव्वकोडी अंतोमुहुत्तूणा । भुयपरिसप्पथलयरपंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतो-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मुहुत्तं उक्कोसेणं पुव्वकोडी, अपज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं पुव्वकोडी अंतोमुहुत्तूणा, संमुच्छिमभुयपरिसप्पथलयरपंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं बायालीसं वाससहस्साइं, अपज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं बायालीसं वाससहस्साइं अंतोमुहुत्तूणाइं, गब्भवक्कंतियभुयपरिसप्पथलयरपंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं पुव्वकोडी, अपज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं पुव्वकोडी अंतोमुहुत्तूणा । खहयरपंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं पलिओवमस्स असंखेज्जइभागं, अपज्जत्तयाणं पुच्छा जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं पलिओवमस्स असंखेज्जइभागं अंतोमुहुत्तूणं, संमुच्छिमखहयरपंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं बावत्तरी वाससहस्साइं, अपज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं बावत्तरी वाससहस्साइं अंतोमुहुत्तूणाइं, गब्भवक्कंतियखहयरपंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं पलिओवमस्स असंखेज्जइभागं, अपज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं पलिओवमस्स असंखिज्जइभागं अंतोमुहुत्तूणं (सू०९८) । मणुस्साणं भंते ! केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं अंतो-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [९५-१०१]

दीप अनुक्रम [२९९--३०५]

मुहुत्तं उक्कोसेणं तिन्नि पलिओवमाइं, अपज्जत्तमणुस्साणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तमणुस्साणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं तिन्नि पलिओवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं, संमुच्छिममणुस्साणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, गब्भवक्कंतियमणुस्साणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं तिन्नि पलिओवमाइं, अपज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं तिन्नि पलिओवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं ॥ (सू०९९) । वाणमंतराणं भंते ! देवाणं केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं दस वाससहस्साइं उक्कोसेणं पलिओवमं, अपज्जत्तयवाणमंतराणं देवाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं दस वाससहस्साइं अंतोमुहुत्तूणाइं, उक्कोसेणं पलिओवमं अंतोमुहुत्तूणं । वाणमंतरीणं देवीणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं दस वाससहस्साइं उक्कोसेणं अद्धपलिओवमं, अपज्जत्तियाणं देवीणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तियाणं वाणमंतरीणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं दस वाससहस्साइं अंतोमुहुत्तूणाइं उक्कोसेणं अद्धपलिओवमं अंतोमुहुत्तूणं । (सू०१००) । जोइसियाणं देवाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं पलिओवमट्ठभागो उक्कोसेणं पलिओवमं वाससयसहस्समब्भहियं, अपज्जत्तजोइसियाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं पलिओवमट्ठभागो अंतोमुहुत्तूणो उक्कोसेणं पलिओवमं वाससयसहस्समब्भहियं अंतोमुहुत्तूणं । जोइसिणीणं देवीणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं पलिओवमट्ठभागो उक्कोसेणं अद्धपलिओवमं पण्णासवाससहस्समब्भहियं, अपज्जत्तजोइसियदेवीणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्ज-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ज्योतिष्क-देवानाम् स्थितिः/(आयुः)

प्रत सूत्रांक [९५-१०१]

दीप अनुक्रम [२९९--३०५]

त्तयजोइसियदेवीणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं पलिओवमट्ठभागो अंतोमुहुत्तूणो उक्कोसेणं अद्धपलिओवमं पण्णासवाससहस्समब्भहियं अंतोमुहुत्तू णं । चंदविमाणेणं भंते! देवाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं चउभागपलिओवमं उक्कोसेणं पलिओवमं वाससयसहस्समब्भहियं, अपज्जत्तयाणं चंददेवाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं चउभागपलिओवमं अंतोमुहुत्तूणं उक्कोसेणं पलिओवमं वाससयसहस्समब्भहियं अंतोमुहुत्तूणं, चंदविमाणे णं देवीणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं चउभागपलिओवमं उक्कोसेणं अद्धपलिओवमं पन्नासवाससहस्समब्भहियं, अपज्जत्तियाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तियाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं चउभागपलिओवमं अंतोमुहुत्तूणं उक्कोसेणं अद्धपलिओवमं पन्नासवाससहस्समब्भहियं अंतोमुहुत्तूणं । सूरविमाणे णं भंते ! देवाणं केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं चउभागपलिओवमं उक्कोसेणं पलिओवमं वाससहस्समब्भहियं, अपज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं चउभागपलिओवमं अंतोमुहुत्तूणं उक्कोसेणं पलिओवमं वाससहस्समब्भहियं अंतोमुहुत्तूणं, सूरविमाणे णं भंते ! देवीणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं चउभागपलिओवमं उक्कोसेणं अद्धपलिओवमं पंचहिं वाससएहिमब्भहियं, अपज्जत्तियाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तियाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं चउभागपलिओवमं अंतोमुहुत्तूणं उक्कोसेणं अद्धपलिओवमं पंचहिं वाससएहिमब्भहियं अंतोमुहुत्तूणं । गहविमाणे णं भंते ! देवाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं चउभागपलिओवमं उक्कोसेणं पलिओवमं, अपज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जह-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [९५-१०१]

दीप अनुक्रम [२९९--३०५]

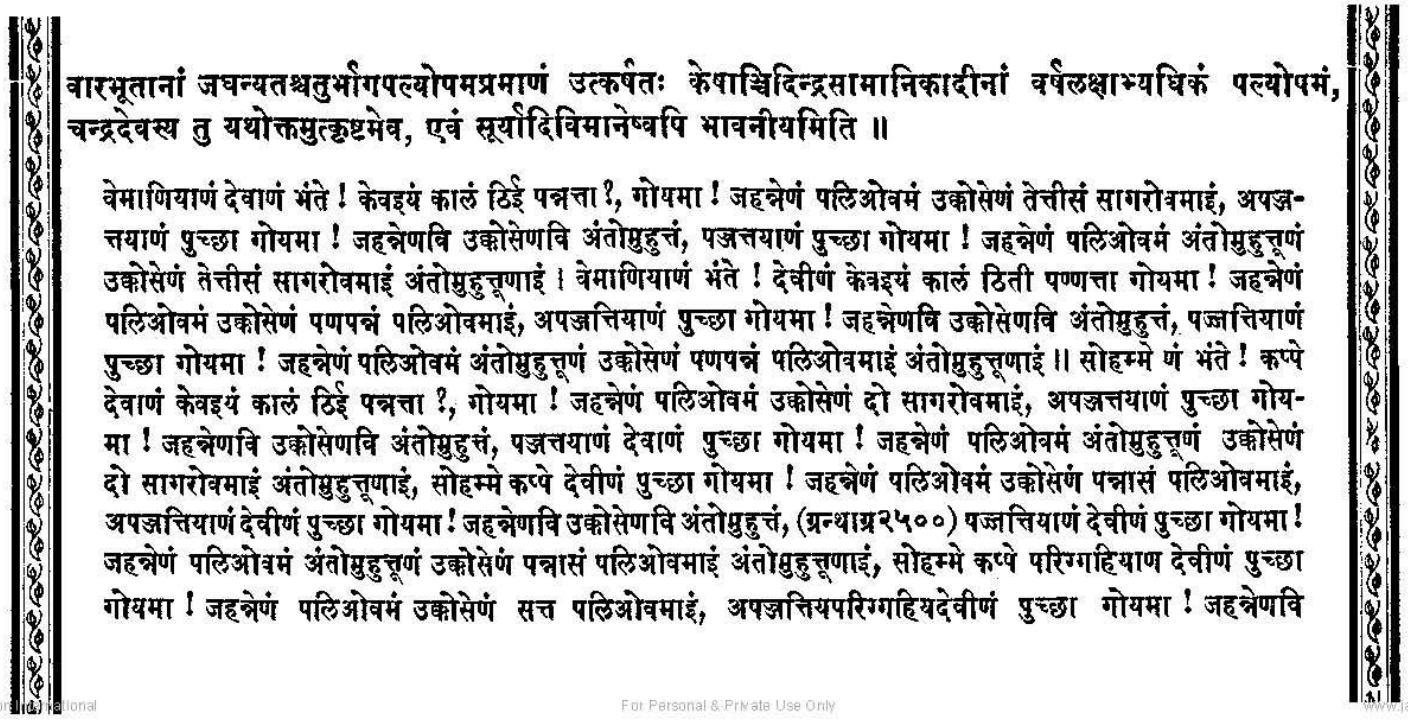
जेणं चउभागपलिओवमं अंतोमुहुत्तूणं उक्कोसेणं पलिओवमं अंतोमुहुत्तूणं, गहविमाणे देवीणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं चउभागपलिओवमं उक्कोसेणं अद्धपलिओवमं, अपज्जत्तियाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तियाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं चउभागपलिओवमं अंतोमुहुत्तूणं उक्कोसेणं अद्धपलिओवमं अंतोमुहुत्तूणं । नक्खत्तविमाणे देवाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं चउभागपलिओवमं उक्कोसेणं अद्धपलिओवमं, अपज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं चउभागपलिओवमं अंतोमुहुत्तूणं उक्कोसेणं अद्धपलिओवमं अंतोमुहुत्तूणं, नक्खत्तविमाणे देवीणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं चउभागपलिओवमं उक्कोसेणं साइरेगं चउभागपलिओवमं, अपज्जत्तियाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तियाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं चउभागपलिओवमं अंतोमुहुत्तूणं उक्कोसेणं साइरेगं चउभागपलिओवमं अंतोमुहुत्तूणं । ताराविमाणे देवाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अट्ठभागपलिओवमं उक्कोसेणं चउभागपलिओवमं, अपज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं पलिओवमट्ठभागं अंतोमुहुत्तूणं उक्कोसेणं चउभागपलिओवमं अंतोमुहुत्तूणं, ताराविमाणे देवीणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं पलिओवमट्ठभागं उक्कोसेणं साइरेगं अट्ठभागपलिओवमं ताराविमाणे अपज्जत्तियाणं देवीणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तियाणं देवीणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं पलिओवमट्ठभागं अंतोमुहुत्तूणं उक्कोसेणं साइरेगं पलिओवमट्ठभागं अंतोमुहुत्तूणं (सू० १०१)

नवरं 'चंदविमाणे णं भंते ! देवाणं' इत्यादि, चन्द्रविमाने चन्द्र उत्पद्यते शेषाश्च तत्परिवारभूताः, तत्र तत्परि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [९५-१०१]

दीप अनुक्रम [२९९--३०५]



वारभूतानां जघन्यतश्चतुर्भागपल्योपमप्रमाणं उत्कर्षतः केषाञ्चिदिन्द्रसामानिकादीनां वर्षलक्षाभ्यधिकं पल्योपमं, चन्द्रदेवस्य तु यथोक्तमुत्कृष्टमेव, एवं सूर्यादिविमानेष्वपि भावनीयमिति ॥

वेमाणियाणं देवाणं भंते ! केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं पलिओवमं उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं, अपज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं पलिओवमं अंतोमुहुत्तूणं उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं । वेमाणियाणं भंते ! देवीणं केवइयं कालं ठिती पण्णत्ता गोयमा ! जहन्नेणं पलिओवमं उक्कोसेणं पणपन्नं पलिओवमाइं, अपज्जत्तियाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तियाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं पलिओवमं अंतोमुहुत्तूणं उक्कोसेणं पणपन्नं पलिओवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं ॥ सोहम्मे णं भंते ! कप्पे देवाणं केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं पलिओवमं उक्कोसेणं दो सागरोवमाइं, अपज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं देवाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं पलिओवमं अंतोमुहुत्तूणं उक्कोसेणं दो सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं, सोहम्मे कप्पे देवीणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं पलिओवमं उक्कोसेणं पन्नासं पलिओवमाइं, अपज्जत्तियाणं देवीणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, (ग्रन्थाग्र२५००) पज्जत्तियाणं देवीणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं पलिओवमं अंतोमुहुत्तूणं उक्कोसेणं पन्नासं पलिओवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं, सोहम्मे कप्पे परिग्गहियाण देवीणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं पलिओवमं उक्कोसेणं सत्त पलिओवमाइं, अपज्जत्तियपरिग्गहियदेवीणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वैमानिक-देवानाम् स्थिति:/(आयु:)

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [१०२]

दीप अनुक्रम [३०६]

उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, परिग्गहियाणं पज्जत्तियाणं देवीणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेण पलिओवमं अंतोमुहुत्तूणं उक्कोसेणं सत्त पलिओवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं, सोहम्मे कप्पे अपरिग्गहियाणं देवीणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं पलिओवमं उक्कोसेणं पन्नासं पलिओवमाइं, अपज्जत्तियाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तियाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं पलिओवमं अंतोमुहुत्तूणं उक्कोसेणं पन्नासं पलिओवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं ॥ ईसाणे कप्पे देवाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं साइरेगं पलिओवमं उक्कोसेणं साइरेगाइं दो सागरोवमाइं, अपज्जत्तदेवाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं साइरेगं पलिओवमं अंतोमुहुत्तूणं उक्कोसेणं साइरेगाइं दो सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं, ईसाणे कप्पे देवीणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं साइरेगं पलिओवमं उक्कोसेणं पणपन्नं पलिओवमाइं, ईसाणे कप्पे देवीणं अपज्जत्तियाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, ईसाणे कप्पे पज्जत्तियाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं साइरेगं पलिओवमं अंतोमुहुत्तूणं उक्कोसेणं पणपन्नं पलिओवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं, ईसाणे कप्पे परिग्गहियाणं देवीणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं साइरेगं पलिओवमं उक्कोसेणं नव पलिओवमाइं, अपज्जत्तियाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, ईसाणे कप्पे पज्जत्तियाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं साइरेगं पलिओवमं अंतोमुहुत्तूणं उक्कोसेणं नव पलिओवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं, ईसाणे कप्पे अपरिग्गहियदेवीणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं साइरेगं पलिओवमं उक्कोसेणं पणपन्नाइं पलिओवमाइं, अपज्जत्तियाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तियाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं साइरेगं पलिओवमं अंतोमुहुत्तूणं उक्कोसेणं पणपन्नं पलिओवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं ॥ सणंकुमारे कप्पे देवाणं पुच्छा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोयमा ! जहन्नेणं दो सागरोवमाइं उक्कोसेणं सत्त सागरोवमाइं, अपज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं दो सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं उक्कोसेणं सत्त सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं ॥ माहिंदे कप्पे देवाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं साइरेगाइं दो सागरोवमाइं उक्कोसेणं साइरेगाइं सत्त सागरोवमाइं, अपज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं दो सागरोवमाइं साइरेगाइं अंतोमुहुत्तूणाइं उक्कोसेणं सत्त सागरोवमाइं साइरेगाइं अंतोमुहुत्तूणाइं ॥ बंभलोए कप्पे देवाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं सत्त सागरोवमाइं उक्कोसेणं दस सागरोवमाइं, अपज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं सत्त सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं उक्कोसेणं दस सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं ॥ लंतए कप्पे देवाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं दस सागरोवमाइं उक्कोसेणं चउद्दस सागरोवमाइं, अपज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं दस सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं उक्कोसेणं चउद्दस सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं ॥ महासुके कप्पे देवाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं चउद्दस सागरोवमाइं उक्कोसेणं सत्तर सागरोवमाइं, अपज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं चउद्दस सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं उक्कोसेणं सत्तर सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं ॥ सहस्सारे कप्पे देवाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं सत्तर सागरोवमाइं उक्कोसेणं अट्ठारस सागरोवमाइं, अपज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं सत्तर सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं उक्कोसेणं अट्ठारस सागरोवमाइं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अंतोमुहुत्तूणाइं ॥ आणए कप्पे देवाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अट्ठारस सागरोवमाइं उक्कोसेणं एगूणवीसं सागरोवमाइं, अपज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अट्ठारस सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं उक्कोसेणं एगूणवीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं ॥ पाणए कप्पे देवाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं एगूणवीसं सागरोवमाइं उक्कोसेणं वीसं सागरोवमाइं, अपज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं एगूणवीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं उक्कोसेणं वीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं ॥ आरणे कप्पे देवाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं वीसं सागरोवमाइं उक्कोसेणं एक्कवीसं सागरोवमाइं, अपज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं वीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं उक्कोसेणं एगवीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं ॥ अच्चुए कप्पे देवाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं एगवीसं सागरोवमाइं उक्कोसेणं बावीसं सागरोवमाइं, अपज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं इक्कवीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं उक्कोसेणं बावीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं ॥ हेट्ठिमहेट्ठिमगेविज्जगदेवाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं बावीसं सागरोवमाइं उक्कोसेणं तेवीसं सागरोवमाइं, अपज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं बावीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं उक्कोसेणं तेवीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं ॥ हेट्ठिममज्झिमगेवेज्जगदेवाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं तेवीसं सागरोवमाइं उक्कोसेणं चउवीसं सागरोवमाइं, अपज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [१०२]

दीप अनुक्रम [३०६]

पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं तेवीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं उक्कोसेणं चउवीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं ॥ हेट्ठिम-उवरिमगेविज्जगदेवाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं चउवीसं सागरोवमाइं उक्कोसेणं पणवीसं सागरोवमाइं, अपज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं चउवीसं सागरोवमाइं अंतो-मुहुत्तूणाइं उक्कोसेणं पणवीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं ॥ मज्झिमहेट्ठिमगेविज्जगदेवाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं पण-वीसं सागरोवमाइं उक्कोसेणं छव्वीसं सागरोवमाइं, अपज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं पणवीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं उक्कोसेणं छव्वीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं ॥ मज्झिममज्झिमगेविज्जगदेवाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं छव्वीसं सागरोवमाइं उक्कोसेणं सत्तावीसं सागरोवमाइं, अपज्जत्त-याणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं छव्वीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं उक्कोसेणं सत्तावीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं ॥ मज्झिमउवरिमगेविज्जगदेवाणं पुच्छा गोयमा ! जह-न्नेणं सत्तावीसं सागरोवमाइं उक्कोसेणं अट्ठावीसं सागरोवमाइं, अपज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं सत्तावीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं उक्कोसेणं अट्ठावीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं ॥ उवरिमहेट्ठिमगेविज्जगदेवाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अट्ठावीसं सागरोवमाइं उक्कोसेणं एगूणतीसं साग-रोवमाइं, अपज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं अट्ठा-वीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं उक्कोसेणं एगूणतीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं ॥ उवरिममज्झिमगेवेज्जगदेवाणं पुच्छा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोयमा ! जहन्नेणं एगुणतीसं सागरोवमाइं उक्कोसेणं तीसं सागरोवमाइं, अपज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं एगूणतीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं उक्कोसेणं तीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं ॥ उवरिमउवरिमगेवेज्जगदेवाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं तीसं सागरोवमाइं उक्कोसेणं एक्कतीसं सागरोवमाइं, अपज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं तीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं उक्कोसेणं एक्कतीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं ॥ विजयवेजयंतजयंतअपराजितेसु णं भंते ! देवाणं केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं एक्कतीसं सागरोवमाइं उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं, अपज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, पज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं एक्कतीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं ॥ सव्वट्ठसिद्धगदेवाणं भंते ! केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! अजहन्नमणुक्कोसं तेत्तीसं सागरोवमाइं ठिई पन्नत्ता, सव्वट्ठसिद्धगदेवाणं अपज्जत्तयाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणवि उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, सव्वट्ठसिद्धगदेवाणं पज्जत्तयाणं केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! अजहन्नमणुक्कोसं तेत्तीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं ठिई पण्णत्ता ॥ (सू० १०२) पन्नवणाए भगवईए चउत्थं ठिइपदं समत्तं ॥

इति श्रीमलयगिरिविरचितायां प्रज्ञापनाटीकायां चतुर्थं स्थित्याख्यं पदं समाप्तम् ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र पद (०४) "स्थिति" परिसमाप्तम्

प्रत सूत्रांक [१०३]

दीप अनुक्रम [३०७]

श्रीप्रज्ञापनोपाङ्गे पञ्चमं पर्यायपदं ।

तदेवं व्याख्यातं चतुर्थं पदं, इदानीं पञ्चममारभ्यते—तस्य चायमभिसम्बन्धः—इहानन्तरपदे नारकादिपर्यायरूपेण सत्त्वानामवस्थितिरुक्ता, इह त्वौदयिकक्षायोपशमिकक्षायिकभावाश्रयपर्यायावधारणं प्रतिपाद्यते, तत्र चेदमादिसूत्रम्—

कइविहा णं भंते! पज्जवा पन्नत्ता?, गोयमा! दुविहा पज्जवा पन्नत्ता, तंजहा—जीवपज्जवा य अजीवपज्जवा य। जीवपज्जवा णं भंते! किं संखेज्जा असंखेज्जा अणंता?, गोयमा! नो संखेज्जा नो असंखेज्जा अणंता, से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ—जीवपज्जवा नो संखेज्जा नो असंखेज्जा अणंता?, गोयमा! असंखिज्जा नेरइया असंखिज्जा असुरकुमारा असंखिज्जा नागकुमारा असंखिज्जा सुवण्णकुमारा असंखिज्जा विज्जुकुमारा असंखिज्जा अगणिकुमारा असंखिज्जा दीवकुमारा असंखिज्जा उदहिकुमारा असंखिज्जा दिसीकुमारा असंखिज्जा वाउकुमारा असंखिज्जा थणियकुमारा असंखिज्जा पुढविकाइया असंखिज्जा आउकाइया असंखिज्जा तेउकाइया असंखिज्जा वाउकाइया अणंता वणप्फइकाइया असंखेज्जा बेइंदिया असंखेज्जा तेइंदिया असंखेज्जा चउरिंदिया असंखेज्जा पंचिंदियतिरिक्खजोणिया असंखेज्जा मणुस्सा असंखेज्जा वाणमंतरा असंखेज्जा जोइसिया असंखेज्जा वेमाणिया अणंता सिद्धा, से एएणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ—ते णं नो संखिज्जा नो असंखिज्जा अणंता॥ (सूत्रं १०३)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ पद (०५) "विशेष" आरभ्यते

पर्यायपदे जीव-पर्याय:

'कइविहा णं भंते ! पज्जवा पन्नत्ता ?' इति, अथ केनाभिप्रायेण गौतमस्वामिना भगवानेवं पृष्टः ?, उच्यते, उक्तमादौ प्रथमे पदे प्रज्ञापना द्विविधा प्रज्ञप्ता, तद्यथा–जीवप्रज्ञापना अजीवप्रज्ञापना चेति, तत्र जीवाश्चाजीवाश्च द्रव्याणि, द्रव्यलक्षणं चेदम्–'गुणपर्यायवद्द्रव्य'मिति (तत्त्वा० अ० ५ सू० ३१) ततो जीवाजीवपर्यायभेदावगमार्थमेवं पृष्टवान्, तथा च भगवानपि निर्वचनमेवमेवाह–'गोयमा ! दुविहा पज्जवा पन्नत्ता, तंजहा–जीवपज्जवा य अजीवपज्जवा य' इति, तत्र पर्याया गुणा विशेषा धर्म्मा इत्यनर्थान्तरं, ननु सम्बन्धं प्रतिपादयतेदमुक्तम्–इह त्वौदयिकादिभावाश्रयपर्यायपरिमाणावधारणं प्रतिपाद्यत इति, औदयिकादयश्च भावा जीवाश्रयाः, ततो जीवपर्याया एव गम्यन्ते अथ चास्मिन्निर्वचनसूत्रे द्वयानामपि पर्याया उक्तास्ततो न सुन्दरः सम्बन्धः, तदयुक्तम्, अभिप्रायापरिज्ञानात्, औदयिको हि भावः पुद्गलवृत्तिरपि भवति, ततो जीवाजीवभेदेनौदयिकभावस्य द्वैविध्यान्न सम्बन्धकथननिर्वचनसूत्रयोर्विरोधः । सम्प्रति सम्बन्ध(पर्याय)परिमाणावगमाय पृच्छति–'जीवपज्जवा णं भंते ! किं संखेज्जा' इत्यादि, इह यस्माद्वनस्पतिसिद्धवर्जाः सर्वेऽपि नैरयिकादयः प्रत्येकमसङ्ख्येयाः मनुष्येष्वसङ्ख्येयत्वं संमूर्च्छिममनुष्यापेक्षया वनस्पतयः सिद्धाश्च प्रत्येकमनन्ताः ततः पर्यायिणामनन्तत्वाद् भवन्त्यनन्ता जीवपर्यायाः ॥ तदेवं गौतमेन सामान्यतो जीवपर्यायाः पृष्टाः भगवानपि सामान्येन निर्वचनमुक्तवान्, इदानीं विशेषविषयं प्रश्नं गौतम आह—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [१०४]

दीप अनुक्रम [३०८]

नेरइयाणं भंते ! केवइया पज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—नेरइयाणं अणंता पज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा ! नेरइए नेरइयस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए तुल्ले ओगाहणट्ठयाए सिय हीणे सिय तुल्ले सिय अब्भहिए जइ हीणे असंखिज्जइभागहीणे वा संखिज्जइभागहीणे वा संखिज्जगुणहीणे वा असंखिज्जगुणहीणे वा अह अब्भहिए असंखिज्जइभागमब्भहिए वा संखिज्जइभागमब्भहिए वा संखिज्जगुणमब्भहिए वा असंखिज्जगुणमब्भहिए वा, ठिईए सिय हीणे सिय तुल्ले सिय अब्भहिए जइ हीणे असंखिज्जइभागहीणे वा संखिज्जइभागहीणे वा संखिज्जगुणहीणे वा असंखिज्जगुणहीणे वा अह अब्भहिए असंखिज्जभागमब्भहिए वा संखिज्जभागमब्भहिए वा संखिज्जगुणमब्भहिए वा असंखिज्जगुणमब्भहिए वा, कालवण्णपज्जवेहिं सिय हीणे सिय तुल्ले सिय अब्भहिए, जइ हीणे अणंतभागहीणे वा असंखेज्जभागहीणे संखेज्जभागहीणे वा संखेज्जगुणहीणे वा असंखेज्जगुणहीणे वा अणंतगुणहीणे वा अह अब्भहिए अणंतभागमब्भहिए वा असंखेज्जभागमब्भहिए वा संखेज्जभागमब्भहिए वा संखेज्जगुणमब्भहिए वा असंखेज्जगुणमब्भहिए वा अणंतगुणमब्भहिए वा, नीलवन्नपज्जवेहिं लोहियवन्नपज्जवेहिं पीयवन्नपज्जवेहिं हालिद्दवन्नपज्जवेहिं सुक्किल्लवन्नपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए, सुब्भिगंधपज्जवेहिं दुब्भिगंधपज्जवेहि य छट्ठाणवडिए, तित्तरसपज्जवेहिं कडुयरसपज्जवेहिं कसायरसपज्जवेहिं अंबिलरसपज्जवेहिं महुररसपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए, कक्खडफासपज्जवेहिं मउयफासपज्जवेहिं गरुयफासपज्जवेहिं लहुयफासपज्जवेहिं सीयफासपज्जवेहिं उसिणफासपज्जवेहिं निद्धफासपज्जवेहिं लुक्खफासपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए, आभिणिबोहियनाणपज्जवेहिं सुयनाणपज्जवेहिं ओहिनाणपज्जवेहिं मइअन्नाणपज्जवेहिं सुयअन्नाणपज्जवेहिं विभंगनाणपज्जवेहिं चक्खुदंसणपज्जवेहिं अचक्खुदंसणपज्जवेहिं ओहिदंसणपज्ज-

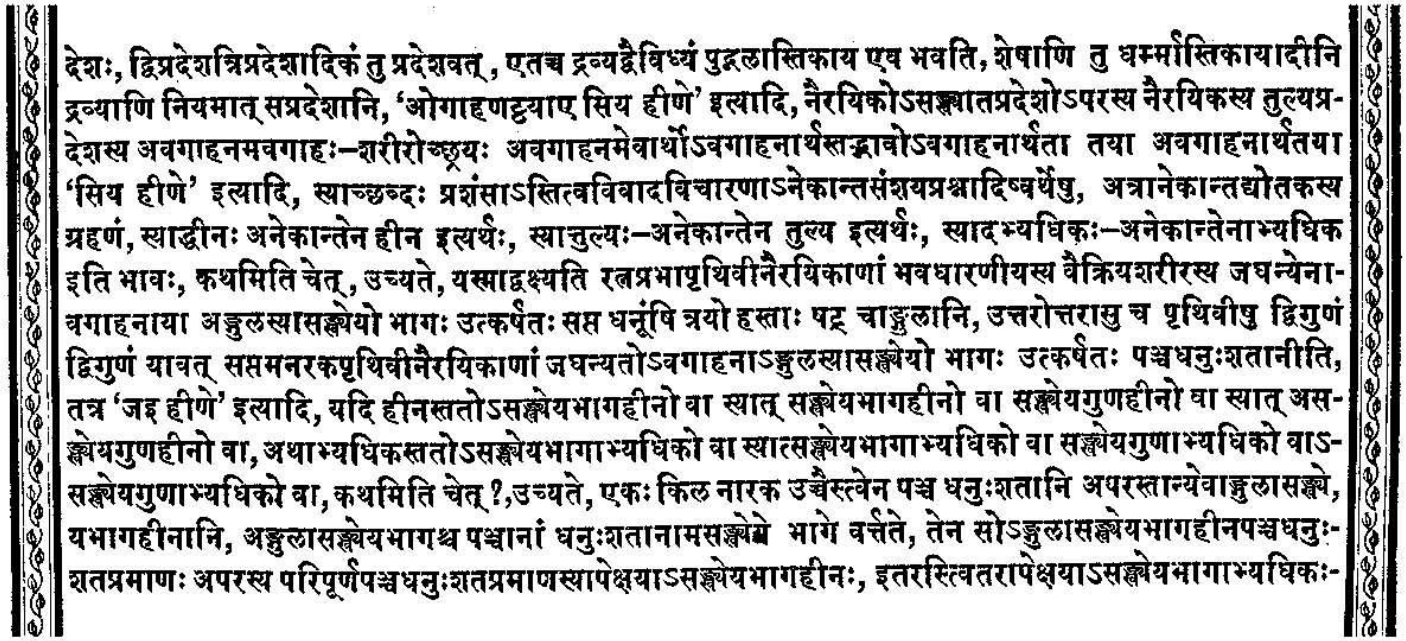
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नैरयिकस्य पर्याय:

वेहिं छट्ठाणवडिए, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ नेरइयाणं नो संखेज्जा नो असंखेज्जा अणंता पज्जवा पन्नत्ता। (सूत्रं १०४)

'नेरइयाणं भंते ! केवइया पज्जवा पन्नत्ता' इति, अथ केनाभिप्रायेणैवं गौतमः पृष्टवान् ?, उच्यते, पूर्वं किल सामान्यप्रश्ने पर्यायिणामनन्तत्वात् पर्यायाणामानन्त्यमुक्तं, यत्र पुनः पर्यायिणामानन्त्यं नास्ति तत्र कथमिति पृच्छति–'नेरइयाणं' इत्यादि, तत्रापि निर्वचनमिदम् 'अनन्ता' इति, अत्रैव जातसंशयः प्रश्नयति–'से केणट्ठेणं भंते !' इत्यादि, अथ केनार्थेन–केन कारणेन केन हेतुना भदन्त ! एवमुच्यते–नैरयिकाणां पर्याया एवम्–अनन्ता इति ?, भगवानाह–'गोयमा ! नेरइए नेरइयस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले, इत्यादि, अथ पर्यायाणामानन्त्यं कथं घटते इति पृष्टे तदेव पर्यायाणामानन्त्यं यथा युक्त्युपपन्नं भवति तथा निर्वचनीयं नान्यत् ततः केनाभिप्रायेण भगवतैवं निर्वचनमवाचि–नैरयिको नैरयिकस्य द्रव्यार्थतया तुल्य इति ?, उच्यते, एकमपि द्रव्यमनन्तपर्यायमित्यस्य न्यायस्य प्रदर्शनार्थं, तत्र यस्मादिदमपि नारकजीवद्रव्यमेकसङ्ख्याऽवरुद्धमिति नैरयिको नैरयिकस्य द्रव्यार्थतया तुल्यः, द्रव्यमेवार्थो द्रव्यार्थः तद्भावो द्रव्यार्थता तया द्रव्यार्थतया तुल्यः, एवं तावत् द्रव्यार्थतया तुल्यत्वमभिहितं, इदानीं प्रदेशार्थतामधिकृत्य तुल्यत्वमाह–'पएसट्ठयाए तुल्ले' इदमपि नारकजीवद्रव्यं लोकाकाशप्रदेशपरिमाणप्रदेशमिति प्रदेशार्थतयाऽपि नैरयिको नैरयिकस्य तुल्यः, प्रदेश एवार्थ प्रदेशार्थः तद्भावः प्रदेशार्थता तया प्रदेशार्थतया, कस्मादभिहितमिति चेत्, उच्यते, द्रव्यद्वैविध्यप्रदर्शनार्थं, तथाहि–द्विविधं द्रव्यं–प्रदेशवत् अप्रदेशवच्च, तत्र परमाणुरप्र-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



देशः, द्विप्रदेशत्रिप्रदेशादिकं तु प्रदेशवत्, एतच्च द्रव्यद्वैविध्यं पुद्गलास्तिकाय एव भवति, शेषाणि तु धर्म्मास्तिकायादीनि द्रव्याणि नियमात् सप्रदेशानि, 'ओगाहणट्ठयाए सिय हीणे' इत्यादि, नैरयिकोऽसङ्खातप्रदेशोऽपरस्य नैरयिकस्य तुल्यप्रदेशस्य अवगाहनमवगाहः–शरीरोच्छ्रयः अवगाहनमेवार्थोऽवगाहनार्थस्तद्भावोऽवगाहनार्थता तया अवगाहनार्थतया 'सिय हीणे' इत्यादि, स्याच्छब्दः प्रशंसाऽस्तित्वविवादविचारणाऽनेकान्तसंशयप्रश्नादिष्वर्थेषु, अत्रानेकान्तद्योतकस्य ग्रहणं, स्याद्धीनः अनेकान्तेन हीन इत्यर्थः, स्यात्तुल्यः–अनेकान्तेन तुल्य इत्यर्थः, स्यादभ्यधिकः–अनेकान्तेनाभ्यधिक इति भावः, कथमिति चेत्, उच्यते, यस्माद्वक्ष्यति रत्नप्रभापृथिवीनैरयिकाणां भवधारणीयस्य वैक्रियशरीरस्य जघन्येनावगाहनाया अङ्गुलस्यासङ्ख्येयो भागः उत्कर्षतः सप्त धनूंषि त्रयो हस्ताः षट् चाङ्गुलानि, उत्तरोत्तरासु च पृथिवीषु द्विगुणं द्विगुणं यावत् सप्तमनरकपृथिवीनैरयिकाणां जघन्यतोऽवगाहनाऽङ्गुलस्यासङ्ख्येयो भागः उत्कर्षतः पञ्चधनुःशतानीति, तत्र 'जइ हीणे' इत्यादि, यदि हीनस्ततोऽसङ्ख्येयभागहीनो वा स्यात् सङ्ख्येयभागहीनो वा सङ्ख्येयगुणहीनो वा स्यात् असङ्ख्येयगुणहीनो वा, अथाभ्यधिकस्ततोऽसङ्ख्येयभागाभ्यधिको वा स्यात्सङ्ख्येयभागाभ्यधिको वा सङ्ख्येयगुणाभ्यधिको वाऽसङ्ख्येयगुणाभ्यधिको वा, कथमिति चेत् ?,उच्यते, एकः किल नारक उच्चैस्त्वेन पञ्च धनुःशतानि अपरस्तान्येवाङ्गुलासङ्ख्येयभागहीनानि, अङ्गुलासङ्ख्येयभागश्च पञ्चानां धनुःशतानामसङ्ख्येये भागे वर्त्तते, तेन सोऽङ्गुलासङ्ख्येयभागहीनपञ्चधनुःशतप्रमाणः अपरस्य परिपूर्णपञ्चधनुःशतप्रमाणस्यापेक्षयाऽसङ्ख्येयभागहीनः, इतरस्त्वितरापेक्षयाऽसङ्ख्येयभागाभ्यधिकः-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तथा एकः पञ्चधनुःशतान्युच्चैस्त्वेन अपरस्तान्येव द्वाभ्यां त्रिभिर्वा धनुर्भिर्न्यूनानि ते च द्वे त्रीणि वा धनूंषि पञ्चाना धनुःशतानां सङ्ख्येयभागे वर्त्तन्ते ततः सोऽपरस्य परिपूर्णपञ्चधनुःशतप्रमाणस्यापेक्षया सङ्ख्येयभागहीनः, इतरस्तु परिपूर्णपञ्चधनुःशतप्रमाणस्तदपेक्षया सङ्ख्येयभागाभ्यधिकः, तथा एकः पञ्चविंशं धनुःशतमुच्चैस्त्वेनापरः परिपूर्णानि पञ्चधनुःशतानि, पञ्चविंशं च धनुःशतं चतुर्भिर्गुणितं पञ्च धनुःशतानि भवन्ति ततः पञ्चविंशत्यधिकधनुःशतप्रमाणोच्चैस्त्वेऽप्यपरस्य परिपूर्णपञ्चधनुःशतप्रमाणस्यापेक्षया सङ्ख्येयगुणहीनो भवति तदपेक्षया त्वितरः परिपूर्णपञ्चधनुःशतप्रमाणः सङ्ख्येयगुणाभ्यधिकः, तथा एकोऽपर्याप्तावस्थायामङ्गुलस्यासङ्ख्येयभागावगाहे वर्त्तते अन्यस्तु पञ्चधनुःशतान्युच्चैस्त्वेन, अङ्गुलासङ्ख्येयभागश्चासङ्ख्येयेन गुणितः सन् पञ्चधनुःशतप्रमाणो भवति, ततोऽपर्याप्तावस्थायामङ्गुलासङ्ख्येयभागप्रमाणेऽवगाहे वर्त्तमानः परिपूर्णपञ्चधनुःशतप्रमाणापेक्षया असङ्ख्येयगुणहीनः, पञ्चधनुःशतप्रमाणस्तु तदपेक्षयाऽसङ्ख्येयगुणाभ्यधिकः । 'ठिईए सिय हीणे' इत्यादि, यथाऽवगाहनया हानौ वृद्धौ च चतुःस्थानपतित उक्तस्तथा स्थित्याऽपि वक्तव्य इति भावः, एतदेवाह—'जइ हीणे' इत्यादि, तत्रैकस्य किल नारकस्य त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाणि स्थितिः अपरस्य तु तान्येव समयादिन्यूनानि, तत्र यः समयादिन्यूनत्रयस्त्रिंशत्सागरोपमप्रमाणस्थितिकः स परिपूर्णत्रयस्त्रिंशत्सागरोपमस्थितिकनारकापेक्षयाऽसङ्ख्येयभागहीनः परिपूर्णत्रयस्त्रिंशत्सागरोपमस्थितिकस्तु तदपेक्षयाऽसङ्ख्येयभागाभ्यधिकः, समयादेः सागरोपमापेक्षयाऽसङ्ख्येयभागमात्रत्वात्, तथाहि—असङ्ख्येयैः समयैरेकाऽऽवलिका सङ्खा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [१०४]

दीप अनुक्रम [३०८]

ताभिरावलिकाभिरेक उच्छ्वासनिःश्वासकालः सप्तभिरुच्छ्वासनिःश्वासैरेकः स्तोकः सप्तभिः स्तोकैरेको लवः सप्तसप्तत्या लवानामेको मुहूर्त्तः त्रिंशता मुहूर्त्तैरहोरात्रः पञ्चदशभिरहोरात्रैः पक्षः द्वाभ्यां पक्षाभ्या मासः द्वादशभिर्मासैः संवत्सरः असङ्ख्येयैः संवत्सरैः पल्योपमसागरोपमाणि, समयाऽऽवलिकोच्छ्वासमुहूर्त्तदिवसाहोरात्रपक्षमाससंवत्सरयुगैः हीनः परिपूर्णस्थितिकनारकापेक्षयाऽसङ्ख्येयभागहीनो भवति तदपेक्षया त्वितरोऽसङ्ख्येयभागाभ्यधिकः, तथा एकस्य त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाणि स्थितिः परस्य तान्येव पल्योपमैर्न्यूनानि, दशभिश्च पल्योपमकोटीकोटीभिरेकं सागरोपमं निष्पद्यते, ततः पल्योपमैर्न्यूनस्थितिकः परिपूर्णस्थितिकनारकापेक्षया सङ्ख्येयभागहीनः परिपूर्णस्थितिकस्तु तदपेक्षया सङ्ख्येयभागाभ्यधिकः, तथैकस्य सागरोपममेकं स्थितिः अपरस्य परिपूर्णानि त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाणि, तत्रैकसागरोपमस्थितिकः परिपूर्णस्थितिकनारकापेक्षया सङ्ख्येयगुणहीनः, एकस्य सागरोपमस्य त्रयस्त्रिंशता गुणने परिपूर्णस्थितिकत्वप्राप्तेः, परिपूर्णस्थितिकस्तु तदपेक्षया सङ्ख्येयगुणाभ्यधिकः, तथैकस्य दश वर्षसहस्राणि स्थितिः अपरस्य त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाणि, दश वर्षसहस्राण्यसङ्ख्येयरूपेण गुणकारेण गुणितानि त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाणि भवन्ति, ततो दशवर्षसहस्रस्थितिकः त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमस्थितिकनारकापेक्षयाऽसङ्ख्येयगुणहीनः तदपेक्षया तु त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमस्थितिकोऽसङ्ख्येयगुणाभ्यधिक इति, तदेवमेकस्य नारकस्यापरनारकापेक्षया द्रव्यतो द्रव्यार्थतया प्रदेशार्थतया च तुल्यत्वमुक्तं क्षेत्रतोऽवगाहनं प्रति हीनाधिकत्वेन चतुःस्थानपतितत्वं कालतोऽपि स्थितितो हीनाधिकत्वेन

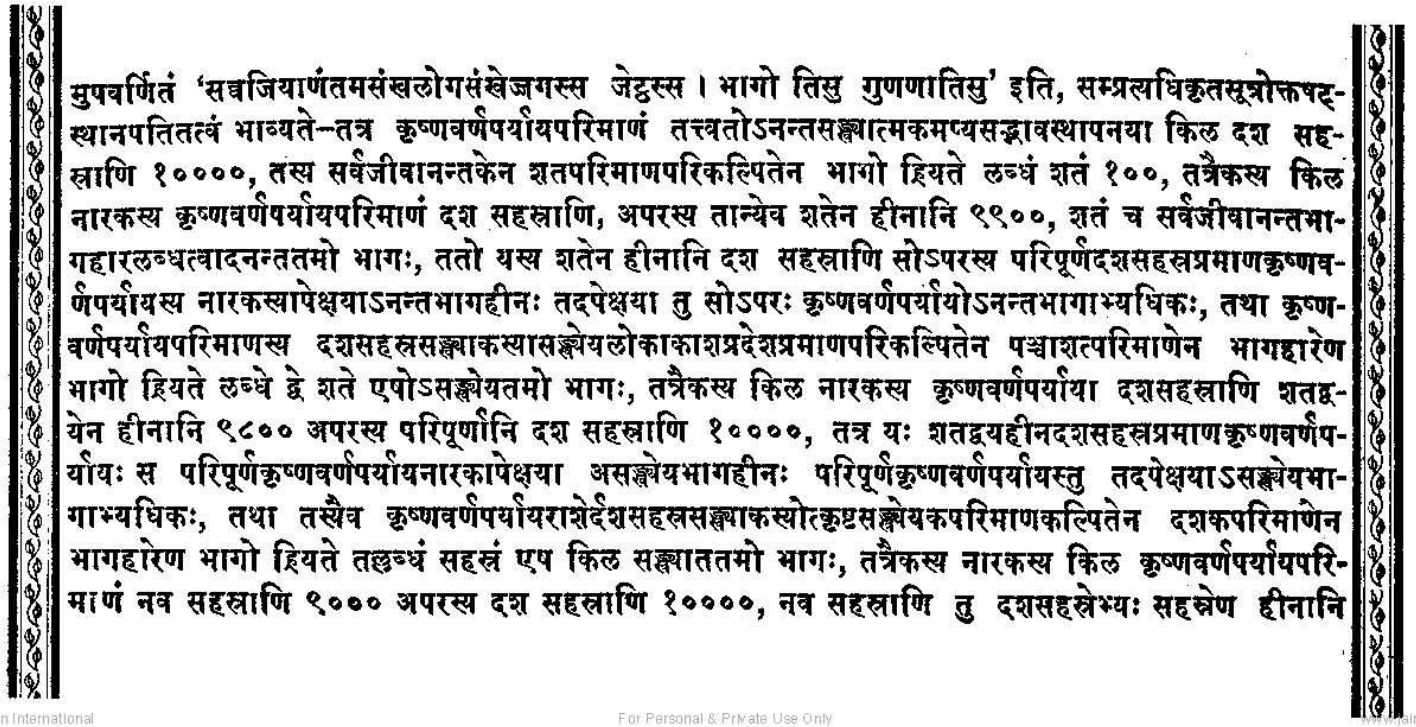
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चतुःस्थानपतितत्वं, इदानीं भावाश्रयं हीनाधिकत्वं प्रतिपाद्यते—यतः सकलमेव जीवद्रव्यमजीवद्रव्यं वा परस्परतो द्रव्यक्षेत्रकालभावैर्विभज्यते यथा घटः, तथाहि—द्रव्यत एको मार्त्तिकः अपरः काञ्चनो राजतादिर्वा क्षेत्रत एक इहस्थः अपरः पाटलिपुत्रकः कालत एकोऽद्यतनः अन्यस्त्वैषमः परुत्तनो वा भावत एकः श्यामः अपरस्तु रक्तादिः एवमन्यदपि । तत्र प्रथमतः पुद्गलविपाकिनामकर्मोदयनिमित्तं जीवौदयिकभावाश्रयेण हीनाधिकत्वमाह—'कालवन्नपज्जवेहिं सिय हीणे सिय तुल्ले सिय अब्भहिए' अस्याक्षरघटना पूर्ववत्, तत्र यथा हीनत्वमभ्यधिकत्वं च तथा प्रतिपादयति–'जइ हीणे' इत्यादि, इह भावापेक्षया हीनत्वाभ्यधिकत्वचिन्तायां हानौ वृद्धौ च प्रत्येकं षट्स्थानपतितत्वमवाप्यते, षट्स्थानके च यद्यदपेक्षयाऽनन्तभागहीनं तस्य सर्वजीवानन्तकेन भागे हृते यल्लभ्यते तेनानन्ततमेन भागेन हीनं, यच्च यदपेक्षयाऽसङ्ख्येयभागहीनं तस्यापेक्षणीयस्यासङ्ख्येयलोकाकाशप्रदेशप्रमाणेन राशिना भागे हृते यल्लभ्यते तावता भागेन न्यूनं, यच्च यदधिकृत्य सङ्ख्येयभागहीनं तस्यापेक्षणीयस्योत्कृष्टसङ्ख्येयकेन भागे हृते यल्लभ्यते तावता हीनं, गुणनसङ्ख्यायां तु यद्यतः सङ्ख्येयगुणं तदवधिभूतमुत्कृष्टेन सङ्ख्येयकेन गुणितं सद्यावद् भवति तावत्प्रमाणमवसातव्यं, यच्च यतोऽसङ्ख्येयगुणं तदवधिभूतमसङ्ख्येयलोकाकाशप्रदेशप्रमाणेन गुणकारेण गुण्यते गुणितं सद्यावद्भवति तावदवसेयं, यच्च यस्मादनन्तगुणं तदवधिभूतं सर्वजीवानन्तकरूपेण गुणकारेण गुण्यते गुणितं सद्यावद्भवति तावत्प्रमाणं द्रष्टव्यं, तथा चैतदेव कर्मप्रकृतिसङ्ग्रहिण्यां षट्स्थानकप्ररूपणाऽवसरे भागहारगुणकारस्वरूप-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [१०४]

दीप अनुक्रम [३०८]



मुपवर्णितं 'सव्वजियाणंतमसंखलोगसंखेज्जगस्स जेट्ठस्स । भागो तिसु गुणणातिसु' इति, सम्प्रत्यधिकृतसूत्रोक्तषट्-स्थानपतितत्वं भाव्यते–तत्र कृष्णवर्णपर्यायपरिमाणं तत्त्वतोऽनन्तसङ्ख्यात्मकमप्यसद्भावस्थापनया किल दश सह-स्राणि १००००, तस्य सर्वजीवानन्तकेन शतपरिमाणपरिकल्पितेन भागो ह्रियते लब्धं शतं १००, तत्रैकस्य किल नारकस्य कृष्णवर्णपर्यायपरिमाणं दश सहस्राणि, अपरस्य तान्येव शतेन हीनानि ९९००, शतं च सर्वजीवानन्तभा-गहारलब्धत्वादनन्ततमो भागः, ततो यस्य शतेन हीनानि दश सहस्राणि सोऽपरस्य परिपूर्णदशसहस्रप्रमाणकृष्णव-र्णपर्यायस्य नारकस्यापेक्षयाऽनन्तभागहीनः तदपेक्षया तु सोऽपरः कृष्णवर्णपर्यायोऽनन्तभागाभ्यधिकः, तथा कृष्ण-वर्णपर्यायपरिमाणस्य दशसहस्रसङ्ख्याकस्यासङ्ख्येयलोकाकाशप्रदेशप्रमाणपरिकल्पितेन पञ्चाशत्परिमाणेन भागहारेण भागो ह्रियते लब्धे द्वे शते एषोऽसङ्ख्येयतमो भागः, तत्रैकस्य किल नारकस्य कृष्णवर्णपर्याया दशसहस्राणि शतद्व-येन हीनानि ९८०० अपरस्य परिपूर्णानि दश सहस्राणि १००००, तत्र यः शतद्वयहीनदशसहस्रप्रमाणकृष्णवर्णप-र्यायः स परिपूर्णकृष्णवर्णपर्यायनारकापेक्षया असङ्ख्येयभागहीनः परिपूर्णकृष्णवर्णपर्यायस्तु तदपेक्षयाऽसङ्ख्येयभा-गाभ्यधिकः, तथा तस्यैव कृष्णवर्णपर्यायराशेर्दशसहस्रसङ्ख्याकस्योत्कृष्टसङ्ख्येयकपरिमाणकल्पितेन दशकपरिमाणेन भागहारेण भागो ह्रियते तल्लब्धं सहस्रं एष किल सङ्ख्याततमो भागः, तत्रैकस्य नारकस्य किल कृष्णवर्णपर्यायपरि-माणं नव सहस्राणि ९००० अपरस्य दश सहस्राणि १००००, नव सहस्राणि तु दशसहस्रेभ्यः सहस्रेण हीनानि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सहस्रं च सङ्ख्येयतमो भाग इति नवसहस्रप्रमाणकृष्णवर्णपर्यायः परिपूर्णकृष्णवर्णपर्यायनारकापेक्षया सङ्ख्येयभागहीनः तदपेक्षया त्वितरः सङ्ख्येयभागाधिकः, तथैकस्य नारकस्य किल कृष्णवर्णपर्यायपरिमाणं सहस्रं अपरस्य दश सहस्राणि, तत्र सहस्रं दशकेनोत्कृष्टसङ्ख्यातककल्पेन गुणितं दशसहस्रसङ्ख्याकं भवति इति सहस्रसङ्ख्यकृष्णवर्णपर्यायो नारको दशसहस्रसङ्ख्याककृष्णवर्णपर्यायनारकापेक्षया सङ्ख्येयगुणहीनः तदपेक्षया परिपूर्णकृष्णवर्णपर्यायः सङ्ख्येयगुणाभ्यधिकः, तथैकस्य किल नारकस्य कृष्णवर्णपर्यायाग्रं द्वे शते परस्य परिपूर्णानि दश सहस्राणि, द्वे च शते असङ्ख्येयलोकाकाशप्रदेशपरिमाणप्रकल्पितेन पञ्चाशत्परिमाणेन गुणकारेण गुणिते दश सहस्राणि जायन्ते, ततो द्विशतपरिमाणकृष्णवर्णपर्यायो नारकः परिपूर्णकृष्णवर्णपर्यायनारकापेक्षयाऽसङ्ख्येयगुणहीनः तदपेक्षया त्वितरोऽसङ्ख्येयगुणाभ्यधिकः, तथैकस्य किल नारकस्य कृष्णवर्णपर्यायपरिमाणं शतमपरस्य दश सहस्राणि शते च सर्वजीवानन्तपरिमाणपरिकल्पितेन (शत) गुणकारेण गुणिते जायन्ते दश सहस्राणि, ततः शतपरिमाणकृष्णवर्णपर्यायो नारकः परिपूर्णकृष्णवर्णपर्यायनारकापेक्षया अनन्तगुणहीनः इतरस्तु तदपेक्षयाऽनन्तगुणाभ्यधिकः, यथा कृष्णवर्णपर्यायानधिकृत्य हानौ वृद्धौ च षट्स्थानपतितत्वमुक्तमेवं शेषवर्णगन्धरसस्पर्शैरपि प्रत्येकं षट्स्थानपतितत्वं भावनीयं, । तदेवं पुद्गलविपाकिनामकर्मोदयजनितजीवौदयिकभावाश्रयेण षट्स्थानपतितत्वमुपदर्शितं, इदानीं जीवविपाकिज्ञानावरणीयादिकर्मक्षयोपशमभावाश्रयेण तदुपदर्शयति—'आभिणिबोहियणाणपज्जवेहिं' इत्यादि, पूर्ववत् प्रत्येकमाभिनिबोधि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कादिषु षट्स्थानपतितत्वं भावनीयं, इह द्रव्यतस्तुल्यत्वं वदता संमूर्च्छिमसर्वप्रभेदनिर्भेदबीजं मयूराण्डकरसवदनभिव्यक्तदेशकालक्रमं प्रत्यवबद्धविशेषभेदपरिणतेर्योग्यं द्रव्यमित्यावेदितं, अवगाहनया चतुःस्थानपतितत्वमभिवदता क्षेत्रतः सङ्कोचविकोचधर्म्मा आत्मा न तु द्रव्यप्रदेशसङ्ख्याया इति दर्शितं, उक्तं चैतदन्यत्रापि—"विकसनसङ्कोचनयोर्नस्तो द्रव्यप्रदेशसङ्ख्यायाः । वृद्धिह्रासौ स्तः क्षेत्रतस्तु तावात्मनस्तस्मात् ॥ १ ॥" स्थित्या चतुःस्थानपतितत्वं वदताऽऽयुःकर्मस्थितिनिर्वर्त्तकानामध्यवसायस्थानानामुत्कर्षापकर्षवृत्तिरुपदर्शिता, अन्यथा स्थित्या चतुःस्थानपतितत्वायोगात्, आयुःकर्म चोपलक्षणं तेन सर्वकर्मस्थितिनिर्वर्त्तकेष्वप्यध्यवसायेषूत्कर्षापकर्षवृत्तिरवसातव्या, कृष्णादिपर्यायैः षट्स्थानपतितत्वमुपदर्शयता एकस्यापि नारकस्य पर्याया अनन्ताः किं पुनः सर्वेषां नारकाणामिति दर्शितं, अथ नारकाणां पर्यायानन्त्यं पृष्टेन भगवता तदेव पर्यायानन्त्यं वक्तव्यं न त्वन्यत् ततः किमर्थं द्रव्यक्षेत्रकालभावाभिधानमिति ?, तदयुक्तं, अभिप्रायापरिज्ञानात्, इह न सर्वेषां सर्वे स्वपर्यायाः समसङ्ख्याः किं तु षट्स्थानपतिताः, एतच्चानन्तरमेव दर्शितं, तच्च षट्स्थानपतितत्वं परिणामित्वमन्तरेण न भवति, तच्च परिणामित्वं यथोक्तलक्षणस्य द्रव्यस्येति द्रव्यतस्तुल्यत्वमभिहितं, तथा न कृष्णादिपर्यायैरेव पर्यायवान् जीवः किं तु तत्तत्क्षेत्रसङ्कोचविकोचधर्मतयाऽपि तथा तत्तदध्यवसायस्थानयुक्ततयाऽपीति ख्यापनार्थं क्षेत्रकालाभ्यां चतुःस्थानपतितत्वमुक्तमिति कृतं प्रसङ्गेन । तदेवमवसितं नैरयिकाणां पर्यायानन्त्यं, इदानीमसुरकुमारेषु पर्यायाग्रं पिपृच्छिषुराह—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [१०५--११०]

दीप अनुक्रम [३०९--३१४]

असुरकुमाराणं भंते ! केवइया पज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ–असुरकुमाराणं अणंता पज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा ! असुरकुमारे असुरकुमारस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए तुल्ले ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए ठिईए चउट्ठाणवडिए कालवन्नपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए एवं नीलवन्नपज्जवेहिं लोहियवन्नपज्जवेहिं हालिद्दवन्नपज्जवेहिं सुकिल्लवन्नपज्जवेहिं सुब्भिगंधपज्जवेहिं दुब्भिगंधपज्जवेहिं तित्तरसपज्जवेहिं कडुयरसपज्जवेहिं कसायरसपज्जवेहिं अंबिलरसपज्जवेहिं महुररसपज्जवेहिं कक्खडफासपज्जवेहिं मउयफासपज्जवेहिं गरुयफासपज्जवेहिं लहुयफासपज्जवेहिं सीयफासपज्जवेहिं उसिणफासपज्जवेहिं निद्धफासपज्जवेहिं लुक्खफासपज्जवेहिं आभिणिबोहियणाणपज्जवेहिं सुयनाणपज्जवेहिं ओहिनाणपज्जवेहिं मइअन्नाणपज्जवेहिं सुयअन्नाणपज्जवेहिं विभंगनाणपज्जवेहिं चक्खुदंसणपज्जवेहिं अचक्खुदंसणपज्जवेहिं ओहिदंसणपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए, से एएणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ–असुरकुमाराणं अणंता पज्जवा पन्नत्ता एवं जहा नेरइया, जहा असुरकुमारा तहा नागकुमारावि जाव थणियकुमारा (सू०१०५) ॥ पुढविकाइयाणं भंते ! केवइया पज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ पुढविकाइयाणं अणंता पज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा ! पुढविकाइए पुढविकाइयस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए तुल्ले ओगाहणट्ठयाए सिय हीणे सिय तुल्ले सिय अब्भहिए, जइ हीणे असंखिज्जइभागहीणे वा संखिज्जइभागहीणे वा संखिज्जइगुणहीणे वा असंखिज्जइगुणहीणे वा, अह अब्भहिए असंखिज्जइभागअब्भहिए वा संखिज्जइभागअब्भहिए वा संखिज्जगुणअब्भहिए वा असंखिज्जगुणअब्भहिए वा, ठिईए तिट्ठाणवडिए सिय हीणे सिय तुल्ले सिय अब्भहिए, जइ हीणे असंखिज्जभागहीणे वा संखिज्जभागहीणे वा संखिज्जगुणहीणे वा अह

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

असुरकुमार-आदीनाम् पर्याय:

प्रत सूत्रांक [१०५--११०]

दीप अनुक्रम [३०९--३१४]

अब्भहिए असंखिज्जइभागअब्भहिए वा संखिज्जइभागअब्भहिए वा संखिज्जगुणअब्भहिए वा वन्नेहिं गंधेहिं रसेहिं फासेहिं मइअन्नाणपज्जवेहिं सुयअन्नाणपज्जवेहिं अचक्खुदंसणपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए ॥ आउकाइयाणं भंते ! केवइया पज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ आउकाइयाणं अणंता पज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा ! आउकाइए आउकाइयस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए तुल्ले ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए ठिईए तिट्ठाणवडिए वन्नगंधरसफासमइअन्नाणसुअअन्नाणअचक्खुदंसणपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए ॥ तेउकाइयाणं पुच्छा गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—तेउकाइयाणं अणंता पज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा ! तेउकाइए तेउकाइयस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए तुल्ले ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए, ठिईए तिट्ठाणवडिए, वन्नगंधरसफासमइअन्नाणसुयअन्नाणअचक्खुदंसणपज्जवेहि य छट्ठाणवडिए ॥ वाउकाइयाणं पुच्छा गोयमा ! वाउकाइयाणं अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—वाउकाइयाणं अणंता पज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा ! वाउकाइए वाउकाइयस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए तुल्ले ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए ठिईए तिट्ठाणवडिए वन्नगंधरसफासमइअन्नाणसुयअन्नाणअचक्खुदंसणपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए ॥ वणस्सइकाइयाणं पुच्छा गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—वणस्सइकाइयाणं अणंता पज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा ! वणस्सइकाइए वणस्सइकाइयस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए तुल्ले ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए ठिईए तिट्ठाणवडिए वन्नगंधरसफासमइअन्नाणसुयअन्नाणअचक्खुदंसणपज्जवेहि य छट्ठाणवडिए, से एएणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ—वणस्सइकाइयाणं अणंता पज्जवा पन्नत्ता ॥ (सू० १०६) बेइंदियाणं पुच्छा गोयमा ! अणंता पज्जवा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुचइ–बेइंदियाणं अणंता पज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा ! बेइंदिए बेइंदियस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए तुल्ले ओगाहणट्ठयाए सिय हीणे सिय तुल्ले सिय अब्भहिए, जइ हीणे असंखिज्जइभागहीणे वा संखिज्जइभागहीणे वा संखिज्जइगुणहीणे वा असंखिज्जइगुणहीणे वा, अह अब्भहिए असंखिज्जभागअब्भहिए वा संखिज्जइभागअब्भहिए वा संखिज्जगुणमब्भहिए वा असंखिज्जइगुणमब्भहिए वा, ठिईए तिट्ठाणवडिए, वन्नगंधरसफासआभिणिबोहियनाणसुयनाणमइअन्नाणसुयअन्नाणअचक्खुदंसणपज्जवेहि य छट्ठाणवडिए, एवं तेइंदियावि, एवं चउरिंदियावि नवरं दो दंसणा चक्खुदंसणं अचक्खुदंसणं (सू० १०७) पंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं पज्जवा जहा नेरइयाणं तहा भाणियव्वा (सू० १०८) मणुस्साणं भंते ! केवइया पज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुचइ–मणुस्साणं अणंता पज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा ! मणूसे मणूसस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए तुल्ले ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए ठिईए चउट्ठाणवडिए वन्नगंधरसफासआभिणिबोहियनाणसुयनाणओहिनाणमणपज्जवनाणकेवलनाणपज्जवेहिं तुल्ले तिहिं दंसणेहिं छट्ठाणवडिए केवलदंसणपज्जवेहिं तुल्ले (सू० १०९) वाणमंतरा ओगाहणट्ठयाए ठिईए चउट्ठाणवडिया वण्णाईहिं छट्ठाणवडिया जोइसिया वेमाणियावि एवं चेव नवरं ठिईए तिट्ठाणवडिया (सू० ११०)

'असुरकुमाराणं भंते ! केवइया पज्जवा पन्नत्ता ?' इत्यादि, उक्त एवार्थः प्रायः सर्वेष्वप्यसुरकुमारादिषु, ततः सकलमपि चतुर्विंशतिदण्डकसूत्रं प्राग्वद् भावनीयं, यस्तु विशेषः स उपदर्श्यते, तत्र यत्पृथिवीकायिकादीनामबगा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हनाया अङ्गुलासङ्ख्येयभागप्रमाणाया अपि चतुःस्थानपतितत्वं तदङ्गुलासङ्ख्येयभागप्रमाणस्यासङ्ख्येयभेदभिन्नत्वादवसेयं, स्थित्या हीनत्वमभ्यधिकत्वं च त्रिस्थानपतितं न चतुःस्थानपतितं, असङ्ख्येयगुणवृद्धिहान्योरसंभवात्, कथं तयोरसंभव इति चेत्, उच्यते, इह पृथिव्यादीनां सर्वजघन्यमायुः क्षुल्लकभवग्रहणं, क्षुल्लकभवग्रहणस्य च परिमाणमावलिकानां द्वे शते षट्पञ्चाशदधिके, मुहूर्त्ते च द्विघटिकाप्रमाणे सर्वसङ्ख्यया क्षुल्लकभवग्रहणानां पञ्चषष्टिः सहस्राणि पञ्च शतानि षट्त्रिंशदधिकानि ६५५३६, उक्तं च—"दोन्नि सयाइं नियमा छप्पन्नाइं पमाणओ हुंति। आवलियपमाणेण खुड्डागभवग्गहणमेयं ॥ १ ॥ पन्नट्ठिसहस्साइं पंचेव सयाइं तह य छत्तीसा। खुड्डागभवग्गहणं भवंति एते मुहुत्तेणं ॥ २ ॥" पृथिव्यादीनां च स्थितिरुत्कर्षतोऽपि सङ्ख्येयवर्षप्रमाणा ततो नासङ्ख्येयगुणवृद्धिहान्योः संभवः, शेषवृद्धिहानित्रिकभावना त्वेवं—एकस्य किल पृथिवीकायस्य स्थितिः परिपूर्णानि द्वाविंशतिवर्षसहस्राणि अपरस्य तान्येव समयन्यूनानि ततः समयन्यूनद्वाविंशतिवर्षसहस्रस्थितिकः परिपूर्णद्वाविंशतिवर्षसहस्रस्थितिकापेक्षयाऽसङ्ख्येयभागहीनः तदपेक्षया त्वितरोऽसङ्ख्येयभागाधिकः, तथैकस्य परिपूर्णानि द्वाविंशतिवर्षसहस्राणि स्थितिरपरस्य तान्येवान्तर्मुहूर्त्तादिनोनानि, अन्तर्मुहूर्त्तादिकं(च) द्वाविंशतिवर्षसहस्राणां सङ्ख्येयतमो भागः, ततोऽन्तर्मुहूर्त्तादिन्यूनद्वाविंशतिवर्षसहस्रस्थितिकः परिपूर्णद्वाविंशतिवर्षसहस्रस्थितिकापेक्षया सङ्ख्येयभागहीनः तदपेक्षया परिपूर्णद्वाविंशतिवर्षसहस्रस्थितिकः सङ्ख्येयभागाभ्यधिकः, तथैकस्य द्वाविंशतिवर्षसहस्राणि स्थितिरपरस्यान्तर्मुहूर्त्तं मासो वर्षं वर्षसहस्रं वा,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [१०५--११०]

दीप अनुक्रम [३०९--३१४]

अन्तर्मुहूर्त्तादिकं(च)नियतपरिमाणया सङ्ख्यया गुणितं द्वाविंशतिवर्षसहस्रप्रमाणं भवति तेनान्तर्मुहूर्त्तादिप्रमाणस्थितिकः परिपूर्णद्वाविंशतिवर्षसहस्रस्थितिकापेक्षया सङ्ख्येयगुणहीनः तदपेक्षया तु परिपूर्णद्वाविंशतिवर्षसहस्रस्थितिकः सङ्ख्येयगुणाभ्यधिकः, एवमप्कायिकादीनामपि चतुरिन्द्रियपर्यन्तानां स्वस्वोत्कृष्टस्थित्यनुसारेण स्थित्या त्रिस्थानपतितत्वं भावनीयं । तिर्यक्पञ्चेन्द्रियाणां मनुष्याणां च चतुःस्थानपतितत्वं, तेषां द्युत्कर्षतस्त्रीणि पल्योपमानि स्थितिः, पल्योपमं चासङ्ख्येयवर्षसहस्रप्रमाणमतोऽसङ्ख्येयगुणवृद्धिहान्योरपि संभवादुपपद्यते चतुःस्थानपतितत्वं, एवं व्यन्तराणामपि, तेषां जघन्यतो दशवर्षसहस्रस्थितिकत्वादुत्कर्षतः पल्योपमस्थितिः (तेः), ज्योतिष्कवैमानिकानां पुनस्थित्या त्रिस्थानपतितत्वं, यतो ज्योतिष्काणां जघन्यमायुः पल्योपमाष्टभागः उत्कृष्टं वर्षलक्षाधिकं पल्योपमं, वैमानिकानां जघन्यं पल्योपमं उत्कृष्टं त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाणि, दशकोटीकोटीसङ्ख्येयपल्योपमप्रमाणं च सागरोपममतस्तेषामप्यसङ्ख्येयगुणवृद्धिहान्यसंभवात् स्थितितस्त्रिस्थानपतिता, शेषसूत्रभावना तु सुगमत्वात् स्वयं भावनीया ॥ तदेवं सामान्यतो नैरयिकादीनां प्रत्येकं पर्यायानन्त्यं प्रतिपादितं, इदानीं जघन्यादवगाहनाद्यधिकृत्य तेषामेव प्रत्येकं पर्यायाग्रं प्रतिपिपादयिषुराह—

जहन्नोगाहणगाणं भंते ! नेरइयाणं केवइया पज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ ?, गोयमा ! जहन्नोगाहणए नेरइए जहन्नोगाहणस्स नेरइयस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए तुल्ले ओगाहणट्ठयाए तुल्ले

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नैरयिकाणां पर्यायाः

प्रत सूत्रांक [१११]

दीप अनुक्रम [३१५]

ठिईए चउट्ठाणवडिए वन्नगंधरसफासपज्जवेहिं तिहिं नाणेहिं तिहिं अन्नाणेहिं तिहिं दंसणेहिं छट्ठाणवडिए, उक्कोसोगाहणगाणं भंते ! नेरइयाणं केवइया पज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ उक्कोसोगाहणयाणं नेरइयाणं अणंता पज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा ! उक्कोसोगाहणए नेरइए उक्कोसोगाहणस्स नेरइयस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए तुल्ले ओगाहणट्ठयाए तुल्ले, ठिईए सिय हीणे सिय तुल्ले सिय अब्भहिए, जइ हीणे असंखिज्जभागहीणे वा संखिज्जभागहीणे वा अह अब्भहिए असंखिज्जभागअब्भहिए वा संखिज्जभागअब्भहिए वा, वन्नगंधरसफासपज्जवेहिं तिहिं नाणेहिं तिहिं अन्नाणेहिं तिहिं दंसणेहिं छट्ठाणवडिए, अजहन्नमणुक्कोसोगाहणाणं नेरइयाणं केवइया पज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा !, अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ अजहन्नमणुक्कोसोगाहणाणं अणंता पज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा ! अजहन्नमणुक्कोसोगाहणए नेरइए अजहन्नमणुक्कोसोगाहणस्स नेरइयस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए तुल्ले ओगाहणट्ठयाए सिय हीणे सिय तुल्ले सिय अब्भहिए जइ हीणे असंखिज्जभागहीणे वा संखिज्जभागहीणे वा संखिज्जगुणहीणे वा असंखिज्जगुणहीणे वा अह अब्भहिए असंखिज्जभागअब्भहिए वा संखिज्जभागअब्भहिए वा संखिज्जगुणअब्भहिए वा असंखिज्जगुणअब्भहिए वा, ठिईए सिय हीणे सिय तुल्ले सिय अब्भहिए, जइ हीणे असंखिज्जभागहीणे वा संखिज्जभागहीणे वा संखिज्जगुणहीणे वा असंखिज्जगुणहीणे वा अह अब्भहिए असंखिज्जभागअब्भहिए वा संखिज्जभागअब्भहिए वा संखिज्जगुणअब्भहिए वा असंखिज्जगुणअब्भहिए वा, वन्नगंधरसफासपज्जवेहिं तिहिं नाणेहिं तिहिं अन्नाणेहिं तिहिं दंसणेहिं छट्ठाणवडिए, से एएणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ अजहन्नमणुक्कोसोगाहणाणं नेरइयाणं अणंता पज्जवा पन्नत्ता। जहन्नठिइयाणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भंते! नेरइयाणं केवइया पज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ जहन्नठिइयाणं नेरइयाणं अणंता पज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा! जहन्नठिइए नेरइए जहन्नठिइयस्स नेरइयस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए तुल्ले ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए ठिईए तुल्ले वन्नगंधरसफासपज्जवेहिं तिहिं नाणेहिं तिहिं अन्नाणेहिं तिहिं दंसणेहिं छट्ठाणवडिए एवं उक्कोसठिइएवि, अजहन्नमणुक्कोसठिइएवि, नवरं सट्ठाणे चउट्ठाणवडिए। जहन्नगुणकालगाणं भंते! नेरइयाणं केवइया पज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ—जहन्नगुणकालगाणं नेरइयाणं अणंता पज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा! जहन्नगुणकालए नेरइए जहन्नगुणकालगस्स नेरइयस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए तुल्ले ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए ठिईए चउट्ठाणवडिए कालवन्नपज्जवेहिं तुल्ले अवसेसेहिं वन्नगंधरसफासपज्जवेहिं तिहिं नाणेहिं तिहिं अन्नाणेहिं तिहिं दंसणेहिं छट्ठाणवडिए, से एएणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ जहन्नगुणकालगाणं नेरइयाणं अणंता पज्जवा पन्नत्ता, एवं उक्कोसगुणकालएवि, अजहन्नमणुक्कोसगुणकालएवि एवं चेव, नवरं कालवन्नपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए, एवं अवसेसा चत्तारि वन्ना दो गंधा पंच रसा अट्ठ फासा भाणियव्वा। जहन्नाभिणिबोहियनाणीणं भंते! नेरइयाणं केवइया पज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा! जहन्नाभिणिबोहियनाणीणं नेरइयाणं अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ जहन्नाभिणिबोहियनाणीणं नेरइयाणं अणंता पज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा! जहन्नाभिणिबोहियनाणी नेरइए जहन्नाभिणिबोहियस्स नाणिस्स नेरइयस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए तुल्ले ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए ठिईए चउट्ठाणवडिए वन्नगंधरसफासपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए आभिणिबोहियनाणपज्जवेहिं तुल्ले सुयनाण० ओहिनाणपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए तिहिं दंसणेहिं छट्ठा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [१११]

दीप अनुक्रम [३१५]

णवडिए, एवं उक्कोसाभिणिबोहियनाणीवि, अजहन्नमणुक्कोसाभिणिबोहियणाणीवि एवं चेव, णवरं आभिणिबोहियनाणपज्जवेहिं सट्ठाणे छट्ठाणवडिए, एवं सुयनाणी ओहिनाणीवि, नवरं जस्स नाणा तस्स अन्नाणा नत्थि, जहा नाणा तहा अन्नाणावि भाणियव्वा, नवरं जस्स अन्नाणा तस्स नाणा न भवंति। जहन्नचक्खुदंसणीणं भंते! नेरइयाणं केवइया पज्जवा पन्नत्ता?, गोयमा! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ जहन्नचक्खुदंसणीणं नेरइयाणं अणंता पज्जवा पन्नत्ता?, गोयमा! जहन्नचक्खुदंसणीणं नेरइए जहन्नचक्खुदंसणिस्स नेरइयस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए तुल्ले ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए ठिईए चउट्ठाणवडिए वन्नगंधरसफासपज्जवेहिं तिहिं नाणेहिं तिहिं अन्नाणेहिं छट्ठाणवडिए चक्खुदंसणपज्जवेहिं तुल्ले अचक्खुदंसणपज्जवेहिं ओहिदंसणपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए, एवं उक्कोसचक्खुदंसणीवि, अजहन्नमणुक्कोसचक्खुदंसणीवि एवं चेव, नवरं सट्ठाणे छट्ठाणवडिए, एवं अचक्खुदंसणीवि ओहिदंसणीवि। (सूत्रं १११)

'जहन्नोगाहणाणं भंते!' इत्यादि, सुगमं नवरं 'ठिईए चउट्ठाणवडिए' इति जघन्यावगाहनो हि दशवर्षसहस्राणिस्थितिकोऽपि भवति रत्नप्रभायां उत्कृष्टस्थितिकोऽपि सप्तमनरकपृथिव्यां, तत उपपद्यते स्थित्या चतुःस्थानपतितता, 'तिहिं नाणेहिं तिहिं अन्नाणेहिं'ति इह यदा गर्भव्युत्क्रान्तिकसञ्ज्ञिपञ्चेन्द्रियो नरकेषूपपद्यते तदा स नारकायुःसंवेदनप्रथमसमय एव पूर्वगृहीतौदारिकशरीरपरिशाटं करोति तस्मिन्नेव समये सम्यग्दृष्टेस्त्रीणि ज्ञानानि मिथ्यादृष्टेस्त्रीण्यज्ञानानि समुत्पद्यन्ते, ततोऽविग्रहेण विग्रहेण वा गत्वा वैक्रियशरीरसंघातं करोति, यस्तु संमूर्च्छिमासञ्ज्ञिपञ्चेन्द्रियो

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नरकेषूत्पद्यते तस्य तदानीं विभङ्गज्ञानं नास्तीति जघन्यावगाहनस्यास्याज्ञानानि भजनया द्रष्टव्यानि द्वे त्रीणि वेति, उत्कृष्टावगाहनसूत्रे स्थित्या हानौ वृद्धौ च द्विस्थानपतितत्वं, तद्यथा–असङ्ख्येयभागहीनत्वं वा सङ्ख्येयभागहीनत्वं वा, तथा असङ्ख्येयभागाधिकत्वं वा सङ्ख्येयभागाधिकत्वं वा न तु सङ्ख्येयासङ्ख्येयगुणवृद्धिहानी, कस्मादिति चेत्, उच्यते, उत्कृष्टावगाहना हि नैरयिकाः पञ्चधनुःशतप्रमाणाः, ते च सप्तमनरकपृथिव्यां, तत्र जघन्या स्थितिः द्वाविंशतिः सागरोपमाणि उत्कृष्टा त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाणि, ततोऽसङ्ख्येयसङ्ख्येयभागहानिवृद्धी एव घटेते न त्वसङ्ख्येयसङ्ख्येयगुणहानिवृद्धी, तेषां चोत्कृष्टावगाहनानां त्रीणि ज्ञानानि त्रीण्यज्ञानानि वा नियमाद्वेदितव्यानि, न भजनया, भजनाहेतोः संमूर्च्छिमासञ्ज्ञिपञ्चेन्द्रियोत्पादस्य तेषामसंभवात्, अजघन्योत्कृष्टावगाहनसूत्रे यदवगाहनया चतुःस्थानपतितत्वं तदेवं—अजघन्योत्कृष्टावगाहनो हि सर्वजघन्याङ्गुलासङ्ख्येयभागात्परतो मनाक् बृहत्तराङ्गुलासङ्ख्येयभागादारभ्य यावदङ्गुलासङ्ख्येयभागन्यूनानि पञ्चधनुःशतानि तावदवसेयः, ततः सामान्यनैरयिकसूत्रे इवात्राप्युपपद्यते अवगाहनातश्चतुःस्थानपतितता, स्थित्या चतुःस्थानपतितता सुप्रतीता, दशवर्षसहस्रेभ्य आरभ्योत्कर्षतस्त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाणामपि तस्यां लभ्यमानत्वात्, जघन्यस्थितिसूत्रे अवगाहनया चतुःस्थानपतितत्वं तस्यामवगाहनायां जघन्यतोऽङ्गुलासङ्ख्येयभागादारभ्योत्कर्षतः सप्तानां धनुषामवाप्यमानत्वात्, अत्रापि त्रीण्यज्ञानानि केषांचित्कादाचित्कतया द्रष्टव्यानि, संमूर्च्छिमासञ्ज्ञिपञ्चेन्द्रियेभ्य उत्पन्नानामपर्याप्तावस्थायां विभङ्गस्याभावात्, उत्कृष्टस्थितिचिन्तायामवगा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हनया चतुःस्थानपतितत्वमुत्कृष्टस्थितिकस्यावगाहनाया जघन्यतोऽङ्गुलासङ्ख्येयभागादारभ्योत्कर्षतः पञ्चानां धनुःशतानामवाप्यमानत्वात्, 'अजहन्नुकोसठिइएवि एवं चेव' इत्यादि, अजघन्योत्कृष्टस्थितावपि तथा वक्तव्यं यथा जघन्यस्थितिसूत्रे उत्कृष्टस्थितिसूत्रे च, नवरमयं विशेषः–जघन्यस्थितिसूत्रे उत्कृष्टस्थितिसूत्रे च स्थित्या तुल्यत्वमभिहितं अत्र तु 'स्वस्थानेऽपि' स्थितावपि चतुःस्थानपतित इति वक्तव्यं, समयाधिकदशवर्षसहस्रेभ्य आरभ्योत्कर्षतः समयोनत्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाणामवाप्यमानत्वात्, जघन्यगुणकालकादिसूत्राणि सुप्रतीतानि, नवरं 'जस्स नाणा तस्स अन्नाणा नत्थि'त्ति यस्य ज्ञानानि तस्याज्ञानानि न संभवन्तीति, यतः सम्यग्दृष्टेर्ज्ञानानि मिथ्यादृष्टेरज्ञानानि, सम्यग्दृष्टित्वं च मिथ्यादृष्टित्वोपमर्देन भवति मिथ्यादृष्टित्वमपि सम्यग्दृष्टित्वोपमर्देन भवति, ततो ज्ञानसद्भावेऽज्ञानाभावः एवमज्ञानसद्भावे ज्ञानाभावः, तत उक्तं–'जहा नाणा तहा अन्नाणावि भाणियव्वा, नवरं जस्स अन्नाणा तस्स नाणा न संभवन्ति' इति शेषं पाठसिद्धं ।

जहन्नोगाहगाणं भंते ! असुरकुमाराणं केवइया पज्जवा पन्नत्ता?, गोयमा! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ जहन्नोगाहगाणं असुरकुमाराणं अणंता पज्जवा पन्नत्ता!, गोयमा! जहन्नोगाहणए असुरकुमारे जहन्नोगाहणस्स असुरकुमारस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए तुल्ले ओगाहणट्ठयाए तुल्ले ठिईए चउट्ठाणवडिए वन्नाईहिं छट्ठाणवडिए आभिणिबोहियनाण० सुयनाण० ओहिनाणपज्जवेहिं तिहिं अन्नाणेहिं तिहिं दंसणेहि य छट्ठाणवडिए, एवं उक्कोसोगाहणएवि, एवं अजहन्नमणुक्कोसो-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

असुरकुमारादिनां पर्यायाः

गाहणएवि, नवरं उक्कोसोगाहणएवि असुरकुमारे ठिईए चउट्ठाणवडिए, एवं जाव थणियकुमारा। (सूत्रं ११२) जहन्नोगाहणाणं भंते ! पुढविकाइयाणं केवइया पज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ जहन्नोगाहणाणं पुढविकाइयाणं अणंता पज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नोगाहणए पुढविकाइए जहन्नोगाहणस्स पुढविकाइयस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए तुल्ले ओगाहणट्ठयाए तुल्ले ठिईए तिट्ठाणवडिए वन्नगंधरसफासपज्जवेहिं दोहिं अन्नाणेहिं अचक्खुदंसणपज्जवेहि य छट्ठाणवडिए, एवं उक्कोसोगाहणएवि, अजहन्नमणुक्कोसोगाहणएवि एवं चेव, नवरं सट्ठाणे चउट्ठाणवडिए, जहन्नठिइयाणं पुढविकाइयाणं पुच्छा गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ जहन्नठिइयाणं पुढविकाइयाणं अणंता पज्जवा पन्नत्ता !, गोयमा ! जहन्नठिइए पुढविकाइए जहन्नठिइयस्स पुढविकाइयस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए तुल्ले ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए ठिईए तुल्ले वन्नगंधरसफासपज्जवेहिं मतिअन्नाण० सुयअन्नाण० अचक्खुदंसणपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए, एवं उक्कोसठिइएवि, अजहन्नमणुक्कोसठिइएवि एवं चेव, नवरं सट्ठाणे तिट्ठाणवडिए, जहन्नगुणकालयाणं भंते ! पुढविकाइयाणं पुच्छा गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ जहन्नगुणकालयाणं पुढविकाइयाणं अणंता पज्जवा पन्नत्ता, गोयमा ! जहन्नगुणकालए पुढविकाइए जहन्नगुणकालगस्स पुढविकाइयस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए तुल्ले ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए ठिईए तिट्ठाणवडिए कालवन्नपज्जवेहिं तुल्ले अवसेसेहिं वन्नगंधरसफासपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए दोहिं अन्नाणेहिं अचक्खुदंसणपज्जवेहि य छट्ठाणवडिए, एवं उक्कोसगुणकालएवि, अजहन्नमणुक्कोसगुणकालएवि एवं चेव, नवरं सट्ठाणे छट्ठाणवडिए, एवं पंच वन्ना दो गंधा पंच रसा अट्ठ फासा भाणियव्वा। जहन्नमतिअन्नाणीणं भंते! पुढ-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विकाइयाणं पुच्छा गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ जहन्नमतिअन्नाणीणं पुढविकाइयाणं अणंता पज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नमतिअन्नाणी पुढविकाइए जहन्नमतिअन्नाणिस्स पुढविकाइयस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए तुल्ले ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए ठिईए तिट्ठाणवडिए वन्नगंधरसफासपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए मइअन्नाणपज्जवेहिं तुल्ले सुयअन्नाणपज्जवेहिं अचक्खुदंसणपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए, एवं उक्कोसमइअन्नाणीवि, अजहन्नमणुक्कोसमइअन्नाणीवि एवं चेव, नवरं सट्ठाणे छट्ठाणवडिए, एवं सुयअन्नाणीवि अचक्खुदंसणीवि एवं चेव जाव वणप्फइकाइया (सूत्रं० ११३) जहन्नोगाहणगाणं भंते ! बेइंदियाणं पुच्छा गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ जहन्नोगाहणगाणं बेइंदियाणं अणंता पज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नोगाहणए बेइंदिए जहन्नोगाहणस्स बेइंदियस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए तुल्ले ओगाहणट्ठयाए तुल्ले ठिईए तिट्ठाणवडिए वन्नगंधरसफासपज्जवेहिं दोहिं नाणेहिं दोहिं अन्नाणेहिं अचक्खुदंसणपज्जवेहि य छट्ठाणवडिए, एवं उक्कोसोगाहणएवि, णवरं णाणा णत्थि, अजहन्नमणुक्कोसोगाहणए जहा जहन्नोगाहणए, णवरं सट्ठाणे ओगाहणाए चउट्ठाणवडिए, जहन्नठिइयाणं भंते! बेइंदियाणं पुच्छा गोयमा! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ जहन्नठियाणं बेइंदिइयाणं अणंता पज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा! जहन्नठिइए बेइंदिए जहन्नठिइयस्स बेइंदियस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए तुल्ले ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए ठितीए तुल्ले वन्नगंधरसफासपज्जवेहिं दोहिं अन्नाणेहिं अचक्खुदंसणपज्जवेहि य छट्ठाणवडिए, एवं उक्कोसठिइएवि, नवरं दो णाणा अब्भहिया, अजहन्नमणुक्कोसठिइए जहा उक्कोसठिइए णवरं ठिईए तिट्ठाणवडिए । जहन्नगुणकालगाणं बेइंदियाणं पुच्छा गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भंते ! एवं वुच्चइ—जहन्नगुणकालगाणं बेइंदियाणं अणंता पज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नगुणकालए बेइंदिए जहन्नगुणकालगस्स बेइंदियस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए तुल्ले ओगाहणट्ठयाए छट्ठाणवडिए ठिईए तिट्ठाणवडिए कालवन्नपज्जवेहिं तुल्ले अवसेसेहिं वन्नगंधरसफासपज्जवेहिं दोहिं नाणेहिं दोहिं अन्नाणेहिं अचक्खुदंसणपज्जवेहि य छट्ठाणवडिए, एवं उक्कोसगुणकालएवि, अजहन्नमणुक्कोसगुणकालएवि एवं चेव, णवरं सट्ठाणे छट्ठाणवडिए, एवं पंच वन्ना दो गंधा पंच रसा अट्ठ फासा भाणियव्वा, जहन्नाभिणिबोहियनाणीणं भंते ! बेइंदियाणं केवइया पज्जवा पन्नत्ता !, गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—जहन्नाभिणिबोहियनाणीणं बेइंदियाणं अणंता पज्जवा पन्नत्ता !, गोयमा ! जहन्नाभिणिबोहियणाणी बेइंदिए जहन्नाभिणिबोहियणाणिस्स बेइंदियस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए तुल्ले ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए ठिईए तिट्ठाणवडिए वन्नगंधरसफासपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए आभिणिबोहियणाणपज्जवेहिं तुल्ले सुयणाणपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए अचक्खुदंसणपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए, एवं उक्कोसाभिणिबोहियणाणीवि, अजहन्नमणुक्कोसाभिणिबोहियणाणीवि एवं चेव, नवरं सट्ठाणे छट्ठाणवडिए, एवं सुयनाणीवि सुयअन्नाणीवि अचक्खुदंसणीवि, णवरं जत्थ णाणा तत्थ अन्नाणा नत्थि जत्थ अन्नाणा तत्थ णाणा नत्थि, जत्थ दंसणं तत्थ णाणावि अन्नाणावि, एवं तेइंदियाणवि, चउरिंदियाणवि एवं चेव णवरं चक्खुदंसणं अब्भहियं (सूत्रं० ११४) जहन्नोगाहणगाणं भंते! पंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं केवइया पज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ जहन्नोगाहणगाणं पंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं अणंता पज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नोगाहणए पंचिंदियतिरिक्खजोणिए जहन्नोगाहणयस्स पंचिंदियतिरि-

॥१९०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [११२--११७]
दीप अनुक्रम [३१६--३२१]

क्खजोणियस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए तुल्ले ओगाहणट्ठयाए तुल्ले ठिईए तिट्ठाणवडिए वन्नगंधरसफासपज्जवेहिं दोहिं नाणेहिं दोहिं अन्नाणेहिं दोहिं दंसणेहिं छट्ठाणवडिए, उक्कोसोगाहणएवि एवं चेव, णवरं तिहिं नाणेहिं तिहिं दंसणेहिं छट्ठाणवडिए, जहा उक्कोसोगाहणए तहा अजहन्नमणुक्कोसोगाहणएवि, णवरं ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए ठिईए चउट्ठाणवडिए, जहन्नठिइयाणं भंते ! पंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं केवइया पज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ जहन्नठिइयाणं पंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं अणंता पज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नठिइए पंचिंदियतिरिक्खजोणिए जहन्नठिइयस्स पंचिंदियतिरिक्खजोणियस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए तुल्ले ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए ठिईए तुल्ले वन्नगंधरसफासपज्जवेहिं दोहिं अन्नाणेहिं दोहिं दंसणेहिं छट्ठाणवडिए, उक्कोसठिइएवि एवं चेव णवरं दो नाणा दो अन्नाणा दो दंसणा, अजहन्नमणुक्कोसठिइएवि एवं चेव, नवरं ठिईए चउट्ठाणवडिए तिन्नि णाणा तिन्नि अन्नाणा तिन्नि दंसणा । जहन्नगुणकालगाणं भंते ! पंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं पुच्छा गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ ?, गोयमा ! जहन्नगुणकालए पंचिंदियतिरिक्खजोणिए जहन्नगुणकालगस्स पंचिंदियतिरिक्खजोणियस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए तुल्ले ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए ठिईए चउट्ठाणवडिए कालवन्नपज्जवेहिं तुल्ले अवसेसेहिं वन्नगंधरसफासपज्जवेहिं तिहिं नाणेहिं तिहिं अन्नाणेहिं तिहिं दंसणेहिं छट्ठाणवडिए, एवं उक्कोसगुणकालएवि, अजहन्नमणुक्कोसगुणकालएवि एवं चेव, नवरं सट्ठाणे छट्ठाणवडिए, एवं पंच वन्ना दो गंधा पंच रसा अट्ठ फासा, जहन्नाभिणिबोहियणाणीणं भंते ! पंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं केवइया पज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्न-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [११२--११७]

दीप अनुक्रम [३१६--३२१]

त्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ ?, गोयमा ! जहन्नाभिणिबोहियणाणी पंचिंदियतिरिक्खजोणिए जहन्नाभिणिबोहियणाणिस्स पंचिंदियतिरिक्खजोणियस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए तुल्ले ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए वन्नगंधरसफासपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए आभिणिबोहियनाणपज्जवेहिं तुल्ले सुयनाणपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए चक्खुदंसणपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए अचक्खुदंसणपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए, एवं उक्कोसाभिणिबोहियनाणीवि, णवरं ठिईए तिट्ठाणवडिए, तिन्नि नाणा तिन्नि दंसणा सट्ठाणे तुल्ले सेसेसु छट्ठाणवडिए, अजहन्नमणुक्कोसाभिणिबोहियनाणी जहा उक्कोसाभिणिबोहियनाणी णवरं ठिईए चउट्ठाणवडिए, सट्ठाणे छट्ठाणवडिए, एवं सुयनाणीवि, जहन्नोहिनाणीणं भंते ! पंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं पुच्छा, गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ ?, गोयमा !, जहन्नोहिनाणी पंचिंदियतिरिक्खजोणिए जहन्नोहिनाणिस्स पंचिंदियतिरिक्खजोणियस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए तुल्ले ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए ठिईए तिट्ठाणवडिए वन्नगंधरसफासपज्जवेहिं आभिणिबोहियनाणसुयनाणपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए ओहिनाणपज्जवेहिं तुल्ले, अन्नाणा नत्थि, चक्खुदंसणपज्जवेहिं अचक्खुदंसणपज्जवेहि य ओहिदंसणपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए, एवं उक्कोसोहिनाणीवि अजहन्नोक्कोसोहिनाणीवि एवं चेव, णवरं सट्ठाणे छट्ठाणवडिए, जहा आभिणिबोहियनाणी तहा मइअन्नाणी सुयअन्नाणी य, जहा ओहिनाणी तहा विभंगनाणीवि, चक्खुदंसणी अचक्खुदंसणी य जहा आभिणिबोहियनाणी, ओहिदंसणी जहा ओहिनाणी, जत्थ नाणा तत्थ अन्नाणा नत्थि जत्थ अन्नाणा तत्थ नाणा नत्थि, जत्थ दंसणा तत्थ णाणावि अन्नाणावि अत्थित्ति भाणियव्वं (सूत्रं० ११५) जहन्नोगाहणगाणं भंते ! मणुस्साणं केवइया पज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्न-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मनुष्याणाम् पर्याया:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [११२--११७]
दीप अनुक्रम [३१६--३२१]

त्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—जहन्नोगाहणगाणं मणुस्साणं अणंता पज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नोगाहणए मणुसे जहन्नोगाहणगस्स मणूसस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए तुल्ले ओगाहणट्ठयाए तुल्ले ठिईए तिट्ठाणवडिए वन्नगंधरसफासपज्जवेहिं तिहिं नाणेहिं दोहिं अन्नाणेहिं तिहिं दंसणेहिं छट्ठाणवडिए, उक्कोसोगाहणएवि एवं चेव, नवरं ठिईए सिय हीणे सिय तुल्ले सिय अब्भहिए, जइ हीणे असंखिज्जइभागहीणे अह अब्भहिए असंखेज्जइभागअब्भहिए, दो नाणा दो अन्नाणा दो दंसणा, अजहन्नमणुक्कोसोगाहणएवि एवं चेव, णवरं ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए, ठिईए चउट्ठाणवडिए आइल्लेहिं चउहिं नाणेहिं छट्ठाणवडिए, केवलनाणपज्जवेहिं तुल्ले, तिहिं अन्नाणेहिं तिहिं दंसणेहिं छट्ठाणवडिए, केवलदंसणपज्जवेहिं तुल्ले, जहन्नठिइयाणं भंते ! मणुस्साणं केवइया पज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ ?, गोयमा ! जहन्नठिइए मणुस्से जहन्नठिइयस्स मणुस्सस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए तुल्ले ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए ठिईए तुल्ले वन्नगंधरसफासपज्जवेहिं दोहिं अन्नाणेहिं दोहिं दंसणेहिं छट्ठाणवडिए, एवं उक्कोसठिइएवि, नवरं दो नाणा दो अन्नाणा दो दंसणा, अजहन्नमणुक्कोसठिइएवि एवं चेव, नवरं ठिईए चउट्ठाणवडिए ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए आइल्लेहिं चउहिं नाणेहिं छट्ठाणवडिए केवलनाणपज्जवेहिं तुल्ले तिहिं अन्नाणेहिं तिहिं दंसणेहिं छट्ठाणवडिए केवलदंसणपज्जवेहिं तुल्ले । जहन्नगुणकालयाणं भंते ! मणुस्साणं केवइया पज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ ?, गोयमा ! जहन्नगुणकालए मणूसे जहन्नगुणकालगस्स मणुस्सस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए तुल्ले ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए ठिईए चउट्ठाणवडिए कालवन्नपज्जवेहिं तुल्ले अवसेसेहिं वन्नगंधरसफासपज्जवेहिं

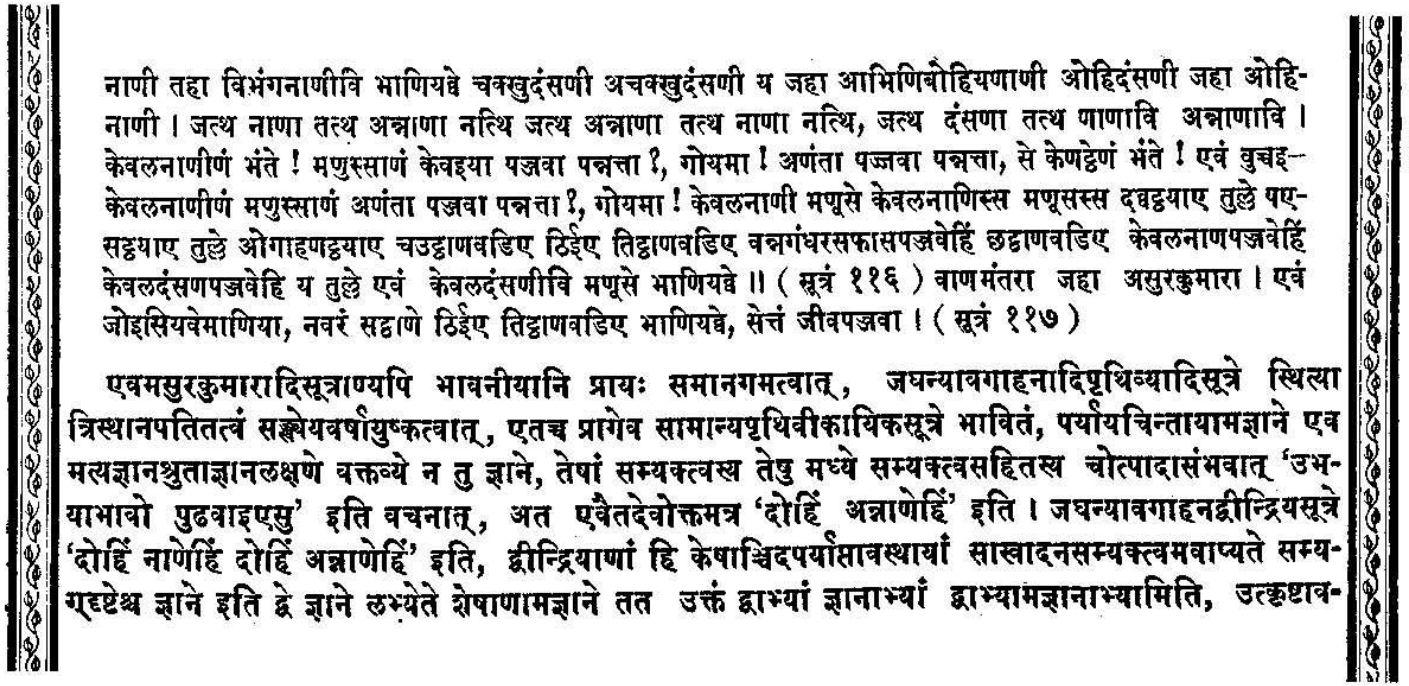
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

छट्ठाणवडिए चउहिं नाणेहिं छट्ठाणवडिए केवलनाणपज्जवेहिं तुल्ले तिहिं अन्नाणेहिं तिहिं दंसणेहिं छट्ठाणवडिए केवलदंसणपज्जवेहिं तुल्ले, एवं उक्कोसगुणकालएवि, अजहन्नमणुक्कोसगुणकालएवि एवं चेव, नवरं सट्ठाणे छट्ठाणवडिए, एवं पंच वन्ना दो गंधा पंच रसा अट्ठ फासा भाणियव्वा । जहन्नाभिणिबोहियनाणीणं मणुस्साणं केवइया पज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ ?, गोयमा ! जहन्नाभिणिबोहियणाणी मणुसे जहन्नाभिणिबोहियणाणिस्स मणुस्सस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए तुल्ले ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए ठिईए चउट्ठाणवडिए वन्नगंधरसफासपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए आभिणिबोहियनाणपज्जवेहिं तुल्ले सुयनाणपज्जवेहिं दोहिं दंसणेहिं छट्ठाणवडिए, एवं उक्कोसाभिणिबोहियनाणीवि नवरं आभिणिबोहियनाणपज्जवेहिं तुल्ले ठिईए तिट्ठाणवडिए तिहिं नाणेहिं तिहिं दंसणेहिं छट्ठाणवडिए, अजहन्नमणुक्कोसाभिणिबोहियनाणी जहा उक्कोसाभिणिबोहियनाणी, नवरं ठिईए चउट्ठाणवडिए सट्ठाणे छट्ठाणवडिए, एवं सुयनाणीवि, जहन्नोहिनाणीणं भंते ! मणुस्साणं केवइया पज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ ?, गोयमा ! जहन्नोहिनाणी मणुस्से जहन्नोहिनाणिस्स मणुस्सस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए तुल्ले ओगाहणट्ठयाए तिट्ठाणवडिए ठिईए तिट्ठाणवडिए वन्नगंधरसफासपज्जवेहिं दोहिं नाणेहिं छट्ठाणवडिए ओहिनाणपज्जवेहिं तुल्ले मणनाणपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए तिहिं दंसणेहिं छट्ठाणवडिए, एवं उक्कोसोहिनाणीवि, अजहन्नमणुक्कोसोहिनाणी एवं चेव, नवरं ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए, सट्ठाणे छट्ठाणवडिए, जहा ओहिनाणी तहा मणपज्जवनाणीवि भाणियव्वे, नवरं ओगाहणट्ठयाए तिट्ठाणवडिए, जहा आभिणिबोहियणाणी तहा मइअन्नाणी सुयअन्नाणीवि भाणियव्वे, जहा ओहि-

५ पर्यायपदे मनुष्याणां सू. ११६

॥१९२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



नाणी तहा विभंगनाणीवि भाणियव्वे चक्खुदंसणी अचक्खुदंसणी य जहा आभिणिबोहियणाणी ओहिदंसणी जहा ओहिनाणी । जत्थ नाणा तत्थ अन्नाणा नत्थि जत्थ अन्नाणा तत्थ नाणा नत्थि, जत्थ दंसणा तत्थ णाणावि अन्नाणावि । केवलनाणीणं भंते ! मणुस्साणं केवइया पज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ–केवलनाणीणं मणुस्साणं अणंता पज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा ! केवलनाणी मणूसे केवलनाणिस्स मणूसस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए तुल्ले ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए ठिईए तिट्ठाणवडिए वन्नगंधरसफासपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए केवलनाणपज्जवेहिं केवलदंसणपज्जवेहि य तुल्ले एवं केवलदंसणीवि मणूसे भाणियव्वे ॥ (सूत्रं ११६) वाणमंतरा जहा असुरकुमारा । एवं जोइसियवेमाणिया, नवरं सट्ठाणे ठिईए तिट्ठाणवडिए भाणियव्वे, सेत्तं जीवपज्जवा । (सूत्रं ११७)

एवमसुरकुमारादिसूत्राण्यपि भावनीयानि प्रायः समानगमत्वात्, जघन्यावगाहनादिपृथिव्यादिसूत्रे स्थित्या त्रिस्थानपतिततत्वं सङ्ख्येयवर्षायुष्कत्वात्, एतच्च प्रागेव सामान्यपृथिवीकायिकसूत्रे भावितं, पर्यायचिन्तायामज्ञाने एव मत्यज्ञानश्रुताज्ञानलक्षणे वक्तव्ये न तु ज्ञाने, तेषां सम्यक्त्वस्य तेषु मध्ये सम्यक्त्वसहितस्य चोत्पादासंभवात् 'उभयाभावो पुढवाइएसु' इति वचनात्, अत एवैतदेवोक्तमत्र 'दोहिं अन्नाणेहिं' इति । जघन्यावगाहनद्वीन्द्रियसूत्रे 'दोहिं नाणेहिं दोहिं अन्नाणेहिं' इति, द्वीन्द्रियाणां हि केषाञ्चिदपर्याप्तावस्थायां सास्वादनसम्यक्त्वमवाप्यते सम्यग्दृष्टेश्च ज्ञाने इति द्वे ज्ञाने लभ्येते शेषाणामज्ञाने तत उक्तं द्वाभ्यां ज्ञानाभ्यां द्वाभ्यामज्ञानाभ्यामिति, उत्कृष्टाव-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गाहनायां त्वपर्याप्तावस्थाया अभावात् सास्वादनसम्यक्त्वं नावाप्यते ततस्तत्र ज्ञाने न वक्तव्ये, तथा चाह—'एवं उक्कोसितोगाहणाए वि नवरं नाणा नत्थि'त्ति, तथाऽजघन्योत्कृष्टावगाहना किल प्रथमसमयादूर्द्धं भवति इत्यपर्याप्तावस्थायामपि, तस्याः संभवात् सासादनसम्यक्त्ववतां ज्ञाने अन्येषां चाज्ञाने इति ज्ञाने चाज्ञाने च वक्तव्ये, तथा चाह—'अजहन्नमणुक्कोसोगाहणए जहा जहन्नोगाहणए' इति, तथा जघन्यस्थितिसूत्रे द्वे अज्ञाने एव वक्तव्ये न तु ज्ञाने, यतः सर्वजघन्यस्थितिको लब्ध्यपर्याप्तको भवति न च लब्ध्यपर्याप्तकेषु मध्ये सास्वादनसम्यग्दृष्टिरुत्पद्यते, किं कारणमिति चेत्, उच्यते, लब्ध्यपर्याप्तको हि सर्वसङ्क्लिष्टः सासादनसम्यग्दृष्टिश्च मनाक् शुभपरिणामस्ततः स तेषु मध्ये नोत्पद्यते तेनाज्ञाने एव लभ्येते न ज्ञाने, उत्कृष्टस्थितिषु पुनर्मध्ये सासादनसम्यक्त्वसहितोऽप्युत्पद्यते इति तत्सूत्रे ज्ञाने अज्ञाने च वक्तव्ये, तथा चाह—'एवं उक्कोसठिइएवि, नवरं दो नाणा अब्भहिया' इति, एवमेवाजघन्योत्कृष्टस्थितिसूत्रमपि वक्तव्यं, भावसूत्राणि पाठसिद्धानि, एवं त्रीन्द्रियचतुरिन्द्रिया अपि वक्तव्याः, नवरं चतुरिन्द्रियाणां चक्षुर्दर्शनमधिकं अन्यथा चतुरिन्द्रियत्वायोगादिति तेषां चक्षुर्दर्शनविषयमपि सूत्रं वक्तव्यं, जघन्यावगाहनतिर्यक्पञ्चेन्द्रियसूत्रे 'ठिईए तिट्ठाणवडिए' इति, इह तिर्यक्पञ्चेन्द्रियः सङ्ख्येयवर्षायुष्क एव जघन्यावगाहनो भवति, नाऽसङ्ख्येयवर्षायुष्कः, किं कारणं इति चेत्, उच्यते, असङ्ख्येयवर्षायुषो हि महाशरीराः कङ्ककुक्षिपरिणामत्वात् पुष्टाहाराः प्रबलधातूपचयाः ततस्तेषां भूयान् शुक्रनिषेको भवति शुक्रनिषेकानुसारेण च तिर्यग्मनुष्याणामुत्पत्तिस-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मयेऽवगाहनेति न तेषां जघन्यावगाहना लभ्यते किं तु सङ्ख्येयवर्षायुषां, सङ्ख्येयवर्षायुषश्च स्थित्या त्रिस्थानपतिताः, एतच्च भावितं प्राक्, तत उक्तं स्थित्या त्रिस्थानपतिता इति, 'दोहिं नाणेहिं दोहिं अन्नाणेहिं' इति जघन्यावगाहनो हि तिर्यक्पञ्चेन्द्रियः सङ्ख्येयवर्षायुष्कोऽपर्याप्तो भवति सोऽपि चाल्पकायेषु मध्ये समुत्पद्यमानस्ततस्तस्यावधिविभङ्गज्ञानासंभवात् द्वे ज्ञाने द्वे अज्ञाने उक्ते, यस्तु विभङ्गज्ञानसहितो नरकादुद्धृत्य सङ्ख्येयवर्षायुष्केषु तिर्यक्पञ्चेन्द्रियेषु मध्ये समुत्पद्यमानो वक्ष्यते स महाकायेषूत्पद्यमानो द्रष्टव्यः नाल्पकायेषु, तथास्वाभाव्यात्, अन्यथाऽधिकृतसूत्रविरोधः, उत्कृष्टावगाहनतिर्यक्पञ्चेन्द्रियसूत्रे 'तिहिं नाणेहिं तिहिं अन्नाणेहिं' इति त्रिभिर्ज्ञानैस्त्रिभिरज्ञानैश्च षट्स्थानपतिताः, तत्र त्रीणि अज्ञानानि कथमिति चेत्, उच्यते, इह यस्य योजनसहस्रं शरीरावगाहना स उत्कृष्टावगाहनः स च सङ्ख्येयवर्षायुष्क एव भवति पर्याप्तश्च, तेन तस्य त्रीणि ज्ञानानि त्रीण्यज्ञानानि च संभवन्ति, स्थित्याऽपि चासावुत्कृष्टावगाहनः त्रिस्थानपतितः, सङ्ख्येयवर्षायुष्कत्वात्, अजघन्योत्कृष्टावगाहनसूत्रे स्थित्या चतुःस्थानपतितः, यतोऽजघन्योत्कृष्टावगाहनोऽसङ्ख्येयवर्षायुष्कोऽपि लभ्यते, तत्रोपपद्यते प्रागुक्तयुक्त्या चतुःस्थानपतितत्वं, जघन्यस्थितिकतिर्यक्पञ्चेन्द्रियसूत्रे द्वे अज्ञाने एव वक्तव्ये न तु ज्ञाने, यतोऽसौ जघन्यस्थितिको लब्ध्यपर्याप्तक एव भवति न च तन्मध्ये सासादनसम्यग्दृष्टेरुत्पाद इति, उत्कृष्टस्थितिकतिर्यक्पञ्चेन्द्रियसूत्रे 'दो नाणा दो अन्नाणा' इति, उत्कृष्टस्थितिको हि तिर्यक्पञ्चेन्द्रियस्त्रिपल्योपमस्थितिको भवति, तस्य च द्वे अज्ञाने तावन्नियमेन यदा पुनः

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

षण्मासावशेषायुर्वैमानिकेषु बद्धायुष्को भवति तदा तस्य द्वे ज्ञाने लभ्येते अत उक्तं द्वे ज्ञाने द्वे अज्ञाने इति, अजघन्योत्कृष्टस्थितिकतिर्यक्पञ्चेन्द्रियसूत्रे 'ठिईए चउट्ठाणवडिए' इति अजघन्योत्कृष्टस्थितिको हि तिर्यक्पञ्चेन्द्रियः सङ्ख्येयवर्षायुष्कोऽपि लभ्यते असङ्ख्येयवर्षायुष्कोऽपि समयोनत्रिपल्योपमस्थितिकः ततश्चतुःस्थानपतितः, जघन्याभिनिबोधिकतिर्यक्पञ्चेन्द्रियसूत्रे 'ठिईए चउट्ठाणवडिए' इति, असङ्ख्येयवर्षायुषोऽपि हि तिर्यक्पञ्चेन्द्रियस्य स्वभूमिकानुसारेण जघन्ये आभिनिबोधिकश्रुतज्ञाने लभ्येते ततः सङ्ख्येयवर्षायुषोऽसङ्ख्येयवर्षायुषश्च जघन्याभिनिबोधिकश्रुतज्ञानसंभवाद् भवन्ति स्थित्या चतुःस्थानपतिताः, उत्कृष्टाभिनिबोधिकज्ञानसूत्रे स्थित्या च त्रिस्थानपतिता वक्तव्याः, यत इह यस्योत्कृष्टे आभिनिबोधिकश्रुतज्ञाने स नियमात् सङ्ख्येयवर्षायुष्कः सङ्ख्येयवर्षायुष्कश्च स्थित्यापि त्रिस्थानपतित एव यथोक्तं प्राक्, अवधिसूत्रे विभङ्गसूत्रेऽपि स्थित्या त्रिस्थानपतितः, किं कारणम् इति चेत्, उच्यते, असङ्ख्येयवर्षायुषोऽवधिविभङ्गासंभवात्, आह च मूलटीकाकारः 'ओहिविभङ्गेसु नियमा तिट्ठाणवडिए, किं कारणं ?, भन्नइ, ओहिविभङ्गा असंखेज्जवासाउयस्स नत्थि'त्ति जघन्यावगाहनमनुष्यसूत्रे 'ठिईए तिट्ठाणवडिए' इति तिर्यक्पञ्चेन्द्रियवत्, मनुष्योऽपि जघन्यावगाहनो नियमात् सङ्ख्येयवर्षायुष्कः, सङ्ख्येयवर्षायुष्कश्च स्थित्या त्रिस्थानपतित एवेति 'तिहिं नाणेहिं' इति, यदा कश्चित् तीर्थकरोऽनुत्तरोपपातिकदेवो वा अप्रतिपतितेनावधिज्ञानेन जघन्यायामवगाहनायामुत्पद्यते तदाऽवधिज्ञानमपि लभ्यते इतीह त्रिभिर्ज्ञानैरित्युक्तं, विभङ्गज्ञानसहितस्तु नरकादुद्वृत्तो जघ-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

न्यायामवगाहनायां नोत्पद्यते तथास्वाभाव्यात् अतो विभङ्गज्ञानं न लभ्यते इति द्वाभ्यामज्ञानाभ्यामित्युक्तं, उत्कृष्टावगाहनमनुष्यसूत्रे 'ठिईए सिय हीणे सिय तुल्ले सिय अब्भहिए जइ हीणे असंखेज्जभागहीणे जइ अब्भहिए असंखेज्जभागअब्भहिए' इति, उत्कृष्टावगाहना हि मनुष्यास्त्रिगव्यूतोच्छ्रयाः त्रिगव्यूतानां च स्थितिर्जघन्यतः पल्योपमासङ्ख्येयभागहीनानि त्रीणि पल्योपमानि उत्कर्षतस्तान्येव परिपूर्णानि त्रीणि पल्योपमानि, उक्तं च जीवाभिगमे– 'उत्तरकुरुदेवकुराए मणुस्साणं भंते ! केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं तिन्नि पलिओवमाइं पलिओवमस्सासंखिज्जइभागहीणाइं उक्कोसेणं तिन्नि पलिओवमाइं' त्रिपल्योपमासङ्ख्येयभागश्च त्रयाणां पल्योपमानामसङ्ख्येयतमो भाग इति पल्योपमासङ्ख्येयभागहीनपल्योपमत्रयस्थितिकः परिपूर्णपल्योपमत्रयस्थितिकापेक्षयाऽसङ्ख्येयभागहीनः, इतरस्तु तदपेक्षयाऽसङ्ख्येयभागाधिकः, शेषा वृद्धिहानयो न लभ्यन्ते, 'दो नाणा दो अन्नाणा' इति उत्कृष्टावगाहना हि असङ्ख्येयवर्षायुषः, असङ्ख्येयवर्षायुषां चावधिविभङ्गासंभवः, तथास्वाभाव्यात्, अतो द्वे एव ज्ञाने द्वे चाज्ञाने इति, तथाऽजघन्योत्कृष्टावगाहनः सङ्ख्येयवर्षायुष्कोऽपि भवति असङ्ख्येयवर्षायुष्कोऽपि भवति, असङ्ख्येयवर्षायुष्कोऽपि गव्यूतद्विगव्यूतोच्छ्रयः ततोऽवगाहनयाऽपि चतुःस्थानपतितत्वं स्थित्याऽपि तथा, आद्यैश्चतुर्भिर्मतिश्रुतावधिमनःपर्यायरूपैर्ज्ञानैः षट्स्थानपतिताः, तेषां चतुर्णामपि ज्ञानानां तत्तद्द्रव्यादिसापेक्षतया क्षयोपशमवैचित्र्यतस्तारतम्यभावात्, केवलज्ञानपर्यवैस्तुल्यता, निःशेषस्वावरणक्षयतः प्रादुर्भूतस्य केवलज्ञानस्य भेदाभावात्, शेषं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सुगमं, जघन्यस्थितिकमनुष्यसूत्रे 'दोहिं अन्नाणेहिं' इति द्वाभ्यामज्ञानाभ्यां मत्यज्ञानश्रुताज्ञानरूपाभ्यां षट्स्थानपतितता वक्तव्या, न तु ज्ञानाभ्यां, कस्मादिति चेत् ?, उच्यते, जघन्यस्थितिका मनुष्याः संमूर्च्छिमाः, संमूर्च्छिममनुष्याश्च नियमतो मिथ्यादृष्टयः, ततस्तेषामज्ञाने एव न तु ज्ञाने, उत्कृष्टस्थितिकमनुष्यसूत्रे 'दो नाणा दो अन्नाणा' इति, उत्कृष्टस्थितिका हि मनुष्यास्त्रिपल्योपमायुषः, तेषां च तावदज्ञाने नियमेन यदा पुनः षण्मासावशेषायुषो वैमानिकेषु बद्धायुषस्तदा सम्यक्त्वलाभात् द्वे ज्ञाने लभ्येते अवधिविभङ्गौ चासङ्ख्येयवर्षायुषां न स्त इति त्रीणि ज्ञानानि त्रीण्यज्ञानानीति नोक्तं, अजघन्योत्कृष्टस्थितिकमनुष्यसूत्रमजघन्योत्कृष्टावगाहनमनुष्यसूत्रमिव भावनीयं, जघन्याभिनिबोधिकमनुष्यसूत्रे द्वे ज्ञाने वक्तव्ये द्वे दर्शने च, किं कारणं इति चेत् ?, उच्यते, जघन्याभिनिबोधिको हि जीवो नियमादवधिमनःपर्यवज्ञानविकलः, प्रबलज्ञानावरणकर्मोदयसद्भावात्, अन्यथा जघन्याभिनिबोधिकज्ञानत्वायोगात्, ततः शेषज्ञानदर्शनासंभवादाभिनिबोधिकज्ञानपर्यवैस्तुल्यः श्रुतज्ञानपर्यवैर्द्वाभ्यां दर्शनाभ्यां च षट्स्थानपतिततोक्ता, उत्कृष्टाभिनिबोधिकसूत्रे 'ठिईए तिट्ठाणवडिए' इति उत्कृष्टाभिनिबोधिको हि नियमात्सङ्ख्येयवर्षायुः, असङ्ख्येवर्षायुषः तथाभवस्वाभाव्यात् सर्वोत्कृष्टाभिनिबोधिकज्ञानासंभवात्, सङ्ख्येयवर्षायुषश्च प्रागुक्तयुक्तेः स्थित्या त्रिस्थानपतिता इति, जघन्यावधिसूत्रे उत्कृष्टावधिसूत्रे चावगाहनया त्रिस्थानपतितो वक्तव्यः, यतः सर्वजघन्योऽवधिर्यथोक्तस्वरूपो मनुष्याणां पारभविको न भवति, किं तु तद्भवभावी, सोऽपि च पर्याप्तावस्थायां, अपर्या-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [११२--११७]

दीप अनुक्रम [३१६--३२१]

सावस्थायां तद्योग्यविशुद्धभावात्, उत्कृष्टोऽप्यवधिर्भावतश्चारित्रिणः, ततो जघन्यावधिरुत्कृष्टावधिर्वाऽवगाहनया त्रिस्थानपतितः, अजघन्योत्कृष्टस्त्ववधिः पारभविकोऽपि संभवति ततोऽपर्याप्तावस्थायामपि तस्य संभवात् अजघन्योत्कृष्टावधिरवगाहनया चतुःस्थानपतितः, स्थित्या तु जघन्यावधिरुत्कृष्टावधिरजघन्योत्कृष्टावधिर्वा त्रिस्थानपतितः, असङ्ख्येयवर्षायुषामवधेरसंभवात्, सङ्ख्येयवर्षायुषां च त्रिस्थानपतितत्वात्, जघन्यमनःपर्यवज्ञानी उत्कृष्टमनःपर्यवज्ञानी अजघन्योत्कृष्टमनःपर्यवज्ञानी च स्थित्या त्रिस्थानपतितः, चारित्रिणामेव मनःपर्यायज्ञानसद्भावात्, चारित्रिणां च सङ्ख्येयवर्षायुष्कत्वात्, केवलज्ञानसूत्रे तु 'ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए' इति केवलिसमुद्घातं प्रतीत्य, तथाहि–केवलिसमुद्घातगतः केवली शेषकेवलिभ्योऽसङ्ख्येयगुणाधिकावगाहनः, तदपेक्षया शेषाः केवलिनोऽसङ्ख्येयगुणहीनावगाहनाः, स्वस्थाने तु शेषाः केवलिनस्त्रिस्थानपतिता इति स्थित्या त्रिस्थानपतितत्वं, सङ्ख्येयवर्षायुष्कत्वात् ॥ व्यन्तरा यथाऽसुरकुमाराः, ज्योतिष्कवैमानिका अपि तथैव, नवरं ते स्थित्या त्रिस्थानपतिता वक्तव्याः, एतच्च प्रागेव भावितं । उपसंहारमाह—[ग्रन्थाग्रं ५०००] 'सेत्तं जीवपज्जवा' एते जीवपर्यायाः । सम्प्रत्यजीवपर्यायान् पृच्छति—

अजीवपज्जवा णं भंते ! कइविहा पन्नत्ता ?, गोयमा ! दुविहा पन्नत्ता, तंजहा–रूविअजीवपज्जवा य अरूविअजीवपज्जवा य, अरूविअजीवपज्जवा णं भंते ! कइविहा पन्नत्ता ?, गोयमा ! दसविहा पन्नत्ता, तंजहा–धम्मत्थिकाए धम्मत्थिकायस्स

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ अजीवस्य पर्यायाः

देसे धम्मत्थिकायस्स पएसा अहम्मत्थिकाए अहम्मत्थिकायस्स देसे अहम्मत्थिकायस्स पएसा आगासत्थिकाए आगासत्थिकायस्स देसे आगासत्थिकायस्स पएसा अद्धासमए (सू० ११८) रूविअजीवपज्जवा णं भंते ! कइविहा पन्नत्ता ?, गोयमा ! चउव्विहा पन्नत्ता, तंजहा–खंधा खंधदेसा खंधपएसा परमाणुपुग्गला, ते णं भंते ! किं संखेज्जा असंखेज्जा अणंता ?, गोयमा ! नो संखेज्जा नो असंखेज्जा अणंता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ नो संखेज्जा नो असंखेज्जा अणंता ?, गोयमा ! अणंता परमाणुपुग्गला अणंता दुपएसिया खंधा जाव अणंता दसपएसिया खंधा अणंता संखिज्जपएसिया खंधा अणंता असंखिज्जपएसिया खंधा अणंता अणंतपएसिया खंधा, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ ते णं नो संखिज्जा नो असंखिज्जा अणंता । (सू० ११९) परमाणुपोग्गलाणं भंते ! केवइया पज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा ! परमाणुपोग्गलाणं अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ–परमाणुपुग्गलाणं अणंता पज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा ! परमाणुपुग्गले परमाणुपोग्गलस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए तुल्ले ओगाहणट्ठयाए तुल्ले ठिईए सिय हीणे सिय तुल्ले सिय अब्भहिए जइ हीणे असंखिज्जइभागहीणे वा संखिज्जइभागहीणे वा संखिज्जइगुणहीणे वा असंखिज्जइगुणहीणे वा अह अब्भहिए असंखिज्जइभागअब्भहिए वा संखिज्जइभागअब्भहिए वा संखिज्जगुणअब्भहिए वा असंखिज्जगुणअब्भहिए वा, कालवन्नपज्जवेहिं सिय हीणे सिय तुल्ले सिय अब्भहिए जइ हीणे अणंतभागहीणे वा असंखिज्जइभागहीणे वा संखिज्जइभागहीणे वा संखिज्जगुणहीणे वा असंखिज्जगुणहीणे वा अणंतगुणहीणे वा अह अब्भहिए अणंतभागअब्भहिए वा असंखिज्जइभागअब्भहिए वा संखिज्जभागअब्भहिए वा संखिज्जगुणअब्भहिए वा असंखिज्जगुणअब्भहिए वा अणंतगुणमब्भहिए वा एवं अव-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सेसवन्नगंधरसफासपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए, फासाणं सीयउसिणनिद्धलुक्खेहिं छट्ठाणवडिए, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ–परमाणुपोग्गलाणं अणंता पज्जवा पन्नत्ता । दुपएसियाणं पुच्छा गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता ?, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ ?, गोयमा ! दुपएसिए दुपएसियस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए तुल्ले ओगाहणट्ठयाए सिय हीणे सिय तुल्ले सिय अब्भहिए जइ हीणे पएसहीणे अह अब्भहिए पएसमब्भहिए ठिईए चउट्ठाणवडिए वन्नाईहिं उवरिल्लेहिं चउफासेहि य छट्ठाणवडिए, एवं तिपएसेवि, नवरं ओगाहणट्ठयाए सिय हीणे सिय तुल्ले सिय अब्भहिए जइ हीणे पएसहीणे वा दुपएसहीणे वा अह अब्भहिए पएसमब्भहिए वा दुपएसमब्भहिए वा, एवं जाव दसपएसिए, नवरं ओगाहणाए पएसपरिवुड्ढी कायव्वा जाव दसपएसिए,.णवरं नवपएसहीणत्ति, संखेज्जपएसियाणं पुच्छा, गोयमा! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ–गोयमा ! संखेज्जपएसिए संखेज्जपएसियस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए सिय हीणे सिय तुल्ले सिय अब्भहिए, जइ हीणे संखेज्जभागहीणे वा संखिज्जगुणहीणे वा अह अब्भहिए एवं चेव ओगाहणट्ठयाएवि दुट्ठाणवडिए ठिईए चउट्ठाणवडिए वण्णाइउवरिल्लचउफासपज्जवेहि य छट्ठाणवडिए, असंखिज्जपएसियाणं पुच्छा, गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ–गोयमा ! असंखिज्जपएसिए खंधे असंखिज्जपएसियस्स खंधस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए चउट्ठाणवडिए ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए ठिईए चउट्ठाणवडिए वण्णाइउवरिल्लचउफासेहि य छट्ठाणवडिए, अणंतपएसियाणं पुच्छा गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ?, गोयमा ! अणंतपएसिए खंधे अणंतपएसियस्स खंधस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए छट्ठाणवडिए ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए ठिईए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चउट्ठाणवडिए वन्नगंधरसफासपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए ॥ एगपएसोगाढाणं पोग्गलाणं पुच्छा, गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ ?, गोयमा ! एगपएसोगाढे पोग्गले एगपएसोगाढस्स पोग्गलस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए छट्ठाणवडिए ओगाहणट्ठयाए तुल्ले ठिईए चउट्ठाणवडिए वण्णाइउवरिल्लचउफासेहिं छट्ठाणवडिए, एवं दुपएसोगाढेवि, संखिज्जपएसोगाढाणं पुच्छा गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ ?, गोयमा ! संखेज्जपएसोगाढे पोग्गले संखिज्जपएसोगाढस्स पोग्गलस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए छट्ठाणवडिए ओगाहणट्ठयाए दुट्ठाणवडिए ठिईए चउट्ठाणवडिए वण्णाइउवरिल्लचउफासेहि य छट्ठाणवडिए, असंखेज्जपएसोगाढाणं पुच्छा, गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ ?, गोयमा ! असंखेज्जपएसोगाढे पोग्गले असंखेज्जपएसोगाढस्स पोग्गलस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए छट्ठाणवडिए ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए ठिईए चउट्ठाणवडिए वण्णाइअट्ठफासेहिं छट्ठाणवडिए । एगसमयठिइयाणं पुच्छा, गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ ?, गोयमा ! एगसमयठिइए पोग्गले एगसमयठिइयस्स पोग्गलस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए छट्ठाणवडिए ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिते ठितीए तुल्ले वण्णाइअट्ठफासेहिं छट्ठाणवडिए एवं जाव दससमयठिइए, संखेज्जसमयठिइयाणं एवं चेव, णवरं ठिईए दुट्ठाणवडिए, असंखेज्जसमयठिइयाणं एवं चेव, नवरं ठिईए चउट्ठाणवडिए, एकगुणकालगाणं पुच्छा, गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ ?, गोयमा ! एकगुणकालए पोग्गले एकगुणकालगस्स पोग्गलस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए छट्ठाणवडिए ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए ठिईए चउट्ठाणवडिए कालवन्नपज्जवेहिं तुल्ले अवसेसेहिं वन्नगंध-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रसफासपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए अट्ठफासेहिं छट्ठाणवडिए, एवं जाव दसगुणकालए, संखेज्जगुणकालएवि एवं चेव, नवरं सट्ठाणे दुट्ठाणवडिए, एवं असंखिज्जगुणकालएवि, नवरं सट्ठाणे चउट्ठाणवडिए, एवं अनंतगुणकालएवि नवरं सट्ठाणे छट्ठाणवडिए, एवं जहा कालवन्नस्स वत्तव्वया भणिया तहा सेसाणवि वन्नगंधरसफासाणं वत्तव्वया भाणियव्वा जाव अणंतगुणलुक्खे । जहन्नोगाहणगाणं भंते ! दुपएसियाणं पुच्छा, गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ ?, गोयमा ! जहन्नोगाहणए दुपएसिए खंधे जहन्नोगाहणस्स दुपएसियस्स खंधस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए तुल्ले ओगाहणट्ठयाए तुल्ले ठिईए चउट्ठाणपडिए कालवन्नपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए सेसवन्नगंधरसपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए सीयउसिणणिद्धलुक्खफासपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ–जहन्नोगाहणाणं दुपएसियाणं पोग्गलाणं अणंता पज्जवा पन्नत्ता, उक्कोसोगाहणएवि एवं चेव, अजहन्नमणुक्कोसोगाहणओ नत्थि, जहन्नोगाहणयाणं भंते ! तिपएसियाणं पुच्छा, गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ ?, गोयमा ! जहा दुपएसिए जहन्नोगाहणए उक्कोसोगाहणएवि एवं चेव, एवं अजहन्नमणुक्कोसोगाहणएवि, जहन्नोगाहणयाणं भंते ! चउपएसियाणं पुच्छा, गोयमा ! जहा जहन्नोगाहणए दुपएसिए तहा जहन्नोगाहणए चउप्पएसिए एवं जहा उक्कोसोगाहणए दुपएसिए तहा उक्कोसोगाहणए चउप्पएसिएवि, एवं अजहन्नमणुक्कोसोगाहणएवि चउप्पएसिए, णवरं ओगाहणट्ठयाए सिय हीणे सिय तुल्ले सियमब्भहिए जइ हीणे पएसहीणे अह अब्भहिए पएसअब्भहिए एवं जाव दसपएसिए णेयव्वं, णवरं अजहन्नुक्कोसोगाहणए पएसपरिवुड्ढी कायव्वा जाव दसपएसियस्स सत्त पएसा परिवड्ढिज्जंति, जहन्नोगाहणगाणं भंते ! संखेज्जपएसियाणं पुच्छा, गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ ?, गोयमा ! जहन्नोगाहणए संखेज्जपएसिए जहन्नोगाहणगस्स संखिज्जपएसियस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए दुट्ठाणवडिए ओगाहणट्ठयाए तुल्ले ठिईए चउट्ठाणवडिए वण्णाइचउफासपज्जवेहि य छट्ठाणवडिए एवं उक्कोसोगाहणएवि, अजहन्नमणुक्कोसोगाहणएवि एवं चेव, णवरं सट्ठाणे दुट्ठाणवडिए, जहन्नोगाहणगाणं भंते ! असंखिज्जपएसियाणं पुच्छा, गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ ?, गोयमा ! जहन्नोगाहणए असंखिज्जपएसिए खंधे जहन्नोगाहणगस्स असंखिज्जपएसियस्स खंधस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए चउट्ठाणवडिए ओगाहणट्ठयाए तुल्ले ठिईए चउट्ठाणवडिए वण्णाइउवरिल्लफासेहि य छट्ठाणवडिए, एवं उक्कोसोगाहणएवि, अजहन्नमणुक्कोसोगाहणएवि एवं चेव, नवरं सट्ठाणे चउट्ठाणवडिए । जहन्नोगाहणगाणं भंते ! अणंतपएसियाणं पुच्छा, गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ ?, गोयमा ! जहन्नोगाहणए अणंतपएसिए खंधे जहन्नोगाहणगस्स अणंतपएसियस्स खंधस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए छट्ठाणवडिए ओगाहणट्ठयाए तुल्ले ठिईए चउट्ठाणवडिए वण्णाइउवरिल्लचउफासेहिं छट्ठाणवडिए उक्कोसोगाहणएवि एवं चेव, नवरं ठिईएवि तुल्ले, अजहन्नमणुक्कोसोगाहणगाणं भंते ! अणंतपएसियाणं पुच्छा, गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ ?, गोयमा ! अजहन्नमणुक्कोसोगाहणए अणंतपएसिए खंधे अजहन्नमणुक्कोसोगाहणगस्स अणंतपएसियस्स खंधस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए छट्ठाणवडिए ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए ठिईए चउट्ठाणवडिए वण्णाइअट्ठफासेहिं छट्ठाणवडिए, जहन्नठिइयाणं भंते ! परमाणुपुग्गलाणं पुच्छा, गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ ?, गोयमा ! जहन्नठिइए परमाणुपोग्गले जहन्नठिइयस्स परमाणुपोग्गलस्स दव्वट्ठयाए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तुल्ले पएसट्ठयाए तुल्ले ओगाहणट्ठयाए तुल्ले ठिईए तुल्ले वण्णाइ दुफासेहि य छट्ठाणवडिए, एवं उक्कोसठिइएवि, अजहन्नमणुक्कोसठिइएवि एवं चेव नवरं ठिईए चउट्ठाणवडिए, जहन्नठिइयाणं दुपएसियाणं पुच्छा, गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ ?, गोयमा ! जहन्नठिइए दुपएसिए जहन्नठिइयस्स दुपएसियस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए तुल्ले ओगाहणट्ठयाए सिय हीणे सिय तुल्ले सिय अब्भहिए जइ हीणे पएसहीणे अह अब्भहिए पएसअब्भहिए ठिईए तुल्ले वण्णाइ चउफासेहि य छट्ठाणवडिए, एवं उक्कोसठिइएवि अजहन्नमणुक्कोसठिइएवि एवं चेव, नवरं ठिईए चउट्ठाणवडिए, एवं जाव दसपएसिए, नवरं पएसपरिवुड्ढी कायव्वा, ओगाहणट्ठयाए तिसुवि गमएसु जाव दसपएसिए एवं पएसा परिवड्ढिज्जंति, जहन्नठिइयाणं भंते ! संखिज्जपएसियाणं पुच्छा, गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ ?, गोयमा ! जहन्नठिइए संखिज्जपएसिए खंधे जहन्नठिइयस्स संखिज्जपएसियस्स खंधस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए दुट्ठाणवडिए ओगाहणट्ठयाए दुट्ठाणवडिए ठिईए तुल्ले वण्णाइ चउफासेहि य छट्ठाणवडिए, एवं उक्कोसठिइएवि, अजहन्नमणुक्कोसठिइएवि एवं चेव, नवरं ठिईए चउट्ठाणवडिए, जहन्नठिइयाणं असंखिज्जपएसियाणं पुच्छा, गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ ?, गोयमा ! जहन्नठिइए असंखिज्जपएसिए जहन्नठिइयस्स असंखिज्जपएसियस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए चउट्ठाणवडिए ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए ठिईए तुल्ले वण्णाइ उवरिल्लचउफासेहि य छट्ठाणवडिए, एवं उक्कोसठिइएवि, अजहन्नमणुक्कोसठिइए एवं चेव नवरं ठिईए चउट्ठाणवडिए, जहन्नठिइयाणं अणंतपएसियाणं पुच्छा, गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ ?, गोयमा ! जहन्नठिइए अणंतपएसिए जहन्नठिइयस्स

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अणंतपएसियस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए छट्ठाणवडिए ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए ठिईए तुल्ले वण्णाइ अट्ठफासेहि य छट्ठाणवडिए, एवं उक्कोसठिइएवि, अजहन्नमणुक्कोसठिइएवि एवं चेव, नवरं ठिईए चउट्ठाणवडिए, जहन्नगुणकालयाणं परमाणुपुग्गलाणं पुच्छा, गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ ?, गोयमा ! जहन्नगुणकालए परमाणुपुग्गले जहन्नगुणकालगस्स परमाणुपुग्गलस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए तुल्ले ओगाहणट्ठयाए तुल्ले ठिईए चउट्ठाणवडिए कालवन्नपज्जवेहिं तुल्ले अवसेसा वण्णा नत्थि, गंधरसदुफास पज्जवेहि य छट्ठाणवडिए, एवं उक्कोसगुणकालएवि, एवमजहन्नमणुक्कोसगुणकालएवि, णवरं सट्ठाणे छट्ठाणवडिए, जहन्नगुणकालयाणं भंते! दुपएसियाणं पुच्छा, गोयमा! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ ?, गोयमा ! जहन्नगुणकालए दुपएसिए जहन्नगुणकालयस्स दुपएसियस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए तुल्ले ओगाहणट्ठयाए सिय हीणे सिय तुल्ले सिय अब्भहिए जइ हीणे पएसहीणे अह अब्भहिए पएसअब्भहिए ठिईए चउट्ठाणवडिए कालवन्नपज्जवेहिं तुल्ले अवसेसवण्णाइउवरिलचउफासेहि य छट्ठाणवडिए, एवं उक्कोसगुणकालएवि, अजहन्नमणुक्कोसगुणकालएवि एवं चेव, नवरं सट्ठाणे छट्ठाणवडिए, एवं जाव दसपएसिए नवरं पएसपरिवुड्ढी ओगाहणाए तहेव, जहन्नगुणकालयाणं भंते !संखिज्जपएसियाणं पुच्छा, गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ?, गोयमा ! जहन्नगुणकालए संखिज्जपएसिए जहन्नगुणकालगस्स संखिज्जपएसियस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए दुट्ठाणवडिए ओगाहणट्ठयाए दुट्ठाणवडिए ठिईए चउट्ठाणवडिए कालवन्नपज्जवेहिं तुल्ले अवसेसेहिं वण्णाइ उवरिल्लचउफासेहि य छट्ठाणवडिए, एवं उक्कोसगुणकालएवि, एवं अजहन्नमणुक्कोसगुणकालएवि, नवरं सट्ठाणे छट्ठाणवडिए, जहन्नगुणकालयाणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भंते ! असंखिज्जपएसियाणं पुच्छा, गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ ?, गोयमा ! जहन्नगुणकालए असंखिज्जपएसिए जहन्नगुणकालगस्स असंखिज्जपएसियस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए चउट्ठाणवडिए ठिईए चउट्ठाणवडिए कालवन्नपज्जवेहिं तुल्ले अवसेसेहिं वण्णादि उवरिल्लचउफासेहि य छट्ठाणवडिए, ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए, एवं उक्कोसगुणकालएवि, अजहन्नमणुक्कोसगुणकालएवि एवं चेव, नवरं सट्ठाणे छट्ठाणवडिए, जहन्नगुणकालयाणं भंते ! अणंतपएसियाणं पुच्छा, गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ ?, गोयमा ! जहन्नगुणकालए अणंतपएसिए जहन्नगुणकालयस्स अणंतपएसियस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए छट्ठाणवडिए ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए ठिईए चउट्ठाणवडिए कालवन्नपज्जवेहिं तुल्ले अवसेसेहिं वन्नादि अट्ठफासेहि य छट्ठाणवडिए, एवं उक्कोसगुणकालएवि, अजहन्नमणुक्कोसगुणकालएवि एवं चेव, नवरं सट्ठाणे छट्ठाणवडिए, एवं नीललोहियहालिद्दसुक्किल्लसुब्भिगंधदुब्भिगंधतित्तकडुकसायअंबिलमहुररसपज्जवेहि य वत्तव्वया भाणियव्वा, नवरं परमाणुपोग्गलस्स सुब्भिगंधस्स दुब्भिगंधो न भण्णइ दुब्भिगंधस्स सुब्भिगंधो न भण्णइ, तित्तस्स अवसेसं न भण्णति एवं कडुयादीणवि, अवसेसं तं चेव, जहन्नगुणकक्खडाणं अणंतपएसियाणं खंधाणं पुच्छा, गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ ?, गोयमा ! जहन्नगुणकक्खडे अणंतपएसिए जहन्नगुणकक्खडस्स अणंतपएसियस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए छट्ठाणवडिए ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए ठिईए चउट्ठाणवडिए वन्नगंधरसेहिं छट्ठाणवडिए कक्खडफासपज्जवेहिं तुल्ले अवसेसेहिं सत्तफासपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए, एवं उक्कोसगुणकक्खडेवि, अजहन्नमणुक्कोसगुणकक्खडेवि एवं चेव नवरं सट्ठाणे छट्ठाणवडिए, एवं मउयगुरुयलहु-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [११८--१२१]

दीप अनुक्रम [३२२--३२५]

एवि भाणियवे, जहन्नगुणसीयाणं भंते ! परमाणुपोग्गलाणं पुच्छा, गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुचइ ?, गोयमा ! जहन्नगुणसीए परमाणुपोग्गले जहन्नगुणसीतस्स परमाणुपुग्गलस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए तुल्ले ओगाहणट्ठयाए तुल्ले ठिईए चउट्ठाणवडिए वन्नगंधरसेहिं छट्ठाणवडिए सीयफासपज्जवेहि य तुल्ले उसिणफासो न भण्णति निद्धलुक्खफासपज्जवेहि य छट्ठाणवडिए, एवं उक्कोसगुणसीएवि, अजहन्नमणुक्कोसगुणसीतेवि एवं चेव, नवरं सट्ठाणे छट्ठाणवडिए, जहन्नगुणसीताणं दुपदेसियाणं पुच्छा, गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुचइ ?, गोयमा ! जहन्नगुणसीते दुपएसिए जहन्नगुणसीतस्स दुपदेसियस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए तुल्ले ओगाहणट्ठयाए सिय हीणे सिय तुल्ले सिय अब्भहिए जइ हीणे पएसहीणे (अह) अब्भहिए पएसअब्भहिए ठिईए चउट्ठाणवडिए वन्नगंधरसपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए सीयफासपज्जवेहिं तुल्ले उसिणनिद्धलुक्खफासपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए, एवं उक्कोसगुणसीतेवि, अजहन्नमणुक्कोसगुणसीतेवि एवं चेव, नवरं सट्ठाणे छट्ठाणवडिए, एवं जाव दसपएसिए, णवरं ओगाहणट्ठयाए पएसपरिवुड्ढी कायव्वा जाव दसपएसियस्स नव पएसा वुड्ढिज्जंति, जहन्नगुणसीयाणं संखेज्जपएसियाणं पुच्छा, गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुचइ ?, गोयमा ! जहन्नगुणसीते संखिज्जपएसिए जहन्नगुणसीतस्स संखिज्जपएसियस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए दुट्ठाणवडिए ओगाहणट्ठयाए दुट्ठाणवडिए ठिईए चउट्ठाणवडिए वण्णादीहिं छट्ठाणवडिए सीयफासपज्जवेहिं तुल्ले उसिणनिद्धलुक्खेहिं छट्ठाणवडिए, एवं उक्कोसगुणसीतेवि, अजहन्नमणुक्कोसगुणसीतेवि एवं चेव, नवरं सट्ठाणे छट्ठाणवडिए, जहन्नगुणसीयाणं असंखिज्जपएसियाणं पुच्छा, गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुचइ ?,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोयमा ! जहन्नगुणसीते असंखिज्जपएसिए जहन्नगुणसीयस्स असंखिज्जपएसियस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए चउट्ठाणवडिए ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए ठिईए चउट्ठाणवडिए वण्णाइपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए सीयफासपज्जवेहिं तुल्ले उसिणनिद्धलुक्खफासपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए, एवं उक्कोसगुणसीतेवि, अजहन्नमणुक्कोसगुणसीतेवि एवं चेव, नवरं सट्ठाणे छट्ठाणवडिए, जहन्नगुणसीताणं अणंतपएसियाणं पुच्छा, गोयमा ! अणंता पज्जवा पन्नत्ता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ ?, गोयमा ! जहन्नगुणसीते अणंतपएसिए जहन्नगुणसीतस्स अणंतपएसियस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए छट्ठाणवडिए ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए ठिईए चउट्ठाणवडिए वण्णाइपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए सीयफासपज्जवेहिं तुल्ले अवसेसेहिं सत्तफासपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए, एवं उक्कोसगुणसीतेवि, अजहन्नमणुक्कोसगुणसीतेवि एवं चेव, नवरं सट्ठाणे छट्ठाणवडिए, एवं उसिणनिद्धलुक्खे जहा सीते परमाणुपोग्गलस्स तहेव पडिवक्खो सवेसिं न भण्णइ त्ति भाणियवं ॥ (सूत्रं १२०) [साम्प्रतं सामान्यसूत्रमारभ्यते] जहन्नपएसियाणं भंते ! खंधाणं पुच्छा, गोयमा ! अणंता, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ ?, गोयमा! जहन्नपएसिए खंधे जहन्नपएसियस्स खंधस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए तुल्ले ओगाहणट्ठयाए सिय हीणे सिय तुल्ले सिय अब्भहिए जइ हीणे पएसहीणे अह अब्भहिए पएसमब्भहिए ठिईए चउट्ठाणवडिए वन्नगंधरसउवरिल्लचउफासपज्जवेहिं छट्ठाणवडिए, उक्कोसपएसियाणं भंते ! खंधाणं पुच्छा, गोयमा ! अणंता०, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ ?, गोयमा ! उक्कोसपएसिए खंधे उक्कोसपएसियस्स खंधस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए तुल्ले ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए ठिईए चउट्ठाणवडिए वण्णाइअट्ठफासपज्जवेहि य छट्ठाणवडिए, अजहन्नमणुक्कोसपएसियाणं भंते ! खंधाणं केवइया पज्जवा पन्नत्ता ?,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र-[१५],उपांगसूत्र-[४] "प्रज्ञापना" मूलं एवं मलयगिरि-प्रणीता वृत्ति:

गोयमा ! अणंता०, से केणट्ठेणं० ?, गोयमा ! अजहन्नमणुक्कोसपएसिए खंधे अजहन्नमणुक्कोसपएसियस्स खंधस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए छट्ठाणवडिए ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए ठिईए चउट्ठाणवडिए वण्णाइ अट्ठफासपज्जवेहि य छट्ठाणवडिए । जहन्नोगाहणगाणं भंते ! पोग्गलाणं पुच्छा, गोयमा ! अणंता०, से केणट्ठेणं० ?, गोयमा ! जहन्नोगाहणए पोग्गले जहन्नोगाहणगस्स पोग्गलस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए छट्ठाणवडिए ओगाहणट्ठयाए तुल्ले ठिईए चउट्ठाणवडिए वण्णाइ उवरिल्लफासेहि य छट्ठाणवडिए, उक्कोसोगाहणएवि एवं चेव, नवरं ठिईए तुल्ले, अजहन्नमणुक्कोसोगाहणगाणं भंते ! पोग्गलाणं पुच्छा, गोयमा ! अणंता०, से केणट्ठेणं० ?, गोयमा ! अजहन्नमणुक्कोसोगाहणए पोग्गले अजहन्नमणुक्कोसोगाहणगस्स पोग्गलस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए छट्ठाणवडिए ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए ठिईए चउट्ठाणवडिए वण्णाइ अट्ठफासपज्जवेहि य छट्ठाणवडिए, जहन्नठिइयाणं भंते ! पोग्गलाणं पुच्छा, गोयमा ! अणंता०, से केणट्ठेणं० ?, गोयमा ! जहन्नठिइए पोग्गले जहन्नठिइयस्स पोग्गलस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए छट्ठाणवडिए ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए ठिईए तुल्ले वण्णाइ अट्ठफासपज्जवेहि य छट्ठाणवडिए, एवं उक्कोसठिइएवि, अजहन्नमणुक्कोसठिइएवि एवं चेव, नवरं ठिईएवि चउट्ठाणवडिए, जहन्नगुणकालयाणं भंते ! पोग्गलाणं केवइया पज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा ! अणंता०, से केणट्ठेणं० ?, गोयमा ! जहन्नगुणकालए पोग्गले जहन्नगुणकालयस्स पोग्गलस्स दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए छट्ठाणवडिए ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए ठिईए चउट्ठाणवडिए कालवन्नपज्जवेहिं तुल्ले अवसेसेहिं वन्नगंधरसफासपज्जवेहि य छट्ठाणवडिए, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ—जहन्नगुणकालयाणं पोग्गलाणं अणंता पज्जवा पन्नत्ता, एवं उक्कोसगुणकालएवि, अजहन्नमणुक्कोसगुणकालएवि एवं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चेव, नवरं सट्ठाणे छट्ठाणवडिए, एवं जहा कालवन्नपज्जवाणं वत्तव्वया भणिया तहा सेसाणवि वन्नगंधरसफासाणं वत्तव्वया भाणियव्वा जाव अजहन्नमणुक्कोसलुक्खे सट्ठाणे छट्ठाणवडिए। सेत्तं रूविअजीवपज्जवा, सेत्तं अजीवपज्जवा। (सूत्रं १२१) इति पन्नवणाए भगवईए विसेसपयं समत्तं ५।

'अजीवपज्जवा णं' इत्यादि, 'रूविअजीवपज्जवा य अरूविअजीवपज्जवा य' इति रूपमिति उपलक्षणमेतत् गन्धरसस्पर्शाश्च विद्यन्ते येषां ते रूपिणः ते च ते अजीवाश्च रूप्यजीवाः तेषां पर्याया रूप्यजीवपर्यायाः (पुद्गलपर्याया) इत्यर्थः, तद्विपरीता अरूप्यजीवपर्यायाः, अमूर्त्ताजीवपर्याया इति भावः, 'धम्मत्थिकाए' इत्यादि, धर्म्मास्तिकाय इति परिपूर्णमवयवि द्रव्यं, धर्मास्तिकायस्य देशः–तस्यैवार्द्धादिरूपो विभागः, धर्म्मास्तिकायस्य प्रदेशाः–तस्यैव निर्विभागाः भागाः, एवं त्रिकमधर्मास्तिकाये आकाशास्तिकाये च भावनीयं, एतावता चान्योऽन्यानुगमात्मकावयवावयविस्वरूपं धर्मास्तिकायादिकं वस्त्विति प्रतिपादितं, दशमोऽद्धासमयः, नन्वत्र पर्याया वक्तुमुपक्रान्तास्तत्कथं द्रव्यमात्रोपन्यासः कृतः ?, उच्यते, पर्यायपर्यायिणोः कथंचिदभेदख्यापनार्थः, एवमुत्तरोऽपि ग्रन्थः, आह च मूलटीकाकारः–"अत्र सर्वत्र पर्यायपर्यायिणोः कथंचिदभेदख्यापनार्थमित्थं सूत्रोपन्यास" इति, परमार्थतस्त्वेतद्द्रष्टव्यं–धर्मास्तिकायत्वं धर्मास्तिकायदेशत्वं धर्मास्तिकायप्रदेशत्वं इत्यादि, 'ते णं भंते ! किं संखेज्जा' इत्यादि, ते स्कन्धादयः प्रत्येकं किं सङ्ख्येया असङ्ख्येया अनन्ताः ?, भगवानाह—अनन्ताः, एतदेव भावयति—'से केणट्ठेणं भंते !' इत्यादि पाठसिद्धं। सम्प्रति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दण्डकक्रमेण परमाणुपुद्गलादीनां पर्यायाश्चिन्तनीयाः, दण्डकक्रमश्चायं—प्रथमतः सामान्येन परमाण्वादयश्चिन्तनीयाः तदनन्तरं ते एव एकप्रदेशाद्यवगाढाः तत एकसमयादिस्थितिकाः तदनन्तरमेकगुणकालकादयः ततो जघन्याद्यवगाहनाप्रकारेण तदनन्तरं जघन्यस्थित्यादिभेदेन ततो जघन्यगुणकालकादिक्रमेण तदनन्तरं जघन्यप्रदेशादिना भेदेनेति, उक्तं च–"अणुमाइओहियाणं खेत्तादिपएससंगयाणं च । जहनाऽवगाहणाइण चेव जहन्नादिदेसाणं ॥ १ ॥" अस्याक्षरगमनिका—प्रथमतोऽण्वादीनां–परमाण्वादीनां चिन्ता कर्त्तव्या, तदनन्तरं क्षेत्रादिप्रदेशसङ्गतानां, अत्रादिशब्दात्कालभावपरिग्रहः, ततोऽयमर्थः—प्रथमतः क्षेत्रप्रदेशैरेकादिभिः सङ्गतानां चिन्ता कर्तव्या, तदनन्तरं कालप्रदेशैः–एकादिसमयैस्ततो भावप्रदेशैः–एकगुणकालकादिभिरिति, तदनन्तरं जघन्यावगाहनादीनामिति, अत्रादिशब्देन मध्यमोत्कृष्टावगाहनाजघन्यमध्यमोत्कृष्टस्थितिजघन्यमध्यमोत्कृष्टगुणकालकादिवर्णपरिग्रहः, ततो जघन्यादिप्रदेशानां–जघन्यप्रदेशानामुत्कृष्टप्रदेशानामजघन्योत्कृष्टप्रदेशानामिति ॥ तत्र प्रथमतः क्रमेण परमाण्वादीनां चिन्तां कुर्वन्नाह—'परमाणुपोग्गलाणं भंते !' इत्यादि, स्थित्या चतुःस्थानपतितत्वं, परमाणोः समयादारभ्योत्कर्षतोऽसङ्ख्येयकालमवस्थानभावात्, कालादिवर्णपर्यायैः षट्स्थानपतितत्वं एकस्यापि परमाणोः पर्यायानन्त्याविरोधात्, ननु परमाणुरप्रदेशो गीयते ततः कथं पर्यायानन्त्याविरोधः?, पर्यायानन्त्ये नियमतः सप्रदेशत्वप्रसक्तेः, तदयुक्तं, वस्तुतत्त्वापरिज्ञानात्, परमाणुर्हि अप्रदेशो गीयते द्रव्यरूपतया सांशो न भवतीति, न तु कालभावाभ्यामिति, 'अपएसो

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दवट्ठयाए' इति वचनात्, ततः कालभावाभ्या सप्रदेशत्वेऽपि न कश्चिद्दोषः, तथा परमाण्वादीनामसङ्ख्यातप्रदेशस्कन्धपर्यन्तानां केषांचिदनन्तप्रादेशिकानामपि स्कन्धानां तथैकप्रदेशावगाढानां यावत् सङ्ख्यातप्रदेशावगाढानां शीतोष्णस्निग्धरूक्षरूपाश्चत्वार एव स्पर्शा इति तैरेव परमाण्वादीनां षट्स्थानपतितता वक्तव्या, न शेषैः, द्विप्रदेशस्कन्धसूत्रे 'ओगाहणट्ठयाए सिय हीणे सिय तुल्ले सिय अब्भहिए' इत्यादि, यदा द्वावपि द्विप्रदेशिकौ स्कन्धौ द्विप्रदेशावगाढावेकप्रदेशावगाढौ वा भवतस्तदा तुल्यावगाहनौ, यदा त्वेको द्विप्रदेशावगाढोऽपरस्त्वेकप्रदेशावगाढस्तदा एकप्रदेशावगाढो द्विप्रदेशावगाढापेक्षया प्रदेशहीनो द्विप्रदेशावगाढस्तु तदपेक्षया(प्रदेशा)ऽभ्यधिकः शेषं प्राग्वत्, त्रिप्रदेशस्कन्धसूत्रे 'ओगाहणट्ठयाए सिय हीणे' इत्यादि, यदा द्वावपि त्रिप्रदेशकौ स्कन्धौ त्रिप्रदेशावगाढौ द्विप्रदेशावगाढौ एकप्रदेशावगाढौ वा तदा तुल्यौ यदा त्वेकस्त्रिप्रदेशावगाढो वा द्विप्रदेशावगाढो वा अपरस्तु द्विप्रदेशावगाढ एकप्रदेशावगाढो वा तदा द्विप्रदेशावगाढैकप्रदेशावगाढौ यथाक्रमं त्रिप्रदेशावगाढद्विप्रदेशावगाढापेक्षया एकप्रदेशहीनौ त्रिप्रदेशावगाढद्विप्रदेशावगाढौ तु तदपेक्षया एकप्रदेशाभ्यधिकौ, यदा त्वेकस्त्रिप्रदेशावगाढोऽपर एकप्रदेशावगाढस्तदा एकप्रदेशावगाढस्त्रिप्रदेशावगाढापेक्षया द्विप्रदेशहीनः त्रिप्रदेशावगाढस्तु तदपेक्षया द्विप्रदेशाभ्यधिकः, एवमेकैकप्रदेशपरिवृद्ध्या चतुःप्रदेशादिषु स्कन्धेष्ववगाहनामधिकृत्य हानिर्वृद्धिर्वा तावद् वक्तव्या यावद्दशप्रदेशस्कन्धः, तस्मिंश्च दशप्रदेशके स्कन्धे एवं वक्तव्यं 'जइ हीणे पएसहीणे वा दुपएसहीणे वा जाव नवपएसहीणे वा अह अब्भहिए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पएसमब्भहिए वा दुपएसमब्भहिए वा जाव नवपएसमब्भहिए वा' इति भावना पूर्वोक्तानुसारेण स्वयं कर्त्तव्या, सङ्ख्यातप्रादेशिकस्कन्धसूत्रे 'ओगाहणट्ठयाए दुट्ठाणवडिए' इति सङ्ख्येयभागेन सङ्ख्येयगुणेन चेति, असङ्ख्यातप्रदेशकस्कन्धे 'ओगाहणट्ठयाए चउट्ठाणवडिए' इति असङ्ख्यातभागेन सङ्ख्यातभागेन सङ्ख्यातगुणेनासङ्ख्यातगुणेनेति, अनन्तप्रादेशिकस्कन्धेऽप्यवगाहनार्थतया चतुःस्थानपतितता, अनन्तप्रदेशावगाहनाया असंभवतोऽनन्तभागानन्तगुणाभ्यां वृद्धिहान्यसंभवात्, 'एगपएसोगाढाणं पोग्गलाणं भंते !' इत्यादि, अत्र 'दव्वट्ठयाए तुल्ले पएसट्ठयाए छट्ठाणवडिए' इति, इदमपि विवक्षितैकप्रदेशावगाढं परमाण्वादिकं द्रव्यं इदमप्यपरैकप्रदेशावगाढं द्विप्रदेशादिकं द्रव्यमिति द्रव्यार्थतया तुल्यता, प्रदेशार्थतया षट्स्थानपतितता, अनन्तप्रदेशकस्यापि स्कन्धस्यैकस्मिन्नाकाशप्रदेशेऽवगाहनासंभवात्, शेषं सुगमं, एवं स्थितिभावाश्रयाण्यपि सूत्राण्युपयुज्य भावनीयानि, 'जहन्नोगाहणगाणं भंते ! दुपएसियाणं' इत्यादि, जघन्यद्विप्रदेशकस्य स्कन्धस्यावगाहना एकप्रदेशात्मिका उत्कृष्टा द्विप्रदेशात्मिका अत्रापान्तरालं नास्तीति मध्यमा न लभ्यते तत उक्तं 'अजहन्नमणुक्कोसोगाहणओ नत्थि' इति, त्रिप्रदेशकस्य स्कन्धस्य जघन्यावगाहना एकप्रदेशरूपा मध्यमा द्विप्रदेशरूपा उत्कृष्टा त्रिप्रदेशरूपा, चतुःप्रदेशस्य जघन्या एकप्रदेशरूपा उत्कृष्टा चतुःप्रदेशात्मिका मध्यमा द्विविधा—द्विप्रदेशात्मिका त्रिप्रदेशात्मिका च, एवं च सति मध्यमावगाहनश्चतुःप्रदेशको मध्यमावगाहनचतुःप्रदेशकापेक्षया यदि हीनस्तर्हि प्रदेशतो हीनो भवति अथाभ्यधिकस्ततः प्रदेशतोऽभ्यधिकः, एवं पञ्चप्रदेशादिषु

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

स्कन्धेषु मध्यमावगाहनामधिकृत्य प्रदेशपरिवृद्ध्या वृद्धिर्हानिश्च तावत् वक्तव्या यावदशप्रदेशके स्कन्धे सप्तप्रदेशपरिवृद्धिः, सा चैवं वक्तव्या—'अजहन्नमणुक्कोसोगाहणए दसपएसिए अजहन्नमणुक्कोसोगाहणस्स दसपएसियस्स खंधस्स ओगाहणट्ठयाए सिय हीणे सिय तुल्ले सिय अब्भहिए जइ हीणे पएसहीणे दुपएसहीणे जाव सत्तपएसहीणे अह अब्भहिए पएसअब्भहिए दुपएसअब्भहिए जाव सत्तपएसअब्भहिए' इति, शेषं सूत्रं स्वयमुपयुज्य परिभावनीयं सुगमत्वात्, नवरमनन्तप्रदेशकोत्कृष्टावगाहनाचिन्तायां 'ठिईएवि तुल्ले' इति उत्कृष्टावगाहनः किलानन्तप्रदेशकः स्कन्धः स उच्यते यः समस्तलोकव्यापी स चाचित्तमहास्कन्धः केवलिसमुद्घातकर्मस्कन्धो वा, तयोश्चोभयोरपि दण्डकपाटमन्थान्तरपूरणलक्षणचतुःसमयप्रमाणतेति तुल्यकालता, शेषं सूत्रमापदपरिसमाप्तेः प्रागुक्तभावनाऽनुसारेण स्वयमुपयुज्य परिभावनीयं सुगमत्वात्, नवरं जघन्यप्रदेशकाः स्कन्धाः द्विप्रदेशका उत्कृष्टप्रदेशकाः सर्वोत्कृष्टानन्तप्रदेशाः ॥ इति श्रीमलयगिरिविरचितायां प्रज्ञापनाटीकायां विशेषाख्यं पदं समाप्तं ।

इति श्री०प्रज्ञा०सूत्र०श्रीमन्मलयगिरिसूरिवर्य०विशेषापरपर्यायं पर्यायाख्यं पदं समाप्तं ॥

अत्र पद (०५) "विशेष" परिसमाप्तम्

Jain Education International

www.jainelibrary.org

	सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि भाग १ से ४० में कहां क्या मिलेगा?		
भाग	इस भागमे समाविष्ट आगम के नाम और आगम-क्रम		कुलपृष्ठ
01	आगम ०१ आचार मूलं एवं वृत्ति भाग-१ श्रुतस्कन्ध-१, अध्ययन- १,२		३१४
02	आगम ०१ आचार मूलं एवं वृत्ति, भाग-२ श्रुतस्कन्ध-१, अध्ययन- ३ से ९, श्रुतस्कन्ध- २		५८६
03	आगम ०२ सूत्रकृत मूलं एवं वृत्ति, भाग-१ श्रुतस्कन्ध-१, अध्ययन- १ से १३		४९८
04	आगम ०२ सूत्रकृत मूलं एवं वृत्ति, भाग-२ श्रुतस्कन्ध-१, अध्ययन १४ से १६, श्रुतस्कन्ध-२		३९२
05	आगम ०३ स्थान मूलं एवं वृत्ति, भाग-१ स्थान- १ से ४		५९४
06	आगम ०३ स्थान मूलं एवं वृत्ति, भाग-२ स्थान- ५ से १० संपूर्ण		४९४
07	आगम ०४ समवाय मूलं एवं वृत्ति.		३३८
08	आगम ०५ भगवती मूलं एवं वृत्ति, भाग-१ शतक- १ से ६		५९२
09	आगम ०५ भगवती मूलं एवं वृत्ति, भाग-२ शतक- ७ से ११		५५२
10	आगम ०५ भगवती मूलं एवं वृत्ति, भाग-३ शतक- १२ से २०		५१४
11	आगम ०५ भगवती मूलं एवं वृत्ति, भाग-४ शतक- २१ से ४१ संपूर्ण		३८४
12	आगम ०६ ज्ञाताधर्मकथा मूलं एवं वृत्ति.		५२२
13	आगम-७,८,९,१०उपासकदशा, अंतकृतदशा, अनुत्तरोपपातिकदशा, प्रश्नव्याकरण मूलं एवं वृत्ति.		५३८
14	आगम-११,१२, विपाक, उववाई मूलं एवं वृत्ति.		३८४
15	आगम १३ राजप्रश्नीय मूलं एवं वृत्ति.		३१४
16	आगम१४ जीवाजीवाभिगम भाग-१ मूलं एवं वृत्ति. [प्रतिपत्ति-३-अतर्गत] सूत्र- १ से १३८		४८०
17	आगम१४ जीवाजीवाभिगम भाग-२ मूलं एवं वृत्ति. [प्रतिपत्ति-३-अतर्गत] सूत्र- १३९ से प्रतिपत्ती-१० संपूर्ण		४८८
18	आगम १५ प्रज्ञापना भाग-१ मूलं एवं वृत्ति. पद- १ से ५		४२६
19	आगम १५ प्रज्ञापना भाग-२ मूलं एवं वृत्ति. पद- ६ से २२		५१४
20	आगम १५ प्रज्ञापना भाग-३ मूलं एवं वृत्ति. पद- २३ से ३६ संपूर्ण		३३६
21	आगम १६ सूर्यप्रज्ञप्ति मूलं एवं वृत्ति.		६१०

	सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि भाग १ से ४० में कहां क्या मिलेगा?		
भाग	इस भागमे समाविष्ट आगम के नाम और आगम-क्रम		कुलपृष्ठ
22	आगम १७ चन्द्रप्रज्ञप्ति मूलं एवं वृत्ति.		६१४
23	आगम१८ जंबूद्विपप्रज्ञप्ति भाग-१ मूलं एवं वृत्ति. वक्षस्कार- १ एवं २.		३७६
24	आगम१८ जंबूद्विपप्रज्ञप्ति भाग-२ मूलं एवं वृत्ति. वक्षस्कार- ३ एवं ४.		४२६
25	आगम१८ जंबूद्विपप्रज्ञप्ति भाग-३ मूलं एवं वृत्ति. वक्षस्कार- ५ से ७.		३४४
26	आगम १९-३२ निरयावलिका, कल्पवतंसिका, पुष्पिका, पुष्पचूलिका, वृष्णिदशा, चतु:शरण, आतुरपरत्याख्यान, महाप्रत्याख्यान, भक्तपरिज्ञा, तंदुलवैचारिक, संस्तारक, गच्छाचार, गणिविदया, देवेन्द्रस्तव मूलं एवं छाया		३१२
27	आगम ३३ थी ३९ मरणसमाधि मूलं एवं छाया, निशीथ, ब्रुहत्कल्प, व्यवहार, दशाश्रुतस्कंध, जीतकल्प/पंचकल्प, महानिशीथ मूलं एव		३३०
28	आगम ४० आवश्यक मूलं एवं वृत्ति, भाग-१, निर्युक्ति- १ से ५२१		४६६
29	आगम ४० आवश्यक मूलं एवं वृत्ति, भाग-२, निर्युक्ति- ५२२ से ९५१		४४२
30	आगम ४० आवश्यक मूलं एवं वृत्ति, भाग-३ निर्युक्ति- ९५२ से १२७३ अपूर्ण, [अध्ययन- १ से ४ अपूर्ण]		४६४
31	आगम ४० आवश्यक मूलं एवं वृत्ति, भाग-४ निर्युक्ति- १२७३ अपूर्ण से १६२३, [अध्ययन- ४ अपूर्ण से ६ संपूर्ण]		४२६
32	आगम ४१/१ ओघनिर्युक्ति मूलं एवं वृत्ति.		४७२
33	आगम ४१/२ पिंडनिर्युक्ति मूलं एवं वृत्ति.		३७६
34	आगम ४२ दशवैकालिक मूलं एवं वृत्ति.		५९०
35	आगम ४३ उत्तराध्यन मूलं एवं वृत्ति, भाग-१, अध्ययन- १ से ५		५२२
36	आगम ४३ उत्तराध्यन मूलं एवं वृत्ति, भाग-२, अध्ययन- ६ से २१		४८२
37	आगम ४३ उत्तराध्यन मूलं एवं वृत्ति, भाग-३, अध्ययन- २२ से ३६		४६६
38	आगम ४४ नन्दिसूत्र मूलं एवं वृत्ति.		५२८
39	आगम ४५ अनुयोगद्वार् मूलं एवं वृत्ति.		५६०
40	कल्प[बारसा]सूत्र... चतु:शरण, तन्दुलवैचारिक, गच्छाचार मूलं एवं वृत्ति.		३९४

नमो नमो निम्मलदंसणस्स

पूज्य आनंद-क्षमा-ललित-सुशील-सुधर्मसागर गुरूभ्यो नम:

आगम [15/1]

पूज्य आगमोध्धारक आचार्य श्री सागरानंदसूरीश्वरेण संशोधित: संपादितश्च

प्रज्ञापना (उपांगसूत्र"-४/१) [मूलं एवं मलयगिरि-प्रणिता वृत्ति:]

(किंचित् वैशिष्ठ्यं समर्पितेन सह)

मुनि दीपरत्नसागरेण पुन: संकलित:

"प्रज्ञापना" मूलं एवं वृत्ति:" नामेण परिसमाप्त:

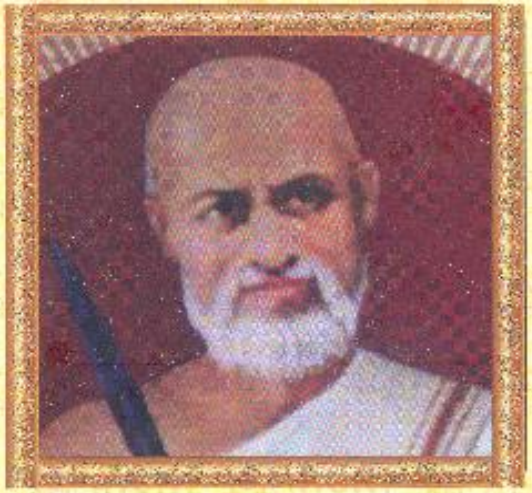
"सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि" श्रेणि, भाग-18


आगम
वाचना शताब्दी वर्ष

नमो नमो निम्मलदंसणस्स

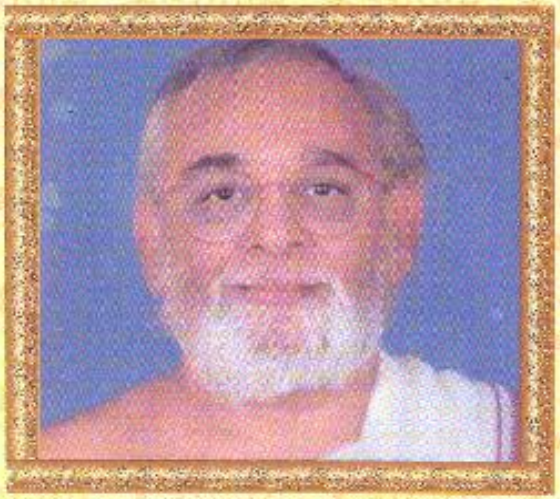
सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि

मूल संशोधक



पूज्यपाद आगमोद्धारक आचार्य
श्री आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराज

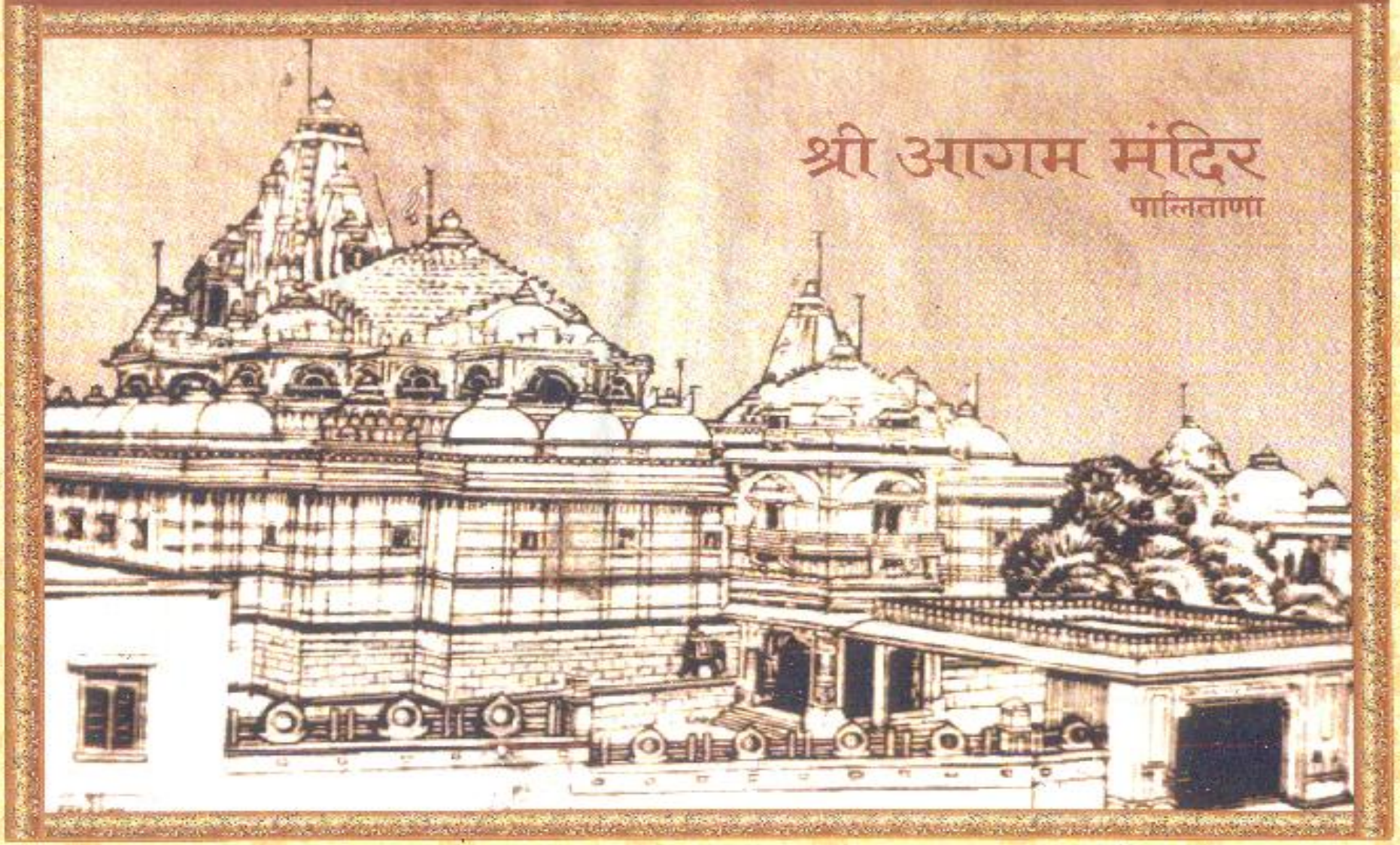
अभिनव-संकलनकर्ता

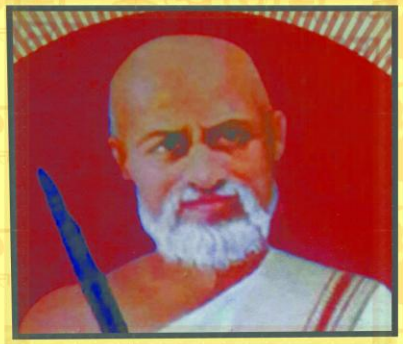


आगम दिवाकर मुनिश्री दीपरत्नसागरजी
[M.Com., M.Ed., Ph.D., श्रुतमहर्षि]

प्रत-प्राप्ति और पेज-सेटिंग कर्ता : www.jainelibrary.org के चेरमन श्री प्रवीणभाई शाह, अमेरिका
मुद्रक : नवप्रभात प्रिन्टींग प्रेस अमदाबाद Mo 9825598855 / 9825306275

ईस प्रोजेक्ट के संपूर्ण-अनुदान-दाता





मूल संशोधक

पूज्यपाद आगमोद्धारक आचार्य

श्री आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराजसाहेब

आगम १५

"प्रज्ञापना" मूलं एवं वृत्तिः [1]

अभिनव-संकलनकर्ता

आगम दिवाकर मुनिश्री दीपरत्नसागरजी

[M.Com., M.Ed., Ph.D., श्रुतमहर्षि]

